UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180102

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—6' --11-1-68—2,000.

UNIVERSITY LIBRARY

Call No. HB3 G198 D

Accession No. 42192

Author

Title 421 H1 E41

This book should be returned on or before the date last marked below.

देश की हत्या

देश की हत्या

श्री गुरुदत्त

भारती साहित्य सदन
नई-देहली

राष्ट्र किसी देश के उन नागरिकों के समूह को कहते है, जो देश के सामूहिक हित में अपना हित समझते हैं। कभी-कभी देश में ऐसा समूह बहुत छोटा रह जाता है। वे लोग, जो अपने निजी स्वार्थ को सर्वोपरि मानते हैं, बहुत भारी संख्या में उत्पन्न हो जाते हैं, तब देश को हानि पहुँचती है और देश पराधीनता की शृङ्खलाओं में बंध जाता है। राष्ट्र की उन्नति अर्थात् देश में ऐसे लोगों की संख्या में वृद्धि होना, जो देश के सामूहिक हित को व्यक्ति के हितों से ऊपर समझते हैं, अत्यावश्यक है। इसी से देश में सुख-शान्ति, ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त होती है।

महात्मा गांधी जी की हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य करने की विधि दूषित थी और उक्त लक्ष्य के विरुद्ध बैठी थी। उसका परिणाम ही १९४६-४७ के प्रचण्ड हत्याकाण्डों में प्रकट हुआ और अन्त मे देश विभाजन हुआ, जिसके दुखद् परिणाम होने की सम्भावना तब तक बनी रहेगी, जब तक यह विभाजन स्थिर रहेगा। जब-जब भी देश का द्वार गान्धार तथा कामभोज (सिन्ध पार का सीमा प्रदेश और अफगानिस्तान) देश के हितेच्छुओं के हाथ में रहा है, तब ही देश सुरक्षित और शान्तिमय हो सका है। जिस भी राजा अथवा सम्राट् ने इस तथ्य को समझा है, उसने अपना अधिकार इन दो प्रदेशों पर रखने का यत्न किया है। १९१९ से १९४७ तक की कांग्रेस-नीति ने ये दोनों प्रदेश भारत के हित से रिक्त जाति के हाथों में दे दिए है। उसी नीति से अब काश्मीर को उन लोगों के हाथों मे देने का आयोजन किया जा रहा है, जो देश के हित का चिन्तन भी नही कर सकते। इस दूषित नीति का स्पष्टीकरण ही 'विश्वासघात' और 'देश की हत्या' में करने का यत्न किया गया है।

यह संभव है कि जनता के कुछ लोग लेखक के परिणामों को स्वीकार न करते हों। इसी कारण से इन पुस्तकों का लिखना आवश्यक हो गया है। स्वराज्य-प्राप्ति के पश्चात् भारत के शासक-दल ने घटनाओं को विकृत करने, उन घटनाओं में अपने उत्तरदायित्व को दूसरों के गले मढ़ने औ घटनाओं को छिपाने का यत्न आरम्भ कर दिया है, इस कारण भी ।

दूसरा दृष्टिकोण उपस्थित करना आवश्यक होगया है।

देश विभाजन ठीक नही माना जा सकता। परन्तु यह क्यों हुआ, किसने किया और कैसे इसको मिटाया जा सकता है, ये प्रश्न देश के सम्मुख हैं और तब तक रहेंगे, जब तक यह मिट नहीं जाता। सामयिक चिन्ताओं में ग्रस्त लोग भले ही नाक की नोक के आगे न देख सकें, परन्तु दूर-दृष्टि रखने वाले तो इन प्रश्नों पर विचार करेंगे ही। उनको रोकना असम्भव है।

१९४७ की भंयकर घटनाओं की पृष्ठभूमि पर यह उपन्यास ऐतिहासिक व्यक्तियों तथा तथ्यों को छोड़ मुख्यतया काल्पनिक ही है। इसके लिए घटनाओं का ज्ञान अनेकानेक निर्वासित भाईयों के वक्तव्यों, समय के समाचारपत्रों तथा श्री गोपालदास खोसला की 'स्टर्न रैकनिंग' और श्री अमरनाथ बाली की 'नौ इट कैन बी टोल्ड' नामक अँग्रेज़ी की पुस्तकों के आधार पर संचित किया गया है।

इस पर भी यह उपन्यास ही है—

—गुरुदत्त

पाप का प्रायश्चित

राजनीति भी एक पागलपन है। जिस पर वह सवार हो जाता है, उसको घर-घाट की सुध-बुध नही रहती। प्रातः उठ आँखें मलते हुए, नीद खुलने के साथ समाचार-पत्र मे समाचारों के शीर्षक पढ़ना और पायखाने बैठे बैठे अथवा स्नान करते समय देश भर की चिन्ता करते रहना, चाय व प्रातः का अल्पाहार करते समय सामने बैठे साथी से मन मे सचित उद्‌गार प्रकट करना, चलते-फिरते, बस अथवा रेल में यात्रा करते अथवा टाँगे-टमटम में आते-जाते राजनीति पर बात छेड़ देना, इस पागलपन के कुछ लक्षण है। ऐसा माना जाता है कि इससे देश में उन्नति हो रही है।

इससे देशोन्नति होती है अथवा नही, कहा नही जा सकता। पर यह तो सत्य ही है कि समाचार-पत्र छापने वालों का बोलबाला होता रहता है। कोई कथा किसी समाचार-पत्र मे मुद्रित होने पर पढ़े-लिखो के मुख द्वारा जनता तक पहुंच जाती है और समाचार-पत्र को प्रमाण मान कथा को सत्य मानना आवश्यक हो जाता है। न मानने वाले को मूर्ख कहा जाना स्वभाविक हो जाता है।

पंजाब-हावड़ा मेल के सेकण्ड क्लास के डिब्बे में यात्रा करते हुए दो यात्रियो में 'ट्रिब्यून' समाचार-पत्र में छपे एक समाचार पर ऐसी ही परिस्थिति उत्पन्न हो गई। एक भारी शरीर के खद्दरधारी व्यक्ति को साथ की जगह पर बैठे यात्री ने कहा, "देखिए, देखिए! ये कांग्रेस वाले क्या अनर्थ कर रहे है?"

वह खद्दरधारी अपनी निज की समस्याओं पर विचार करने में इतना लीन था कि पहले तो उसने अपने साथी यात्री के कहने को सुना ही नहीं, परन्तु जब उसने अपने कहने को दुहराया तो उस खद्दरधारी का ध्यान उसकी ओर गया और उसने झुककर समाचार-पत्र को देखते हुए पूछा, "क्या हुआ है ?"

"कांग्रेस ने लाला जीवनलाल ठेकेदार के लड़के को विधान-सभा का मैम्बर चुन लिया है।"

"तो इसमें अनर्थ क्या हुआ है ?" खद्दरधारी ने मुस्कराकर पूछा।

साथी यात्री ने कहा, "जी आप नही जानते। जीवनलाल ठेकेदारी करने से सरकार अंग्रेज़ी का आदमी है और उसका लड़का चेतनानन्द नीम मुसलमान है। वह पिछले वर्ष ही एक मुसलमान लड़की से विवाह कर कलकत्ता चला गया था।"

"तो इससे क्या हुआ ? कांग्रेस तो हिन्दु मुसलमान दोनों की प्रतिनिधि है न ? यदि उसने किसी नीम मुसलमान को चुनकर भेजा है तो एक पूरे मुसलमान भेजने से तो ठीक ही किया है न ?"

"इससे तो मुसलमान को भेज देना अच्छा रहता। वह वहां जाकर मुसलमानों के पक्ष में राय देता तो समझने वाले समझ तो जाते। अब तो यह नाम-मात्र का हिन्दू, बात तो करेगा मुसलमानो की और समझा जावेगा कि एक हिन्दू ऐसा कह रहा है। इस कारण यह माना जायगा कि इसका कहना हिन्दुओं के पक्ष में ही है। यह तो 'डबल बिट्रेयल' होगी। एक तो मुसलमानों की अनुचित माँगों को सहायता मिलेगी और दूसरे यह समझा जावेगा कि हिन्दुओं से चुना हुआ आदमी जब ऐसा कहता है, तो मुसलमानों की माँग न केवल युक्ति-युक्त है, प्रत्युत हिन्दुओं से भी मानी गई है।"

उस खद्दरधारी ने कहा, "पर शेखुपुरा के हिन्दुओं ने उसको चुनकर जो भेजा है। उनको पहले समझ लेना चाहिए था।"

"अजी खाक समझते। वह तो घूम-घूमकर लोगों को व्याख्यान देता रहा था कि कांग्रेस पाकिस्तान के बनने के हक में नही है और वह

हिन्दुओं के अधिकारों की रक्षा करेगी।

"उसके मुकाबिले में कोई खड़ा ही नहीं हुआ और वह बिना मुकाबिले के निर्वाचित हो गया। ज्यूँ ही वह चुना गया कि वह अपनी हिन्दू मंगेतर को छोड़कर एक मुसलमान कांग्रेसी की लड़की से विवाह कर कलकत्ता भाग गया और वहाँ मुस्लिम लीगी सरकार का पब्लिसिटी अफसर बन, उस सरकार की सहायता करता रहा।

"बंगाल की मुस्लिम लीगी सरकार ने डायरेक्ट ऐक्शन के दिनों में मुसलमानों की सेवा के लिए उसको एक सर्टिफिकेट और सोने का तमगा दिया है।

"अब वही मुस्लिम लीगी अफसर कांग्रेस का प्रतिनिधि बनकर देश का विधान बनाने जा रहा है।"

इस कथा को सुन वह खद्दरधारी खिलखिलाकर हँस पड़ा और खिड़की से बाहर पीछे को भागते हुए पेडों को देखने लगा।

जब उसके साथी ने देखा कि उस खद्दरधारी ने उसकी कथा को हंसी मज़ाक में उडा दिया है, तो वह पहले तो विस्मय में उसका मुख देखता रहा, पश्चात् समाचार पत्र पढने लगा। इससे उसके मन को सन्तोष नहीं हुआ। एक दो समाचार पढकर उसने पुनः उस खद्दरधारी को सम्बोधन कर कहा, "ऐसा प्रतीत होता है कि कलकत्ता तथा नौआखाली से कहीं अधिक विनाशकारी घटनाएँ पंजाब, सीमा-प्रान्त और सिन्ध में होने वाली हैं। यही विचार कर मैं अपने परिवार को पंजाब से निकालकर कही दूर ले जाने के लिए आया हूँ।"

"कहाँ के रहने वाले हैं आप ?"

"मैं जिला रावलपिंडी के गूजर खाँ कसबा का रहने वाला हूँ।"

"यह समाचार-पत्रों के अधिक पढ़ने का परिणाम है कि आपके मन में इतना भय समा गया है।"

वह आदमी एक-दो क्षण तक अपने यात्री साथी का मुख देखता रहा। पश्चात् कुछ विचार कर कहने लगा, "नहीं, यह नहीं है।

समाचार पत्रों में तो यह लिखा जा रहा है कि पाकिस्तान बन नहीं सकता।; बन जाय तो चल नहीं सकता; चल जाय तो उसमें हिन्दू रह सकेंगे; आज दुनिया में मत-मतान्तरों के आधार पर राज्य नहीं चल सकते। यह सब कुछ समाचार पत्रों में लिखा रहने पर भी केवल एक भ्रम है। मैं कलकत्ते में था, जब डायरेक्ट ऐक्शन का आरम्भ हुआ था और जो कुछ मैने वहाँ देखा था, उससे कई गुना अधिक पंजाब में, विशेष रुप में पश्चिमी पंजाब में, होने जा रहा है। समाचार-पत्रों में तो ऐसा नही लिखा होता।"

"तो समाचार-पत्रों में मिथ्या बातें छपती है क्या ?"

"उन पर भरोसा नही किया जा सकता। अपनी बुद्धि से काम लेना आवश्यक है।"

"पर चेतनानन्द के विषय में तो आपने अपनी बुद्धि से काम लिया प्रतीत नही होता ?"

"बुद्धि से ही तो कह रहा हूँ। समाचार-पत्रो में तो उसको एक देश-भक्त, पंजाब का नेता, शेरे-पंजाब इत्यादि नामों से सम्बोधन किया जाता है।"

"आप उसको ऐसा नही समझते क्या ?"

अब उस आदमी ने पुनः ध्यानपूर्वक अपने खद्दरधारी साथी की ओर देखा और कहा, "वह नेता तो है पर देश-भक्त नही ; वह शेरे-पंजाब भी हो सकता है, परन्तु हिन्दू-भक्षक शेर ही।"

"आप बहुत मेहनत से गुण-अवगुणों की तुलना कर रहे है।"

"इसी कारण मै ऐसे परिणाम पर पहुच रहा हूँ, जिस पर ये समाचार पत्र हमको ले जाना नही चाहते। वे तो चाहते है कि हिन्दू लोग अपना आचार-व्यवहार छोड़कर मुसलमानों में मिल जायँ, जिससे काग्रेस का नेतृत्व बना रहे। बुद्धि कहती है कि इसमें न देश का कल्याण है और न ही किसी व्यक्ति का।"

"यह माना, पर आप चेतनानन्द पर इतने क्यों पिल पड़े हैं ? उस बेचारे ने कौन पाप किया है ? क्या एक हिन्दू का मुसलमान लड़की से

विवाह करना पाप है ?"

"यदि मुसलमान लडकी से विवाह कर, वह देश के हित में सम्मिलित रहता, तब तो उसका ऐसा करना अति श्लाघनीय माना जाता; परन्तु परम्परा से चल रहे रिवाज़ के अनुसार वह बीवी के साथ ही मुस्लिम लीगी हो गया। मैं तो यह कह रहा था कि उसके ऐसा करने पर भी हमारा कहने का अधिकार नही है। हमारी आपत्ति तो उसके, अभी भी, काग्रेस का आदमी मान प्रतिनिधि चुने जाने पर है।"

खद्दरधारी इस बार हँसा नहीं, प्रत्युत गम्भीर हो गया। उसने कहा, "आप के कहने में तथ्य है। मैं आपको एक बात बताऊं·····?"

"क्या ?"

"वह चेतनानन्द मै ही हूँ। मैं कलकत्ता में अपनी बीवी से मिलकर आ रहा हूँ। वह मेरे साथ आने को तैयार नहीं हुई और मैं अकेला ही लौट रहा हूँ।"

वह ट्रिब्यून समाचार-पत्र पढने वाला व्यक्ति अवाक् रह गया। उसने चेतनानन्द को खरी-खोटी सुनाई थी और अब उसको अपने सामने बैठा देख लज्जा अनुभव करने लगा। वह खद्दरधारी उसकी परेशानी देख खिलखिलाकर हँस पड़ा और कहने लगा, "इसमे घबराने की कोई बात नही। आपने तो अपने मन की बात सत्य-सत्य कह दी है। आपका अनुमान उन बातो पर बना है जो आपको मालूम है। वे सब की-सब ठीक नही। इस कारण कुछ बातों में आपका अनुमान गलत प्रतीत होता है।"

"क्षमा करें, यदि मुझको मालूम होता कि आप ही चेतनानन्द हैं तो मैं आपके विषय में ऐसा न कहता। मन में चाहे कुछ हो, ज़ाहरदारी तो करनी ही पड़ती है।"

"तब तो और भी बुरी बात हो जाती। आपके मन में बात बैठी रह जाती और व्यर्थ की चापलूसी करने के अपराधी आप हो जाते।"

"मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ।"

"क्षमा करने की कोई बात भी तो हो। भ्रममूलक सूचनाओं के

आधार पर बने हुए विचार ही तो हैं न ? सूचनाओं की वास्तविकता को जानने की आपको आवश्यकता है। इस पर भी इतना तो मैं कह ही देता हूँ कि आपकी सब बातें असत्य नहीं हैं।"

(२)

"आपका यह कहना सत्य है कि मैंने पिछले निर्वाचनों में यह कहा था कि कांग्रेस के हाथों में हिन्दुओं के हितों की रक्षा होगी। मैंने यह भी अपने व्याख्यानों में कहा था कि पाकिस्तान बन नहीं सकता। मैंने यह भी कहा था कि हिन्दू महासभा एक देशद्रोहियों की संस्था है।

"परन्तु यह सत्य नहीं कि मेरे पिता ठेकेदार होने से सरकार के आदमी हैं। वे भाई परमानन्दजी के अनन्य भक्तों में से हैं। यह भी सत्य नहीं कि मैंने अपनी हिन्दू मँगेतर को छोड़कर मुसलमान लड़की से विवाह कर लिया था। बात इस प्रकार नहीं हुई। यह सत्य है कि मेरा विवाह नसीम से हुआ था और इस विवाह के कारण पिताजी के बहिष्कार मे तंग आकर मैंने बंगाल सरकार की नौकरी कर ली थी।

"परन्तु यह सत्य नहीं कि मैंने कलकत्ता के डॉयरेक्ट ऐक्शन के दिनों में मुसलमानों की सेवा अथवा सहायता की है। इसके विपरीत मैं एक हिन्दू परिवार की रक्षा करता हुआ घायल हुआ था और इसी कारण मुझको वहाँ की नौकरी छोड़नी पड़ी है। यही कारण है कि मेरी स्त्री नसीम मुझसे नाराज़ है और मेरे साथ आने को तैयार नही हुई।

"यह सत्य है कि कांग्रेस ने मुझको विधान सभा का सदस्य निर्वाचित किया है, परन्तु यह सत्य नही कि मैंने वह सदस्यता स्वीकार कर ली है। मैं वर्तमान परिस्थिति में कांग्रेस के विचारों से सहमत नहीं हूँ और मैं उसका प्रतिनिधि बनने के लिऐ तैयार नहीं।"

चेतनानन्द का साथी आवाक् मुख उसकी ओर अभी भी देख रहा था। चेतनानन्द को अपनी बात इस प्रकार स्पष्ट रूप में वर्णन करते देख उसका मन उसके लिए प्रशंसा से भर गया। उसने एकाएक चेतनानन्द

के घुटने को हाथ लगाकर कहा, "मैं क्षमा-याचना करता हूँ। मैं आपको ऐसा नहीं समझता था।"

चेतनानन्द ने उसके हाथ को ऊपर उठाकर कहा, "अज्ञान बहुत सी भूलों का कारण होता है। इस कारण जो मनुष्य ज्ञान-प्राप्ति में लीन रहता है, वह भूल करता हुआ भी भूल के फल का भागी नहीं होता। मेरे विषय में तो आपने बहुत-कुछ ठीक ही जाना है। केवल इतना जानना शेष था कि मैं अब कांग्रेस की विचारधारा को ठीक नहीं समझता। मैं उसमें सहयोग न देकर विरोध करने की बात सोच रहा हूँ।

"रही इन समाचार-पत्रों की बात, इनमें सत्य बहुत कम होता है। इन पर विश्वास करना ठीक नहीं।"

"तो फिर काम कैसे चलेगा? इन से प्रसारित असत्य के आधार पर बनी धारणाएँ घातक नहीं होंगी क्या?"

"इस समय देश की हत्या करने का श्रेय इन समाचार-पत्रों को ही मिलेगा। ये लोग ऐसे समाचार, जो महात्मा गांधी और उसके शिष्य-प्रशिष्यों की विचारधारा कि हिन्दू-मुसलमान एक ही जाति के अंग हैं, को गलत सिद्ध करें, नहीं छापते। जहाँ मुसलमान मारें, वह नहीं छप सकता; जहाँ हिन्दू मारें वह छाप कर हिन्दूओं को गाली देना अपना कर्तव्य मानते है। परिणाम यह हो रहा है कि सँसार की प्रायः सभ्य जातियाँ हिन्दुओं से घृणा करने लगी हैं।

"महात्माजी नौआखाली गए। वहाँ मुसलमानों ने उनके साथ भी बुरा व्यवहार किया; परन्तु ये समाचार-पत्र यही कहते रहे कि हिन्दू और मुसलमानों के सम्बन्ध सुधर रहे हैं। यह कितना असत्य भाषण है! मुसलमान महात्माजी का 'रघुपति राघव राजा राम' भी सुनने को तैयार नहीं होते थे और इस समाचार को ये पत्र इस कारण नहीं छापते थे कि कही महात्मा जी का कहना कि हिन्दू-मुसलमान एक हैं, असत्य सिद्ध न हो जावे।"

इस बात से तो पूर्व वक्ता बहुत ही गम्भीर विचार में पड़ गया। फिर धीरे-धीरे, मानों वह मन में युक्ति कर रहा हो, कहने लगा, "मुझको पंजाब

छोड़ देना चाहिए। वहाँ पर हमारी रक्षा करने वाला कोई नहीं है।"

"आप का नाम जान सकता हूँ क्या ?"

"मेरा नाम जगदेवसिंह है। हम पाँच भाई हैं। पिता अभी जीते हैं। माता जी का देहान्त हुए पन्द्रह वर्ष हो चुके हैं। सोलह अगस्त को मैं कलकत्ता था और जो कुछ मैंने वहाँ देखा है, जीवन-भर भूल नही सकता। तब से ही मैं अपने पिता व भाईयों को लिख रहा हूँ कि वहाँ अपना सब काम-धन्धा बन्द कर लखनऊ आ जावें। लखनऊ में मैंने एक बड़ा-सा मकान भी ले रखा है। मेरे से बड़े भाई कांग्रेस के कार्यकर्ता रहे हैं। वे सन् ४२ में पकड़े भी गए थे। मेरी बात को वे न स्वयं मानते हैं, न दूसरे भाईयों को मानने देते है। मैं उन को मनाने वहाँ जा रहा हूँ। मैं कह रहा हूँ कि एक वर्ष के लिए वे आ जायें, पीछे फिर वापिस चले जावें।"

"वापिस जाने का विचार छोड़ देना चाहिए।" चेतनानन्द का कहना था, "मुसलमानों की एक निश्चित योजना है कि पंजाब और बगांल से हिन्दुओं को डरा-धमका अथवा मारकर बाहर कर दिया जावे। यदि इस पर भी कही कोई हिन्दू रह जावे तो उसको बल-पूर्वक मुसलमान बना लिया जावे। इस कारण अपना सब सामान बेच कर अथवा जो उठाया जा सके, उठाकर ले आना चाहिए। वापिस जाने का अवसर नही आवेगा।"

"आप तो मुझ से भी अधिक निराश है।"

"मैं अपने ज्ञान के आधार पर अपनी सम्मति दे रहा हूँ।"

जगदेवसिंह ने ट्रिब्यून अमृतसर स्टेशन पर खरीदा था और उक्त वार्तालाप अभी चल ही रही थी कि गाड़ी लाहौर स्टेशन पर पहुँच गई। चेतनानन्द ने जगदेवसिंह को हाथ जोड़कर नमस्कार किया और लाहौर आने पर मिलने का निमन्त्रण दे दिया। पश्चात् गाड़ी से बाहर निकल आया। बाहर प्लेटफार्म पर दो-तीन सौ कांग्रेसी स्वयंसेवक और उस की बहिन रेवा, बहनोई महेश, कांग्रेस नेता डॉ० खन्ना, भूतपूर्व कांग्रेस के प्रधान

तथा वर्तमान मुस्लिम लीग के कार्यकर्ता बैरिस्टर सराजद्दीन और उन की स्त्री तथा चेतनानन्द की स्त्री नसीम की बहिन मुमताज उपस्थित थे।

ज्यूँ ही चेतनानन्द ने प्लेटफार्म पर कदम रखा कि डाक्टर खन्ना ने उसको पहिचाना और फूलों की माला ले उसकी ओर बढा। चेतनानन्द को भी एक क्षण में समझ में आगया कि उसको क्या करना चाहिए। वह पुनः डिब्बे का दरवाजा खोल अन्दर हो गया। कांग्रेस के स्वयंसेवक डाक्टर खन्ना के पीछे-पीछे 'महात्मा गांधी की जय, महात्मा गांधी की जय' पुकारते हुए वहां डिब्बे के सम्मुख खड़े हो गए। डाक्टर खन्ना ने माला चेतनानन्द को पहिनाने के लिए हाथ बढ़ाया तो उसने माला पहिनने से इन्कार कर दिया। इतने में सराजद्दीन और मुमताज भीतर चले आये। उन्होंने चेतनानन्द से पूछा, "नसीम नहीं आई क्या ?"

"नही।"

"क्यों ?"

"उसका पत्र आपके पास आवेगा।"

वे मुख देखते रह गए। इस पर डाक्टर खन्ना ने कहा, "हम समझे थे कि नसीम आपके साथ आवेगी।"

"तो फूलों की माला उसी के लिए थी ?"

"नही, चेतनानन्द जी ! आपको हमने विधान सभा में एक प्रतिनिधि चुनकर भेजा है।"

"पर मै आपका प्रतिनिधि नही बनूँगा। मेरा आपकी नीति पर विश्वास नही रहा।"

"यह बात तो घर चलकर विचार कर लेंगे। अभी तो आईए, इन लडकों को उत्साहित करना चाहिए।"

"जी नहीं।" चेतनानन्द ने दरवाजे के पास आकर कहा। पश्चात् वहां पर खड़ी भीड़ को वह कहने लगा, "ब्रदर वालन्टियर्स ! मैं चाहता हूँ कि आप मेरे स्वागत में भाग न लें। मैं आप को धोखे में नहीं रखना चाहता। मेरा महात्मा गांधी की फिलौसोफी और उनके कार्य के ढंग पर विश्वास

नहीं रहा। मैं कांग्रेस का सदस्य भी नहीं। मैं कांग्रेस का प्रतिनिधि भी नहीं। इस कारण मेरा कहना है कि आप मेरा स्वागत न करें। आप को निराशा होगी। मैं पहले चेतनानन्द से भिन्न दूसरा ही चेतनानन्द बन गया हूँ।"

इस समय कुली उसका सामान बाहर निकालने लगे और लोग बितर बितर् उसका मुख देखते रह गए। महेश और रेवा भीड़ को चीरते हुए उसके साथ स्टेशन से बाहर निकल गए। एक स्वयंसेवक ने इसका अर्थ समझने के लिए डाक्टर खन्ना से पूछा, "डाक्टर साहब! क्या हो गया है इनको?"

"ये मुस्लिम लीगी हो गए हैं।" डाक्टर खन्ना ने सिर हिलाते हुए कहा।

समीप बैरिस्टर सराजद्दीन खड़ा था। वह डाक्टर साहब की बात सुन ठहका मारकर हँस पड़ा। यह सुन स्वयंसेवक और डाक्टर खन्ना उसका मुख देखने लगे। इस पर उसने नाक चढ़ाकर कहा, "डाक्टर साहब! मुस्लिम लीगी नहीं, यह हिन्दू सभाईट हो गया है।"

"दोनों का एक ही अर्थ है।"

"यही तो तुम कांग्रेस वालों की ख़ाम-ख़्याली है।"

(३)

चेतनानन्द स्टेशन से बाहर निकल, महेश की मोटर में सवार हो घर को चल पड़ा। मार्ग में रेवा के पूछने पर उसने नसीम के न आने का कारण बताया। "वह कहती थी कि पाकिस्तान बनेगा और वह पाकिस्तान में रहेगी। यदि मैंने उस देश में मुसलमान बनकर रहना हो तो मैं उसके पास वहीं रह जाऊं। कलकत्ता पाकिस्तान में रहेगा। जिन्ना साहब कलकत्ता को पाकिस्तान में शामिल करना चाहते हैं और इस के लिये तैयारियां की जा रही हैं। इसलिए वहां कलकत्ते में रहना ठीक रहेगा। मैं उसके इस प्रस्ताव को मान नहीं सका। इस कारण मुझको खाली हाथ लौटना पड़ा है।"

महेश और रेवा विस्यम में चेतनानन्द का मुख देखते रह गए।

कितनी ही देर तक सब चुप रहे और गाड़ी मोहनलाल रोड पर उसके पिता के घर जा पहुँची। भोजन के समय बातचीत पुनः नसीम के विषय में चल पड़ी। चेतनानन्द ने कहा, "पिताजी! पिछले वर्ष निर्वाचनों के फल प्रकाशित होने पर आपने कहा था कि कांग्रेस के लिए केवल दो मार्ग रह गए हैं। या तो ये निर्वाचनों में दिए अपने वचनों पर दृढ रहें और मुसलमान विचारधारा का विरोध करें, या अपना वचन भग करें और पकिस्तान बनना स्वीकार करें। उस समय मैं आपकी बात मिथ्या समझता था, परन्तु आज मै मानता हूँ कि कांग्रेस ने दूसरा मार्ग स्वीकार कर लिया है, उसने वचन भंग किया है और वह पाकिस्तान स्वीकार करेगी।"

"छोड़ो इस बात को चेतन! बताओ नसीम का क्या होगा?"

"देश में तो मुझे एक भी मुसलमान ऐसा दिखाई नहीं देता, जो पाकिस्तान बनने पर उस की सहायता न करना चाहता हो। नसीम भी एक मुसलमान है।

"आजकल सुहरावर्दी साहब के घर में नित्य मजलिसें होती हैं और उनमें खुल्लमखुल्ला यह कहा जा रहा है कि भले ही पूर्ण कलकत्ता को खंडहर कर देना पड़े, परन्तु हिन्दुस्तान में नहीं रहने दिया जायगा। लाहौर के विषय में उन सब का यह विचार है कि यूनियन मन्त्री-मंडल एक दो महीने में टूट जाएगा और तब यहाँ मुस्लिम लीगी सरकार बनेगी, जो लाहौर को एक महीने में राख का ढेर कर देगी। हिन्दू डरा-धमका कर भगा दिये जावेंगे। जो बच जावेंगे, वे मौत के घाट उतार दिए जावेंगे।

"नसीम कलकत्ता में मुसलमान औरतों को, कलकत्ता में सिविल वार होने के समय के लिए तैयार कर रही है।

"भैया!" रेवा का कहना था, "अब तुम नसीम से मुक्ति पा गए हो। क्या यह ठीक न होगा कि किसी दूसरी का भी विचार किया जाए?"

"मैं समझता हूँ कि उससे पहिले कुछ और सोचने को है। अभी अभी रेल में एक यात्री मेरा नाम लेकर गालियाँ दे रहा था। उसका कहना था कि पंजाब भर में घूम-घूमकर चेतनानन्द कहता रहा है कि

कांग्रेस हिन्दुओं की रक्षा करेगी और पाकिस्तान नहीं बनने देगी। कांग्रेस तो अपने वचन से हट गई है, पर मुझको अपना वचन पालन करना है।"

"तो पार्वती इस वचन पालन में बाधक होगी क्या ?"

"यह मैं नहीं जानता। पर मुझको करने के लिए बहुत कुछ है। उससे अवकाश मिलने की आशा कम है। मैं आप सब के लिए एक नवीन समाचार लाया हूँ। वह अभी यहाँ के मुसलमानों को भी विदित नहीं। सुहरावर्दी साहब के घर में होने वाली एक गुप्त कॉन्फ्रेन्स को मैं सुन पाया था। उसमें यह तय हुआ है कि पन्द्रह दिसम्बर से यूनियनिस्ट सरकार को उलटने के लिए आन्दोलन आरम्भ हो जावेगा। प्रान्त भर में 'मुस्लिम नैशनल गार्ड्स' जलूस निकालेंगे और यूनियनिस्ट मुसलमानों को डरा-धमकाकर यूनियनिस्ट पार्टी से बाहिर कर देंगे। पश्चात् मन्त्री-मंडल को त्याग पत्र देने पर विवश कर देंगे। जिस दिन मुस्लिम लीगी सरकार बनी, उसी दिन से पंजाब भर में डायरेक्ट ऐक्शन आरम्भ हो जायेगा और मक्खियों को अपने छत्तों से भगा देने की भाँति, पंजाब भर के हिन्दुओं की सम्पत्ति को फूंक कर, उनको पंजाब से बाहर निकाल दिया जायेगा तथा यहाँ पाकिस्तान स्थापित हो जायेगा।

"इसका अर्थ यह है कि पंजाब में हिन्दुओं को अपना अस्तित्व रखने के लिए इस प्रान्त में सिविल वार की तैयारी करनी होगी। मेरा पार्वती से विवाह इस तैयारी का अंग नहीं हो सकता।

"इसके साथ ही एक बात तुम भूल जाती हो कि मेरा नसीम से विवाह 'स्पेशल मैरिज ऐक्ट' के अनुसार हुआ था। जब तक उससे सम्बन्ध-विच्छेद नहीं हो जाता, तब तक दूसरा विवाह नहीं किया जा सकता।"

(४)

चेतनानन्द ने नगर के प्रसिद्ध व्यक्तियों की एक सभा बुलाई और उस में पंजाब पर आने वाले दुर्दिनों का चित्र खींच कर बताया।

चेतनानन्द का कहना था, "पंजाब में मुस्लिम नैशनल गार्ड्स' की

संख्या एक लाख के लगभग पहुँच गई है और इनको शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित किया जा रहा है। इसके लिए धन मुसलमान रियासतें और बंगाल सरकार दे रही हैं। कलकत्ता, नौआखाली और बम्बई तथा अहमदाबाद में जो कुछ हो चुका है, वह आप सब को भली भाँति विदित है। उन दिनों पर यदि मुस्लिम लीग को पूर्ण सफलता नहीं मिली तो इसका कारण मुस्लिम नेताओं की हिन्दुओं के विषय में गलत धारणा है।

"कलकत्ता में सावरकर अथवा खुदीराम बोस के विचारवाले क्रान्तिकारियों ने हिन्दुओं की रक्षा में जी-जान की बाजी लगा दी थी।

"नौआखाली बरबाद हो गया है, परन्तु वहाँ बलवा करना तो एक परीक्षण मात्र था।

"बम्बई, अहमदाबाद में बलवा हिन्दुओं पर अत्याचार कर कांग्रेसियों को डराने के लिए था, परन्तु अब पंजाब की बारी है।

"इससे मैंने आप लोगों को इस विषय पर विचार करने के लिए बुलाया है। यदि हम कुछ कर सकते हैं तो करें।"

डाक्टर खन्ना भी इस सभा में आमंत्रित था। वह लाहौर की ओर से पंजाब असेम्बली का मेम्बर था और कांग्रेस के प्रमुख कार्यकर्त्ताओं में से था। डाक्टर, चेतनानन्द के विचार सुन आश्चर्य अनुभव कर रहा था। चेतनानन्द ने अपना वक्तव्य समाप्त कर जब उपस्थित सज्जनों को अपने विचार प्रकट करने का निमन्त्रण दिया तो डाक्टर खन्ना पूछ बैठा, "मै चेतनानन्द जी से पूछना चाहता हूँ कि उनका इस सभा को बुलाने का प्रयोजन, 'सिविल वार' रोकने का ही है न ?"

"नही।" चेतनानन्द ने पुनः खड़े होकर कहा, "सिविल वार आरम्भ करना अथवा आरम्भ होने से रोकना मेरे अधीन नहीं है। मैंने तो आप लोगों को इस कारण बुलाया है कि आप समझ लें कि सिविल वार आरम्भ हो रही है और उसमें आपने कुत्ते और बिल्लियों की भाँति मरना है या बहादुर पुरुषों की भांति लड़ते-लड़ते पीछे हटना है, अथवा आगे बढ़ना है।"

डाक्टर खन्ना बैठा नहीं था। जब चेतनानन्द कह चुका तो वह बोल

उठा, "अभी सिविल वार आरम्भ नहीं हुई। हमारा कर्तव्य है कि इसको रोकें। इसको रोकने का सबसे श्रेष्ठ उपाय यह है कि हिन्दू और मुसलमानों की संयुक्त शान्ति सभाएँ बनाई जाएँ। चेतनानन्द जी ने सबसे भारी भूल यह की है कि केवल हिन्दुओं को इस सभा में आमन्त्रित किया है।

"मैं यह प्रस्ताव रखता हूँ कि इस सभा को आज स्थगित कर दिया जाए। एक दो दिन में इसको पुनः बुलाया जाए और उसमें मुसलमान नेताओं को भी बुलाया जाए।"

एक उर्दू के समाचार पत्र संचालक मिस्टर अर्जुन देव ने डाक्टर खन्ना से पूछा, "डाक्टर खन्ना क्या यह प्रस्ताव कीमती समय को नष्ट करने के लिए उपस्थित कर रहे है, या उनको विश्वास है कि कोई मुसलमान हिन्दुओं से शान्ति कायम रखने के लिए सहयोग देगा ?"

"मुझको विश्वास है कि मुसलमानों में अच्छे लोग हमारे साथ सहयोग देंगे।"

"तो मेरी सम्मति है कि डॉक्टर साहब उन विश्वस्त मुसलमान मित्रों से बातचीत कर शान्ति सभायें स्थापित करें। १८८५ से लेकर आज तक कांग्रेस ने जो इतनी शान्ति सभाएं की हैं और उनसे जो अच्छे परिणाम निकले हैं, उनमें और वृद्धि करें। हमें कोई आपत्ति नही।"

"पर आपकी इस प्रकार की जातीय सभाएँ तो हमारे शान्ति स्थापन कार्य में बाधा खड़ी कर रही हैं।"

अर्जुन देव ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर पूछा, "क्या डॉक्टर साहब बताएँगे कि मुस्लिम लीग की जो सभाएँ डायरेक्ट ऐक्शन की तैयारी के लिए हो रही हैं और लाखों की संख्या में जो मुस्लिम नैशनल गार्ड्स भर्ती हो रहे हैं, क्या यह सब उनकी शान्ति सभाओं की सहायता में हो रहे है?"

"देखिए अर्जुन देव जी !" डॉक्टर साहब ने कुछ तेजी में कहा, ,'यदि आप इस प्रकार से हवाई घोड़े पर सवार रहे तो देश को बरबाद करके रहेंगे।"

"और मैं कह रहा हूँ कि यदि शान्ति शान्ति की अफ़ीम खिलाकर,

हिन्दुओं को सुलाये रखा तो उनकी हत्या का [illegible] आप पर होगा। यह देशद्रोह आपके गले में मढ़ा जाएगा।"

इस पर तो डाक्टर खन्ना क्रोध में लाल-पीले होते हुए और यह कहते हुए कि "मैं इस प्रकार की बदतमीजी नहीं सुन सकता," मीटिंग से बाहर निकल गया। उसके साथ बहुत-से अन्य सभासद् भी चले गए। चार-पाँच लोग जो रह गए थे, वे एक-दूसरे का मुख देखने लगे। अर्जुनदेव ने कहा, "अब समय शान्ति स्थापित करने का नहीं रहा। अब हमको एक छोटी सी 'ऐक्शन' समिति बना लेनी चाहिए। हमको हिन्दुओं के धन-दौलत और औरतों की रक्षा की योजना बनानी चाहिए।"

एक रायसाहब तेजनारायण भी इस सभा में उपस्थित थे। आप लाहौर के वकीलों में चोटी की ख्याति रखते थे। आपने अर्जुनदेव के प्रस्ताव के अव्यवहारिक-पन पर प्रकाश डाला। आपने कहा, "मैं ऐक्शन समिति बनाने के हक में हूँ, परन्तु इसलिए नहीं कि हमने किसी की रक्षा करनी है। हमको इस समिति का उद्देश्य यह बनाना चाहिए कि हमने पंजाब के उन इलाकों से हिन्दुओं को, जहाँ वे कम संख्या में हैं, निकालकर उन इलाकों में ले जाना है, जहाँ वे अधिक संख्या में है।"

रायसाहब की बात मान ली गई। चेतनानन्द का कहना था, "यह भी रक्षा का एक ढंग है। यदि हम यह भी कर सकें तो एक भारी सेवा होगी।"

इस बात के अनुसार कार्य करने के लिए पंजाब का नक्शा बिछाकर लाल पैंसिल से मुस्लिम बहुसंख्यक और हिन्दू बहुसंख्यक स्थानों पर निशान लगाये जाने लगे। कुछ कार्य हो जाने पर एक उपसमिति बना दी गई। इसमें चेतनानन्द, अर्जूनदेव और रायसाहब तेजनारायण के नाम लिखे गये।

इस कमेटी ने अगले दिन रायसाहब की कोठी पर मिलने का निश्चय किया और सभा समाप्त हुई।

(५)

अर्जुनदेव अपने समाचार-पत्र के लिए सम्पादकीय लिख रहा था कि

दो सौ पुलिस सिपाही उसकी कोठी को घेरकर खड़े हो गए। उसको वारंट दिखाया गया। वह 'पब्लिक सेफ्टी ऐक्ट' की धारा तीन के अनुसार अनिश्चित समय के लिए पकड़ लिया गया।

उसी प्रातःकाल चेतनानन्द भी पकडकर जेल में डाल दिया गया। इस प्रकार हिन्दुओं को अल्पसंख्यक-क्षेत्रों से निकालने की योजना आगे चल नहीं सकी।

जीवनलाल द्वारा चेतनानन्द और अर्जुनदेव की पंजाब हाईकोर्ट में 'हेबियस कार्पस पेटीशन' कर दी गई।

अभी पेटीशन चल रही थी कि पंजाब में मुस्लिम लीग के डायरेक्ट ऐक्शन का प्रथम चरण, युनियनिस्ट पार्टी को निकालने का प्रयत्न आरम्भ हो गया। सब बड़े-बड़े नगरों में मुस्लिम गार्ड्स की देख रेख में भारी जलूस निकलने आरम्भ हो गए, जिनमें युनियनिस्ट मिनिस्टरी की निन्दा की जाने लगी।

प्रान्त-भर में दफा १४४ लगा दी गई, परन्तु इसको तोड़कर जलूस निकालने वालों के विरुद्ध कोई कार्यवाही नही की गई। २४ जनवरी १९४७ को 'मुस्लिम नैशनल गार्ड्स' एक अनियमित संस्था घोषित कर दी गई। इसके साथ ही हिन्दुओं की एक संस्था 'राष्ट्रीय स्वयसेवक संघ' को भी अनियमित घोषित किया गया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने तो इस आज्ञा का उल्लंघन नही किया और अपने स्थान की तलाशी हो जाने दी, परन्तु 'मुस्लिम नैशनल गार्ड्स' के लाहौर के कार्यालय की तलाशी में बाधा उपस्थित की गई। मुस्लिम लीग के मुख्य-मुख्य नेता कार्यालय में पहुँच गये और उन्होंने पुलिस को कार्यालय में जाने से रोका। वे पकड़ लिये गए और तलाशी हुई। तलाशी में सहस्त्रों 'हैलमेट' (लोहे की सिर पर पहिनने की टोपियां) छुरियां, बर्छे, वर्दियां और भडकाने वाला साहित्य मिला।

जब मुस्लिम नैशनल गार्ड्स पर से प्रतिबन्ध हटा लिया गया तो सरकार की दुर्बलता प्रकट हो गई। पश्चात् पुलिस के कार्य में बाधा डालने वाले मुस्लिम लीगी नेताओं पर से मुकद्दमा उठा लिया गया।

इसमें एक बात हुई कि चेतनानन्द और अर्जुन देव को नहीं छोड़ा गया और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के विरुद्ध कुछ भी बात न होते हुए, उस के साथ मुस्लिम नैशनल गार्ड्स के समान ही व्यवहार किया गया।

चेतनानन्द के पकड़े जाने के पश्चात् जब उसके पिता ने हाई कोर्ट में 'पैटिशन' की तो डॉक्टर खन्ना और कुछ अन्य काँग्रेसी नेताओं का एक सन्देश समाचार-पत्रों में छपा। उस सन्देश का भावार्थ यह था,

"हम पंजाब के हिन्दू नेता, देश के वातावरण और पंजाब की परिस्थिति को देख कर पंजाब के हिन्दुओं से यह अपील करते हैं कि वे इस संकट के काल में शान्त रहे। उनकी ओर से किया गया कोई ऐसा कार्य, जिस पर यह सन्देह मात्र भी हो सके कि वे किसी प्रकार की लड़ने की तैयारी कर रहें हैं, पंजाब के हिन्दुओं के लिए घातक होगा। कोई खुफिया अथवा केवल हिन्दुओं की सभा न करें। इससे सन्देह उत्पन्न होने को स्थान है।

"हम सरकार का इस कार्य में पूरा समर्थन करेंगे, जब वह साम्प्रदायिक सभा करने वालों पर अपने कठोर हाथों से कार्य करेगी।"

जीवनलाल इस सन्देश को पढ़कर आग-बबूला हो गया। उसको यह बात समझने में बहुत युक्ति नहीं करनी पड़ी कि उसके लड़के और अर्जुन देव के पकड़े जाने की सराहना की गई है। वह अपने क्रोध को मन में नहीं रख सका। इसको पढ़ते ही, समाचार-पत्र हाथ में ले, अपनी सैर में ले जाने वाला मोटा डंडा ले डॉक्टर खन्ना की दुकान पर जा पहुँचा।

डॉक्टर साहब का चिकित्सा-कार्य तो कुछ था नहीं, परन्तु बहुत से लल्लो पच्चो करने वाले उनके पास बैठे रहते थे। इस समय भी आठ-दस आदमी मोटे खद्दर की धोती कुर्ता और टोपियाँ पहिने डॉक्टर साहब से गप्पें चला रहे थे।

वही सन्देश, जिससे जीवनलाल क्रोध से पागल हुआ वहाँ आ रहा था, एक व्यक्ति पढ़कर सुना रहा था। जब वह पूर्ण सन्देश पढ़ चुका तो खन्ना ने कहा, "इससे तो चेतनानन्द का मुकद्दमा ठप्प हो जायेगा।"

खन्ना के इस कहने पर तो सब उपस्थित लोग खिलखिला कर हँस

पड़े। इस समय जीवनलाल लम्बे-लम्बे पग उठाता हुआ वहाँ आ पहुँचा।

"आइए लाला जी! आइए। कैसे आना हुआ है?" खन्ना ने प्रसन्न वदन उठकर जीवनलाल का स्वागत करते हुए पूछा।

जीवनलाल ने डॉक्टर साहब को बैठने का संकेत कर समाचार-पत्र, जिसमें सन्देश छपा हुआ था, उसके सम्मुख फेंकते हुए कहा, "यह मुण्डपना तुम छोड़ोगे या नहीं?"

जीवनलाल की आँखों से चिंगारियाँ निकल रही थीं। इस पर खन्ना ने जीवनलाल से कहा, "लालाजी! क्या हुआ है? कौन किसी का सिर फोड़ दिया है?"

"यह सिर फोड़ने से भी अधिक है। यह सरासर बदमाशी और बेईमानी है?"

"तो आपका मतलब यह है कि एक छोकरे के लिए देश का सत्यानाश कर दें?"

"अरे मूर्ख! देश तो बचेगा या नहीं, भगवान् जाने। पर एक निर्दोष को दण्ड मिल जायगा; दोषी को प्रोत्साहन मिलेगा; तुम पाप के भागी बनोगे। और मैं पूछता हूं कि तुमको हिन्दुओं का नेता किसने बनाया है?"

"हिन्दुओं ने, पिछले निर्वाचनों में।"

"तुमने झूठ बोलकर, सीधे-साधे लोगों को धोखा देकर वोट लिए थे। यह धोखा खुल गया है।"

"आपका दिमाग खराब हो रहा है। आज भी पंडित जवाहरलाल अथवा महात्मा गांधी आएँ तो लाखों उनके चरणों पर फूल चढ़ाने वाले एकत्रित हो जाते हैं। आपको कौन पूछता है? चले जाओ यहाँ से।"

"इसका तो यही अर्थ निकलता है कि तुम लोग लाखों को धोखा देना जानते हो। देखो..."

वह आगे कह नहीं सका। कुछ लोगों ने उसको पकड़कर बाहर की ओर धकेलने का यत्न किया। जीवनलाल ने इसका विरोध करने का यत्न किया।

इसमे उसका डडे वाला हाथ ऊपर उठ गया। किसी ने यह समझ लिया कि वह उसे का प्रहार करेगा। उसने डडा छीनने का यत्न किया, परन्तु जीवनलाल ने छोड़ा नही। इस छीना-झपटी में डंडा जीवनलाल की अपनी नाक पर ही जा लगा। अन्त मे जीवनलाल को पकडकर मकान के बाहिर लाया गया और उसकी पगडी और डडा उसके हाथ में देकर उसको लोग दूर ले गए। उसके नाक मे रक्त-प्रवाह होने लगा था।

चेतनानन्द और अर्जुनदेव दोनो लाहौर के किले मे रखे गए थे। उनको एक समाचार-पत्र मिलता था। उस पत्र मे उन्होंने मुस्लिम लीग के सत्याग्रह के आरम्भ का समाचार पढा। पश्चात् डॉक्टर खन्ना इत्यादि का सन्देश पढा और उस के अगले दिन निम्न समाचार पढने को मिला।

'लाला जीवनलाल का अपने इकलौते बेटे के पब्लिक सेफ्टी ऐक्ट की धारा तीन के अनुसार पकडे जाने पर मस्तिष्क खराब हो गया है। इस अवस्था में उन्होने, अपने डडे से, जो वह प्रायः अपने हाथ मे रखते है, डॉक्टर खन्ना पर प्रहार किया। इसमें लाला जीवनलाल को नाक पर चोट आई और वे हस्पताल में पडे है।'

इस समाचार से चेतनानन्द और अर्जुनदेव की चिन्ता बढ़ गई। इसे मिटाने का कोई साधन नही था। जिस दिन ये हाईकोर्ट में अपनी पैटिशन सुनने गए, उस दिन उन्हे लाला जीवनलाल से पूर्ण समाचार मिला। इससे उनको जहाँ लाला जी के स्वस्थ होने के समाचार से सन्तोष हुआ, वहाँ डॉक्टर खन्ना के व्यवहार पर क्रोध भी आया।

'हैबियस कार्पस' पैटिशन का परिणाम यह हुआ कि चेतनानन्द और अर्जुनदेव दोनों छूट गए। सरकार उनके विरुद्ध कोई अपराध स्थापित नहीं कर सकी। इस पर भी उनके छूटने मे दो मास लग गए और इस प्रकार फरवरी १९४७ का मध्य हो गया।

इस समय 'मुस्लिम नैशनल गार्ड्स' की ओर से दफा १४४ भंग का आन्दोलन जोरों पर चल रहा था। पंजाब का कोई नगर अथवा कसबा ऐसा नही रहा था, जहाँ नित्य जुलूस न निकलता हो और उसमें यूनियनिस्ट

सरकार की निन्दा न की जाती हो।

जिस दिन हाई कोर्ट ने चेतनानन्द और अर्जुन देव को छोड़ा, उससे अगले दिन मुस्लिम जनता की एक भारी भीड़ हाई कोर्ट में घुस गई। भीड़ हाईकोर्ट की इमारत के बरामदे में घूमती रही और नारे लगाती रही। भीड़ ने न्यायाधीशों के कमरों में घुसकर खिड़कियों और सामान को तोड़-फोड़ डाला और कुछ लोग इमारत की छत पर चढ़ गए। वहाँ लगे सरकारी झण्डे को फाड़ डाला।

यह सब अनियमितता होती रही और पंजाब पुलिस, सरकार और भारत सरकार तथा फौज मुख देखती रही। चेतनानन्द जब छूटा तो डॉक्टर खन्ना के मकान पर गया और समाचार-पत्र में छपे समाचार के विषय में पूछने लगा, "आपने यह समाचार पत्रों में भेजा था?"

"हाँ; क्यों?"

"पिताजी का मस्तिष्क खराब नहीं था। आपका दिमाग बिगड़ गया है। तुम कांग्रेस कमेटी के मुख्य नेता हो और इस कांग्रेस कमेटी को पिछले निर्वाचनों में जीत कराने में मेरा कम हाथ नहीं था। इस कारण यह बात मैं पूछने आया हूँ कि पंजाब में जो कुछ हो रहा है, उसको रोकने के लिए क्या कर रहे हो?"

"क्या हो रहा है पंजाब में?"

"मुसलमानों को कानून भंग करने की आदत पड़ रही है। पुलिस को कानून भंग होता देखने का स्वभाव हो रहा है। सरकार ने अपना अधिकार जनता के हाथ में दे दिया है और केन्द्रीय सरकार देश में सुव्यवस्था रखने का कार्य भूल गई है। यह अन्धेर-गर्दी एक परिणाम उत्पन्न कर सकती है और वह है लाखों निर्दोष प्राणियों की हत्या, अपमान और सर्वनाश।"

"तो मैं क्या करूँ?"

"दिल्ली जाकर अपना रोना रोओ। श्री पटेल भारत सरकार के होम-मैम्बर हैं। उनको यह सब दुर्व्यवस्था बताओ और आग्रह करो

कि इस को रोकें।"

"हम ऐसा नहीं समझते। यह उफान अपने-आप बैठ जावेगा और इस प्रकार का आन्दोलन दबाने से दबेगा नहीं, प्रत्युत बढ़ेगा।"

"यदि नौआखाली में इसका विरोध नहीं हुआ तो वह दब गया है क्या ?"

"उसका उत्तर आपने बिहार में दे तो दिया है।"

"उत्तर मैंने दिया है या किसी अन्य ने, बताने की आवश्यकता नहीं। हाँ सरकार ने बिहार में बलवा रोकने का यत्न जो कुछ किया है, वह नौआखली में नहीं कर सकी। फिर दिल्ली में भी अभी तक मुसलमानों के आन्दोलन को रोक नहीं सकी। इससे हानि हिन्दुओं को हो रही है। पंजाब में भी यदि यह कानून भंग की बात चलती रही तो हानि हिन्दुओं को होगी।"

"यह सब व्यर्थ है। इस प्रकार राज्य नहीं चल सकता।"

"तो अब राज्य चलाने की बात आ गई है क्या ? हम अंग्रेज़ों की निन्दा इस बात पर तो किया करते थे कि राज्य अन्याय से नहीं चलेगा। एक-दो मास के राज्य में ही न्याय-अन्याय का विचार जाता रहा है क्या ?"

डॉक्टर खन्ना नहीं माने और पंजाब की कांग्रेस कमेटी ने प्रान्त की वास्तविक परिस्थिति से केन्द्र के लोगों को या तो परिचित नहीं किया, या उन्होंने परिस्थिति की गम्भीरता को नहीं पहिचाना।

(६)

जिस दिन चेतनानन्द जेल से छूटा था, उस दिन चेतनानन्द की बहन रेवा भी हाईकोर्ट में गई हुई थी। वहाँ से वह सीधी अपने ससुराल को ही लौटी। चेतनानन्द ने कहा भी था, "रेवा, हमारे यहाँ नहीं चलोगी क्या ?"

"इस समय नहीं भैया ! वहाँ यह समाचार पाने की कोई प्रतीक्षा कर

रहा है।"

चेतनानन्द इसका अर्थ समझता था, इससे उसने आग्रह नहीं किया। महेश तो चेतनानन्द और उसके पिता के साथ गाड़ी में बैठ मोहनलाल रोड वाले मकान पर चला गया और रेवा अपनी मोटर स्वयं चलाती हुई अपने ससुराल वाले मकान, निस्बत रोड पर जा पहुँची।

उसका अनुमान ठीक था। नीचे की मंजिल पर ही उसकी ननद पार्वती, चिक के पिछे खड़ी, उसके आने की प्रतीक्षा कर रही थी। वकीलों की सम्मति से सब चेतनानन्द के छूटने की आशा कर रहे थे और पार्वती भी आशा लगाए हुए थी। इस पर भी जब तक समाचार न मिल जाय, चित्त में चिन्ता लगी रहनी स्वाभाविक ही थी।

रेवा ने मोटर मकान के आगे खड़ी की, तो पार्वती चिक से बाहर निकल आई और प्रश्न-भरी दृष्टि से रेवा की ओर देखने लगी। रेवा ने भी उसके मन की अशान्ति का अनुमान लगा, उसको सान्त्वना देने के लिए मोटर से उतरते ही, उसका हाथ पकड़कर कहा, "छूट गए है।"

रेवा ने अनुभव किया कि उसकी ननद ने सुख का साँस लिया है। उसने पार्वती के मुख पर देखा। उसकी मोटी-मोटी आँखों मे आँसू छलक रहे थे। वह उसको भीतर ले गई और ऊपर की छत पर अपने कमरे में ले जाकर कहने लगी, "बहन पार्वती! कहो तो बात आगे चलाऊँ?"

"क्या लाभ होगा इससे? जब तक पहला विवाह है, तब तक विवाह का प्रश्न उठ ही नहीं सकता।"

"ठीक है, पर उसके लिए भी तो कुछ किया जा सकता है।"

"कुछ भी हो। मैं अपने विवाह के लिए किसी दूसरे का विवाह तोड़ने का विचार भी नहीं कर सकती।"

"तो फिर कैसे होगा?"

"हो जायगा। अभी जल्दी क्या है?"

पार्वती को चेतनानन्द के छूट जाने से सन्तोष और प्रसन्नता हुई थी। कई दिनों के पश्चात् आज वह घर के अथवा पढ़ने-लिखने के कार्य में

आनन्द अनुभव करने लगी थी। उसके पिता और माता ने इस परिवर्तन को देखा और इसके कारण को अनुभव किया।

अब वे इस बात के लिए तैयार थे कि इन दोनों का विवाह हो जाय, परन्तु वे भी इसमें कोई मार्ग नहीं पाते थे। अतएव दिन व्यतीत हो रहे थे। पार्वती और चेतनानन्द की परस्पर भेंट तो उस दिन के पश्चात् नहीं हुई थी, जब विवाह के लिए निश्चित समय और स्थान पर पार्वती नहीं पहुँची थी।

पार्वती सनातन धर्म कन्या पाठशाला में पढ़ाती थी। इससे वह नगर के भिन्न भिन्न घरों और मुहल्लों में हो रही बातों से परिचित रहती थी। लड़कियाँ और अन्य अध्यापिकाएँ, अपने-अपने घरों में हो रही चर्चा का उल्लेख वहाँ किया करती थीं। नगर का वातावरण विक्षुब्ध था। प्रत्येक व्यक्ति किसी अति भयंकर बात के होने की आशंका से भयभीत था। इस वातावरण में कलकत्ता और नौआखाली ने अपना रंग चढ़ा रखा था। लोगों का ऐसा अनुमान था कि यूनियनिस्ट सरकार में हिन्दू और सिक्खों के सम्मिलित होने से हिन्दुओं पर होने वाले अत्याचारों में यदि सरकार इनकी रक्षा नहीं कर सकेगी तो आततायियों की सहायता भी नहीं करेगी। इस वातावरण में महात्मा गांधी जी के नाम से एक विज्ञप्ति समाचार पत्रों में और पंजाब के गाँव-गाँव में विज्ञापनों द्वारा घोषित की गई। इस विज्ञप्ति में यह कहा गया कि हिन्दुस्तान अखण्ड देश है। हिन्दु-मुसलमान भाई-भाई हैं और किसी भी स्थान पर बहु-संख्यक जाति को अल्प-संख्यकों की रक्षा करनी चाहिए और अल्प-संख्यकों को अपने बहुसंख्यक भाइयों पर भरोसा और विश्वास करना चाहिए।

इस विज्ञप्ति से हिन्दुओं में एक मिथ्या विश्वास उत्पन्न हो गया और रायसाहब तेज नारायण, अर्जुनदेव और चेतनानन्द से निकाली गई विज्ञप्ति को लोगों ने निरर्थक मान रद्दी की टोकड़ी में फेंक दिया। इनकी विज्ञप्ति इस प्रकार थी—

'कलकत्ता और नौआखली में हुए हत्याकांडों की ओर ध्यान कर,

पंजाब में नित्य मुस्लिम लीग के स्वयंसेवकों से नियम भंग हो रहा देख कर, हम पंजाब के हिन्दुओं को सचेत करना चाहते हैं कि उनको अपने धन–जन की रक्षा के लिए बड़े–बड़े कसबों में एकत्रित हो जाना चाहिए। सरकार मुस्लिम लीग को आज कानून तोड़ते देख अपने को अशक्त पाती है। कल इन्हीं लोगों द्वारा हत्याकाण्ड होने पर भी वह शक्तिहीन अनुभव करेगी। ऐसी सरकार के भरोसे पर न रहकर अपनी रक्षा के लिए अपने बाल–बच्चों को लेकर रावी नदी के इस ओर आ जाना चाहिए।'

यह विज्ञप्ति समाचार-पत्रों ने नहीं छापी। छपवाकर बटवाई गई तो स्थान-स्थान की कांग्रेस कमेटियों ने इसका विरोध किया और हिन्दुओं को यह समझाया कि प्रथम तो पाकिस्तान बनेगा ही नहीं और यदि बन भी गया तो राजा और प्रजा का पवित्र सम्बन्ध राज्य बदलने पर भी बना रहेगा।

महात्मा गांधी के आग्रह के सम्मुख चेतनानन्द के कहने की अवहेलना ही नहीं प्रत्युत निन्दा भी की गई।

(७)

पार्वती श्री केवल नारायण बैरिस्टर की लड़कियों को उनके घर पढ़ाने जाया करती थी। श्री केवल नारायण सामाजिक जीव थे और नगर के प्रसिद्ध आतिथ्येयों में एक थे। उनके यहाँ हिन्दू और मुसलमान दोनों एक ही दृष्टि से देखे जाते थे। यद्यपि वे सक्रिय राजनीति में भाग नहीं लेते थे, तो भी पाश्चात्य विचारधारा में पले तथा पढ़े होने के कारण राजनीति से अछूते भी नहीं थे।

उनके घर में कही जाने वाली प्रगतिशीलता की धूमधाम थी। धन-दौलत, सुख-आनन्द और खाना-पहिरना ही परिवार के सदस्यों का मुख्य कार्य था। अन्य सब कार्य जीवन की इस धुरि पर ही चलते थे।

इस घर में पार्वती-जैसी लड़की लड़कियों की शिक्षिका न मानी जाती यदि गणित की शिक्षा देने वाली कोई अन्य शिक्षिका मिल सकती।

पार्वती को श्री केवल नारायण की लड़कियां मीना और नीना, हँसी में उड़ा दिया करती थीं। केवल गणित सीखने के समय वे उसके आश्रय के बिना काम नही चला सकती थी।

आज नगर में एक बहुत बड़ा जुलूस निकाला गया था। मुस्लिम लीग के 'नैशनल गार्ड्स' और आस पास के गाँवों के मुसलमान भारी संख्या में एकत्रित हो, उस जुलूस में सम्मिलित हुए थे। जुलूस निस्बत रोड से निकला तो एक घण्टा लग गया। इस कारण पार्वती पढ़ाने के लिए एक घण्टा देर से पहुंची।

वहाँ श्री केवल नारायण की कोठी में भारी चहल-पहल थी। इससे पार्वती कोठी के पिछवाड़े के दरवाजे से भीतर चली गई। मीना का पूरा नाम मोहनी और नीना का नलिनी था। मीना नीना तो लाड़ से पुकारे जाते थे। मीना, जो नीना से दो वर्ष बड़ी थी और कोठी पर आये हुए बीसियों मेहमानों की आवभक्त में लगी थी, पार्वती को इस कुसमय आया देख क्रुद्ध हो उठी। वह 'इंटरमीजियेट' में पढ़ती थी। उसने 'सायंस' और 'मैथमैटिक्स' लिया हुआ था। उसकी बहिन नीना मैट्रिक की परीक्षा देने वाली थी। इस कारण पार्वती के आते ही नीना तो अपनी पुस्तकें ले उसके पास चली आई, परन्तु मीना नहीं आई। पार्वती ने उसे अतिथियों के सत्कार में लगे देख लिया था। इस कारण वह नीना को ही, उसकी कठिनाइयों को समझ, उनको दूर करने का ढंग बताने लगी।

बीच में मीना आई और पार्वती से बोली, "आज आप बहुत देरी कर आई हैं ?"

"मार्ग रुका हुआ था।"

"मार्ग में कोई साँप बैठा था क्या ?"

"मुस्लिम नैशनल गार्ड्स का जुलूस निकल रहा था और वह एक घण्टा तक चलता रहा।"

"तो क्या वे आपको खा रहे थे ?" मीना ने नाक चढ़ाकर पूछा।

"वे बहुत भयंकर जन्तु हैं। मुझे उनसे भय लग रहा था।"

"बहुत सुन्दर अप्सरा हैं न आप! छी! हमको ऐसी भीरु अध्यापिका नहीं चाहिए।"

पार्वती पैन्सिल से नीना को कापी पर एक बीजगणित का प्रश्न समझा रही थी। उसने पैन्सिल और कापी नीना के सामने रख दी और एक क्षण तक विस्मय में मीना का मुख देखा और पश्चात् मुस्कराकर बोली, "बहुत अच्छी बात है। मैं चलती हूँ।"

नीना ने पार्वती का हाथ पकड़ लिया और कहा, "बहिन जी! इनकी बात का ध्यान न करिये। मेरी तो परीक्षा में केवल एक मास रह गया है। मेरा तो सब काम चौपट हो जावेगा।"

पार्वती ने बहुत आराम से अपना हाथ छुड़ाकर कहा, "अब आपको पढना है तो मेरे घर पर आना होगा।" इतना कह वह कोठी से बाहर निकल गई। नीना अवाक्-मुख खड़ी रह गई। मीना नाक चढा उसको जाते देखती रही।

रात मीना की बात पर घर में वादविवाद हुआ। लड़कियों की माँ नीना का पक्ष ले रही थी और बैरिस्टर साहब मीना की बात की दाद दे रहे थे।

इस पर नीना ने कहा, "मेरी तो परीक्षा समीप आगई है। मुझे गणित कम आता है। अब मैं क्या करूँ?"

"तुमको एक मास्टर रख दूंगा?"

"पर मैं पुरूषों से लड़कियों को पढने नही दूंगी।" माँ ने कहा।

"क्यों? क्या है पुरुषों को?"

"क्या है पुरूषों को? आप नहीं समझते क्या? मैं आजकल की दुर्व्यवस्था के वातावरण में लड़कियों को व्यर्थ के भय में नहीं डाल सकती।"

उत्तर मीना ने दिया, "मुझको कोई भय प्रतीत नहीं होता।"

"तुम मूर्ख हो मीना!"

"मैं पढ़ी लिखी, प्रगतिशील विचार रखने वाली हूँ माता जी!

आपकी तरह मैं पिछली सदी में पैदा नहीं हुई थी।"

इस उलाहने से बैरिस्टर साहब हँस पड़े। अगले दिन से लड़कियों को पढाने के लिए एक प्रोफेसर जी० रसूल आने लगे। नीना को उससे सन्तोष नही हुआ। इस कारण वह अपनी माँ से, कहकर पार्वती से उसके घर जाकर पढने लगी।

(८)

पार्वती को कहा गया कि वह फिर बैरिस्टर साहब की कोठी में पढाने जाया करे, परन्तु वह नही मानी। नीना ने स्वयं कहा, "बहन जी। मेरा यहाँ आने-जाने में एक घण्टा व्यय हो जाता है। आप कोठी आ जाया करेंगी तो आपका वेतन दुगुना करवा दूंगी।"

"नहीं। अब आपकी कोठी पर नही जाऊँगी।"

"क्यों ?"

"मेरी इच्छा ऐसी है।"

"आपको मीना बहन की बात बुरी लगी है न ?"

"हाँ; परन्तु वह ही एक कारण नहीं है। मैं तो यह भी समझती हूँ कि तुम यदि मैट्रिक की परीक्षा के लिए पढने आती हो, तो वह इतनी तुच्छ वस्तु है कि उसके लिए इतना भय सिर लेना ठीक नही।"

"क्या भय है ? उस दिन भी आपने यही कहा था।"

"यह जो मुसलमान जसूस निकाल रहे हैं, यह एक अति भय की वस्तु है। कभी तुमने विचार किया है कि इनका प्रयोजन क्या है ?"

"यूनियन मिनिस्ट्री को हटाकर लीगी मिनिस्ट्री स्थापित करना चाहते हैं।"

"इसके लिए तो विधान में उपाय है। मिनिस्ट्री के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास कर दें।"

"इन लोगों के पक्ष में बहुमत नहीं है।"

"तो आगामी चुनाव तक प्रतीक्षा कर सकते हैं। पर ये लोग तब तक

प्रतीक्षा नहीं करेंगे। इसमें कारण है। इनको पंजाब में कलकत्ता और नौआखाली–जैसा हत्याकाण्ड करना है। यह तब तक नहीं किया जा सकता, जब तक खिज़र हयात पंजाब के प्रीमियर हैं। इन जुलूसों से ये लोग खिज़र मिनिस्ट्री को हटाकर लीगी मिनिस्ट्री स्थापित करेंगे और तब हिन्दुओं के लिए पंजाब में रहना असम्भव कर देंगे।

"मैं डरती रहती हूँ कि प्रान्त भर में इन जुलूसों का बल बढ़ता जाता है और किसी भी क्षण ये लोग कानून को हाथ में लेकर वही कुछ न कर दें, जो कलकत्ता और नौआखाली में हुआ था और मैं कहीं सड़क पर चलती हुई उस भीषण कांड की लपेट में न आ जाऊँ। ऐसा मेरे मन में भय बना रहता है।"

"आप वास्तव में भीरु हैं। मुझको तो डर नहीं लगता।"

"तुम साहसी लड़की हो। मैं तुम्हारी प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकती। इस पर भी मैं तुमको यह सम्मति देती हूँ कि अकेली पैदल इधर मत आया करो।"

पर मीना नहीं मानी। बीस फरवरी आई, जिस दिन भारत को स्वराज्य मिलने की अन्तिम तिथि नियत की गई। इंग्लैण्ड के 'प्राईम–मिनिस्टर' ने यह घोषणा कर दी कि वहाँ की सरकार का यह निश्चित मत है कि जून १९४८ तक भारत का राज्य हिन्दुस्तानियों के हाथ में सौंप दिया जायेगा। इस घोषणा ने मुस्लिम लीग में घबराहट उत्पन्न कर दी और लीगियों ने अपने आन्दोलन को शीघ्र सफल करने के लिए इसको अधिक उग्र कर दिया। अब गलियों और बाज़ारों में इक्का–दुक्का मारपीट की घटनाएँ भी होने लगीं।

चौबीस फरवरी के दिन एक बहुत बड़ा जुलूस मोची दरवाज़े के बाहर से निकलकर चैम्बरलेन रोड से होता हुआ निस्बत रोड पर से गुज़र रहा था। इस दिन जुलूस का लक्ष्य असेम्बली चैम्बर था।

जब जुलूस निस्बत रोड और मैक्लोड रोड के मेल पर पहुँचा, तो नीना हाथ में एलजैबरा की पुस्तक और कापी-पैन्सिल लिये माल की ओर से

ाती हुई रुक गई। सड़क पर इतनी भीड़ थी कि गुज़रने को मार्ग नहीं था। नीना सड़क के किनारे खड़ी हो गई। जुलूस उसके सामने से गुज़र रहा था। एक भारी भीड़ आई तो उसके खड़े रहने को भी स्थान न रहा और भीड़ के साथ वह धकेली जाने लगी। जुलूस के इस भाग में पचास-साठ औरतें भी थीं। नीना धकेल कर उन औरतों में कर दी गई। वहाँ वह पुरुषों के धक्कों से तो बच गई, परन्तु उसके लिए जुलूस के साथ-साथ जाने के अतिरिक्त और कोई चारा न रहा। जुलूस में सम्मिलित औरतें बुर्का पहने हुई थीं। नीना को बिना बुर्के के देख औरतों ने समझा कि वह किसी ऊँचे घराने की लड़की है और बुर्का नहीं पहिनती।

औरतों के चारों ओर युवकों ने हाथ पकड़कर घेरा डाला हुआ था। इन घेरा डालने वालों में कम से कम एक आदमी था, जो नीना के मन की परेशानी को अनुभव कर रहा था। वह उसकी ओर देख रहा था। नीना की दृष्टि उसकी ओर गई तो वह आँख मीच कर मुस्करा दिया।

जुलूस असेम्बली चैम्बर पहुँचा, तो नीना ने बाहर निकलने का यत्न किया। जब वह जाने लगी तो एक औरत ने उसकी बाँह पकड़कर कहा, "खिज़र का 'स्यापा' करने नहीं चलोगी ?"

"क्या ?"

"खिज़र की कोठी पर स्यापा होगा।"

नीना निर्णय नहीं कर सकी कि वह कहे अथवा न कि वह हिन्दू है। उसको भय था कि यदि ऐसा कह दिया तो वे लोग उसको तंग करेंगे। इससे वह चुप रही। पुरुष वहीं रह गए। औरतें वहाँ से खिज़र हयात खाँ की कोठी की ओर चल पड़ीं। नीना उनके साथ थी। जब वे माल पर पहुँची तो दस बारह युवक, जो जलूस में इनके चारों ओर घेरा डाले हुए थे, उनकी रक्षा के लिए उनके आगे पीछे थे। इनमें वह युवक भी था, जो नीना की ओर देखकर मुस्कराया था।

जब स्त्रियां खिज़र हयात की कोठी पर पहुँचीं तो वे युवक दूर ही खड़े हो गए। औरतों को प्रहरियों ने नहीं रोका। औरतें कोठी में जाकर

ड्राइंग रूम मे घुस गईं और वहाँ पर बैठ कर उन्होंने बुर्के उठा लिए।

नीना एक ओर खड़ी हो गई और देखने लगी कि ये क्या करती है। औरतों को वहाँ देखकर घर की नौकरानियाँ और अन्य स्त्रियां वहाँ आ उनको देखने लगी। बाहर से आई एक ने रोनी सी आवाज निकालकर चिल्लाना शुरु किया। "ऊं ऊं मेरे वीरा तेरी जवानी नखुट गई वे खिज़र वीरा। ऊं हूं ऊं हूँ"

इस पर अन्य स्त्रिया एक सुर ताल मे कहने लगी, 'हाय हाय' और इसके साथ साथ अपनी छाती पीटने लगी।

नीना की हंसी निकल रही थी, जो वह बहुत यत्न से रोक रही थी। इस समय नौकरानियों ने झगड़ा करना चाहा, परन्तु घर की एक बड़ी औरत ने उन्हें कहा, "यहाँ से चली जाओ।" सब नौकरानिया ड्राइंग रुम से बाहर निकल गई। आधा घन्टा के लगभग वे औरतें वहां सियापा करती रही। जब उन्होने देखा कि उनके रोने धोने को कोई ध्यान नही देता तो उन्होंने कोठी का फर्निचर तोडना फोडना शूरू कर दिया।

नीना ने अवसर पा वहाँ से खिसक जाना उचित समझा। ड्राइंग रूम से बाहर को जाने वाले दरवाजे पर स्यापा करने वाली औरतों मे से कुछ खडी थी। उनका मतलब यह था कि स्यापा करने वाली औरतों में से कोई चली न जाय। इस कारण नीना नौकरानियों के साथ कोठी के भीतर चली गई। सब नौकरानिया एक कमरे में एकत्रित हो गई। वहां एक औरत, जो नीना का अनुमान था कि खिज़र हयात की पत्नी है, बैठी रो रही थी। कुछ औरतें उसको ढाढस बँधा रही थी, "बेगम! इन कुत्तों के भौकने से कोई मर थोड़े ही जायगा?" इस पर भी वह रो रही थी। इतने में प्रीमियर साहब कोठी के पिछवाड़े से भीतर आ गए। वह वहाँ उस कमरे में पहुँचे तो सब नौकरानियां और दूसरी औरतें बाहर निकल गई। उनके साथ नीना भी बाहर एक बरामदे में आ गई। वह चाहती थी कि कहीं से मार्ग मिल जाए तो वह इस झमेले से बाहर निकल जाय। परन्तु वह एक कमरे से दूसरे में और

दूसरे से तीसरे में और फिर बरामदे में आ पहुंची। नौकरानियां और अन्य स्त्रियाँ व पुरुष इतने भयभीत थे कि उसकी ओर कोई देख नहीं रहा था।

अन्त में कोठी के पिछवाड़े से बाहर जाने का मार्ग मिल गया। वहाँ भी एक प्रहरी खड़ा था। पर उसे किसी ने रोका नहीं।

वह अभी घूमकर कोठी के बाहर पहुंची ही थी कि वही युवक, जो तब से ही उस के साथ-साथ था, जब से वह भीड़ की लपेट में आई थी, उसके साथ हो लिया। कुछ दूर जाकर वह खड़ी हो उसको डाटकर बोली, "मेरे साथ क्यों आ रहे हो?"

"इसलिए कि तुम अकेली हो।"

"मुझको इस बात की चिन्ता नहीं। तुम चले जाओ।"

"तुम हिन्दू हो?"

"तुम को इससे क्या मतलब है? मैं कोई भी हूं।"

"मेरा जो मतलब है, वह फिर कभी बतलाऊंगा। चलिए आप को घर छोड़ आऊँ।"

नीना इससे बहुत परेशान हुई। वह वहाँ से हिली नहीं। इस पर उस युवक ने कहा, "मत समझो कि यहाँ तुम्हारी मदद के लिए कोई आ जायगा। आज नगर में हमारा राज्य है। पुलिस वाले भी हम को कुछ कह नहीं सकते। देखा नहीं तुमने पंजाब के प्रीमियर साहब भी बेबस हैं।"

नीना उसकी ढीठता की बातें सुन चुपचाप चल पड़ी। वह सीधी अपनी कोठी की ओर चलती गई। उसने पढने जाने का विचार छोड़ दिया था। वह युवक उसके पीछे-पीछे उसकी कोठी तक गया।

(९)

उस दिन की घटना से नीना इतनी भयभीत हुई कि वह दो दिन तक पढ़ने नहीं जा सकी। उसने अपनी माता को उस दिन की घटना नहीं बताई। उसका विश्वास था कि उसका कोठी से बाहर अकेले निकलना बन्द हो जायेगा। पिताजी से वह यह बात कह नहीं सकती थी। उसको लज्जा

लगती थी। इससे उसने अपनी बहिन मीना से पूर्ण घटना कह दी। मीना सुनकर खिलखिलाकर हँस पड़ी। नीना को उसके हँसने में न तो कोई अर्थ प्रतीत हुआ और न ही कारण। इससे उसने कहा, "दीदी! पार्वती बहिन जी ठीक ही कहती थीं कि आज कल अकेले घर से निकलना ठीक नहीं है।"

"क्या? तभी तो वह इतनी बड़ी हो गई है और उसको कोई पति नहीं मिला। देखो नीना! मैं एक बात बताती हूँ। हम ने माता–पिता के कहने पर किसी को भी अपना पति नहीं मान लेना। हमने अपना जीवन स्वयं बनाना है।"

"तो इसका उस बात से क्या सम्बन्ध है?"

"यदि हम बाहर घूमें-फिरेंगी नहीं तो हमको उचित वर क्या घर बैठे ही मिल जावेगा। देखो, इस समय चार लड़के हैं जो मेरे आगे-पीछे चक्कर काटा करते हैं। मैं उनमें से एकसे भी सन्तुष्ट नही। इसी कारण मैंने अभी किसी को भी कुछ नहीं कहा। वह चारों-के-चारों मुझको प्रसन्न करने का यत्न करते रहते है।

"इन लड़कों के अतिरिक्त एक प्रोफेसर भी हैं, जो मुझे गणित पढ़ाने आते हैं।"

"तुम बहुत बुरी हो दीदी! तुमको लज्जा नही आती, अपने मन में ऐसा विचारते हुए?"

"तुम अभी बच्ची हो। लज्जा किस बात की? देखो पिताजी और माताजी पति-पत्नी हैं। चाचा और चाची भी पति-पत्नी हैं। हम भी किसी की पत्नी बनेंगी। संसार में सब के साथ यह बात है तो फिर इसमें लज्जा किस बात की है? मैं तो अपना जीवन-साथी स्वयं चुनना चाहती हूँ। इसके लिए मेरा चुनाव-क्षेत्र विस्तृत होना चाहिए। यह तब ही हो सकता है, जब मैं लड़कों से परिचय रखूँ।"

नीना को यह सब विलक्षण प्रतीत हुआ। इस पर भी उसको एक बात समझ आ गई कि मीना ने पार्वती से झगड़ा शायद मिस्टर रसूल को अपने समीप करने के लिए किया है। उसको यह सन्देह हुआ कि मीना

ने एक माकूल सवाल पूछा है। खिज़र मिनिस्ट्री ने इन दफा १४४ तोड़ने वालों को गिरफ्तार कर मुकद्दमा क्यों नही चलाया ? इसका जवाब यूनियनिस्ट मिनिस्टर साहब के पास नही है। मैं बताता हूँ कि ऐसा मुमकिन नही था। यह मिनिस्ट्री कुछ खुदगर्ज़ लोगों ने अपने जाती फायदे के लिए कायम की है। इसमें क्या हिन्दु, क्या मुसलमान और क्या सिक्ख मैम्बर न तो अपनी-अपनी कौम की नुमायन्दगी कर रहे है और न ही कौम के फायदे की बात कर रहे है। इसलिए इनके पीछे कोई आदमी नही है। यही वजह है कि जनता के आन्दोलन को रोकने के लिए इन में दम नहीं है।"

इस इलज़ाम को सुन सब चुपचाप एक दूसरे का मुख देखने लगे। इस समय अर्जुन देव, छः फुट दो इंच लम्बा कद, अच्छे डील-डौल वाला, जो सभा में सबसे पीछे की कुर्सी पर बैठा था और सब कुछ सुन रहा था, उठ कर कहने लगा, "मै सराजद्दीन साहब की बात की ताईद करता हूँ। यह मौजूदा मिनिस्ट्री और इससे पहले की यूनियनिस्ट मिनिस्ट्री दर पर्दा सूबा की सब ज़िम्मेदार नौकरियाँ मुसलमानों को देती रही है और मुसलमान सब के सब इस वक्त इस बात पर मुतफिक हैं कि पंजाब में एक आज़ाद इसलामी हकूमत बनानी चाहिए। यूनियनिस्ट मिनिस्ट्री में सब हिन्दू और सिक्ख सदस्य कौमी हित के विचार से काम नही कर रहे। वर्ना वे सब की सब जिम्मेदारी की पदवियों को मुसलमानों के हाथ में जाने न देते।

"अब बात साफ है। मुसलमानों का मौजूदा आन्दोलन पाकिस्तान बनाने के लिए है। इस कारण सब मुसलमान अफसर अथवा मामूली दर्जे के मुसलमान इस अन्दोलन के हक में हैं और सरकार, चाहे अथवा न चाहे, इस अन्दोलन को दबाने में कामयाब नही होगी।

"यूनियनिस्ट मिनिस्ट्री उस रेशम के कीड़े की भाँति है, जो अपने बनाये जाल में स्वयं ही फंस जाता है।

"मैं यूनियनिस्ट सदस्यों को बता देना चाहता हूँ कि वे पंजाब में शान्ति स्थापित रखने में असमर्थ सिद्ध हुए हैं। इस कारण उनको पदत्याग कर देना चाहिये और पंजाब का प्रबन्ध फौज के अधीन कर देना चाहिये।"

इस पर डाक्टर खन्ना झट से खड़े हो पूछने लगे, "फौज के अधीन क्यों ? यह तो पंजाबियों के लिए अपमान का कारण बन जाएगा।"

"इसलिए कि" अर्जुन देव ने कहा, "तुम लोग नालायक सिद्ध हुए हो। पूरे प्रान्त में कानून भंग किया जा रहा है और तुम्हारी पुलिस इस बग़ावत को रोकने में असमर्थ सिद्ध हुई है।"

"मैं तो वज़ीर नहीं हूँ।" डाक्टर खन्ना ने उत्तर दिया।

"आपकी पार्टी का एक प्रतिनिधि तो मंत्री मंडल में है। आज कानून भंग होते हुए डेढ़ मास व्यतीत हो चुका है। क्या किया है उसने ?"

इस समय बैरिस्टर सराजद्दीन ने कहा, "फौजी हकूमत की क्या ज़रूरत है ? मुस्लिम लीगी मिनिस्ट्री बनने में सहायता क्यों न की जाए"

"इसलिए कि मुस्लिम लीग कानून तोड़ने में सबसे आगे है। कानून तोड़ने वाली जमायत को सरकार चलाने का अधिकार नहीं हो सकता।"

अब बैरिस्टर केवल नारायण ने इस वादविवाद को बन्द करने के विचार से कहा, "मेरा आशय यह नही था। मैने आप सब लोगों को इस कारण बुलाया था कि पंजाब में कोई संयुक्त मन्त्रिमंडल बन सके तो अच्छा नहीं होगा क्या ?"

इस पर डाक्टर खन्ना ने इस प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए कहा, "मैं कांग्रेस कमेटी की ओर से इस प्रस्ताव का स्वागत करता हूँ। इस संयुक्त मन्त्रिमण्डल में तीन लीगी मन्त्री, दो कांग्रेमी और एक अकाली पार्टी का होना चाहिए।"

सराजद्दीन ने डाक्टर की बात काट दी और खड़े होकर कहा," अब लीगी वज़ारत होगी और वह पाकिस्तान कायम करने की कोशिश करेगी। यदि कांग्रेस हमारी इस कोशिश में मदद करना चाहती है तो हम उसके एक-आध नुमाइन्दे को वज़ारत में शामिल कर लेंगे।"

इस पर सभा बिना किसी परिणाम पर पहुँचे भंग हो गई। जब सब लोग उठ खड़े हुए तो प्रोफेसर रसूल और प्रोफेसर नारायण डाक्टर खन्ना के पास आकर कहने लगे, "आपने इस अवसर से लाभ नहीं उठाया।"

"मुस्लिम लीग के व्यवहार की उपस्थिति में कोई समझौता होना सम्भव नहीं है।"

मिस्टर रसूल ने कहा, "समझौते की जरूरत नहीं है। जरूरत इस बात की है कि पंजाब के हिन्दू, मुसलमानों की हकूमत में भी रहना सीखें।"

प्रोफेसर नारायण का कहना था, "पाकिस्तान एक सबल राज्य होगा। आर्थिक विचार से भी सफल होगा। इस कारण पंजाब के हिन्दुओं को इस राज्य में रहने में हानि नहीं होनी चाहिए।"

मीना, डॉक्टर खन्ना को चुप देख, यह समझ रही थी कि प्रोफेसर रसूल की युक्तियों का उत्तर उसके पास नहीं है।

(११)

उसी रात मीना, नीना, उनकी माता, बैरिस्टर केवल नारायण और प्रोफेसर रसूल खाने पर बैठे थे। प्रोफेसर रसूल मीना को पढ़ाकर प्रायः साढे आठ बजे छुट्टी पाता था और प्रायः वह भोजन के लिए आमन्त्रित कर लिया जाता था।

उस सायं चाय की पार्टी के आयोजन में बैरिस्टर साहब असफल होने से चिन्तित थे। उनको ऐसा देख मिस्टिर रसूल, जो मीना और नीना के बीच बैठा था, कहने लगा, "आपने यह सभा बुलाई ही क्यों थी? एक बात तो आपको अब तक विदित हो जानी चाहिए थी कि मुसलमान और हिन्दुओं में बुनियादी इखतिलाफ है। वह पार्टियों में चाय पीने से मिट नहीं सकता।"

"क्या फरक है प्रोफेसर साहब?" नीना ने पूछा।

"मुसलमान और हिन्दू दो कौमें हैं। इनके लिए अलहदा-अलहदा राज्य चाहिए। कांग्रेस के लोग इस फरक को नहीं मानते। इस कारण इनमें मेल नहीं हो सकता।"

"पर आप तो जानते हैं, जो कल हिन्दू थे आज मुसलमान हैं। तो

भिन्न-भिन्न जातियाँ कैसे हो गई ?"

"वैसे ही जैसे , जो एक दिन नौर्मन थे दूसरे दिन अंग्रेज हो गए थे।"

"पर हिन्दू से मुसलमान तो एक दिन में होता है।"

"इस लिए कि खयालात बहुत जल्दी बदल सकते है। इसलाम एक ऐसी कौम है, जिसके बनने में एक खास किसम के खयालात काम करते हैं। इसलाम कोई 'जियोग्रफिकल' कौम नही है।"

केवल नारायण के घर तो मनुष्य के लिए प्रगति और निर्वाह, दो ही विचार के मुख्य विषय रहते थे। इस कारण नीना को प्रोफेसर रसूल की बात समझ नहीं आई।

जब सब खा रहे थे तो नीना ने अपने मन में उठ रहे विचारों के समाधान के लिए बातचीत आरम्भ कर दी, "प्रोफेसर साहब ! आपका अभी तक विवाह क्यों नहीं हुआ ?"

इस प्रश्न से मिस्टर रसूल ने घूम कर उसकी आँखों में देखा। नीना की आँखों में शरारत दिखाई देती थी। मिस्टर रसूल इसका अर्थ नही समझा। उसने कुछ उत्तर देने के लिए कह दिया, "इसलिए कि मेरी पसन्द की लड़की अभी नहीं मिली।"

"आपकी आयु तो काफी बड़ी हो गई है ?"

"हाँ ! बत्तीस वर्ष है। मैंने बहुत सी लडकियों को देखा है, जो मेरे पसन्द आई है। उन्होंने मुझको पसन्द नहीं किया। और जिनको मैं पसन्द आया हूँ वे मुझ को जँची नहीं।"

"कोई ऐसी है, जो आपको जँची हो तो बताइए मैं आपकी मदद कर दूँगी।"

"तुम मुझ पर इतनी मेहरबानी करोगी क्या ?"

"आप पिता जी के मित्रों में से हैं। बहिन मीना के उस्ताद हैं।"

"यह सब ठीक है। पर जब तक मुझको यह यकीन न हो जाए कि मेरी कोशिश के कामयाब होने की कुछ उम्मीद है, तब तक मैं बताना नहीं चाहता।"

"यह यकीन आपको किस तरह से होगा ?"

"उसके मन की बात जानने की कोशिश कर रहा हूँ।"

"खैर ! जैसे आपकी मरज़ी। मैं तो आपकी मदद करने को तैयार हूँ।"

"मैं तुम्हारा बहुत शुक्रिया अदा करता हूँ। शायद तुमसे मदद लूँगा भी, मगर अभी नहीं।"

दूसरी ओर बैरिस्टर साहब मीना से कह रहे थे, "कल या परसों खिज़र हयात अपने मन्त्री-पद से त्याग-पत्र दे देंगे। गवर्नर मुस्लिम लीग को मन्त्री मण्डल बनाने का निमन्त्रण देंगे। इससे यहाँ पर मुसलमानों का शुद्ध राज्य स्थापित हो जावेगा। पंजाब के हिन्दू एक गुलाम की हालत में हो जावेंगे। हमारा कारोबार और जायदाद सब खतरे में पड़ जावेगी।"

"तो क्या होना चाहिए, पिता जी ?"

"मैंने आज सभा बुलाकर यत्न किया था कि बनने वाले मन्त्री-मण्डल में हिन्दुओं को उचित भाग मिल जाए, परन्तु ऐसा नहीं हो सका। अब मेरे लिए तो एक ही मार्ग दिखाई देता है।"

"क्या ?" मीना ने पूछा।

"हम सब मुसलमान हो जावें। हमारी योग्यता और शिक्षा का ध्यान रखकर मुस्लिम लीग हमारी सेवाओं को स्वीकार करेगी। हम तो पहिले ही न हिन्दू हैं और न मुसलमान। हमारे विचार ऐसे है, जो किसी भी मजहब के नही माने जा सकते। इससे यदि मुसलमान बनने से हम अपने जीवन को सुखमय बना सकें, तो हानि क्या है ?"

बैरिस्टर साहब के दूसरी ओर मीना की माँ बैठी थी। उसके कान में भनक पड़ गई कि उसका पति क्या कह रहा है। इस कारण उसने घूमकर पूछा, "क्या कहा है आपने ?"

बैरिस्टर साहब समझते थे कि मीना की माँ इस बात को पसन्द नहीं करेगी। इससे बोले, "फिर बताऊँगा।"

"अभी क्यों नहीं ? मैं समझती हूँ कि आपका मुसलमान हो जाने का विचार ठीक नहीं है।"

"तुम बात को इतनी जल्दी समझ नहीं सकोगी।"

शायद बात बढ़ जाती, परन्तु इस समय नौकर ने भीतर आकर बताया कि डाक्टर खन्ना मिलने आये हैं।

बैरिस्टर साहब ने कहा, "जाकर कहो कि यदि उनको खाने की मेज पर बैठने में आपत्ति न हो तो आ सकते हैं।"

डाक्टर खन्ना आ गए। इससे इधर मीना की माँ और बैरिस्टर साहब की बात बन्द होगई और दूसरी ओर प्रोफेसर रसूल और नीना की बातचीत बन्द हो गई। सब का ध्यान डाक्टर खन्ना की ओर चला गया। डाक्टर खन्ना के आगे प्लेट लगा दी गई और खाना परस दिया गया। डाक्टर साहब ने खाते हुए अपने आने का प्रयोजन वर्णन कर दिया।

"इस समय आपको कष्ट न देता, परन्तु बात आवश्यक थी, इस कारण चला आया हूँ। मैंने अभी विश्वस्त सूत्र से पता पाया है कि प्रीमियर साहब ने अपना त्याग पत्र दे दिया है। उस दिन, औरतों के उन की कोठी में जाकर "सियापा" करने से, खान साहब की बेगम हठ कर रही थीं कि त्याग पत्र देकर किसी विदेश में चले जावें। उनको भय है कि खुदाबख्श, सिन्ध के प्रीमियर, की भांति वे भी मार डाले जावेंगे।"

बैरिस्टर केवल नारायण हँस पडा। उसने कहा, "मुझको इस बात का पता आज दोपहर से है। मगर जहाँ तक मैं समझता हूँ प्रीमियर साहब ने अभी त्याग पत्र नहीं दिया। वे चाहते थे कि एक संयुक्त मन्त्री-मण्डल बन सकता तो उनके त्याग-पत्र के साथ ही उसका नाम दिया जा सकता था; परन्तु ऐसा अभी तक नहीं हुआ।"

"कैसे हो सकता है? संयुक्त मन्त्री–मन्डल बिना मुस्लिम लीग के सहयोग के क्या अर्थ रख सकता है? इसी विचार से आपके पास आया हूँ। आप यदि चाहें तो मुस्लिम लीग वालों से इस विषय पर बात-चीत करें।"

"इसी प्रयोजन से मैंने सायंकाल चाय पर आप सबको बुलाया था। परन्तु कुछ परिणाम नहीं निकला!"

"एक बार फिर यत्न करिए ।"

"मैं अभी टेलीफोन पर बात करता हूँ । परन्तु आपकी ओर से क्या शर्त दूँ ?"

"उस समय मैंने कांग्रेस की ओर के दो मन्त्री लेने के लिए कहा था । अब मैं यह प्रस्ताव करता हूँ कि मन्त्रीमण्डल में छः मुसलमान मन्त्री तीन हिन्दु और दो सिक्ख हों । छः मुसलमानों में एक यूनियनिस्ट और पाँच लीगी । तीन हिन्दुओं में दो कांग्रेसी और एक स्वतन्त्र । दो सिक्खों में एक अकाली और एक स्वतन्त्र ।"

"देखिए, पंजाब मुस्लिम लीग के प्रधान ने मुझको यह कहा है कि सात मन्त्रियों में से पाँच लीग के होंगे और एक हिन्दुओं का और एक सिक्खों का । वे कांग्रेस को हिन्दुओं से पृथक् नहीं मानते । इसी प्रकार अकालियों और सिक्खों में अन्तर नहीं मानते । उनकी दृष्टि में यूनियनिस्टों का कोई अस्तित्व नही है ।"

भोजनोपरान्त बैरिस्टर केवल नारायण ने लीग के प्रधान को फोन किया । वहाँ से जो उत्तर मिला उससे उसको बहुत निराशा हुई । उन्होंने टेलीफोन बन्द कर डाक्टर खन्ना से कहा, "वे कहते हैं कि पंजाब की वजारत का मसला सारे हिन्दुस्तान का सवाल है और मिस्टर जिन्ना से पूछे बिना वे कुछ नहीं कर सकते । एक बात उनके दिमाग में स्पष्ट है कि पंजाब मुसलमानों का है । पहली बात तो, वज़ारत मुकम्मिल तौर पर उन लोगों की होगी, जो पाकिस्तान के हक में है । जब यह तबदीली का ज़माना गुजर जावेगा, तब वे सोचेंगे कि गैर मुसलमानों का यहाँ की हकूमत में क्या और कितना हाथ होना चाहिए ।"

डाक्टर खन्ना जैसे आए थे, वैसे ही लौट गए । उसे जाता देख प्रोफेसर रसूल की हँसी निकल गई । मीना और नीना उससे बातें कर रहीं थीं । दोनों उसकी हँसी को सुन प्रश्न-भरी दृष्टि से उसकी ओर देखने लगीं । प्रोफेसर रसूल ने अपना मतलब समझाने के लिए उनको कह दिया, "ये कांग्रेसी अभी तक समझ नहीं सके कि हिन्दुस्तान में क्या हो रहा है ? मैं

समझता हूँ कि वे हिन्दू-सभाई, देखिए मैं उनका नाम भूल गया हूँ, इन कांग्रेसियों से मुल्क की हालत को ज़्यादा अच्छी तरह से समझते हैं।"

कुछ देर ठहर कर प्रोफेसर रसूल फिर कहने लगा, "पंजाब में इन्कलाब हो रहा है। यहाँ मुस्लिम हकूमत बनाने के लिए इन्तज़ाम हो रहा है। इस इन्कलाब को रोकने में पुलिस मदद नहीं दे सकती, क्योंकि वह नव्वे प्रतिशत मुसलमान है। इसलिए उस हिन्दू-सभाई का कहना कि फ़ौजी हकूमत कायम की जाय बिल्कुल ठीक है। मगर यह हो नहीं सकेगा। इसमें सबसे भारी वजह केन्द्र में कांग्रेसी ख़याल के लोगों का होना है। वे हकूमत करना नहीं जानते। अंग्रेज, खास तौर पर लार्ड वेवल नहीं चाहते कि पंजाब में पाकिस्तान बनने में कोई रुकावट पैदा हो जाए। कांग्रेस के नेता अंग्रेजों की नीति को न तो समझते है और न ही मुखालफ़त करना जानते हैं।

"इसलिए यहाँ पाकिस्तान बनेगा। उसमें हिन्दू रह नही सकेंगे। और हिन्दुओं की भलाई इसी में है कि वे या तो सूबा छोड़ दें, या मुसलमान हो जायँ।"

(१२)

प्रत्येक कार्य की प्रतिक्रिया होनी आवश्यक है। यूँ तो पत्थर भी, जब उस पर प्रहार किया जाए तो प्रतिक्रिया करता है। जीवित प्राणियों की तो प्रतिक्रिया प्रबल रूप में होती है। नीना ने जो कुछ सुना था, वह प्रभाव उत्पन्न किये बिना नहीं रहा। प्रभाव की प्रतिक्रिया भी हुई। पहले मन में पीछे कार्य में।

नीना दावत से उठी तो अपनी माता के पास गई और उसको अपने मन में उठ रहे क्लेशों का स्वरूप बताया। "मां!" उसने पूछा, "यह क्या हो रहा है?"

"सर्वनाश बेटी! तुम्हारे पिताजी आरम्भ से ही धन-सम्पदा और भोग विलास के लोभी रहे हैं। बैरिस्टरी पास कर जब विलायत से लौटे थे

तो माता-पिता से निश्चित अपने विवाह को, बिना अपनी होने वाली स्त्री को देखे, मानते नहीं थे। विवश मुझको इनसे भेंट करनी पड़ी।

"जब मैं अपनी माताजी के साथ इनसे मिलने आई तो यह मेरी माँ से कहने लगे कि मुझसे अकेले में बात करेंगे। मेरी माँ को इससे क्रोध आ गया था और यदि मैं माँ को शान्त न करती तो उसी समय बातचीत भंग हो जाती। मैंने माँ से कहा, 'माताजी! आप जरा दूसरे कमरे में चली जाएँ। यह कोई पशु तो हैं नहीं, जिनसे भय करना चाहिए।'

"माँ मान गई और मै अकेले में इनके सम्मुख बैठी रही। इस पर ये मेरे मुख को बहुत ध्यान से देखते रहे और कुछ बोले नही। आखिर मैंने ही बातचीत आरम्भ की। मैने पूछा, 'आप अकेले में कुछ कहना चाहते थे न? तो कहिए क्या आज्ञा है।'

"आखिर ये बोले, 'तुम सुन्दर हो। मुझको पसन्द हो?'

"इस पर मैंने कहा, "आप तो केवल हाड़-चाम के व्यापारी ही रहे। इतना तो आप पहले ही देख रहे थे। इसे देखने के लिए एकान्त की आवश्यकता नही थी। खैर छोड़िये। क्या मै अब माताजी को बुला लूँ?"

'हाड़-चाम भी तो कोई मामूली बात नहीं। बहुत लोगों को तो यह देखने की भी तमीज़ नही होती। एक बात मै और पूछना चाहता हूँ। क्या तुम मेरे साथ सभा-सोसायटी में निस्संकोच जा सकोगी। इतने सौन्दर्य को मैं घूंघट में छिपाकर नही रखना चाहता।'

'तो आप इसका प्रसाद सबको बाँटना चाहते है?'

'मै बैरिस्टरी पास करके आया हूँ और अपनी योग्यता से मैं सोसायटी में अपना स्थान बनाना चाहता हूँ। यह बिना तुम्हारे साथ रहे सम्भव नहीं।'

'यह भी स्वीकार है। और कुछ?'

'बस विवाह कब होगा?'

'यह अपने माता-पिता मे पूछ लीजिएगा।'

"मैं उठकर आने लगी तो मेरे मन में एक विचार आया और मैंने वह इनके सामने रख दिया।

"मैंने कहा, 'यह जो-कुछ आपने मुझसे आशा की है और जिसको निभाने का मैंने वचन दिया है, बहुत ही साधारण और सुगम बात है। मैं आपको एक बात कहना चाहती हूँ। मैं केवल काठ की पुतली नहीं हूँ। मेरे में आत्मा है। उस पर आप जबरदस्ती न करियेगा। तब आप और मैं दोनों सुखी रहेंगे।'

"मेरी इस बात का शायद वह अर्थ नहीं समझे और समझने का अभी तक अवसर भी नहीं आया। हमारा पूर्ण जीवन सांसारिक, व्यवहारिक और दुनियादारी की बातों में व्यतीत हुआ है। वे दिन-भर रुपया कमाने में लगे रहते है और सांयकाल मेरे साथ क्लब, थियेटर, सिनेमा, सभा-समाज में जाते हैं। जब कोई इनका मित्र मेरे सौन्दर्य और मेरे शिष्टाचार की प्रशंसा करता है तो यह इतने प्रसन्न होते है कि अपने में फूले नहीं समाते। उस दिन इनसे जो चाहो, करा लो।

"हमारे पूर्ण विवाहित जीवन में एक दिन भी ऐसा नहीं आया, जब हमने धर्म, कर्म, भगवान्, दया, दान की ओर ध्यान दिया हो। इन्होंने लाखों रुपये सरकार के द्वारा वार-फण्ड इत्यादि कामों में दिये है; पर किसी निर्धन, अपाहज के लिए अथवा किसी मन्दिर, समाज के लिए या किसी स्कूल, यतीमखाने के लिए, अपने हाथ से एक पैसा नहीं दिया। मैंने कभी अपने जेब-खर्च में से दिया तो दिया; इन्होंने न तो कभी उस की सराहना की और न ही मुझको देने से रोका।

"तुम दोनों बहिनों की शिक्षा का प्रबन्ध भी उन्होंने किया। मोहिनी तो सर्वथा वैसी ही है, जैसी वह बनाना चाहते थे और मैं देख रही हूँ कि उसका परिणाम अच्छा नहीं हो रहा। यद्यपि तुम्हारे विषय में भी उन्होंने अपने विचार तुमको देने चाहे हैं, परन्तु मैं यह जानती हूँ कि तुम पर प्रभाव वैसा नहीं हुआ, जैसा मोहनी पर हुआ है।

"तुम्हारे पिता सांसारिक जीव हैं और वह देख रहे हैं कि यह सांसा-

रिक वैभव उनकी मुट्ठी से सूखे बालू की भाँति खिसकता चला जाता है। जितने यत्न से वे इसको पकड़ना चाहते है, उतने ही वेग से वह मुट्ठी से निकलता जाता है। उन्होंने अपने ढंग से हिन्दुओं के अस्तित्व को पंजाब में स्थिर रखने के लिए बहुत यत्न किया। यहाँ बड़े-बड़े अफ़सरों से मेलजोल उत्पन्न कर मुसलमानों से मित्रता गाँठ और भिन्न २ राजनीतिक दलों को एक स्थान पर एकत्रित कर, पंजाब में सब मजहबो की सम्मिलित सरकार बनाए रखने के लिए दिन-रात एक कर दिया है। इस पर भी मै देख रही हूँ कि उनके प्रयत्न सफ़ल होने की आशा नही और शीघ्र ही यहाँ मुसलमानों का राज्य स्थापित हो जायगा।

"इस सब प्रयास मे उनका केवल-मात्र एक ही उद्देश्य था। वह था अपने धन-दौलत को अपने भोग-विलास के लिए स्थिर रखना। अब वह देख रहे है कि यह बिना मुसलमान हुए स्थिर नही रह सकेगा। इस कारण कई दिनों से मुसलमान हो जाने की बात सोच रहे है।

"मैं समझती हूँ कि अब वह अवसर आ गया है, जब मै अपने शरीर से अधिक आत्मा की पुकार सुनूं। मै मुसलमान नही बनूंगी। यह खाने-पीने की बात नही है। हम तो मुसलमानो के साथ खाते-पीते है। यह रहन-सहन और रीति-रिवाज की बात है। मुझको इनके रीति-रिवाज पसन्द नही।

"तुम्हारे पिता यत्न कर रहे है कि तुम दोनो का विवाह मुसलमानो से हो जाए तो उनकी स्थिति इस देश में सुदृढ हो जाए। मै इस विषय में तुमको कुछ नही कहूंगी। तुम वही करो, जो तुम्हारी आत्मा तुमको करने को कहती है। पर मैं मुसलमान नही बनूंगी।"

नीना अपने माता-पिता के सम्बन्ध की बात सुन अति विस्मय में पड़ गई। उसके मन में भाँति-भाँति के विचार उठने लगे और वह उन विचारों का उत्तर पाने के लिए व्याकुल होने लगी। इससे ज्यूं-ज्यूं उसके विचार साकार रूप धारण करते गए, वह पूछने लगी, "माँ! मुसलमान और हिन्दू में क्या अन्तर है, जो तुमको एक पसन्द है और दूसरा नहीं?"

"विचारों में अन्तर है। मैं मज़हबी बातों को नहीं मानती। मैं तो व्यवहार के विषय में ही जान सकी हूँ। हिन्दुओं में ऐसे अनेक हैं जिनकी स्त्रियाँ ईसाई हैं। किसी हिन्दू ने उनको ईसाई-धर्म छोड़कर हिन्दू हो जाने को नहीं कहा। परन्तु तुम किसी मुसममान की स्त्री को ईसाई व हिन्दू नहीं देखोगी। विवाह हुआ कि वह मुसलमान कर ली गई।

"इसी प्रकार ये लोग अपने से भिन्न विचार रखने वाले को सहन नही कर सकते। मित्रता, सहचारिता अथवा एक देशवासिता, ये सब सम्बन्ध इसलाम के सम्बन्ध से गौण माने जाते है।"

"कुछ भी हो यदि हम नाम-मात्र के मुसलमान हो जावे और भीतर से स्वतन्त्र बने रहें तो क्या होगा ?"

"ऐसा करने में प्रयोजन क्या होगा ? यदि तो धन-दौलत अथवा जान बचाने के लिए इसलाम स्वीकार किया जावे तो कुछ अच्छी बात नही। जिस बात को आत्मा से स्वीकार न किया जाए उसको मुख से मान लेना, ठगी कहते है। यह धोखा है और इससे आत्मा का हनन होता है।"

"आत्मा किसी ने देखा है क्या ?"

"हाँ, इसका प्रत्यक्ष स्वाभिमानता अथवा ज़मीर के रूप में होता है।"

"तो तुम, हमको किसी मुसलमान से विवाह करने से मना करती हो ?"

"नहीं, मैं तो यह कहती हूं कि वहाँ विवाह करो, जहाँ तुम्हारी आत्मा करने को कहती है। धन-दौलत को इस विषय मे कुछ भी प्रभाव नहीं रखने देना चाहिये।"

"माँ ! एक मुसलमान युवक है, जो कुछ दिन से मेरे पीछे लगा है और मुझको विवाह के लिए कह रहा है।"

"तुम्हारा मन क्या कहता है ?"

"मैं उससे विवाह नही करना चाहती। परन्तु पिताजी कहते है कि हमारे लिए पंजाब में रहना कठिन हो जावेगा ?"

"तो पंजाब छोड़ देंगे। जहाँ पंजाब के अन्यहिन्दू जाकर रहेंगे, वह हम भी चले जावेंगे।"

"और हमारी स्थाविर सम्पति का क्या होगा ?"

"जो लाखों अन्य हिन्दुओं की ऐसी सम्पत्ति का होगा, वही हमारी सम्पत्ति का भी हो जावेगा। हम अकेले ही हिन्दू तो हैं नही, जो यहाँ रहते है। और फिर हम से भी अधिक धनवान इस प्रान्त मे है।"

नीना को बात समझ में आगई।

(१३)

पहली मार्च को नीना पार्वती से मिलने गई। उस दिन उसको बाज़ारों मे शान्ति देख विस्मय हुआ। उस दिन और उससे दो दिन पहले से मुस्लिम जलूस नही निकले थे; इस पर भी उसके मस्तिष्क में परेशानी उपस्थित थी। पिछली रात चाय-पार्टी और फिर रात के खाने की बातचीत से उसके मन मे घबराहट उत्पन्न हो गई थी, जो अपनी माता से बात करने पर एक मार्ग पर चल पडी थी, परन्तु अभी पूर्ण रुप से शात नही हो पाई थी।

पार्वती स्कूल से लौट दूध पीकर बैठी ही थी कि नीना आ पहुंची। पार्वती ने अपने स्वभावनुसार 'मैथमेटिक्स' पढाने के लिए पैन्सिल कापी निकाली तो नीना ने कहा, "मै पढने नही आई।"

"तो क्या करने आई हो ?"

"पाँच-छः दिन मै आ नही सकी। और इन दिनों मे जो-कुछ सुना है, उससे मन में इतनी बेचैनी है कि किसी से राय करने को जी करता है।"

पार्वती नहीं समझी कि वह क्या कहना चाहती है और उसके प्रश्नों का समाधान करना चाहिए अथवा नही। इस कारण वह चुप रही। नीना उसे चुप देख कहने लगी, "बहन जी ! चौबीस फरवरी को मै आपसे पढने आ रही थी कि बहुत बडे जलूस में फँस गई। उस जुलूस में कुछ औरतें भी थी। मुझको धकेलकर उन औरतों में शामिल कर दिया गया...।" नीना ने उस दिनके 'सियापे' की पूर्ण घटना का वर्णन कर दिया। पश्चात् उसने पिछली रात अपनी कोठी में चाय-पार्टी पर हुई बातचीत और फिर रात खाने पर की बात सुनाकर कहा, "रसूल साहब से मीना प्रेम करती है।

परन्तु रसूल साहब किससे प्रेम करते हैं, अभी नहीं बताते। मिस्टर रसूल कहते थे कि पंजाब में मुसलमानों का राज्य होगा और यहाँ हिन्दू नहीं रह सकेंगे। हमारे पिताजी भी यही अनुभव करते हैं और उनका विचार है कि हमको मुसलमान बन जाना चाहिये।"

पार्वती ने अभी भी कुछ नहीं कहा। वह अभी तक नीना के इस बात के बताने का प्रयोजन नहीं जान सकी थी। जब नीना ने पार्वती को गम्भीरता से अपनी ओर देखते हुए चुप देखा, तो पूछने लगी, "आप क्या समझती है बहिन जी ?"

"किस विषय में ?"

"क्या यहाँ मुसलमानों का राज्य हो जावेगा ?"

"मैं राजनीति की ज्ञाता नही हूँ। क्या होगा मैं नही जानती। मैं एक बात जानती हूँ कि यदि ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हुई तो मुझको क्या करना चाहिये।"

"आप क्या करना चाहेगी ?"

"इस राज्य के स्थापन होने का विरोध करुँगी। यदि यह विरोध सफ़ल न हुआ तो यह स्थान छोड़ दूसरे राज्य में चली जाऊँगी। और यदि इसमें भी सफ़ल न हुई तो आत्म-हत्या कर लूँगी।"

ये सब बातें नीना को वैसी ही प्रतीत हुईं, जैसे उसकी माँ ने कही थीं। इस कारण उसने पहली बात के विषय में ही पूछा, "मुसलमानी-राज्य स्थापित होने का विरोध कैसे करेंगी ?"

"यह मैं नहीं जानती। यदि हमारे नेता इसका विरोध करेंगे और वे कोई मार्ग बतावेंगे तो मैं उस मार्ग का अवलम्बन करूँगी।"

"यदि ऐसा मार्ग नेताओं ने न बताया तो ?"

"तो फिर क्या, मैं यहाँ से निकल जाने का प्रयत्न करूँगी।"

"अपनी धन-दौलत, मकान इत्यादि सब सम्पति छोड़कर ?"

"जीवन और स्वतन्त्रता के सम्मुख सब वस्तुएँ तुच्छ हैं। यहाँ मुसलमानों के राज्य में इन दोनों वस्तुओं का भय रहेगा।"

"यदि मुसलमान बन जाएँ तो क्या हानि है ?"

"इस्लाम में श्रेष्ठता देखकर मुसलमान बनना तो ठीक है, परन्तु धन अथवा जीवन के भय से इसको स्वीकार करना तो महा घृणित कार्य होगा ।"

"हम तो किसी धर्म को मानते नहीं । हमारे लिए हिन्दू और मुसलमान में कोई भेद नहीं ।"

"तब ठीक है । आपके लिए धन-दौलत हिन्दुत्व अथवा इस्लाम से अधिक मूल्यवान है । अभिप्राय यह है कि आपका धर्म धन-दौलत है । आपके लिए उसको छोड़ना ठीक नहीं ।"

इससे नीना को सन्तोष नहीं हुआ । वह अन्य कई प्रकार की बातें करती रही । इन्हीं बातों में उसने पार्वती को बताया कि उसकी बहिन मीना कहती थी कि चूँकि पार्वती लड़कों से मेल-जोल नहीं रखती, इसी कारण उसका विवाह नहीं हुआ ।

इससे पार्वती मुस्कराई और चुप रही । नीना इसका अर्थ पूछने लगी, "तो यह सत्य नहीं है क्या ?"

"क्या सत्य नहीं है ?"

"आपका विवाह इसी कारण नहीं हो सका कि आपको मन-पसन्द का पति नही मिला ?"

"यह बात सत्य नहीं है । मेरा विवाह निश्चय हो गया था । विवाह पर पाँच सौ से ऊपर लोग आए थे; परन्तु ठीक समय पर मैं विवाह के लिए वहाँ गई ही नहीं ।"

"क्यों? क्या वह विवाह भूल से मान लिया था ?"

"नहीं; विवाह मैंने और उन्होंने स्वयं निश्चय किया था । वे मुझ से प्रेम करते हैं और मैं उनसे प्रेम करती हूँ । परन्तु मेरे पिताजी इस लिए नाराज़ थे कि हमने विवाह उनकी स्वीकृति के बिना निश्चय कर लिया था । मुझको उनकी नाराज़गी उचित प्रतीत हुई । इस कारण, विवाह के लिए नियत स्थान पर नहीं गई ।"

"विवाह आपका होना था। इसमें आपके पिताजी की क्या बात थी ?"

"उन्होंने मुझको रोका नहीं था; परन्तु मुझको विदित हो गया था कि हमारा उनसे पूछे बिना विवाह करना उनको पसन्द नहीं था।"

"तो आप डर गई थीं ?"

"नहीं; डरने की बात नहीं। मैं अपने पिताजी का बहुत मान करती हूँ। इस कारण मैंने अपने किए का प्रायश्चित किया था।"

"तो अब पिताजी को मना लीजिए ?"

"मना लिया है, परन्तु वे अभी एक काम में लगे है। इस कारण विवाह अब कुछ काल पीछे होगा।"

नीना के लिए ये सब बातें विस्मयजनक थीं। वह इनका सिर-पैर नहीं समझ सकी। अन्त में पार्वती ने कहा, "देखो, यदि पढना नहीं तो शीघ्र घर चली जाओ। अन्धेरा हो रहा है।"

"मुझको डर नही लगता।"

"ठीक है। फिर भी डर लगने से ही भय की बात होगी, यह कोई नहीं कह सकता।"

नीना घर लौट पडी। जब वह बीडन रोड पर से माल की ओर आई तो वही युवक, जो 'सियापे' के दिन उसके पीछे लगा था, उसके साथ-साथ हो लिया। जब नीना ने उसको देखा तो मुस्कराकर पूछा, "तो फिर आ गए हैं आप ?"

"जी हाँ।"

नीना सड़क के किनारे खड़ी हो गई और बोली, "तो तशरीफ ले जाइए।"

"यह हुक्म है क्या ? मैं नहीं मानूँगा। चलिए ! मैं तो आपसे बात भी नहीं कर रहा था। आपने ही बुलाया है। सड़क पर चलना तो मना नहीं ?"

"मैं ज़रा ठहर कर चलूँगी।"

"बहुत अच्छी बात है। आप ठहरिए।" इतना कह वह युवक कुछ आगे निकल गया। लगभग बीस पग जाकर वह ठहर गया और टेढ़ी दृष्टि से

नीना की ओर देखते हुए खड़ा रहा। नीना ने देखा कि इस प्रकार पीछा नहीं छूटेगा और हल्ला करने से बदनामी होगी। इस कारण वह चल पड़ी। वह युवक भी उसके साथ-साथ हो लिया। इस बार बात युवक ने आरम्भ की। उसने पूछा, "मैं आपका नाम जान सकता हूँ क्या ?"

"बताने की आवश्यकता नहीं समझती।"

"मेरा नाम मुहम्मद याकूब है।"

नीना ने उत्तर नहीं दिया। इस पर भी युवक ने कहना जारी रखा, "मेरे पिता मेरे लिए एक लाख से अधिक रुपया छोड़ गए हैं। वह मुझ को मेरे विवाह पर मिलेगा। मैं चाहता हूँ कि उस रुपये का इस्तेमाल आपके साथ मिलकर करूँ।"

"मुझको मंजूर नहीं।"

"क्यों ?"

"वजह बताने की ज़रुरत नही।"

"इसका मतलब यह है कि कोई माकूल वजह नहीं। इससे मुझको उम्मीद बन रही है कि मेरी ख्वाहिश पूरी होगी।"

"बन्दर को अदरक का आचार।"

"पर मैं तो हिन्दुस्तानी बोल रहा हूँ। क्या हिन्दुस्तानी बोलने वाले बन्दर होते हैं ? मैं अंग्रेज़ी भी बोल सकता हूँ। डार्लिंग ! वट ए फन इट विल बी, टु गो राऊंड दि वर्ल्ड हनी-मूनिंग इन ऐन एयरोप्लेन !"

"मुहब्बत इतने सस्ते दामों पर नहीं बिकती।"

"जब इसका दाम इतना ज़्यादा होता है कि कोई दे नही सकता, तब इसको ज़बरदस्ती हासिल किया जाता है।"

"बहुत खराब आदमी हो तुम।"

"सिर्फ मुहब्बत हासिल करने के लिए। वैसे मैं एक पढ़ा-लिखा शरीफ आदमी हूँ। आपसे मुहब्बत किए जाने के हर तरह से काबिल हूँ।"

"यही तो देखना है। ज़बरदस्ती करने वालों की काबलियत पर शक है मुझे।"

"तो मुझको अपनी काबलियत दिखाने का मौका दीजिए। मैं एम० ए० ओक्सन हूँ। पालिटिक्स मेरा मज़मून है। अगर पाकिस्तान बना तो मैं पब्लिसिटी डिपार्टमेंट में अफसरी कर सकूँगा। इस वक्त मैं पाकिस्तान बनाने की कोशिश में अपना सारा वक्त सर्फ कर रहा हूँ।"

"यह आधा घण्टा भी, जिसमें मेरे साथ सड़कों की मिट्टी छान रहे हो ?"

"जी हाँ। यह आधा घण्टा भी।"

"कैसे ?"

"मेरी आपसे शादी पाकिस्तान बनने में मदद देगी।"

"फ़ज़ूल है। कोई भी सही दिमाग इसको मान नहीं सकता।"

"आप एक बात भूल रही हैं। पालिटिक्स सही दिमाग वालों के लिए है ही नहीं। सही दिमाग है, बिड़ला भाइयों का। सही दिमाग है बालचन्द हीराचन्द वालों का। कुछ-कुछ सही दिमाग है सर आगा खाँ का। सब राजनीति से अलग रह कर दुनिया का लुत्फ उठा रहे हैं। राजनीति में इन दिमागों का काम नहीं। यहाँ तो.....।"

नीना ने बात बीच में काटकर कहा, "हाँ, यहाँ तो आप-जैसे गधों का काम है। देखिए साहब ! क्या नाम है आपका ? खैर, जो कुछ भी हो, मुझको किसी गधे से शादी नहीं करनी।"

मुहम्मद याकूब हँस पड़ा और बोला, "सिवाय पालिटिक्स के और बातों में मैं इंसान हूँ।"

नीना अपनी कोठी पर पहुंच गई थी। अतः वह बिना कुछ कहे कोठी में घुस गई। उसके मस्तिष्क में यह बात चक्कर काटने लगी थी, 'मुहब्बत को जबरदस्ती भी हासिल किया जा सकता है।'

(१४)

नीना जब कोठी में दाखिल हुई तो प्रोफेसर रसूल मीना को पढ़ाकर कमरे से निकला। नीना ने उसे देखा तो गुड ईवनिंग कर दी। गुलाम-

रसूल नीना के पास ग्रा खड़ा हो गया । नीना ने पूछा, "मीना कहाँ है ?"

"भीतर एक प्रश्न समझ रही है । तुम कहाँ से ग्राई हो ?"

"मास्टरानी जी से पढ़ने गई थी ।"

"क्या पढ़ाती हैं वे ?"

"मैथमैटिक्स ।"

"यह तो मैं भी पढ़ा सकता हूँ ।"

"पर मैं उनसे पहिले से ही पढ़ रही हूँ । इस कारण पढ़ती हूँ ।"

"बात यह है कि कल तुमने कहा था कि तुम मेरी मदद करोगी । मैं कल से ही इसकी बाबत सोच रहा हूँ ग्रौर मैंने फैसला किया है कि तुम्हारी मदद माँग ही लूँ ।"

"मैं इसमें ग्रपनी खुशकिस्मती समझूंगी, यदि मैं ग्रापकी कुछ भी मदद कर सकूँ ।"

"तो सुनो । मैं इस्लामिया कॉलेज में मैथमैटिक्स का प्रोफेसर हूँ । बाप भी कुछ सम्पति छोड़ गया है । पाकिस्तान बनने पर मैं किसी बड़ी पदवी पर लग सकूँगा । मैं ग्रपनी बीवी को हर तरह से खुश रख सकूँगा । ग्रब मैं चाहता हूँ कि तुम इसमें मेरी मदद करो ।"

नीना की हँसी निकल गई । जब मिस्टर रसूल ध्यान से उसका मुख देखने लगा तो नीना ने ग्रपने मन की बात बता दी, "ग्रापको विश्वास है कि पाकिस्तान बन जावेगा ?"

"इसमें कुछ भी शक नहीं । खुदा का शुक्र है कि कांग्रेस के नेता भी हमारे ख़याल के हैं । वे यह समझते हैं कि ग्रक्लीयत के भी हक-हकूक होते हैं । उनकी रुह तो मानती है कि मुसलमानों के लिए ग्रपना एक मुल्क होना चाहिए । सिर्फ वह हिन्दुग्रों की ग्राँखें पोंछने के लिए बहाना ढूंड रहे हैं ? बहाना बनाना हमारा काम है ।"

"क्या बहाना बन सकेगा ?"

"हम पंजाब के हिन्दुग्रों को इतना तंग करेंगे कि वे ग्रपना घर-बार छोड़कर भाग जायेंगे । नतीजा यह होगा कि पंजाब में मुसलमान ग्रौर

ग़ैर-मुसलमानों का तनासब ५२ और ४८ का न रहकर १०० और ० का हो जाएगा। तब पाकिस्तान बन जाएगा। भारत का विधान तो 'मुतहिद मुमालिक' (संयुक्त राष्ट्र) का-सा बनेगा ही। यह भी कांग्रेस वालों की मेहरबानी से हो रहा है। तब हम पूर्ण रूप से आज़ाद होंगे। जो चाहेंगे, यहाँ कर लेंगे। मरकज़ (केन्द्र) ने हम पर कोई बात ज़बरदस्ती करनी चाही, तो हम बग़ावत कर उससे अलैहदा हो जाएंगे।"

नीना इस युक्ति को सुन बहुत ही दुःख अनुभव कर रही थी। वह भारतवर्ष के खण्ड होने में कल्याण नहीं समझती थी। इससे बढ़कर बात यह थी कि वह हिन्दुओं को पंजाब से निकाले जाना अच्छा नहीं मानती थी।

नीना को गम्भीर विचार में मग्न देखकर प्रोफेसर रसूल ने पूछा, "क्या सोच रही हो नीना ?"

"आपकी बातों का मन में अर्थ लगा रही हूँ। पंजाब में ग़ैर मुसलमानों का तनासब सौ और शून्य का हो जाएगा, तो हमारा क्या होगा ? मैं कहाँ जाऊँगी ? हमारी जायदाद है, उसका क्या होगा ?"

मिस्टर रसूल ने मुस्कराते हुए कहा, "यही तो बात है, जो मुझको मजबूर कर रही है कि मैं तुम्हारी मदद से मन की बात पूरी कर लूँ। बात यह है कि मेरी महबूबा एक कहे जाने वाले हिन्दू की लड़की है।"

नीना के मन में मीना की बात आगई। उसने समझा कि प्रोफेसर रसूल उसके द्वारा मीना तक अपना सन्देश पहुँचाना चाहता है। इससे उसने प्रोफेसर साहब के कहने की प्रतीक्षा किए बिना ही कह दिया, "मैं आपका सन्देश उस तक पहुँचा दूँगी।"

"शुक्रिया। उससे, मेरा मतलब तो तुम समझ गई होगी, मेरी बात कहना कि मैं उसको सब तरह से सुखी रखूंगा।"

"बस या और भी कुछ ?"

"यह तो कुछ नहीं। मैं उससे इतनी मुहब्बत करता हूँ कि मैं उसके [redacted]"

"यह तो कोई अच्छी बात नही ?"

"यह तो उसके बस की बात है कि मुझको पागल न होने दे ।"

"और कुछ ?"

"मैं इतनी जायदाद रखता हूँ कि मैं उसको दुनिया-भर की सैर कराकर भी ज़िन्दगी भर के लिए काफी दे सकता हूँ । यह सब-कुछ मैं शादी से पहले उसके नाम कर दूंगा ।"

नीना मुस्कुरा रही थी । उसने कहा, "आपकी महबूबा बहुत खुश-किस्मत मालूम होती है । शादी किस तरीके से होगी ?"

"अगर तो पाकिस्तान बनने से पहले हुई, तब तो स्पेशल मैरिज ऐक्ट के अनुसार होगी । और अगर उससे पहले पाकिस्तान बन गया तो इस्लाम की रुह से होगी ।"

"यह बात कुछ अखरेगी आपकी महबूबा को ।"

"वह क्या चाहेगी ?"

"यह मैं कैसे कह सकती हूँ ? उससे बातचीत करके ही बताऊँगी ।"

इससे प्रोफेसर ने गम्भीर हो नीना की ओर देखा । वह मुस्कुरा रही थी । प्रोफेसर उससे अपने मन का आशय कहना चाहता था कि नीना खिल-खिलाकर हँसती हुई कोठी के भीतर भाग गई ।

आज की बातचीत से रसूल बहुत प्रसन्न हो कोठी के बाहर निकला । नीना कोठी में गई तो सीधी मीना के कमरे में पहुँची । मीना आराम कुर्सी पर आँखें मूंद ढासना लगाए बैठी थी । नीना ने पीछे जा उसकी आँखों को हाथों से बन्द कर लिया ।

"छोड़ो, क्या बच्चों की-सी बातें करती हो ।"

"तो क्या बूढ़े हो गए है हम ?" नीना ने आंखों पर से हाथ उठाते हुए कहा । वह उसके सामने रखे स्टूल पर बैठ गई और मुस्कुराती हुई उसकी ओर देखने लगी । मीना को गम्भीर और कुछ चिढ़ा हुआ देख उसे सन्देह हुआ कि प्रोफेसर रसूल ने मीना से बात की है । मीना को उससे प्रेम न हो और वह प्रोफेसर साहब को जवाब दे चुकी हो । शायद इसी

कारण उसकी सहायता माँगी गई है। इससे वह गम्भीर हो गई। मीना ने कहा, "क्या हुआ है तुमको, जो फिर बच्चों की भाँति आँख-मिचौनी खेलने लगी हो ?"

"मुझको तो कुछ नहीं हुआ। दीदी ! तुमको कुछ हो गया है, जो बूढ़ों की भाँति बातें कर रही हो। क्या हुआ है ? क्या प्रोफेसर साहब से लड़ पड़ी हो ?"

"मैं नहीं लड़ी। वे लड़े हैं ?"

"वाह, कैसे ? भला जानूँ तो ?"

"मैंने उनसे कहा था कि मैं उनसे प्रेम करती हूँ, तो बोले वे मुझ को अपनी बहिन समझते हैं।"

"तुम्हारे समझने में भूल हई है। वह अभी-अभी मुझको कहकर गए हैं कि मैं उनकी तुम्हारे से सिफारिश करूँ।"

मीना आश्चर्य में नीना का मुख देखने लगी। उसने कुछ देर तक गम्भीरतापूर्वक विचार कर कहा, "यह सब मुझको समझ नहीं आ रहा। मैंने कहा था, 'आप विवाह कब तक करेंगे ?' वे बोले, 'जब मेरी प्रेमिका स्वीकार करेगी।' मैंने पूछा, 'आप अपनी प्रेमिका से पूछते क्यों नहीं ?' तो कहने लगे, 'मैंने आज पूछने का विचार किया है।' मैंने फिर पूछा, 'कब पूछेंगे ?' तो बोले, 'आज सायंकाल से पूर्व ही पूछने का विचार रखता हूँ।' इसपर मैंने कहा, 'क्या मैं आपकी सहायता कर सकती हूँ ?' तो बोले, 'मीना बहिन ! तुम्हारी सहायता के बिना ही मैं पूछ लूँगा।'

"फिर वे चले गए। यह संसार अजब खेल है। जिनको मैं प्रेम करती हूँ वे, मुझको बहिन कह देते हैं। जिससे मेरा कोई लगाव नहीं होता, वे मुझको 'प्रिय ! प्राण ! जीवन धन !' इत्यादि बातें कहते है।

"कई मास हुए मैंने एक और लड़के से प्रेम किया था। मैं उसका 'अपोलो' सदृश, अंडे-सा चिकना मुख देखकर उस पर मोहित हो गई थी। जब हमारी घनिष्ठता बहुत बढ़ गई, तब एक दिन वह आया और

राखी बाँधोगी न ?'

"इतना कह उसने अपना दाहिना हाथ आगे कर दिया।"

नीना हँस पड़ी। जब मीना ने इसका कारण पूछा, तो उसने वे सारी बातें दुहरा दीं, जो उसके और प्रोफ़ेसर साहब के बीच हुई थीं। इस बात-चीत को सुन मीना को सन्देह हो गया कि प्रोफेसर रसूल नीना से विवाह करना चाहता है। उसने अपने मन का सन्देह नीना को बताया, तो वह गम्भीर हो कहने लगी, "देखो दीदी ! मैं प्रोफेसर रसूल से विवाह नहीं करुँगी। मुझको उसकी सूरत-शक्ल पसन्द नहीं। साथ ही इस समय देश में एक विप्लव होने जा रहा है। इस विप्लव में दो पक्ष है। एक हिन्दू और दूसरा मुसलमान। मुसलमान अपना एक पृथक् देशनिर्माण करना चाहते है। हमारे लिए एक कठिनाई यह उत्पन्न हो जावेगी कि हम हिन्दुस्तान से बाहर एक देश के नागरिक हो जावेंगे ? अपनी इच्छा से नहीं, लड़कर और हार कर नहीं, प्रत्युत भेड़-बकरियों की भाँति, गले में रस्से बाँधकर इधर से उधर कर दिए जावेंगे। यह मुझको कुछ अच्छा प्रतीत नहीं हो रहा।"

"तो इससे क्या हुआ ? प्रजा तो हमेशा भेड़-बकरियों के तुल्य होती है। राजा सब नहीं हो सकते। प्रजा को राजा का कहना मानना ही पड़ेगा।"

"राजा कौन है ? आज प्रजातन्त्र के काल में राजा जनता है। जनता अपने-आप भेड़-बकरियों की भाँति हाँके जानां पसन्द नहीं करेगी।"

"पर इस सब का विवाह के साथ क्या सम्बन्ध है ?

"मीना बहिन ! मैं रसूल साहब से विवाह करना नहीं चाहती। सबसे बड़ी बात यह है कि उससे विवाह करने पर मुझको पाकिस्तान में ही रह जाना पड़ेगा, जो मुझको पसन्द नहीं।"

डायरेक्ट ऐक्शन लाहौर में

चेतनानन्द देख रहा था कि उसके सब प्रयत्न विफल जा रहे हैं। इससे वह घण्टों ही बैठा भूत और भविष्य के विषय में सोचा करता था। वह अपने जीवन के उस भाग का, जो वकालत पास करने से लेकर, बंगाल की नौकरी छोड़ने तक का था, स्मरण कर, व्याकुल हो जाया करता था।

जब उसने वकालत पास की थी, तब महात्मा गांधी ने 'भारत छोड़ो' आन्दोलन आरम्भ किया हुआ था। चेतनानन्द जैसा भावुक युवक इस आन्दोलन से बाहर नहीं रह सका। महात्मा जी पकड़े गए और देश-भर के कांग्रेसी नेता जेलों में डाल दिये गए। उस समय चेतनानन्द जैसे युवकों के लिए भूम्यान्तर्गत हो काम करने के अतिरिक्त और कोई चारा न था। इस पर भी चेतनानन्द पकड़ा गया और दो वर्ष तक बन्दी रहा।

जब जेल से छूटा तो शिमला कॉन्फ्रेन्स हो रही थी। मिस्टर जिन्ना का उस कॉन्फ्रेन्स में महात्मा गांधी को केवल हिन्दुओं का प्रतिनिधि मानना चेतनानन्द को बहुत बुरा प्रतीत हुआ। शिमला कॉन्फ्रेन्स भंग हुई और सरकार ने चुनाव करने का निश्चय कर दिया। चुनाव में मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान बनाए जाने के लिए वोट माँगे। कांग्रेस ने हिन्दू-मुस्लिम एकता का अपना दावा उपस्थित किया। यद्यपि मुसलमानों ने मुस्लिम लीग को वोट दिए और हिन्दुओं ने कांग्रेस को; इस पर भी चेतनानन्द अन्य

कांग्रेस नेताओं की भाँति, कांग्रेस को हिन्दू और मुसलमान, दोनों का प्रतिनिधि मानता रहा। निर्वाचन के एक मात्र परिणाम को कि भारत में हिन्दू और मुसलमान एक नहीं, चेतनानन्द नहीं देख सका।

कांग्रेस के नेता अपनी प्रेरणा अंग्रेजी साहित्य और प्रथाओं से लेते हैं। चेतनानन्द भी उनमें से एक था। अपना विवाह पार्वती से बिना अपने तथा उसके माता पिता की अनुमति के करना चाहता था। इस प्रयत्न में वह पार्वती और अपने पिता से लड़ पड़ा था। इस झगड़े के आवेश में प्रान्तीय कांग्रेस की कार्यकारिणी के एक सदस्य बैरिस्टर सराजद्दीन की साली नसीम से विवाह कर बैठा। साथ ही उसने प्रान्तीय धारा-सभा से त्याग-पत्र देकर बंगाल सरकार की नौकरी कर ली।

कलकत्ता में उसने डायरेक्ट ऐक्शन देखा और उस ऐक्शन के दिनों एक बंगाली लड़की, अनिमा देवी की शौर्यता को देख, अपने पूर्व विचारों को छोड़ बैठा। इसके पश्चात् वह अपने को भूल में समझने लगा। उस को ऐसा प्रतीत हुआ कि भारत में हिन्दू और मुसलमान दो भिन्न जातियाँ हैं। परिणाम स्वरुप उसने बंगाल सरकार की नौकरी छोड़ दी। वह कांग्रेस की विचारधारा को मिथ्या मानने लगा। इस प्रकार वह अपने पिछले पांच वर्ष के प्रयास को व्यर्थ समझ, नए पथ का राही बन बैठा। जब वह लाहौर वापस आया, तब नसीम के बच्चा होने वाला था। वह लाहौर उसके साथ नहीं लौटी।

एक दिन अपने कमरे में बैठा हुआ इसी प्रकार के विचारों में लीन था कि उसकी बहन रेवा और बहनोई महेश वहाँ आ उपस्थित हुए। उनके आने से चेतनानन्द का ध्यान भंग हुआ और उसने उठकर दोनों का स्वागत किया, बिठाया और कुशल-समाचार पूछा।

जब इधर-उधर की बातें हो चुकीं तो रेवा ने पार्वती के विषय में बात चला दी, "भैया ! मैं आज तुमसे एक बात खुलकर करने आई हूँ।"

"तो पहले कुछ छुपाकर बात करती थीं ?"

"सो तो नहीं। पर इस विषय पर स्पष्ट बात नहीं हो सकी।"

"किस विषय पर ?"

"विवाह के विषय पर।"

"विवाह तो हो चुका है। अब उस पर विचार की कौन बात रह गई है ?"

"वह जो कुछ हुआ है, हम भली भाँति जानते हैं। साथ ही कल जो नसीम का पत्र आया है, उसके विषय में कुछ कहना है।"

"क्या ?"

"नसीम ने लिखा है में कि मरा बच्चा पैदा हुआ है और वह रुग्ण है। उसको दो हज़ार रुपया चिकित्सा के लिए चाहिए।"

चेतनानन्द ने इस बात में रुचि न दिखाते हुए कहा, "मुझको पिताजी ने वह पत्र दिखाया है।"

"एक बात शायद उन्होंने नहीं बताई। वह यह कि उन्होंने उसको रुपया भेज दिया है।"

"मैं उनसे यही आशा करता था। मैंने कल उनसे कहा था कि मैंने जो कुछ कलकत्ता में कमाया था, सब कुछ उसको दे दिया था। मैं अपने साथ केवल एक सौ रुपया लेकर ही वहाँ से आया था। इस पर भी उन्होंने उसको रुपया भेज दिया, सो ठीक ही किया है।"

"तो तुम नसीम से अब भी प्रेम करते हो ?"

"प्रेम नहीं ! मेरा उससे वासना का सम्बन्ध था। उसके नाते ही कभी-कभी कुछ रुपया भेजा जाना ठीक समझता हूँ।"

"मैं समझती हूँ कि यदि वह यहाँ आ जावे तो वासना क. सम्बन्ध प्रेम में बदल सकता है।"

"बहुत समझदार हो गई हो रेवा ! परन्तु मैं अब यह नहीं चाहता। वह लड़का यदि जीता रहता तो शायद इस वासना के सम्बन्ध को स्थिर रखने की आवश्यकता रहती। अब वह नहीं रहा। खेल समाप्त हुआ है और पाकिस्तान के पागलपन से यह सम्बन्ध रहना सर्वथा असम्भव हो गया है। चाँदी के मुलम्मे किये, पीतल के बर्तन का सत्कार मुलम्मा उतर

जाने पर कैसे रह सकता है ?"

"और यदि चाँदी के बर्तन को जस्ती समझकर फेंक दिया गया हो, तो असलियत जानने पर उसको उठा क्यों नहीं लेते ?"

"अब अपनी ससुराल वालों की हिमायत करने लगी हो ?"

"भैया ! तुम नहीं जानते कि वह तुमसे कितना प्रेम करती है। पहले मैं भी यही समझती थी कि चलता-फिरता लगाव है; परन्तु धीरे-धीरे मेरा भ्रम दूर हो गया है।"

"होगा। मैं तो समझता हूँ कि वह मुझको मूर्ख मान छोड़ चुकी है।"

"ऐसा मत कहो भैया ! वह तुमसे अगाध प्रेम करती है। एक दिन की बात बताऊँ ? माता जी तुम्हारी निन्दा कर रही थीं। इस पर वह बोल उठी, 'माँ ! मुझ पर दया करो। मुझसे यह नहीं सुना जाता।' इस पर माँ ने पूछा, 'तो क्या उसने अपराध नहीं किया ?' उसका उत्तर था, 'मैं नही जानती। पर वह प्रेम ही कैसा हुआ जो प्रेमी को क्षमा नहीं कर सकता ?'

"देखो भैया ! कितना अन्याय हो रहा है ! इसके मिटाने का कुछ उपाय तो करो।"

"पर अब क्या हो सकता है ? मैं उससे विवाह नही कर सकता। शायद इस जन्म में ऐसा ही रहेगा।"

"तो इसीलिए जन्म को शीघ्र समाप्त करने के उपाय कर रहे हो ? परन्तु....." रेवा आगे कहती-कहती रुक गई। उसका गला भर आया था।

चेतनानन्द उसके भाव को समझकर बोला, "रेवा ! मैं ऐसा नहीं कर रहा। पर जो कुछ तुम देखती हो, पार्वती के कारण नहीं। उसके लिए तो मैं जीना चाहता हूँ। परन्तु एक और बात है, जो मेरे गले में फाँसी की भाँति लटक रही है। मैंने पिछले निर्वाचनों के समय स्थान-स्थान पर, घूम-घूमकर और व्याख्यान देकर कांग्रेस की धूम मचा दी थी। कांग्रेस की विजय हुई और उस विजय से यह निर्विवाद सिद्ध हो गया है कि कांग्रेस

हिन्दुओं की प्रतिनिधि है और वह निस्संकोच हिन्दुओं का अहित कर रही है।

"इन लोगों को हिन्दुओं का प्रतिनिधि बनाने में मेरा भी हाथ है। मेरी आत्मा इस पाप-कर्म को स्मरण कर गली जा रही है। कभी-कभी तो मैं आत्म-हत्या कर लेने पर उद्यत हो जाता हूँ।"

रेवा और महेश उसके मन की इस अवस्था को जान अति दुखित और चिन्तित हुए। महेश ने उसके मन के बोझ को हल्का करने के लिए कह दिया, "भैया ! मैं प्रतिदिन प्रातःकाल राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखा में जाया करता हूँ। आप भी चला करे। शायद वहाँ आप अपने मार्ग का दर्शन कर सकें।"

"वहाँ क्या करते हो तुम ?"

"मुझको जाते हुए अभी दो मास हुए है। प्रातः भारत-माता की प्रार्थना होती है। फिर व्यायाम होता है और अन्त में देश की वर्तमान परिस्थिति पर चर्चा होती है। नियन्त्रण और समाज-सेवा, देश और राष्ट्रोन्नति, हिन्दू-धर्म और राज्य हमारे मुख्य लक्ष्य है।

"भैया ! जब शाखा के सब लोग एक स्वर से गाते हैं—

प्रभो, शक्तिमन् हिन्दू राष्ट्रांग भूता
इमे सादरं त्वां नमामो वयम्।
त्वदीयाय कार्याय बद्धा कटीयम्
शुभामाशिषं देहि तत्पूर्तये।

तब हमारे भुज-दण्ड फड़कने लगते हैं और जब हम गाते हैं—

विजेत्रीय च नः संहता कार्य शक्तिर्
विधायास्य धर्मस्य संरक्षणम्।
परं वैभवं नेतुमेतत्स्वराष्ट्रम्
समर्था भवत्वाशिषा ते भृशम्।

तो हम नियन्त्रण में बद्ध होकर कार्य करने पर कटिबद्ध हो जाने का संकल्प करते हैं।"

"बहुत सुन्दर है प्रार्थना। कम-से-कम, 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां

हमारा' तो इससे बहुत ही घटिया है।"

"हाँ भैया ! संस्कृत भाषा में जो बल है, वह वर्तमान हिन्दुस्तानी में नहीं मिलता।"

इस प्रकार पार्वती के विषय की बात भारतवर्ष के विषय में बदल गई।

(२)

चेतनानन्द के मन में कलकत्ता के डायरेक्ट ऐक्शन के पूर्व अनिमा और उसके साथियों के प्रयत्न की कथा बार-बार आ रही थी। वह वैसा ही प्रयत्न यहाँ लाहौर में करना चाहता था, परन्तु जैसे सहयोगी अनिमा के थे, वैसे उसको लाहौर में मिल नहीं रहे थे। उसको अनिमा का कहना कि गांधी-युग से पूर्व के क्रान्तिकारी धर्मनिष्ठ तथा भगवान् कृष्ण की गीता के अनुयायी थे, स्मरण था। वह वैसे ही सहयोगी चाहता था, परन्तु वैसे पा नहीं रहा था। आज महेश के कहने से उसको मार्ग सूझा। उसने भारत राष्ट्र के लिए प्रार्थना सुन, मन में निर्णय कर लिया कि वह इस संस्था के विषय में और अधिक जानकारी प्राप्त करेगा।

अगला दिन शिव-पूजन का था। वह नगर की पचासों शाखाओं में से रावी नदी की शाखा को देखने का निश्चय कर ब्रह्म-मुहूर्त में उठकर वहां जा पहुँचा।

वह अपने विचार से बहुत जल्दी उठा था; परन्तु उसके विस्मय का ठिकाना नहीं रहा, जब उसने देखा कि लगभग सौ की संख्या में लोग वहाँ पहिले ही पंक्तिबद्ध खड़े है। खाकी नीकरों और सफेद कमीज़ों में सब सावधान अवस्था में एक दिशा में मुख किये थे और उनके सामने भगवा ध्वज के समीप खड़ा एक व्यक्ति वन्दना कर रहा था।

चेतनानन्द भी एक ओर खड़ा हो श्रवण करने लगा। वह खड़ा हुआ व्यक्ति स्पष्ट तथा उच्च स्वर में स्तोत्र पढ़ रहा था—

"पुण्य श्लोको नलो राजा पुण्य श्लोको युधिष्ठिरः ।

पुण्य श्लोको विदेहश्च पुण्य श्लोको जनार्दनः ॥"

इस मीठी वाणी को सुन चेतनानन्द का ध्यान उस कहने वाले के कथन का अर्थ समझने का यत्न करने लगा। कहने वाला कह रहा था—

"अर्जुनः फाल्गुनो जिष्णु कीरीटी श्वेतवाहनः।
वीभत्सुर्विजयः कृष्णः सव्यसाची धनंजयः॥"

चेतनानन्द को भारतीय पूर्वजों के गुणगान में रस आने लगा था। गाने वाला कह रहा था—

"अहिल्या द्रौपदी सीता तारा मन्दोदरी तथा।
पंच कन्या स्मरेन्नित्यम् महापातक नाशनम्॥"

चेतनानन्द का मन पुलकित होने लगा था। वह दत्तचित हो सुन रहा था—

"अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिका॥
गांगं वारि मनोहारि मुरारि चरणच्युतम्।
त्रिपुरारि शिरश्चारि पापहारि पुनातु माम्॥"

चेतनानन्द विचार कर रहा था, यह भारत माता है। श्रद्धाभक्ति से स्वयंसेवक इस प्रातःस्मरण को सुन रहे हैं। इससे चेतनानन्द अनुमान लगा रहा था कि ये लोग अवश्य भारत माता को अखंड रखने के लिए जीवन की बाज़ी लगा देंगे। इससे भी अधिक प्रभाव उसके मन में निम्न पदों से हुआ।

"ऋषिं नमामि दध्यं च देवानामुपकारकम्।
वाल्मीकिं च मुनिं वन्दे श्री रामायण कोकिलम्॥
मनुं स्मराम्यादि गुरु प्रजानाम्,
भगीरथं धीरमुदग्र यत्नम्।
भूपं हरिश्चन्द्रमभंग वाचम्,
श्री रामचन्द्रं रघुवंश सूर्यम्॥
यमजेत्री च सावित्री भगिनी च निवेदिता
मीरा लक्ष्मीरहिल्या च पंचेता पुण्यचिंतना॥

अशोकः चन्द्रगुप्तश्च विक्रमः शालिवाहनः
हूणजेता यशोवर्मा समुद्रो गुप्त वंशजः ॥
बुद्धो दयाधनः श्रीमान् महावीरो जिनेश्वरः
यतीन्द्रः शंकरश्चैव त्रयोधर्मस्य धारकाः ॥
आचार्यं त्रितयं वन्दे भक्ति-मार्ग प्रवर्तकम्
मध्वं रामानुजं चैव सादरं वल्लभं तथा
ज्ञानेशं श्री समर्थं च कबीरं पूतचेतसम् ॥
चैतन्यं तुलसीदासं तुकारामं हरिप्रियम्
श्रीमत्परमहंसं च रामकृष्णं सतां वरम् ॥
चाणक्यं तीव्रधीष्णं राजनीति धुरंधम्
नमामि तिरुवलवारं द्राविड़ं कवि पुंगवम ॥
विख्यातं गुरुगोविन्दं गुरुं नानकमेव च
सेनं केशवचन्द्रं च राजानं राम मोहनम् ॥
रामतीर्थं दयानन्दं विवेकानन्दमेव च
एतेषां स्मरतां नित्यम् आविर्भवति पौरुषम् ॥
तिलकं लोकमान्यं च रवीन्द्रं कविभूषणम्
केशवं हेडगेवार वंश रत्नं दृढ व्रतम् ॥
प्रातः स्मरणमेतद्यो नित्यं नियमतः पठेत्
अखण्डं भारतं नित्यं तस्य स्फुरति चेतसि ॥

चेतनानन्द इस अर्दास (वन्दना) को सुनकर चकित रह गया। वह मन में विचार करता था कि ये नित्य-प्रति स्मरण करने वाले क्या कर सकते है, अवश्य देखना चाहिए।

शाखा से लौटते समय वह मन में अनेकानेक योजनाएँ बनाने लगा था। उसको ऐसा अनुभव हो रहा था कि इन युवकों की सहायता से वह अवश्य कुछ-न-कुछ कर सकेगा।

वह महेश से मिला और फिर उसके द्वारा संचालकों से मिला। इस संस्था को उसने भारत में एक विचित्र आन्दोलन समझा और उसको

समझने में लग गया।

दिन व्यतीत हो रहे थे। राजनीतिक परिस्थिति द्रुत गति से परिवर्तित हो रही थी। अन्त में अन्त का आरम्भ हो गया। जिसकी आशा थी वह हो गया। मुस्लिम लीग की नीति सफल हुई। यूनियनिस्ट पार्टी का नेता अपने घर में औरतों को सियापा करते देख घबरा उठा और उसने अपना त्यागपत्र दे दिया। मार्च तीन को प्रान्त के गवर्नर ने खान इफ्तिखारहुसैन खाँ ममदोत वाले को लीगी मिनिस्ट्री बनाने के लिए निमन्त्रण दिया। पंजाब के मुसलमानों के मन का चित्र एकदम बदल गया। खिजर हयात शत्रु से इस्लाम का भाई बन गया।

हिन्दू और सिक्ख सदस्य असेम्बली चैम्बर में एकत्रित हो गए। नगर के हिन्दू व सिक्खों में क्रोध की लहर दौड़ गई और वे भी असेम्बली चैम्बर के बाहर एकत्रित होने लगे।

चेतनानन्द ने प्रातःकाल यह समाचार पढ़ा तो समाचार-पत्र उसके हाथों से नीचे गिर गया और वह हताश होकर कुर्सी पर बैठा रह गया। उसका पिता स्नानागार से निकला तो पुत्र के मुख पर चिन्ता की रेखा देख पूछने लगा, "क्या बात है चेतनानन्द ?"

"पिता जी ! यहाँ भी डायरेक्ट ऐक्शन का द्वार खुल गया है।"

"ऐसा होना ही था। यूनियनिस्ट मन्त्री-मण्डल में मुसलमानों का होना उसकी दुर्बलता के लक्षण थे। मुसलमानों ने अन्य धर्मावलम्बियों के मुकाबिले में कभी भी अपने धर्मियों का विरोध नहीं किया।"

"मैं समझता हूँ कि पाकिस्तान बनाने का यह प्रथम चरण है और हमारा यहाँ रहना अब कठिन है। केन्द्रीय सरकार हमारी रक्षा नहीं कर सकेगी।"

"मैंने यह बात समझ ली है और इसलिए अपने व्यापार का केन्द्र बदलकर देहरादून ले जा रहा हूँ।"

"इस पर भी मैं यहाँ ही रहूँगा और पाकिस्तान बनने से जितना पंजाब बच सके उसका यत्न करूँगा। शायद लाहौर में 'प्लेबिसाईट' हो तो

हम इसको पाकिस्तान में जाने से रोकने का यत्न करेंगे ।"

जीवनलाल चेतनानन्द के कहने को ठीक समझता था। इस पर भी उसको इस प्रयास में सफलता मिलती दिखाई नहीं देती थी । वह समझता था कि हिन्दुओं के अब विरोध करने से कुछ नहीं बनेगा। कांग्रेसी हिन्दुओं के प्रतिनिधि हैं और उनके मान ज.ने से हिन्दू मान गए समझे जावेंगे।

जीवनलाल ने खड़े-खड़े ही कह दिया, "देखो चेतन ! मैं तुम्हारे इस प्रयत्न की सराहना करता हुआ भी इसमें सफलता के लक्षण नही देखता । होगा यह कि जब पंजाब में डायरेक्ट ऐक्शन चलेगा, तो कांग्रेसी नेता इसकी भयंकरता देख भयभीत हो जावेंगे और फिर पाकिस्तान का बनना मान जावेंगे ।"

"पिता जी ! आप ठीक कहते है । इस पर भी मेरा पंजाब में कांग्रेस की जीत कराने में भाग, यह माँग कर रहा है कि मैं इस समय पंजाब के हिन्दुओं का साथ दूँ। मैं यहाँ ही रहूँगा और अपने भूल से किये कर्मो का प्रायश्चित करूँगा ।"

जीवनलाल को इस बात से सन्तोष नहीं हुआ और वह पूजा-गृह में चला गया ।

(३)

चेतनानन्द अपनी बेचैनी को दबा नहीं सका । वह आज के समाचार का प्रभाव नगर की जनता पर जानने के लिए घर से पैदल ही निकल पड़ा। उसका विचार मोरी दरवाजे से निकल लाहौरी गेट से शहर के भीतर जाने का था; परन्तु वह मोरी दरवाजे के समीप अभी पहुँचा ही था कि महेश मोटर-गाड़ी में सामने से आता मिला । उसने चेतनानन्द को देख लिया और मोटर उसके समीप ला खड़ी कर दी । गाड़ी खड़ी होने पर चेतनानन्द ने पूछा, "किधर जा रहे हो महेश ?"

"आपकी ओर ही जा रहा था ।"

"क्यों ?"

"आपने सुना नहीं क्या ? मन्त्री-मण्डल ने त्यागपत्र दे दिया है।"

"सुना है।"

"आपकी, इसके परिणामों पर, सम्मति जानना चाहता था। क्या खिज़र हयात खाँ लीगी मन्त्री-मण्डल में सम्मिलित हो जावेगा ?"

"हो सकता है।"

"हिन्दू लोग स्थान-स्थान पर एकत्रित होकर कह रहे हैं कि हिन्दुओं को मुसलमानों की भाँति प्रदर्शन करने चाहिएँ।"

"मैं समझता हूँ कि यह सुझाव कांग्रेसी नेताओं की ओर से दिया गया है। मेरे विचार में ऐसा नहीं होना चाहिए। हमको प्रदर्शनों के स्थान आने वाली कठिनाई के विरोध की तैयारी करनी चाहिए। मैं देखता हूँ कि पंजाब में डायरेक्ट ऐक्शन के विरोध की तैयारी नहीं है। प्रदर्शनों से वह तैयारी नहीं आ सकती। इससे तो बदनामी के अतिरिक्त और कुछ नहीं होगा।"

महेश यह सुन गम्भीर विचार में पड़ गया। उसने कहा, "दो बातें आज होने जा रही हैं। एक तो कौंसिल चैम्बर के बाहर हिन्दू और सिक्ख प्रदर्शन कर रहे हैं। दूसरे गोल बाग में विद्यार्थी सभा कर रहे है।"

"यह ठीक नहीं हो रहा। हमको इस नई परिस्थिति पर गम्भीरता-पूर्वक विचार करना चाहिए। पीछे किसी निश्चित नीति पर कार्य करना चाहिए।"

"सारा नगर तो कौसिल चैम्बर के बाहर एकत्रित हो रहा है।"

चेतनानन्द ने एक क्षण-भर विचार किया और कहा, "महेश! मुझको कौंसिल चैम्बर के बाहर ले चलो।" इतना कह वह गाड़ी का दरवाज़ा खोल महेश के साथ बैठ गया और दोनों कौंसिल चैम्बर के बाहर जा पहुँचे। बहुत से लोग वहाँ पहिले ही पहुँचे हुए थे। पचास-साठ सहस्र से कम नहीं होंगे। कौंसिल के सिक्ख और हिन्दू सदस्य पार्टी रुम में विचार और विनिमय कर रहे थे।

चेतनानन्द गाड़ी से उत्तर भीड़ को चीरता हुआ चैम्बर की ड्योढी तक

जा पहुँचा। इस समय सब सदस्य पार्टी-रूम से निकल ड्योढ़ी पर आ गए। उनको आया देख भीड़ में से लोग नारे लगाने लगे, 'लीगी सरकार नहीं बनेगी।' इत्यादि।

सदस्यों की इच्छा थी कि डाक्टर खन्ना लोगों को सम्बोधन करें। चेतनानन्द ने यह अवसर जान डॉक्टर खन्ना के कँधे पर हाथ रखकर कह दिया, "मैं आपसे कुछ कहना चाहता हूँ।"

"हाँ! कहो। डॉक्टर खन्ना ने घूमकर उसकी ओर देख पूछा।

"यहाँ इतनी भीड़ में क्या कहा जा सकता है! जरा चैम्बर के भीतर आइए।"

डॉक्टर खन्ना चैम्बर की सीढ़ियां चढ़ बरामदे में जा पहुँचा। यहाँ कुछ कम शोर था। चेतनानन्द ने अपनी बात कह दी, "बहुत ही संकट का समय आ गया है। आप लोगों को घर लौटा दीजिए।"

"क्यों ?"

"दफ़ा १४४ लगी हुई है। पुलिस इनके इस प्रकार एकत्रित होने पर आपत्ति करेगी। लोग झगड़ा करेंगे और गोली चल जायगी।"

"और यदि प्रदर्शन न किया तो लीगी मन्त्री-मण्डल बन जाएगा।"

"वह तो होगा ही। इससे भी अधिक बुरी बात गवर्नर का शासन स्थापित होना है। लीगी सरकार से झगड़ा करना सुगम है, मगर गवर्नर के शासन से झगड़ा बहुत ही कठिन है।"

"गवर्नर का शासन नहीं होगा। केन्द्रीय सरकार में पण्डित जवाहर लाल जी के होने से यह नहीं हो सकेगा ?"

"जब यहाँ मन्त्री-मण्डल नहीं बनेगा तो गवर्नर का शासन तो होगा ही। पण्डित जी इसको कैसे रोक सकेंगे।"

"नहीं साहब! आप नहीं जानते। प्रान्त अभी स्वतन्त्र नहीं हुए।"

यह कह डॉक्टर खन्ना बाहर फिर भीड़ में आ गया। किसी ने एक मेज लाकर रख दी और डॉक्टर खन्ना उस पर खड़ा हो व्यख्यान देने लगा। उसका कहना था कि सारे प्रान्त में शान्तिमय ढंग से मुस्लिम लीग

मिनिस्ट्री बनने के विरुद्ध जलसे-जलूस होने चाहिएँ ।

डॉक्टर खन्ना के पीछे मास्टर तारासिंह मेज पर चढ़ गए और अपनी करपान नंगी कर कहने लगे, "हम लडते-लडते कट मरेंगे पर पाकिस्तान नहीं बनने देगे।' मास्टर साहब ने यह भी कहा कि यह करपान तब तक म्यान में नही जाएगी, जब तक पंजाब में संयुक्त मन्त्री-मण्डल नही बन जाता ।

इन वक्तृताओं से तथा मास्टर साहब के नंगी तलवार हवा में घुमाने से लोग जोश से पागल हो उठे और गगन-भेदी स्वर से नारे लगाने लगे ।

इस समय एक अपरिचित आदमी मेज पर खड़ा हो सूचना देने लगा, 'साढे दस बजे गोल बाग में एक भारी सभा होगी । आप लोगो को वहाँ चलना चाहिए ।'

चेतनानन्द यह सब कुछ देख रहा था । उसको इसमें कुछ भी सार प्रतीत नही होता था । इन जलसे और जलूसो से जनता के भडक उठने में सन्देह नहीं था और शान्ति-भंग करने का श्रेय इन जलसे-जलूस वालो को मिलने वाला था । चेतनानन्द मन में यह विचार कर रहा था कि प्रान्त में लीगी सरकार बनने दी जाती और फिर उसके अनियमित कार्यो के विरुद्ध आन्दोलन किया जाता; यदि प्रान्त में यह सरकार शान्ति स्थापित न रख सकी तो फौजी-शासन स्थापित करना सुगम होगा । गवर्नर के शासन को बदलने में अधिक कठिनाई उपस्थित होगी । वाइसराय एक गवर्नर को बदनाम नही होने देगा ।

इससे उसके मन मे आया कि वह गोल बाग की सभा में जावे और वहाँ सभा के लोगों को शान्तिपूर्वक घरों को चले जाने की सम्मति दे । वह चाहता था कि अपने विचार भी जनता के सम्मुख रखे और उनको बताए कि क्यों वह लीगी सरकार को गवर्नर के शासन से अधिक अच्छा समझता है ।

एक बार उसने पुनः प्रयत्न किया कि डॉक्टर खन्ना उसके उस कार्य में सहायक बने, परन्तु डॉक्टर साहब ने झुंझलाकर कह दिया, "इतनी भारी भीड़ को कौन रोक सकता है ? साथ ही मैं पूछता हूँ कि रोकूं क्यों ?"

चेतनानन्द ने डाक्टर तथा अन्य नेताओं से बातों में समय गंवाना व्यर्थ समझ, गोल बाग की मीटिंग में स्वयं जाकर यत्न करना उचित समझा। वह भीड़ में से निकल महेश की गाड़ी देखने लगा। महेश वहाँ से चला गया था। वहाँ सवारी के लिए अन्य कोई साधन नहीं था, इस कारण वह पैदल ही गोल बाग़ की ओर चल पड़ा। वह विचार कर रहा था कि यदि सवारी मिल जाती तो वह मीटिंग आरम्भ होने से पूर्व पहाँ पहुँच जाता और कुछ कर सकता। उसने घड़ी में समय देखा। साढे दस बज रहे थे।

लम्बे-लम्बे पग उठाता हुआ जब वह अजायबघर के सामने पहुँचा, तो यूनिवर्सिटी हाल की घड़ी ने ग्यारह बजाए। वह लगभग भागा हुआ जा रहा था। उसके मन में यह समाया हुआ था कि इस सभा पर पुलिस गोली चलाएगी तो उसको ऐसा होने से बचाने का यत्न अरना चाहिए। वह अभी 'मेयो स्कूल औफ आर्ट्स' के सामने ही पहुँचा था कि उस को बाग में गोली चलने का शब्द सुनाई दिया। वह वही ठहर गया। उसने समझा कि डायरेट ऐकशन का श्रीगणेश हो गया है और ऐसे ढंग से हुआ है कि हिन्दुओं और पुलिस में मुकाबिला हो गया है, जो नही होना चाहिए था। इस समय भारी भीड़ बाग की ओर से भागती हुई आई। चेतनानन्द ने एक से पूछा, "क्या हुआ है ?"

भागते हुए एक विद्यार्थी ने कहा, "गोली चल गई है।"

एक और भागता हुआ कहने लगा, "बीसियों मारे गए।"

तीसरा कहने लगा, "एक और जलियाँ वाला बाग बन गया है।"

चेतनानन्द ने समझा कि यह सब योजना और नियन्त्रण न होने के कारण है। पिछले तीस वर्ष से महात्मा गांधी हिन्दुओं के नेता रहे है। उन्होंने किसी अन्य की बात जनता को सुनने नही दी और स्वयं वे अपना कार्य भगवान्-भरोसे करते रहे हैं। इस भगवान् भरोसे की पराकाष्ठा तो सन् १९४२ में 'क्विट इंडिया' आन्दोलन के समय हुई थी। वर्धा से बम्बई जाते समय तक महात्माजी के मन में आन्दोलन की रुप-रेखा बन नहीं सकी थी।

इस प्रकार हिन्दू जाति को बिना विचार किए कार्य आरम्भ करने

का स्वभाव पड़ गया था और चेतनानन्द देख रहा था कि आगे क्या होने वाला है, किसी नेता के मन में स्पष्ट नहीं।

चेतनानन्द घटनास्थल पर जा पहुँचा। वहाँ से लोग भाग गए थे। कुछ पुलिस के सिपाहियों को भी चोटें आई थीं। एक सिपाही अधिक घायल हुआ था और पुलिस वाले उसको पुलिस वैन में चढ़ा रहे थे। पुलिस के लोग अपनी गाड़ियों में चढ़ विदा हो गए। अब चेतनानन्द की दृष्टि सभा-स्थान की ओर गई। उसने देखा कि पचीस के लगभग लोग वहाँ घायल पड़े हैं। कुछ भागते हुए लोगों के पाँव तले आकर कुचले गए हैं।

एकाएक चेतनानन्द की दृष्टि महेश की ओर गई। वह वहाँ बेसुध पड़ा था। उसके समीप पहुँच उसने उसके जीवित होने का विश्वास कर, उसको कन्धे पर उठा लिया और उसकी मोटर के लिए चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। दूर 'स्माल कॉज़ कोर्ट' के सामने की सड़क पर उसकी मोटर दिखाई दी। वह महेश को उठाये हुए वहाँ ले आया। महेश की जेब से मोटर की चाबी निकाल, दरवाज़ा खोल, उसको पिछली सीट पर लिटा, उसने गाड़ी चला दी।

घर पहुँच उसने टेलीफोन से डाक्टर को बुला लिया और स्वयं रक्त बन्द करने का यत्न करने लगा। चेतनानन्द की माता ने महेश के घायल होने का समाचार महेश के माता-पिता को भेज दिया।

डॉक्टर आया तो उसने महेश की भली-भाँति परीक्षा की। जाँघ पर गोली लगी थी, जो आर-पार हो गई थी। रक्त बहुत निकल गया था और इसी कारण महेश अचेत हो गया था। अतएव डॉक्टर ने घाव पर पट्टी बाँध दी और ग्लूकोज़ का इंजैक्शन दे दिया। इससे हृदय की गति को बल मिल गया और महेश की आँखें खुल गईं।

इस समय महेश के माता-पिता, स्त्री रेवा और बहन पार्वती आ पहुँचे। महेश को घायल पलंग पर लेटे देख उसकी माँ के आँसू निकल आये। रेवा चुपचाप अपनी सास के पीछे खड़ी रही। पण्डित जी ने महेश

के माथे पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। पार्वती की आँखें भी भीग गई थीं और वह अपने पाँवों की ओर देख रही थी।

चेतनानन्द डॉक्टर को विदा कर लौटा और सबको वहाँ देख कहने लगा, "डॉक्टर कहता है कि वह सायंकाल पैन्सिलीन का टीका करने आयेगा। इसको गरम-गरम यूष देना चाहिए और यहाँ इसके पास केवल एक आदमी बैठे।"

इस समय महेश के पिता ने धीरे-से आवाज़ दी, "महेश!" महेश ने आँखें खोलीं।

"डरो नहीं बेटा! भगवान् सब ठीक कर रहा है।" इतना कह वह कमरे से बाहर चला गया। उसके साथ अन्य सब लोग भी बाहर चले गए। केवल रेवा भीतर रह गई। जब सब चले गए तो महेश ने संकेत से रेवा को समीप बुलाकर कान में कहा, "देखो दीदी और भैया को पृथक् में मिलने का अवसर पैदा कर दो।"

(४)

पार्वती आती नहीं थी। उसको इस घर में आते समय संकोच हो रहा था, परन्तु जब रेवा ने कहा कि नौकर समाचार लाया है कि वे बेहोश पड़े हैं तो पार्वती मन दृढ़ कर चली आई। जब चेतनानन्द आया तो वह उसकी आँखों में देख नहीं सकी। उसकी आँखें भूमि की ओर झुकी थीं। जब सब लोग महेश के कमरे से बाहर आये तो वह भी चली आई और बैठक में आकर बैठ गई।

इस कमरे में बैठ चेतनानन्द से प्रेम की बातें करने की मधुर स्मृति अब शूलों की भाँति उसके हृदय में चुभने लगी।

चेतनानन्द के पिता ने महेश के माता-पिता और बहन को कहा, "मैं समझता हूँ आप यहीं रहिए। सायंकाल डॉक्टर आयेंगे और अपनी सम्मति देंगे। पीछे आप जाने के विषय में विचार कर लीजिएगा।"

वे पहले ही ऐसा विचार कर रहे थे। जब तक भोजन का प्रबन्ध होता

रहा, वे लोग बैठक में बैठे-बैठे भिन्न-भिन्न विषयों पर वार्तालाप करते रहे। पार्वती चुपचाप अपने मन में उठ रहे उद्‌गारों के विश्लेषण में लगी रही। विवाह के पूर्व के दिनों से लेकर उस दिन तक के अनेकानेक दृश्य उसकी आँखों के सामने आने लगे। विवाह के दिन का दुःखद् नाटक उसको स्मरण आया तो उसकी आँखों में आँसू छलक आए। वह कई बार पहले भी इस घटना पर विचार कर चुकी थी और उस समय, विवाह के अवसर पर, घर से भाग एक सखी के घर जाकर छिप जाने के ठीक अथवा ग़लत होने पर महीनों मनन कर चुकी थी। इस सब में उसको अपना ही दोष प्रतीत होता था। इससे वह अपने किए पर ही पश्चात्ताप करती थी और उसको स्मरण कर रो पड़ती थी। इसी बैठक में बैठकर चेतनानन्द ने कई बार उससे प्रेम की मीठी-मीठी बातें की थीं। उनको स्मरण कर उसके आँसू गालों पर टपक पड़े। उनको छिपाने के लिए वह उठ ग़ुसलखाने में मुख धोने चली गई।

चेतनानन्द उसे ग़ुसलखाने में जाते देख समझ गया कि क्या बात है। इससे उसका हृदय द्रवित हो उठा। वह भी बैठक से निकल ग़ुसलखाने के बाहर उसकी प्रतीक्षा करने लगा। जब पार्वती मुख धोकर बाहर निकली तो चेतनानन्द को खड़ा देख झिझकी, पश्चात् मुख नीचा कर समीप से गुज़र जाने लगी तो चेतनानन्द ने धीरे से कहा, "पार्वती! तनिक ठहरो।"

पार्वती शायद न ठहरती, परन्तु चेतनानन्द मार्ग रोककर खड़ा हो गया। इससे वह रुक गई और पूछने लगी, "क्या चाहते हैं आप?"

"एक मिनट के लिए इस साथ के कमरे में आओ। मैं कुछ कहना चाहता हूँ।"

"क्या लाभ होगा इससे?"

"क्या सब बातें लाभ के लिए ही की जाती हैं?"

"मेरा चित्त नहीं करता।"

"तो मेरे लिए ही मान जाओ। बहुत लम्बी बात नहीं है। एक-दो

मिनट में ही कह दूँगा।"

पार्वती चुपचाप भूमि की ओर मुख किए खड़ी रही। इसको अर्ध स्वीकृति मान चेतनानन्द ने पुनः आग्रह किया और दोनों लाला जीवनलाल के पूजागृह में चले गए। वहाँ कमरे के बीचोंबीच हवन-कुण्ड बना था और उसमें से अभी भी हवन-सामग्री जलने की धीमी-धीमी सुगन्धि आ रही थी। हवन-कुण्ड के चारों ओर चटाइयाँ बिछी थीं। वे उन पर एक-दूसरे के सामने बैठ गए। बैठते ही पार्वती ने अभी भी आँखें नीची किये हुए पूछा, "बताइये, क्या चाहते हैं आप ?"

"मैंने भूल की है पार्वती ! मैं समझता था कि तुम मुझसे किसी प्रकार का लगाव नहीं रखतीं। इसी कारण तुम विवाह पर नहीं आई। अब मुझको अपनी भूल का ज्ञान हुआ है और मैं तुमसे इसके लिए क्षमा माँगना चाहता हूँ।

"इस भूल का मैं भारी दण्ड पा चुका हूँ। मैंने तुमसे द्वेषवश एक ऐसी लड़की से विवाह कर लिया था, जिसको मेरे धन से मोह था। परिणाम यह हुआ है कि मेरी उससे निभ नहीं सकी।"

पार्वती बिना कुछ कहे भूमि की ओर देखते हुए बैठी रही। उसकी आँखें तरल हो आई थी और आँसू गालों पर ढुलकने लगे थे। चेतनानन्द ने अपना कहना जारी रखा, "मैं केवल यह चाहता हूँ कि तुम मेरी भूल के लिए मुझे क्षमा कर दो। इसके फलस्वरूप कभी-कभी मिल सकने और पूर्व स्मृतियों से मन को सन्तोष दे सकने का अवसर चाहता हूँ।"

पार्वती अपनी साड़ी के आंचल से आंसू पोंछने लगी। चेतनानन्द ने यह देख फिर कहा, "क्या मैं समझूँ कि मेरी प्रार्थना स्वीकार हो गई है ?"

इस सब समय में पार्वती कुछ कहने का साहस बाँध रही थी, परन्तु उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि कहाँ से कहना आरम्भ करे। जब वह कुछ निश्चय नहीं कर सकी तो उठ खड़ी हुई और बोली, "इस समय कुछ कहते नहीं बनता। फिर कभी कहने का यत्न करूँगी।"

चेतनानन्द को शान्ति मिली और अनायास उसके मुख से निकल

गया, "धन्यवाद !"

जब चेतनानन्द महेश को देखने गया तो उसके मुख पर प्रसन्नता और सन्तोष के लक्षण देख महेश और रेवा दोनों समझ गए कि उनमें सुलह हो गई है।

रेवा कमरे से बाहर आई तो महेश ने कहा, "भया, मुझको घायल होने का शोक नहीं रहा। मैं इसके परिणाम को देख प्रसन्न हूँ।"

चेतनानन्द महेश के कहने का अर्थ समझ गया था, इस पर भी उसने बात बदल दी। उसने कहा, "तुम नहीं जानते महेश! कि नगर में क्या हो रहा है। इसी से खुशी मना रहे हो। गोल बाग की सभा के लोग गोली चलने से भागे तो नीला गुम्बज अनारकली बाज़ार में जा पहुँचे। वहाँ से जलूस के रूप में भीड़ दो भागों में बँट गई। दोनों भाग क्रोध में उन्मत्त हुए, पुलिस वालों और मुसलमानों को पीटते हुए शहर के भीतर जा पहुँचे हैं। एक लाहौरी गेट में से होता हुआ पापर मण्डी में जा पहुँचा है, जहाँ मुसलमानों से झगड़ा हो रहा है और दूसरा भाग अस्पताल के पीछे से भारत बिल्डिंग के आगे से शाहाल्मी दरवाजे में से होता हुआ, रंगमहल चौक में जा पहुँचा है। वहाँ पुलिस वालों से मुठभेड़ हो गई है।"

"यह ठीक नहीं हुआ है न, भैया ?"

"अब यह विचार करने का समय नहीं रहा। अब तो जो कल होने वाला है, उस पर विचार करना चाहिए। कल मुसलमान हिन्दुओं पर आक्रमण करेंगे और एक प्रकार का हिन्दू और मुसलमानों में गृह-युद्ध चल पड़ेगा। मुसलमानों की सहायता में प्रान्त की सरकार होगी और हिन्दुओं के पास दोनों के मुकाबिले की शक्ति नहीं है।"

"क्या केन्द्रीय सरकार इसमें हस्तक्षेप नहीं करेगी ?"

"यदि लीगी सरकार बन गई तब तो हस्तक्षेप करना सुगम होगा। गवर्नर के शासन में केन्द्र का हस्तक्षेप गवर्नर जनरल पसन्द नहीं करेगा।"

"तो क्या होगा ?"

"होगी पंजाब की तबाही और पाकिस्तान बने बिना नहीं रहेगा।"

"इसके रोकने का कोई साधन है या नहीं ?"

"है; परन्तु उसके लिए तैयारी नहीं है। पिछले तीस वर्ष के शान्ति के प्रचार से लोगों में सशस्त्र आक्रमण का मुकाबिला करने की सामर्थ्य नहीं रहने दी गई।"

(५)

जब मीना और नीना के बीच रसूल के विषय में बात स्पष्ट हो गई तो दोनों मिल कर अपने भावी जीवन की योजनाएँ बनाने लगीं।

मार्च की दूसरी तारीख को दिनभर बैरिस्टर साहब के बंगले में बातचीत होती रही। बैठक के दरवाजे बन्द कर दिये गए और भीतर मुस्लिम लीग और यूनियनिस्ट पार्टी के नेताओं में गुप्त गोष्ठी होती रही। लोगों का आना जाना लगा हुआ था। बातचीत टेलीफोन पर करना उचित नहीं समझी गई, न ही लिखकर। इस कारण लोग आते-जाते थे और बातचीत चल रही थी। एक-दो बार गवर्नर का पी० ए० भी आया और गवर्नर का संदेश दे गया।

मीना की माँ मेहमानों की आवभगत में लगी थी। दिन-भर चाय, खाना-पीना, पानी, शर्बत बनता और वितरित होता रहा। इस सब समय में मीना और नीना एक कमरे में बैठी हुईं अपने विषय में बातें कर रही थीं। नीना अभी-अभी पार्वती से मिलकर आई थी और उसकी बातों का प्रभाव उसके मस्तिष्क पर ताजा ही था। नीना कह रही थी, "यदि रसूल साहब तुमसे विवाह करना नहीं चाहते मैं क्या करूँ ?"

"तुम उनसे कहो कि मैं सब प्रकार से उनकी सेवा करूँगी और उनको प्रसन्न रखूँगी।"

"कह दूँगी। पर तुम मुझको अपना दूत बना ठीक नहीं कर रहीं। वह मुझको देखकर तुम्हारा विचार करेगा ही कैसे ?"

"मैं समझती हूँ कि जब तुम अपना निश्चय उस पर प्रकट करोगी तो वह मेरे साथ विवाह करना स्वीकार कर लेगा।"

नीना को यह बात भली प्रतीत नहीं हुई। वास्तव में वह रसूल के सामने होना नहीं चाहती थी। इससे उसने अपनी बहिन से कहा, "अच्छी बात है। जब वह आयेगा तो मैं उसको तुम्हारे विचार बताने का यत्न करूँगी। मैं अपने आप उसको कुछ भी बताने नहीं जाऊँगी। इस पर भी मैं एक बात तुमको बता देना चहाती हूँ। आज यूनियनिस्ट पार्टी और मुस्लिम लीग में समझौता हो जायेगा। तब लीगी मन्त्री-मण्डल बन जायेगा। ऐसी परिस्थिति में तुम्हारा एक मुसलमान से विवाह मुसलमान होने के बराबर होगा। यहाँ कोई हिन्दू रह नहीं सकेगा।"

"मैं ऐसा नहीं समझती। मेरा प्रोफेसर साहब से विवाह कोई मज़हबी बात नहीं होगी। हम स्पेशल मैरिज ऐक्ट के अनुसार विवाह कर लेंगे।"

"पर वे नहीं मानेंगे। उन्होंने मुझको कहा था कि पाकिस्तान बनने पर मुसलमानी रीति से विवाह होगा।"

"तो मैं मुस्लमान हो जाऊँगी।"

"बहुत प्रेम है तुम्हारा उनसे ?"

"नीना ! तुम उनसे जरूर कहना।"

इस समय नीना के मन में पार्वती के कहने का अर्थ स्पष्ट हो गया। उसने कहा था, 'वह प्रेम ही नहीं जो एक ओर से हो। वह केवल वासना है।'

वह देख रही थी कि मीना प्रोफेसर रसूल से इतना प्रेम करती है और प्रोफेसर साहब उसकी ओर देखते भी नहीं। वह यह भी सोच रही थी कि उसका अपना प्रोफेसर साहब से किंचित् मात्र भी लगाव नहीं है। सबसे बड़ी बात यह थी कि वह अभी मुसलमान हो जाने के लिए अपना मन बना नहीं सकी थी। दूसरी ओर प्रोफेसर रसूल उससे विवाह करने के लिए उत्सुक था।

अभी उनकी बात समाप्त नहीं हुई थी कि प्रोफेसर रसूल कमरे के बाहर आकर खड़ा हो गया। उसने बाहर से आवाज दी, "नीना ! क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ ?"

नीना उठ कमरे के बाहर आगई। दोनों कोठी के लान में चले गए।

वहाँ घास पर टहलते हुए प्रोफेसर ने कहा, "मैं उस दिन के अपने सवाल का जवाब लेने आया हूँ।"

"देखिए प्रोफेसर साहब !" नीना ने उसकी आँखों में देखते हुए कहा, "मैं समझती थी कि आप दीदी से प्रेम करते हैं और मुझको कह रहे हैं कि मैं आप के विषय में उससे कहूँ।"

प्रोफेसर यह सुन खिलखिला कर हँस पड़ा। पश्चात् उसने चलते-चलते रुककर कहा, "मैंने तो मीना का नाम भी नहीं लिया था। यह तुमने कैसे समझ लिया ?"

"आप उसको पढ़ाते हैं। मैं उसकी बहिन हूँ। मुझको सिफारिश लगाने के लिए कहने का मतलब और कुछ हो ही नहीं सकता।"

"हो क्यों नहीं सकता ? क्या मैं तुमको अपने-आप से सिफारिश लगाने के लिए नहीं कह सकता ?"

"वाह ! यह अच्छा तरीका है। खैर छोड़िये इस बात को। मैं कहती हूँ कि मेरी बहिन आप से बहुत प्रेम करती है और मैं पूछती हूँ कि आप उसमें क्या दोष पाते हैं ?"

"यह कोई गणित का प्रश्न नहीं कि इसको हल करने के लिए कोई फारमूला लिखकर बता दूँ। मैं तुम्हारी बहिन को नहीं, तुम को पसन्द करता हूँ।"

"मैं इसके लिए आपको धन्यवाद करती हूँ। परन्तु क्या विवाह करने में दोनों पक्षों की पसन्द का प्रश्न नहीं है ?"

"हिन्दुस्तान में नहीं है। यहाँ आदमी की मर्ज़ी ही मानी जाती है। औरत को राज़ी करने के लिए कई तरीके हैं। लड़की के माँ-बाप को आराम-आसाईश या कोई ओहदा दिलाने की उम्मीद, लड़की की कपड़े, ज़ेवर, खेलकूद और दूसरे खुश रखने के तरीके मुहय्या करने की काबलियत रखना और यदि इनसे भी काम न चले तो ज़बरदस्ती शादी कर लेना। दुनिया के आग़ाज से यही तो हो रहा है।"

"बहुत बुरे आदमी हैं आप।"

"नहीं, नीना ! संसार में मुझ में भी अधिक बुरे आदमी हैं। मुझे तो लोग बहुत अच्छा आदमी समझते हैं। देखो नीना ! मैं पाकिस्तान के बनने में जी-जान से कोशिश कर रहा हूँ और इसके बनने पर मैं अवश्य किसी अच्छे ओहदे पर तैनात किया जाऊँगा। उस समय मैं बैरिस्टर साहब के लिए तरक्की का रास्ता खोल दूँगा और तुम्हारे लिए भी मैं वह कुछ कर सकूँगा, जिसका तुम ख्वाब में भी खयाल नहीं कर सकतीं।"

"मैं आपकी बहुत शुक्र गुज़ार हूँ। मगर मैं अपनी मुहब्बत का भाव-ताव नहीं कर रही। हमारे हिन्दूओं में तो औरत जब किसी से विवाह करने का फैसला कर लेती है, तो आदमी उससे विवाह करता ही है। सीता ने राम को वरा, रुक्मणी ने कृष्ण को, दमयन्ती ने नल को, और द्रौपदी ने अर्जुन को।"

"अगर कोई बदसूरत औरत किसी खूबसूरत आदमी को वरना चाहे तो क्या तब भी आदमी को उससे विवाह करना पड़ता है।"

"ऐसा साहस कोई औरत नहीं कर सकती। यदि करे तो उसका फल उसे भोगना ही पड़ता है। मतलब यह कि वह बीवी तो बन सकती है पर बिना प्रेम और आदर के।"

"तो क्या ऐसी बीवी तुम्हारी बहिन बनना चाहती है ?"

"तो वह कुरुप है क्या ?"

"इतनी रूपवान नहीं, जितनी तुम हो।"

"पर अपने विषय में भी कभी सोचा है आपने ?"

"मुझ में क्या खराबी है ?"

"अपना मुख आइने में देख लीजिये, पता चल जायेगा।"

"रोज़ देखता हूँ।"

नीना आई थी बहिन की सिफारिश करने, पर उससे लड़ पड़ी। इससे नाक चढ़ा उसको वहीं लान में खड़ा छोड़ कोठी में चली गई। प्रोफेसर रसूल कुछ देर तक उसको जाते देखता रहा। पश्चात् उसके पीछे भागकर कोठी के बरामदे में पहुँच, उसका मार्ग रोककर खड़ा हो गया। नीना प्रश्न

भरी दृष्टि से उसकी ओर देखने लगी। उसने अपनी बात की व्याख्या कर दी, "मैं तुमसे मुहब्बत करता हूँ और तुमसे न सुनने के लिए तैयार नहीं।"

"अजब ज़बरदस्ती है। मैं आपसे विवाह करना नहीं चाहती।"

"यह तो मैंने सुन लिया है। पर मैं यह जानना चाहता हूँ कि तुम्हारी मुहब्बत हासिल करने के लिए कितना दाम मुझको देना चाहिए?"

"मुहब्बत कोई मूली-गाजर नहीं जो बाज़ार में बिकती हो।"

"अगर मूली-गाजर नहीं तो बेशकीमती हीरा है, जो सिरफ चुराया व डाका डाल कर लिया जा सकता है। कोहेनूर की कहानी जानती हो या नहीं? इस वक्त इंग्लैंड के बादशाह के ताज में लगा है। कभी भी वह बिका नहीं। इस पर भी कई सल्तनत की सैर कर चुका है।"

"उससे मेरी तुलना कर आप मेरी झूठी प्रशंसा कर रहे हैं। मैं आपसे कह देती हूँ कि मेरा आपसे विवाह नहीं होगा।"

"तो किससे होगा?" नीना के पिता ने पूछा, जो कमरे से निकल नीना के पीछे आ खड़ा हुआ था और नीना के कहने को सुन चुका था।

नीना ने घूमकर पिता की ओर देखा तो लज्जा से उसकी आँखें झुक गई। इस पर केवल नारायण ने नीना को सम्बोधन कर कहा, "देखो नीना! इधर मेरे कमरे में आओ। मैं तुमसे कुछ कहना चाहता हूँ।"

नीना भूमि की ओर देख रही थी। जब केवल नारायण ने दूसरी बार कहा तो प्रोफेसर रसूल ने भी उसको आग्रह पूर्वक कहा, "चलो न। बैरिस्टर साहब कुछ अच्छी बात ही कहेंगे।"

विवश नीना कमरे में चली गई। उसके पीछे-पीछे केवल नारायण और रसूल कमरे में जा पहुंचे। केवल नारायण ने कुर्सी पर बैठते हुए दूसरों को बैठने के लिए कहा। नीना के बैठते ही बैरिस्टर साहब ने कहना आरम्भ कर दिया, "आज यह फैसला हो गया है कि मुस्लिम लीग और यूनियनिस्ट पार्टी के मुसलमान सदस्य मिलकर वज़ारत बनायेंगे। गवर्नर यह बात मान गऐ हैं और खिजर हयात खाँ ने अपना स्तीफा लिखकर दे दिया है। कल पंजाब में इन्कलाब हो जाएगा। हकीकत में इस्लामी

हकूमत क़ायम हो जावेगी। इसके बाद यहाँ से हिन्दुओं का निकास शुरु होगा। हिन्दू ओर सिक्ख अपने-आप तो मानेंगे नहीं। उनको मनाने के लिए फौज और पुलिस की कार्यवाही की जायगी। इस कार्यवाही में मुसलमान जनता भी शरीक होगी।

"यह नया तवारीखी वाक़या है, जो आज इस कोठी में वकू में आया है। अब तुम दोनों बहिनों को इन वाक़यात की रोशनी में अपने मुस्तकबिल पर सोचना चाहिए। मेरी सारी जायदाद और मेरा कारोबार पंजाब और लाहौर में है। मैं यहाँ से जाऊँगा तो तबाह हो जाऊँगा। इसलिए मैंने फैसला किया है कि यहाँ ही रहूँगा। तुमको भी यहाँ ही रहना है। इसलिए प्रोफेसर साहब से तुम्हारा रिश्ता हमारे यहाँ रहने में भारी मदद देगा।"

नीना ने कह दिया, "मीना प्रोफेसर साहब से मुहब्बत करती है। यदि ये उससे विवाह कर लें तो आपकी मुश्किल हल हो सकती है।"

"पर ये तुम से विवाह करना चाहते हैं।"

"छोटी बहिन से पहले बड़ी बहिन का विवाह होना चाहिए।"

"जब उसके लिए कोई वर मिलेगा तो उसका विवाह भी हो जावेगा।"

"यदि मैं विवाह न करना चाहूँ तो ?"

"तुमको क्या एतराज़ है ?"

"मै इस प्रकार बिकना नहीं चाहती।"

"तुम हम सबको मुसीबत में फँसा दोगी।"

"मुझको विचार करने का अवसर मिलना चाहिए।"

"कब तक फैसला दोगी ?"

"एक दो दिन में।"

केवल नारायण इस उलझन को सुलझता मान नीना की पीठ पर हाथ फेर कहने लगा, "बुद्धिमत्ता इसी में है कि अपनी परिस्थिति के अनुकूल अपने व्यवहार को बनाया जाए। देखो, हम क्या हैं और कहाँ अथवा किस प्रकार रहने में हमारी भलाई हो सकती है। मैं परसों तुम से

इस प्रस्ताव के स्वीकार किये जाने की आशा करता हूँ।"

नीना कमरे से बाहिर निकल अपने कमरे में चली गई। उसके चले जाने पर प्रोफेसर रसूल ने कहा, "मैं समझता हूँ कि आप थोड़ा और ज़ोर डालेंगे तो वह मान जायगी।"

"उम्मीद तो है। उसको ज़रा सोचने का मौका देना चाहिए।"

"मैं आपका शुक्रिया अदा करता हूँ।"

(६)

नीना अपने कमरे में जाकर पलंग पर चादर ओढ़कर लेट गई। वह विचित्र उलझन में फँस गई थी। अपने भूत और भविष्य के विषय में सोचते हुए उसका मन अनेकानेक उद्‌गारों से भर गया। उसका पिता, जब वह अभी पाँच छः वर्ष की थी, उससे लाड-प्यार करते हुए कहा करता था कि वह इतनी सुन्दर है कि किसी देश की रानी बनेगी। जब वह कुछ बड़ी हुई और विवाह और प्रेमियों के पीछे-पीछे भागने का ज्ञान हुआ, तो वह अपने मन में एक अति सुखकारक चित्र बनाने लगी। वह सोचा करती थी कि कोई अति सुन्दर युवक उससे विवाह करने की याचना करेगा और वह किसी अति धनी और राजा-रईस को छोड़ उस युवक से विवाह करना स्वीकार करेगी।

ज्यूँ-ज्यूँ वह बड़ी होती गई और उसको विवाह-सम्बन्धी अन्य बातों का ज्ञान होने लगा। तब वह अपने जीवन-साथी के विषय में अनेकानेक स्वप्न-चित्र बनाती गई।

धनी बाप की बेटी होने से आज तक उसको अपनी इच्छाओं की पूर्ति में कभी बाधा उपस्थित नहीं हुई थी। इससे वह लाडली बेटी की भाँति हठ करने में बहुत दृढ़ और उच्च इच्छाओं के बनाने में तत्पर रहती थी। वह विचार करती थी कि उसका पति ऐसा होना चाहिए, जिस को देख प्रत्येक कुमारी का मन उससे विवाह करने में लालायित हो उठे और जो उन सबको ठुकराकर उससे ही प्रेम करे। अपने होने वाले पति

की आयु के विषय में उसने विचार किया था। वह समझती थी कि वह अट्ठारह-उन्नीस वर्ष की आयु में विवाह करेगी और उसके पति की आयु बाईस वर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए। वह धनी और योग्य तो होना ही चाहिए, साथ ही सभ्य, सुशील, सुन्दर और सरलचित्त होना चाहिए। वह उससे इतना प्रेम करने वाला हो कि उसको सुखी और प्रसन्न रखने के लिए अपनी जान तक न्योछावर कर सके।

ये सुख-स्वप्न थे, जो वह नित्य एकान्त में बैठ देखा करती थी। सिनेमा इत्यादि देखने से जो चित्र उसके मन में अपने पति का बना था, वह बहुत ही सुन्दर और सुखद् था, परन्तु प्रोफेसर रसूल को अपने प्रेमी के रूप में देख वह पहले तो हँसी थी, पश्चात् नाक चढ़ाया था और अन्त में अपने पिता को उसकी वकालत करते देख हतोत्साह होकर पलंग पर आकर लेट गई थी।

उसको हँसी इस बात पर आई थी कि प्रोफेसर रसूल उससे आयु में बहुत बड़ा था। वह अपने को तीस वर्ष का कहता था, परन्तु उसे निश्चित रुप से पता था कि वह पैंतीस वर्ष की आयु से कम नहीं। एक आधे-बूढ़े को सोलह वर्ष की कुमारी से विवाह का प्रस्ताव करते देख उसको हँसी आई थी।

उसकी घृणा का कारण यह था कि उसने कहा था कि यदि लड़की खरीदी न जा सके तो बलपूर्वक विवाही जा सकती है। उसने यह भी कहा था कि कोहेनूर कभी नहीं बिका, चोरी व डाका डालकर लिया गया है।

अपने पिता को अपनी जायदाद बचाने के लिए अपनी लड़की को उस आदमी के हाथ, जिससे वह विवाह करना नहीं चाहती थी, में सौंपने को तैयार देख, उसके दिल को भारी धक्का लगा था।

उसका मन इन सब परिस्थितियों से विद्रोह करना चाहता था। वह बचपन से हठी तो थी ही, इससे अपने मन की इच्छा के विरुद्ध कार्य होते देख वह विद्रोहात्मक हो उठी। उसने लातों से झटका देकर चादर हटाकर पलंग से दूर फेंक दी और उठकर खड़ी हो गई। उसने ओढ़नी, जो उतरकर पलंग से नीचे गिर चुकी थी, ओढ़ ली और कमरे से बाहर निकल गई।

वह बरामदे में खड़ी हो सोचने लगी कि अब किधर जाय और क्या करे। इस समय मीना अपने कमरे के दरवाजे में आ खड़ी हुई और धीरे से बोली, "नीना !"

नीना ने उसको देखा तो उसके पास आ खड़ी हुई। मीना ने संकेत से उसे अपने कमरे में बुला लिया।

उसे बिठाकर पूछा, "क्या हुआ है ?"

नीना ने पूर्ण वृत्तान्त बताकर कहा, "न जाने तुमको इस प्रोफेसर में क्या अच्छी बात दिखाई दी है, जो उसके पीछे भाग रही हो ?"

"तो वह मुझसे विवाह नहीं करेगा ?"

"नहीं।"

"तो तुम उससे विवाह करोगी ?"

"नहीं।"

"पिताजी का भी कहना नहीं मानोगी ?"

नीना चुप रही। इस पर मीना ने कहा, "यह प्रोफेसर भारी बदमाश है। मैं इसको मज़ा चखाऊँगी।"

"क्या किया है उसने ?"

"जो हानि एक पुरुष किसी विश्वास करने वाली लड़की को पहुँचा सकता है, वही कुछ इसने किया है।"

"तो इसमें उसका क्या दोष है ? दीदी ! इस बात का हल्ला करने की क्या आवश्यकता है ! अपनी लज्जा की बात को छिपाकर रखना ठीक नहीं क्या ?"

"इसमें लज्जा की क्या बात है ? फिर मैं सबसे थोड़े ही कहूँगी। मैंने तुमको बताया है और उससे इस विश्वासघात का बदला लूँगी।"

नीना चुप बैठी रही। एक बात उसके मन में स्पष्ट हो गई कि उसका प्रोफेसर रसूल से घृणा करना ठीक ही है। वह अपनी सूझ-बूझ पर बहुत अभिमान करने लगी। साथ ही वह अपनी बहिन मीना की मूर्खता की बात जान कर उसको अपने से छोटा मानने लगी।

कुछ देर तक वह चुपचाप बैठी रही । पश्चात् वह बिना कुछ कहे मीना के कमरे से बाहर निकल गई और टहलने के लिए सड़क पर चली गई । उसका विचार था कि वह अपने भविष्य के व्यवहार को स्वयं ही बना सकती है । इस कारण वह किसी एकान्त सड़क पर टहलती हुई विचारने के लिए घर से निकल पड़ी ।

(७)

नीना कोठी से बाहर निकली ही थी कि मुहम्मद याकूब, वही युवक जो मुस्लिम लीगियों के जलूस में उसको मिला था, कोठी के बाहर खड़ा दिखाई दिया । वह उसकी ओर ध्यान दिए बिना निकल जाना चाहती थी, परन्तु उस युवक ने नीना का पीछा किया और जब वह कोठी से कुछ दूर निकल गई तो उसके साथ-साथ चलते हुए कहने लगा, "सरकार! किधर तशरीफ ले जा रही हैं ?"

"सैर करने ।"

"क्या मैं भी साथ-साथ चल सकता हूँ ।"

"कोई ज़रुरत नहीं है ।"

"कभी-कभी कुछ काम बिना जरूरत के भी किये जा सकते हैं ।"

"यह मूर्खों की सी बात है ।"

"वे भी खुदा ने बनाए हैं । मुश्किल यह है कि इस दूनिया में खुदा ने मूर्ख अक्लमन्दों से ज़्यादा बनाए हैं ।"

"मगर मैं बेवकूफ नहीं हूँ । न ही मैं बेवकूफों से ताल्लुक रखना चाहती हूँ ।"

"यह आप ठीक कहती हैं । पर एक बेवकूफ है, जो आप से ताल्लुक पैदा करना चाहता है । उसको आप कैसे समझावेंगी । वह बेवकूफ होने से समझेगा नहीं ।"

"अजब मुसीबत है !" वह सड़क के किनारे खड़ी हो गई ।

"देखिए, यदि इस प्रकार सड़क के किनारे खड़े हो झगड़ने लगे, तो

आने-जाने वाले खड़े होने लगेंगे।"

"और तुमको पीटेंगे। एक निस्सहाय लड़की को तंग करने का फल मिल जाएगा।"

"तुम्हारे लिए पीटा जाना, मेरी खुशी का बायस होगा।"

"तो ठीक है पिटो। यहाँ तो कोई आता-जाता दिखाई नहीं देता। चलो माल पर चलती हूँ। वहाँ तुम को प्रसन्न करने के लिए कष्ट करने को कोई ज़रूर मिल जायगा।"

इतना कह वह लौट पड़ी। अपने मन में वह बहुत खिज चुकी थी। प्रोफेसर रसूल और अपने पिता की बातों से तो वह पहले ही दुःखी थी। अब इस मुहम्मद याकूब से तो उसका मन विक्षुब्ध हो उठा था। वह लम्बे-लम्बे कदम उठाती हुई माल की ओर चल पड़ी। वह विचार कर रही थी कि जहाँ पाँच-दस लोग आते-जाते दिखाई देंगे, खड़ी होकर इससे झगड़ा कर दे और हो सके तो इसको पिटवा दे।"

उसके पिता की कोठी मज़ंग रोड पर हाईकोर्ट की इमारत के सामने थी। वह वहाँ से लारेंस गार्डन की ओर जा रही थी, परन्तु मुहम्मद याकूब के हठ के कारण वह वहाँ से लौट पड़ी और अपनी कोठी के आगे आकर खड़ी हो गई। उसने याकूब की ओर घूमकर देखते हुए कहा, "तुम जाते हो या बुलाऊँ नौकरों को?"

"तुम अपने बाप की हिमायत पर कूद रही हो। वह तो हिजड़ा है।"

यह वाक्य सुन नीना स्तब्ध खड़ी रह गई। मुहम्मद याकूब मुस्कुराता हुआ उसकी ओर देखता रहा। नीना को क्रोध तो बहुत आया, परन्तु वह जानना चाहती थी कि वह उसके पिता को किस प्रकार जानता है और क्यों उसके विषय में ऐसे वाक्य कह रहा है। याकूब उसके मुख पर विस्मय देख मुस्करा रहा था और उसकी आँखों से प्रश्न सूचक संकेत पा कहने लगा, "मेरी बात का विश्वास नहीं आता, तो उससे जाकर कहना कि एक मुसलमान नौजवान तुम्हारी बेइज्ज़ती कर बाहर खड़ा है और फिर देखना वह क्या कहता है।"

"तो तुम यहा खड़े रहोगे ?"

"हाँ ! यह साबित करने के लिए कि वह तुम्हारी इज्ज़त की हिफ़ाज़त करने की जुर्रत नहीं रखता ।"

नीना क्रोध से पागल हुई कोठी में चली गई । उसने घूमकर देखा, मुहम्मद याकूब कोठी से बाहर खड़ा मुस्करा रहा था । इससे तो उसके रक्त का प्रवाह सिर पर इतना चढ़ गया कि वह खड़ी हो कहने लगी, "ठहरो, मैं अभी तुमको मज़ा चखाती हूँ ?"

नीना ने अपने पिता के कमरे का दरवाज़ा खोला तो वह रायबहादुर दीवान तेजनारानण से बैठे बातें कर रहे थे ।

रायबहादुर तेज नारायण केवल नारायण के चचेरे भाई लगते थे । केवल नारायण के तो मीना और नीना दो लड़कियाँ ही थीं, परन्तु तेजनारायण का परिवार काफी बड़ा था । दो परिवारों का परस्पर मेल-जोल था और तेजनारायण के लड़के को मीना और नीना भाई के समान मानती थीं ।

तेजनारायण ने अपना परिवार पहले ही मंसूरी भेज दिया था और वह अपने भाई केवल नारायण को भी ऐसा ही करने की प्रेरणा दे रहा था । नीना ने दोनों को बातें करते देखा तो वह दरवाज़े में ही ठहर गई, पर क्रोध से उसके मुख को तमतमाते देख और आँखों में आँसू भरे देख, केवल नारायण ने पूछ लिया, "क्या है नीना बेटी ?"

नीना ने कह दिया, "पिता जी ! कोठी के बाहर एक मुसलमान युवक खड़ा है । उसने मेरा भारी अपमान किया है ।"

"क्या अपमान किया है ?"

"मेरा मार्ग रोककर खड़ा हो गया था ?"

"तो तुम वहाँ गई ही क्यों थीं ?"

"मैं घूमने जा रही थी ।"

"कोई ज़रूरत नहीं । अपने कमरे में जाकर बैठो ।"

"उसने मुझको अश्लील बातें कही हैं ।" नीना ने आवेश में कहा ।

इतना कहते हुए उसकी आँखों से आँसू निकल पड़े।

"मैं जो तुमको कहता हूँ कि अपने कमरे में जाओ। व्यर्थ का झगड़ा करना ठीक नहीं। खड़ा-खड़ा थक जायेगा, तो स्वयं चला जायेगा।"

इस बात को सुन नीना को मुहम्मद याकूब की बात की सच्चाई का भास होने लगा। उसके मन में अपने पिता के लिए ग्लानि उत्पन्न हो गई और उसका मुख पीला पड़ गया। उसके मुख से यह निकल गया, "तो वह ठीक कहता है क्या ?"

रायसाहब तेजनारायण वहां बैठा नीना की बातों को सुन रहा था और उसके मुख पर बदलते रंगों को देख रहा था। उसको केवल नारायण की बात पसन्द नहीं आ रही थी। तेजनारायण बयालीस-वर्षों का प्रौढ़ावस्था का पुरुष था। उसने नीना की ओर घूमकर पूछा, "वह क्या कहता था ?"

"वह मुझसे बलपूर्वक विवाह करना चाहता है। मैंने कहा कि अपने पिता से उसको पिटवाउँगी, तो वह कहने लगा कि वे हिजड़े हैं। इनसे वह नहीं डरता।" एसा कहते-कहते नीना के आँसू बहने लगे।

"कौन है वह ? ज़रा देखूँ तो।" इतना कह तेजनारायण ने अपनी छड़ी, जो वह प्रायः अपने हाथ में रखता था, उठाई और कमरे से बाहर निकल गया। उसके पीछे-पीछे नीना और नीना के पीछे केवल नारायण बाहर आ गए। केवल नारायण कहता हुआ आ रहा था, "राय साहब ! राय साहब ! इन बदमाशों से झगड़ा कर अपनी इज्ज़त खराब करनी है। जाने दीजिए ! छोड़िए इस बात को"

परन्तु तेजनारायण चुपचाप कोठी के फाटक की ओर चलता गया। मुहम्मद याकूब अभी भी मुस्कराता हुआ इन आने वालों की ओर देख रहा था। उसका विचार था कि ये लोग उससे पूछेंगे कि वह वहाँ क्यों खड़ा है तो वह इसके लिए लड़की पर दोष लगा देगा और उसको बदमाश कह देगा। यदि झगड़ा होगा तो वह फिर अपनी रक्षा के लिए इनसे भिड़ जायेगा। रायबहादुर तेजनारायण सहज स्वभाव उसकी ओर

आ रहा था। इससे मुहम्मद याकूब अभी भी मुस्करा रहा था।

ज्यूं ही रायसाहब से मुहम्मद याकूब छड़ी की मार में आ पहुँचा, तो विद्युत की भाँति रायसाहब ने अपनी छड़ी उठा मुहम्मद याकूब के सिर का निशाना बाँध वार किया। मुहम्मद याकूब ने इस प्रकार अचानक हमला होते देख, एक पग पीछे हटना चाहा। उसके पीछे हटने से केवल इतना हुआ कि सिर के स्थान छड़ी नाक पर पड़ी। खट-से नाक की हड्डी टूट गई और लहू धारा-रूप में बहने लगा।

मुहम्मद याकूब की आँखों के सामने तारे आ गए। उसने अपने कोट के नीचे से छुरी निकालने का यत्न किया, परन्तु पूर्व इसके कि वह छुरी पूरी निकाल सकता, रायसाहब की छड़ी का दूसरा वार उसके सिर पर पड़ा और वह चक्कर खाकर नीचे गिर पड़ा।

तेजनारायण तीसरा प्रहार करने के लिए छड़ी उठा तैयार खड़ा रहा। उसका विचार था कि उसके उठते ही वह प्रहार करेगा। मुहम्मद याकूब भूमि पर बैठा-बैठा ही अपने को सचेत करने लगा। जब उसको कुछ होश आया तो वह उठा और बिना इधर-उधर देखे, नाक से बहते रक्त-प्रवाह को रोकने का यत्न करते हुए एक ओर चल दिया।

जब रायसाहब तेज नारायण वापस कोठी को लौटा तो उसकी दृष्टि केवल नारायण की ओर चली गई। केवल नारायण के मुख का रंग उड़ चुका था और उसके होंठ काँप रहे थे। तेज नारायण ने उसकी अवस्था देख पूछा, "क्या हुआ है आपको?"

"आपने यह अच्छा नहीं किया। यह मुसलमान प्रतीत होता है और इन लोगों से झगड़ा करना अच्छा नहीं।"

"झगड़ा न करने का मतलब यह तो नहीं हो सकता कि इनको अपनी लड़कियाँ दे दें।"

केवल नारायण घबराया, परन्तु चुप रहा। इस पर रायसाहब ने नीना की ओर देखकर, जो उनके पीछे-पीछे लौट रही थी, कहा, "जाओ बेटी! अब उसको यह कहने का साहस नहीं होगा कि तुम हिजड़े की लड़की हो।

कम-से-कम तुम्हारे चाचा हिजड़े नहीं हैं।"

इस पर केवल नारायण झुंझला कर कहने लगा, "इस कहने से क्या होता है ? जब यह बंगला लुट जायगा, जब इसके बाप के पेट में छुरा भोंका जायगा, जब इनकी माँ और इनकी बेहुरमती की जायगी, तब पता चलेगा कि केवल नारायण ठीक कहता था या नहीं। कलकत्ता और नोआखाली में जो कुछ हुआ है, मुझको मालूम है और यह सब कुछ पंजाब में भी होने वाला है।"

तेज नारायण खिलखिलाकर हँस पड़ा। उसने कहा, "देखो भैया ! यदि तुम इतना कुछ समझते हो और तुमको विश्वास है कि यह सब-कुछ होने वाला है, तो क्या यह ठीक नहीं कि यहाँ से भाग जाओ। चले जाओ मंसूरी या नैनीताल। वहाँ जाकर बुढ़ापा काटो। यहाँ रहने के लिए तो जान हथेली पर रखकर रहना होगा।"

"डिप्लोमेसी भी तो एक चीज है।" केवल नारायण का कहना था।

"डिप्लोमेसी के अर्थ दुर्बल की रक्षा नहीं। इससे कभी भी दुर्बल लोगों को बचाया नहीं जा सकता। इससे केवल एक बात हो सकती है। वह यह कि सबल अपनी शक्ति का व्यर्थ अपव्यय न करे। उसके, युक्ति से, कम-से-कम शक्ति का व्यय कर, अधिक-से-अधिक लाभ उठाने को डिप्लोमेसी कहते हैं।"

"मैंने युक्ति से निर्धनों और दुर्बलों को मुकद्दमे में जिताया है।"

"मुकद्दमे में युक्ति ही बल होती है। परन्तु हिन्दू-मुसलमान झगड़े में युक्ति कभी काम नहीं आई। इसलिए इसमें युक्ति बल की अर्थ-वाचक नहीं। यहाँ तो दूसरे को हानि पहुँचा सकने की शक्ति के आधार पर डिप्लोमेसी कार्य करती है।"

केवल नारायण इस बात को समझा नहीं। इस कारण चुप रहा। जबकेवल नारायण और तेज नारायण बैठक में अपनी वार्तालाप जारी रखने के लिए जाने लगे, तो तेज नारायण ने नीना को कह दिया, "मुझको बहुत प्रसन्नता होती, यदि हमारे पास शिकायत लाने से पहले उसके मुख

पर तुम एक तमाचा तमाचा लगा चुकी होती।"

(८)

इस घटना के पीछे उस दिन तो नीना को घर से बाहर निकलने का साहस नहीं हुआ। उसने रोटी खाई, तो उसमें मज़ा नहीं आया। वह पलंग पर सोई तो नींद नहीं आई। अगले दिन प्रातः उठी तो उसका चित्त स्नानादि के लिए नहीं किया। वह इस सब समय में विचार कर रही थी कि मुहम्मद याकूब की तरह का हट्टा-कट्टा युवक कैसे चाचा से मार खा गया। साथ ही रायसाहब का उससे कहना कि यदि वह उसके मुख पर तमाचा लगाकर आती तो वह प्रसन्न होते, उसको विस्मय में डालने वाला था। क्या स्त्रियाँ पुरुषों को पीट सकती हैं?

इस प्रकार के विचारों में दिन के दस बज गए। इस समय वह उठी और स्नानादि से निवृत हो पार्वती के घर को चल पड़ी।

यह तीन मार्च का दिन था। जब वह घर से बाहर निकल माल पर पहुँची तो एक बहुत भारी भीड़ कौन्सिल चेम्बर की ओर से आती मिली। वह एक किनारे खड़ी हो गई। लोग बहुत देर तक नदी के प्रवाह की भाँति जाते रहे। जब लोग कम हुए और सड़क पार करने को मार्ग हुआ, तो वह पार्वती के घर की ओर चल पड़ी। मार्ग में लोगों के झुण्ड-के-झुण्ड नगर की ओर जाते हुए मिले। वह जानती थी कि खिज़र मिनिस्ट्री ने त्याग-पत्र दे दिया है, परन्तु इससे लोग इतना हल्ला करेंगे, वह नहीं समझ सकी। लोग झुण्डों में जाते समय ये नारे लगा रहे थे, 'दे देंगे हम अपनी जान, नहीं बनने देंगे पाकिस्तान।'

इससे नीना समझ रही थी कि हिन्दू लीगी मिनिस्ट्री के बनने का विरोध कर रहे हैं। इस पर भी उसको समझ नहीं आ रहा था कि इस आन्दोलन से लाभ क्या होगा? जब हिन्दुओं का बहुमत होगा तो वे मुस्लिम-लीग मिनिस्ट्री को निकाल सकते हैं। इस समय इतना शोर मचाने से क्या लाभ है?

इन्हीं विचारों में वह चली जा रही थी। भीड़ के कई झुण्ड उसके आगे से निकल गए। वह पार्वती के घर पहुँची तो वह स्कूल नहीं गई थी। उसको विदित हो गया था कि स्कूल बन्द है। नगर में हलचल अधिक होने के कारण स्कूल के अधिकारियों ने स्कूल से लड़कियों को वापिस भेज दिया था।

पार्वती मकान के ऊपरी मंजिल से लोगों को नारे लगाते हुए गुज़रते देख रही थी। नीना अभी दूर ही थी कि पार्वती ने उसको देख लिया था। इससे वह घबराकर नीचे उतर आई और नीना को सड़क पर से भीतर ले गई। नीना पार्वती को घर में देख विस्मय में बोली, "आप स्कूल नहीं गई आज ?"

"स्कूल बन्द है।"

"क्यों ?"

"इस हलचल के कारण। पर तुम यहाँ किधर घूम रही हो ?"

"मैं तो आपसे मिलने आपके स्कूल जा रही थी।"

"पर क्यों ?"

"बहुत कुछ पूछना है। चित्त में घबराहट है और कई विषयों में संशय उत्पन्न हो गया है।"

"तब क्या हुआ ? आज के दिन तुमको घर से बाहर नहीं निकलना चाहिए था।"

इस समय तक दोनों पार्वती के कमरे में जा पहुँची थीं। भूमि पर बिछी चटाई पर बैठते हुए नीना ने कहा, "बहिन जी ! मैं समझती हूँ कि आप मेरी बात सुनेंगी तो कहेंगी कि मैं घर लौट कर मत जाऊँ।"

"क्यों ? क्या हुआ है ?" पार्वती ने उसके समीप बैठते हुए पूछा।

"हुआ यह है कि मेरे पिताजी मेरा विवाह एक मुसलमान प्रोफेसर से करना चाहते हैं, जो मुझ से बीस वर्ष बड़ा है और काफी बदसूरत है। यह विवाह इसलिए नहीं हो रहा कि मैं उससे विवाह करना चाहती हूँ, अथवा पिता जी को मेरे जिए वर नहीं मिलता ; यह केवल इसलिए है कि

पिता जी समझते हैं कि पाकिस्तान बनेगा और उनको उसमें रहना चाहिए। यदि उनकी लड़कियों का विवाह किसी प्रभावशाली मुसलमान से हो गया तो वे यहाँ रह सकेंगे।"

"फिर क्या हुआ ?"

"तो आप इसको साधारण बात समझती हैं ?"

"जयपुर के राजा मानसिंह ने भी इसी कारण अपनी बहिन का विवाह शाहंशाह अकबर से कर दिया था ? अन्य कई राजपूतों ने भी यही कुछ किया था और तुम्हारे पिता भी यही करने जा रहे हैं। मुझ को इसमें अचम्भा प्रतीत नहीं हो रहा। हिन्दुओं का यह रोग बहुत पुराना है। साथ ही इसके विपरीत अनेक हिन्दू स्त्रियों और लड़कियों ने अपने प्राण त्याग दिये पर अनिच्छित पुरुष से विवाह नहीं किया। हिन्दू स्त्रयों का यह गुण भी बहुत पुरना है।"

नीना इस प्रकार विरोधी बातों को सुन विस्मय में पार्वती का मुख देखती रह गई। पार्वती उसके मन में उठ रहे संकल्पों को समझ कहने लगी, "शायद तुम समझीं नहीं। देखो मैं समझाती हूँ। भारतवर्ष का पतन भारतीय पुरुषो में पौरुषता के कम हो जाने से अथवा उनमें संसार से मोह बढ़ जाने से हुआ है। साथ ही भारत में भारतीयता, यहाँ की स्त्रियों में धर्म और मान के लिए श्रद्धा भक्ति से ही अब तक जीवित है।"

"पुरुषों में पौरुषता के कम होने से ?" नीना के मुख से विस्मय में निकल गया। उसको मुहम्मद को पीट सकना स्मरण हो आया। उसके मन में विचार उत्पन्न होने लगा कि क्या वह भारतीय नारियों का अनुकरण करे अथवा भारतीय पुरुषों की दासता। कुछ निर्णय न कर सकने के कारण वह आवाक् मुख पार्वती की ओर देखती रही।

पार्वती कहती गई, "मेरे कहने का अभिप्राय यह नहीं कि सब पुरुष भीरु हो गए है। इतिहास में राणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, गुरु गोविन्द सिंह, गुरु अर्जुन देव, गुरु तेग बहादुर, महर्षि स्वामी दयानन्द इत्यादि अनेकानेक महापुरुष शूरवीर और विद्वान हुए हैं, जो अपने धर्म के

लिए जान हथेली पर रख कर घूमते रहे हैं। इस पर भी भीरुओं की संख्या अधिक हो जाने से भारत का पतन हुआ है।"

"मैं समझ नहीं सकी कि क्या करूँ? घर जाऊँगी तो मेरा विवाह प्रोफेसर रसूल से होना निश्चित है। और यदि मैं घर नहीं जाती तो कहाँ जाऊँ?"

पार्वती इस समस्या का सुझाव नहीं जानती थी। वह चुपचाप बैठी रही। उस पर नीना ने दूसरे युवक मुहम्मद याकूब की कथा सुना दी। इससे तो पार्वती घबरा उठी। उसने पूछा, "तुम्हारा कोई सम्बन्धी लाहौर से बाहिर हैं या नहीं?"

"रावल पिंडी में मेरी ननिहाल है।"

"रावलपिंडी तो ठीक स्थान नहीं। इधर दिल्ली की ओर कोई सम्बन्धी नहीं है क्या?"

"नहीं।"

पार्वती चुप रही; परन्तु नीना को इस प्रश्न से अपनी समस्या का उत्तर मिल गया। वह गम्भीरता पूर्वक विचार करने लगी कि लाहौर से भाग कर किसके घर जावे। जब पार्वती उसको बता रही थी कि माता-पिता से झगड़ा करना ठीक नहीं, परन्तु धर्म के प्रश्न में तो माता पिता भी प्रमाण नहीं हो सकते, उस समय नीना सोच रही थी कि अपनी माता जी से इस विषय में सहायता ले।

नीना विचार कर रही थी कि जाए अथवा न कि लाला जीवनलाल का नौकर यह समाचार लेकर आया कि महेश बुरी तरह घायल होकर उनके घर पड़ा है। रेवा पार्वती को यह समाचार बताने आई तो वह द्विविधा में पड़ गई कि वह भाई को देखने जाए अथवा न। रेवा के कहने पर कि उसकी अवस्था शोचनीय है, वह जाने के लिए तैयार हो गई। वह जानती थी कि वहाँ चेतनानन्द से भेंट होगी। इसके लिए वह अपने मन को दृढ़ कर रही थी।

(६)

नीना घर लौट कर आई तो उसका पिता प्रोफेसर रसूल से बातचीत कर रहा था। वह उनके कमरे में जाने वाली थी कि प्रोफेसर की अवाज़ सुन बाहिर ही खड़ी रह गई। प्रोफेसर कह रहा था, "देखिए बैरिस्टर साहब ! अब तक तो हमारी योजना सफल हुई। परन्तु यह हिन्दुओं ने जो आज प्रदर्शन किया है इससे हमारी वज़ारत बनने में सन्देह हो गया है। यदि यह न बन सकी तो पंजाब के सब मुसलमान लोग और सब सरकारी अफसर यहाँ के हिन्दुओं की तबाही करने में एक हो जावेंगे। जो बात हमने आज से छब्बीस साल पहिले सोच विचार कर जारी की थी वह आज हमारे काल में सहायक होगी। सर फज़ल हुसैन यह कहा करते थे, 'सरकारी ओहदों पर ऐसे मुमलमान भर्ती कर दो जो भीर के वक्त कौम के काम में आ सकें। सो वह भीर का वक्त आ गया है। और डेढ़ करोड़ मुसलमान सरकारी अफसरों की सहायता से सवा किरोड़ हिन्दू सिक्ख आबादी को कुचल डालेंगे। इस पैमाने पर वह खूंरेज़ी होगी कि दुनिया की तवारीख में इसकी सानी नहीं मिलेगी।"

नीना के पिता ने केवल इतना कहा था, "यह सब सत्य प्रतीत होता है। मैं तो यह विचार कर रहा हूँ कि हमारा क्या बनेगा।"

"नीना की शादि के पीछे इसके मुतल्लिक बात करेंगे।"

"कब पसन्द करते हैं आप ?"

"आने वाले जुम्मा के दिन ठीक रहेगा।"

नीना पिता के कमरे में नहीं गई। उसके मस्तिष्क में चक्कर आने लगा था। वह वहाँ से अपने कमरे में चली गई। वहाँ भी उसका चित्त स्थिर नहीं हुआ। इससे वह बहिन के कमरे में चली गई। मीना अपनी माँ से बात कर रही थी। नीना के आने पर वह चुप कर गई। इस पर नीना ने कहा, "मुझसे प्राईवेट हो तो मैं जाती हूँ।"

नीना की माँ ने उत्तर दिया, "नहीं प्राईवेट नहीं है। आ जाओ।' नीना अपनी बहिन के समीप एक कुर्सी पर बैठ गई। माँ नीना से

कह रही थी, "तो तुम रसूल से विवाह कर अपनी पहिली भूल को स्थायी करना चाहती हो।"

"मैं डरती हूँ कि यदि कुछ हो गया तो भारी बदनामी होगी।"

"वह तो जब होगा, देखा जायगा। अभी तो न तुम जानती हो, न कोई और। रोग होने से पूर्व चिकित्सा करनी तो बुद्धिमत्ता का चिह्न नहीं है। मैं तुम्हारे स्थान पर होती, तो उससे विवाह करने के स्थान उससे घृणा करती और अवसर पाकर उसकी हत्या कर देती। ऐसे विश्वासघातक के लिए यह सुन्दर संसार नहीं होना चाहिए।"

इस समय नीना ने अपनी बात चला दी, "पर मां ! वह तो मुझ से विवाह करना चाहता है और ज़बरदस्ती। अभी-अभी वह पिता जी से कह रहा था कि जब मुझसे विवाह हो जायगा तब, ही पिता जी का यहाँ रहना सुरक्षित हो सकेगा।"

"मैं यह सब जानती हूँ। पर मैं पूछती हूँ कि तुम क्या करना चाहती हो ? यदि तो तुम उससे विवाह स्वीकार कर रही हो, तब इस विषय पर मस्तिष्क खराब करने की आवश्यकता नही।"

नीना ने बात बीच में ही काटकर कहा, "नही, मैं उससे विवाह नहीं करूंगी।"

"तो किससे करेगी ?" केवलनारायण ने कमरे में प्रवेश करते हुए पूछा।

"विवाह करना क्या ज़रूरी है ?"

"देखो नीना !" केवल नारायण ने उसके सामने बैठते हुए कहा, "देश में विप्लव होने जा रहा है। ऐसे समय में क्या कुछ हो सकता है, मैं तुम्हारे सामने वर्णन नहीं कर सकता। ऐसे संकट-काल में हमें, जितने भी सहायक बना सकें, बना लेना अच्छा रहेगा। मेरे कोई लड़का नहीं। मेरे भाई-बन्धु ऐसे स्थानों पर रहते हैं कि हम एक-दूसरे की सहायता नहीं कर सकते। यदि तुम दोनों बहिनों के विवाह हो जाते तो मेरी कई भुजाएँ पैदा हो जातीं।"

"आप सब धन-दौलत इकट्ठी कर लाहौर छोड़ क्यों नहीं देते ?" नीना की माँ ने कहा ।

"रुपया तो ले जा सकता हूँ, पर यह कोठी और दूसरी स्थावर सम्पत्ति कैसे उठाकर ले जाऊँगा ?"

इस पर नीना ने नाक चढ़ाकर कहा, "पर पिता जी ! हमारी मान-मर्यादा से अधिक इस कोठी इत्यादि को मानते हैं आप ?"

"पर मीना तो उससे विवाह करना चाहती है ।"

"और वह मुझसे ज़बरदस्ती विवाह करना चाहता है ।"

"तुम उसमें क्या दोष देखती हो ?"

"वह मुसलमान है ।"

"तुम हिन्दू-मुसलमान के झगड़े में कब से पड़ी हो ?"

"जब से वे पाकिस्तान बनाने पर हठ करने लगे हैं ।"

"पाकिस्तान का तुम्हारे विवाह से क्या सम्बन्ध है ?"

नीना पार्वती से सुनी बातें ही कह रही थी । उसने कहा, "आज राज्य का, प्रत्येक व्यक्ति के प्रत्येक कार्य से सम्बन्ध है । जैसा राज्य होगा, वैसा ही व्यक्ति बन जाएगा ।"

"यह क्या अनर्गल बातें करने लगी हो नीना ?"

"नहीं पिताजी ! मैं ठीक कहती हूँ । मैं परमात्मा के अस्ति व को नहीं मानती । पाकिस्तान बनने पर मैं अपने इस विश्वास को प्रकट में कह भी नहीं सकूँगी ।"

"तो मत कहना ।"

"आपका कहना है कि या तो मैं खुदा को मानूँ, या झूठ बोलूँ ; यह कितना अनर्थ है !"

"अपने मतलब के लिए सब झूठ बोल लेते हैं ।"

"पर यह अच्छी बात तो नहीं है । जो राज्य व्यक्तियों को झूठ बोलने पर विवश करे, उसके बनने को मैं पसन्द नहीं कर सकती और उसके बनाने वालों से घृणा करती हूँ ।"

"तुम पागल हो रही हो। एक व्यक्तिगत बात को राज्य-कार्य में क्यों घसीटती हो? विवाह व्यक्ति का व्यक्ति से होता है। इसको जातीय और धार्मिक सिद्धान्तों में मिलाना बुद्धि को बेच खाना है।"

"यह मैं नहीं करती। यह तो बनने वाला पाकिस्तान करने जा रहा है। राज्य-कार्य को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता में हस्ताक्षेप करने का सिद्धान्त पाकिस्तान का है।"

"तुम यह कैसे कहती हो?"

"आपने ही कल कहा था कि यहाँ पाकिस्तान बनने पर हिन्दुओं का रहना कठिन हो जावेगा।"

केवल नारायण निरुत्तर हो रहा था। उसका मन यह मानने के लिए तैयार नहीं था। इस कारण उसने कहा, "मेरा अभिप्राय हिन्दुओं के जायदाद रखने से था।"

इस पर मीना की माँ ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, "आप कैसी बातें करते हैं? जायदाद रखने की बात हो या स्वयं रहने की बात हो, मनाही तो हिन्दू होने पर है न? मालूम नहीं, आप बैरिस्टरी कैसे करते हैं, जब इस छोटी-सी बात को भी समझ नहीं सकते। मैं कह देती हूँ कि लड़कियों की इच्छा के बिना उनका विवाह नहीं हो सकेगा।"

केवल नारायण कन्धों को झटका देकर, अपनी स्त्री की बात पर असन्तोष प्रकट कर कमरे से बाहर निकल गया। उसके चले जाने पर नीना ने अपनी माँ को अपना पक्ष लेते देख कहा, "माँ! हमको लाहौर से कहीं बाहर चले जाना चाहिये। यहाँ रहते हुए मुझको डर लगता है।"

"मैं भी यही सोच रही हूँ। लाहौर में रहना शायद ठीक नहीं होगा। मैं इस विषय में तुम्हारे पिता से कल बात करूँगी।"

(१०)

अगले दिन परिस्थिति बदल गई। तीन मार्च को तो हिन्दुओं की भीड़ ने इक्का-दुक्का मुसलमान-पुलिस पर आक्रमण किए थे। ये पुलिस के उत्तेजक

व्यवहार की प्रतिक्रिया-मात्र थी। परन्तु दूसरे दिन मुस्लिम नैशनल-गार्ड के वालण्टियरों ने हिन्दुओं पर आक्रमण करने आरम्भ कर दिए। इसके अतिरिक्त नगर के बाहर अकेली सड़कों पर मुसलमानों से अकेले चलते-फिरते हिन्दुओं और सिक्खों के पेटों में छुरे भोंके जाने लगे।

जब पंजाब के गवर्नर ने यह देखा कि मुस्लिम लीग अकेली मीन्त्र-मण्डल नहीं बना सकती, तो उसने धारा ९३ के अनुसार प्रान्त का शासन अपने हाथ में ले लिया। इससे मुसलमान भड़क उठे और उन्होंने खुले बन्द-विद्रोह आरम्भ कर दिया। यह विद्रोह शासन के विरुद्ध नहीं, प्रत्युत हिन्दू और सिक्खों के विरुद्ध था और मुस्लिम पुलिस और दूसरे मुसलमान अफ़सर इस विद्रोह में सहायक बन बैठे। पाँच मार्च तक पूर्ण लाहौर नगर में झगड़ा आरम्भ हो गया। मुख्य-मुख्य हिन्दू मुहल्लों पर आक्रमण किये गए और उनको जला कर राख का ढेर कर दिया गया।

इस समय पंजाब के सब मुख्य-मुख्य स्थानों पर झगड़ा आरम्भ हो गया। अमृतसर, मुलतान, रावलपिण्डी, गुजरात, झेलम इत्यादि सब ज़िलों में मुसलमानों ने आक्रमण आरम्भ कर दिए और नगर तथा गाँव बरबाद होने लगे। हिन्दू भेड़-बकरियों की भाँति मारे जाने लगे। हिन्दू-लड़कियों से बलात्कार किया जाने लगा और हिन्दुओं का धन-दौलत लूटा जाने लगा।

इन सब समाचारों को सुन केवल नारायण का मस्तिष्क सुन्न रह गया। जब उसकी स्त्री ने कहा कि वह अपनी लड़कियों सहित लाहौर छोड़ जाना चाहती है, तो वह उसका मुख देखता रह गया। उसकी बुद्धि काम नहीं करती थी। जब बार-बार उसको कहा गया कि लाहौर छोड़ देना चाहिए, तो वह मान गया और अपनी नकदी और भूषण बैंक में जमा कराकर तीन दिन में शिमला जाने के लिए तैयार हो गया।

आठ तारीख को दिन के दस बजे की गाड़ी से जाने का उनका विचार था। घर के सब लोग जा रहे थे। इस कारण मोटर को गैरेज में बन्द कर, कोठी को ताला लगा, दो ताँगे भाड़े के कर वे चल पड़े। एक ताँगे में नीना

और उसकी माँ थी और दूसरे में केवल नारायण और मीना। बिस्तरा और सूटकेस भी ताँगे में रखे हुए थे

नीना जिस ताँगे में बैठी थी, उसका कोचवान दाड़ी और मूँछ रखे हुए था और टेढ़ी पगड़ी बाँध अपने माथे के अधिक भाग को छिपाये हुए था। जब नीना बैठी तो कोचवान उसकी ओर देखकर मुस्करा दिया। नीना ने भी अनुभव किया कि उसने कोचवान को कहीं देखा है। वह यह स्मरण करती हुई की कहाँ उसको देखा है, ताँगे में बैठ गई। उसके बैठते ही ताँगा चल पड़ा और घोड़ा हवा से बातें करने लगा। केवल नारायण और मीना का ताँगा पीछे रह गया। जब ये लोग माल पर पहुँचे तो बीडन रोड से मैक्लोड रोड की ओर घूम गए। मैक्लोड रोड पर पहुँच ताँगा स्टेशन की ओर जाने के स्थान किला गूजरसिंह की पुरानी बस्ती की ओर घूम पड़ा। नीना ने सीधे मार्ग से न जाने पर ताँगे वाले को कहा भी, "यह किधर जा रहे हो ? रेल्वे स्टेशन पर जाना है।"

"सड़क बन्द है। घूम कर जाना पड़ेगा।"

यह आवाज़ सुनकर नीना को स्पष्ट हो गया कि ताँगे वाले की अवाज़ मुहम्मद याकूब की सी है। इससे उसने ताँगे वाले की ओर देखा। ध्यान से देखने पर उसको एसा प्रतीत हुआ कि ताँगे वाले की दाड़ी मूँछ नकली है। वह तुरन्त समझ गई। उसने आवाज दी, "ठहरो।"

ताँगे वाले ने घोड़े को चाबुक लगाई और ताँगे को तेजकर दिया। नीना ने पुनः ज़ोर से कहा, "ठहरो, बदमाश के बच्चे।"

ताँगे वाला घोड़े को चाबुक लगा तेज़ और तेज़ कर रहा था। नीना ताँगे में से कूद पड़ी। वह ताँगे की गति के वेग से भूमि पर लोट-पोट हो गई। ताँगे के भागने को देख और नीना के ज़ोर-ज़ोर से पुकारने को सुनकर सड़क पर चलते-फिरते लोग खड़े हो देखने लगे थे। सड़क के आगे से लोग, ताँगे को बेतहाशा भागते हुए आते देख, एक ओर हट रहे थे और ताँगा भागा जा रहा था। नीना की माँ ने, जो पीछे की सीट पर बैठी थी, आगे झुक कर घोड़े की लगाम को पकड़कर खेंचने का यत्न किया, परन्तु

ताँगे वाले ने आगे झुक कर ताँगे को और तेज़ भगा दिया।

नीना को सड़क पर गिरने से बहुत चोट आई थी और उसको उठा कर ताँगे वाले को पकड़ने के लिए आवाज़ देने में तीन-चार मिनट लग गए। इस काल में ताँगा आँखों से ओझल हो गया। नीना की माँ साहस कर ताँगे से कूद नहीं सकी थी और फिर साथ ही उन सन्दूकों में, जो उस ताँगे में रखे हुए थे, उसके कीमती कपड़े और नकदी भी थी।

ताँगा भागता हुआ किला गूजरसिंह में मुसलमानों की बस्ती में जा पहुँचा और वहाँ एक बड़े से मकान के आगे जा खड़ा हुआ।

नीना की माँ अभी भी ताँगे वाले को गालियाँ दे रही थी।

उसको गालियाँ देते देख मुहल्ले के बहुत से लोग वहाँ एकत्रित हो गए। ताँगे वाले ने नकली दाढ़ी मूंछ उतार दी और माथे पर त्योरी चढ़ा कर नीना की माँ की ओर देखकर कहा, "हल्ला क्यों कर रही हो? यहाँ तुम्हारी कोई नहीं सुनेगा।"

उसकी दाढ़ी-मूंछ उतारने पर सब एकत्रित लोग खिलखिलाकर हँस पड़े। मुहम्द याकूब भी हँसने लगा। इस समय नीना की माँ अपना असबाब छोड़ भागने के लिए ताँगे से उतर पड़ी। परन्तु याकूब ने उसकी बाँह पकड़ ली और कहा, "कहाँ जा रही हो?"

"छोड़ दो मुझको।" नीना की माँ ने चीख की-सी आवाज़ में कहा।

इस समय वहाँ एकत्रित लोगों में से एक ने कहा "याकूब मियां! तुम तो कहते थे कि किसी पन्द्रह साल की खूबसूरत लड़की को लेने जा रहे हो। यह क्या एक बूढ़ी औरत को पकड़ लाये हो?"

"पकड़कर तो उसी को लाया था। पर वह ताँगे से कूद पड़ी। ज़रूर हड्डी-पसली टूट गई होगी।"

"पर इसका क्या करोगे? छोड़ दो इसको।"

इस समय एक पचास वर्ष की आयु का बूढ़ा बोल उठा, "याकूब! इसे मुझको दे दो।"

याकूब ने नीना की माँ को उस बूढ़े की ओर धकेलते हुए कहा,

"चाचा ! तुम ही ले लो । ले जाओ ।"

वह बूढ़ा नीना की मां को बाँह से पकड़ घसीटते हुए एक पड़ोस के मकान में ले चला । नीना की मां चीखें मारने लगा । उस बूढ़े ने एक लात उसकी कमर में मार दी, जिससे वह चक्कर खाकर मकान की डयोढ़ी में गिर पड़ी । पश्चात् वह उसको घसीटते हुए मकान के भीतर ले गया। मकान का दरवाज़ा भीतर से बन्द हो गया ।

इस समय बाज़ार में ही ताँगें पर लदे हुए ट्रंक तोड़कर खोल डाले गए और सन्दूक और बिस्तर का माल देखते-देखते ही लूट लिया गया । जो जिसके हाथ आया, वह लेकर भाग गया ।

(११)

नीना तांगे का पीछा करना चाहती थी, परन्तु उसकी टाँग में मोच आ गई थी और उसके लिए चलना भी कठिन था । साथ ही वहाँ एकत्रित हो गए लोगों में से एक ने नीना को ध्यानपूर्वक देखकर कहा, "उधर मत जाओ । तीन दिन से वहाँ जाकर कोई हिन्दू लौटा नहीं ।"

नीना यह सुन काँप गई और अपनी मां को स्मरण कर उसकी आँखें डबडबा आई । इस समय एक और भद्र युवक ने पूछा, "तुम्हारा घर किधर है ?"

"मजंग रोड पर ।"

"तो चलो तुम को घर छोड़ आऊँ । वहाँ से किसी पुरुष को भेज पुलिस में इत्तला कर देना ।"

"घर पर कोई नहीं होगा । हम सब स्टेशन पर जा रहे थे । माता जी इस ताँगे में थीं । पिता जी और बड़ी बहिन दूसरे ताँगे में थीं ।"

इस समय उसको अपने पर्स का विचार आया । वह ताँगे में ही रह गया था । इससे वह बहुत परेशान हो उठी । उसको घबराया हुआ देख उस व्यक्ति ने पूछा, "क्यों, क्या सोच रही हैं आप ?"

"मेरे पास ताँगे के लिए भाड़ा भी नहीं रहा । मेरा पर्स उसी तांगे

में चला गया है। साथ ही मुझ में चलने की शक्ति नहीं रही। मेरी टाँग में सख्त चोट आई है।"

उस आदमी ने सड़क पर चलते हुए एक टाँगे को बुलाया और नीना को उस में बैठा, आप आगे बैठ गया। नीना ने कहा, "हमको तुरन्त स्टेशन चलना चाहिए। पिता जी को सूचना देनी चाहिए।"

ताँगा स्टेशन पर पहुँचा तो नीना और वह पुरुष प्लेटफार्म टिकट ले स्टेशन के भीतर चले गए। उनके प्लेटफार्म पर पहुँचते ही गाड़ी छूट गई। नीना लंगड़ाती हुई गाड़ी के पीछे भागी। उसको मीना एक सैकेंड क्लास के डिब्बे में चिन्तित मुद्रा में खड़ी दिखाई दी। गाड़ी निकल गई और मीना ने उसको नहीं देखा।

नीना ने साथ आने वाले युवक से कहा, "मुझको निस्बत रोड पर पहुंचा दीजिए। मैं आपकी कृतज्ञ रहूँगी।"

"चलिए। मैं आपको सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने के लिए ही आया हूँ।"

इस कथन पर नीना ने अपने साथी की ओर पहिली बार देखा। वह पच्चीस-छब्बीस वर्ष की आयु का एक सुदृढ़ शरीर रखने वाला प्रतीत होता था। चौड़ा माथा और दृढ चुबुक, उसकी स्थिर प्रकृति को बताते थे। मजबूत कन्धे और मोटी गर्दन उसके वर्जशी होने के सूचक थे। उस युवक ने नीना को अपनी ओर देखते हुए पा, अपना मुख मोड़ लिया और कहा, "आप के पिता जी यहाँ पहुँचे प्रतीत नहीं होते।"

"वे आये तो हैं। मैंने अपनी बहिन को गाड़ी के एक डिब्बे में खडे देखा था। उन्होंने हमारी प्रतीक्षा क्यों नहीं की, कह नहीं सकती।"

नीना को उसके पिता का बिना उनकी प्रतीक्षा किए गाड़ी में सवार हो चले जाना,उनकी भीरुता का एक और प्रमाण प्रतीत हुआ। इस पर भी उसने अपने मुख से अपने पिता के विषय में अपने विचार नहीं बताए। वे दोनों स्टेशन से बाहिर निकल आये। वह युवक सीधी गर्दन किये नीना से दो पग आगे चल रहा था। नीना उस को अकड़कर चलते देख उसमें रुचि

प्रकट करने लगी थी ।

जब वे स्टेशन से निकल ताँगे में सवार हुए तो नीना ने पूछा, "क्या मैं आपका परिचय पा सकती हूँ ?"

"इसकी क्या आवश्यकता है ? मैं आपको अभी, जहाँ आप कहें, वहाँ पहुँचा दूँगा ।"

"आपने मेरे लिए जो कुछ किया है, उसकी स्मृति में आपका नाम जड़कर रखना चाहती हूँ ।"

"तो आप कवितामय गद्य लिखने का अभ्यास करती हैं ?"

"क्या मैं आपका नाम-धाम जान सकती हूँ ?"

"मेरा नाम रामचन्द्र राव सरोदे है। मैं रावी रोड पर, लक्ष्मी नारायण के मन्दिर, जो गोशाला के सामने है, में रहता हूँ । मेरा काम यही है, जो मैं इस समय कर रहा हूँ ।"

"क्या कर रहे हैं आप ?"

"अपनी शक्ति के अनुसार एक हिन्दू की कठिनाई में सहायता कर रहा हूँ ।"

"बस ? क्या यही कुछ करते हैं आप ?"

"तो क्या यह काम, एक क्या सैकड़ों युवकों के पूर्ण जीवन-भर के लिए पर्याप्त नहीं है ?"

नीना इसका अभिप्राय समझने के लिए चुप कर गई । वह विचार कर रही थी कि यह कोई धनी आदमी का बेटा है, जो इधर-उधर आवारा-गर्दी कर अपनी शलाघा करता फिरता है । इस पर भी उसने पूछा, "जीविकोपार्जन का क्या साधन है ?"

"भगवान् है ।"

नीना इसको हँसी-ठट्ठा समझ चुप कर गई । इस पर भी वह उसके व्यवहार से प्रभावित हुए बिना नहीं रही । अब फिर वह एक विचार में पड़ गई । एकाएक उसको अपनी माँ की याद आई । उसने पूछा, "मालूम नहीं, माँ के साथ क्या बीती होगी ?"

"उसके बच कर निकल आने की कोई आशा नहीं है।"

इससे नीना की आँखें पुनः डबडबा आईं। उनमें आर्द्रता देख रामचन्द्र ने पूछा, "बहुत प्रेम है आपका अपनी माँ से ?"

"यह भी भला पूछने की बात है ?"

"मैं उनका पता करने की चेष्टा करुँगा।"

"कब ?"

"अभी। आपको ठिकाने पर छोड़ने के पश्चात्।"

"यह कैसे हो सकेगा ? आप तो कहते थे कि वहाँ से कोई हन्दू बिच कर नहीं आता।"

"ठीक है। इस बात के लिए मुझको मुसलमान बनना पड़ेगा।"

नीना आवाक् मुख रह गई। इसके पश्चात्, ताँगे के पार्वती के घर पहुँचने तक, वह नहीं बोली। रामचन्द्र राव भी अपने मन में विचार करता रहा। वह नीना की माँ का पता पाने के लिए योजना बना रहा था।

जब ताँगा पार्वती के मकान के सामने खड़ा हुआ और नीना ताँगे से उतरी, तो रामचन्द्र राव भी उतर हाथ जोड़ कर नमस्ते करने लगा। उस समय नीना का विचार भंग हुआ। उसने सतर्क हो पूछा, "अब आप से कब भेंट होगी ?"

"यदि आपकी माँ का पता चल गया तो कहाँ मिलूँ ?"

"इस मकान पर सूचना दीजियेगा। मैं भी अपनी माँ का पता करने का यत्न करुँगी।"

"अच्छी बात है।" इतना कह रामचन्द्र राव ताँगे वाले को पैसे दे कर, पुनः मैक्लोड रोड की ओर लौट गया।

पार्वती घर पर ही थी। जब नीना ने उसको पूर्ण घटना बताई तो उसका मन भीतर-ही-भीतर बैठने लगा। उसने कहा, "आपके पिता ने आपको अकेले ताँगे में बैठा क्यों दिया ?"

"हम हर रोज़ ही अकेले ताँगे में जाती हैं।"

"पर आजकल के दिन हर रोज़ की तरह नहीं हैं। कल नगर में

एक सौ से ऊपर आदमियों के पेट में छुरे भोंके गए हैं।"

नीना बितर-बितर मुख देखती रह गई। उसने बताया कि एक युवक कह गया है; कि वह माता जी का पता कर बतावेगा। मैं समझती हूँ कि थाने में रिपोर्ट लिखवानी चाहिए।

"पर कौन लिखवाने जावेगा। अच्छा ठहरो। मैं यत्न करुँगी कि कोई रिपोर्ट लिखवाने वाला मिल जावे।"

(१२)

रेवा अपने पिता के घर में रहती थी, परन्तु [illegible] नित्य दो बार आती थी। आज वह दोपहर के समय आई तो पार्वती ने नीना के साथ घटी-घटना का वर्णन कर दिया। रेवा ने बताया कि आजकल थाने में जाने के अर्थ है अपना अपमान कराना। "मैं भैया से कहूँगी। वे ही बतावेंगे कि क्या करना चाहिए। अभी नीना को अपनी कोठी में जाकर पता करना चाहिए कि उस के माता-पिता अथवा बहिन का कोई समाचार वहाँ पहुँचा है या नहीं।" रेवा ने अपनी मोटर में उसको ले चलने का आश्वासन दिया।

तीसरे पहर वह नीना को ले कर बैरिस्टर केवल नाराण की कोठी पर गई। वहाँ से पता मिला कि बैरिस्टर साहब अकेले पता करने आये थे और चले गए है। नीना को इससे और भी चिन्ता बढ़ गई। वह वहाँ से रेवा के साथ चेतनानन्द के घर चली गई। महेश अभी भी खाट पर लेटा हुआ था। उसकी टांगें पट्टियों से बंधी थीं। चेतनानन्द, जब से नगर में झगड़े आरम्भ हुए थे, दिन भर बाहिर रहता था। रात को देर से घर लौटा करता था। आज वह सायं आठ बजे के लगभग लौटा। रेवा ने उसको नीना की कथा सुना दी। नीना वहां उपस्थित थी। उन दोनों के विस्मय का ठिकाना नहीं रहा, जब चेतनानन्द ने कहा, "उस औरत की कहानी मुझको विदित है। तो वह तुम्हारी मां थीं?"

नीना आगे सुनने के लिए आवाक मुख देखती रही। "रामचन्द्र राव

मेरा परिचित है। वह इस को पंडित जी के घर पहुँचाकर किला गूजर सिंह में पता करने गया था। इसकी मां एक मुसलमानी हल्के में ले जाई गई थी। वहाँ पर उसने अपने एक मुसलमान बने परिचित मित्र को भेजा। उसके वहाँ पहुँचने से पूर्व ही ....."

चेतनानन्द चुप हो गया। नीना के मुख का रंग उड़ गया और वह आगे सुनने के लिए व्याकुलता से उसका मुख देखने लगी। चेतनानन्द ने आँखें नीचे कर कहा, "इसकी मां ने एक मकान की छत से कूद कर आत्म-हत्या कर ली है। अब उसका शव हस्पताल में 'पोस्ट मार्टम' के लिए रखा है।

"रामचन्द्र राव पंडित जी के घर सूचना देने गया है।"

नीना हताश हो कुर्सी पर बैठ गई। उसकी आँखों से आँसू अविरल बहने लगे। वह विचार कर रही थी कि यदि वह ताँगे में से न कूदती तो उसको भी शायद मकान की छत से कूदना पड़ता।

चेतनानन्द ने बताया, "अब तो कर्फ्यू आर्डर लगा है। इस कारण कल प्रातःकाल आप की माता जी का शव अस्पताल से लेकर उसका दाह-संस्कार करवा दूँगा। यदि आपको पिताजी का पता विदित हो तो मैं उनको तार, टेलीफोन द्वारा भेज सकता हूँ।"

नीना नहीं जानती थी कि वे कहाँ ठहरे होंगे। शिमला में जाकर यह निर्णय किया जाना था। इस पर उसने पिताजी का और उनके एक मित्र का नाम पता बता दिया। चेतनानन्द ने फोनोग्राम कर दी।

अगले दिन चेतनानन्द ने कुछ लोग साथ लेकर हस्पताल से नीना की माँ का शव ले लिया और नीना को साथ ले जाकर उसका दाह-कर्म कर दिया।

बैरिस्टर केवल नारायण चौथे दिन तार पाकर लाहौर वापस लौट आया। तार नीना की ओर से था और उस पर लाला जीवन लाल का पता था। इस कारण केवल नारायण को नीना की माँ के आत्म-हत्या करने का समाचार मिला। उसने हस्पताल से 'पोस्ट मार्टम' की रिपोर्ट प्राप्त की। रिपोर्ट में लिखा था, 'हृत की किसी ऊँचे स्थान से गिर जाने

के कारण खोपड़ी टूट गई है और एक क्षण में मृत्यु हो गई है। हुत के साथ बलात्कार करने के लक्षण भी मिले,

केवल नारायण इस रिपोर्ट को पढकर स्तब्ध रह गया। वह पागलों की भाँति अपने बालों को नोचते हुए अपनी कोठी में जा पहुँचा। वहाँ नीना उसको ढाढ़स बँधाती रही। चेतनानन्द तथा रामचन्द्र राव भी वहाँ उपस्थित थे। केवल नारायण ने टेलीफोन से सब बड़े-बड़े अफसरों को अपनी बात बताई और उनको अपराधी के पकड़ने में यत्न करने को कहा। सब ने आश्वासन दिया कि अपराधी की खोज की जावेगी और उसको उचित दण्ड दिया जावेगा।

कई दिन की प्रतीक्षा के पश्चात् भी जब खोज का कुछ परिणाम नहीं निकला तो झुँझला कर केवल नारायण लाहौर के कमिश्नर को मिलने गया और उसने रोते हुए अपनी सब कहानी, जो कुछ उसको पता थी, वर्णन कर दी। कमिश्नर ने कहा, "मित्र ! मेरी सम्मति है कि तुम यहाँ से चले जाओ। लाहौर में तुम्हारी ज़ान का भी भय है।"

"पर मैंने कोई जुरम नहीं किया।"

"ठीक है। पर लाहौर के मुसलमानों में एक अति प्रभावशाली व्यक्ति तुम्हारी लड़की से विवाह करना चाहता था। तुमने इन्कार किया और उसको लेकर भाग जाना चाहा। इस कारण वह मुसलमान तुम्हारी जान लेने पर उतारु हो रहा है।"

"यह ठीक है। पर मेरी लड़की विवाह करना नहीं चाहती थी। वह लाहौर में है भी नहीं। परन्तु मैं अपनी जान की रक्षा के लिए नहीं कह रहा। मैं तो अपनी स्त्री की हत्या की जाँच के लिए कह रहा हूँ।"

"मिस्टर केवल नारायण ! आज लाहौर में पचास से सौ तक हत्याएँ प्रतिदिन हो रही हैं। किन-किनको पकड़ा जाय और कितने मुकद्दमे किये जायँ ?"

केवल नारायण चुप रह गया, परन्तु अपराध की भीषणता का ज्ञान उसको पागल बना रहा था। उसने निश्चय कर लिया कि वह लाहौर में

नहीं रहेगा ।

उसी दिन वह शिमला के लिए रवाना हो गया । नीना अपनी बहिन मीना के पास पहले ही पहुँच चुकी थी ।

रामचन्द्र राव, जब तक नीना लाहौर में रही थी, उससे सम्पर्क बनाए हुए था । रामचन्द्र के उसके माता पिता के विषय में खोज करने ने नीना के मन पर गहरा प्रभाव डाला था । इस कारण जब वह शिमला जाने लगी थी, तो उसने उसको वहाँ आने का निमन्त्रण दे दिया ।

रामचन्द्र का कहना था कि लाहौर में करने को कार्य इतना अधिक है कि वहाँ आने को अवकाश नहीं पा सकेगा । इस पर भी नीना के निमन्त्रण के लिए उसने धन्यवाद कर दिया ।

जब केवल नारायण शिमला जाने लगा तो रामचन्द्र और चेतनानन्द, जो उसकी स्त्री की हत्या की जाँच-पड़ताल में विशेष भाग ले रहे थे, उसको स्टेशन तक छोड़ने आए । मार्ग में और प्लैटफार्म पर बहुत खुलकर बातचीत हुई । केवल नारायण ने माना कि उसने मुसलमानों की बहुत खुशामद की है । उसका विचार था की इससे वह उनको प्रसन्न कर अपनी जान-माल की रक्षा कर सकेगा । अब वह समझ गया था की उसकी सब खुशामद व्यर्थ गई है । केवल नारायण ने मुहम्मद याकूब की नीना से हुई घटना सुना दी । उसकी स्त्री की हत्या का कारण वही लड़का हुआ था ।

रामचन्द्र राव ने पूरी जानकारी, जो उसके नकली मुसलमान मित्र से मिली थी, बताई । उसने कहा, "मुहम्मद याकूब प्रोफेसर रसूल का छोटा भाई है । दोनों नीना को चाहते थे । जब नीना की माँ को याकूब ने अपने चाचा कादिरहुसैन के हवाले कर दिया और उसने और उसके साथी कई अन्यों ने नीना की माँ से बलात्कार किया तो प्रोफेसर रसूल को पता चल गया । उसने अपने चाचा को डाँटा और नीना की माँ को छुड़ा दिया । वह उसको लेकर स्वयं आपके पास आना चाहता था ; परन्तु कादिर और उसके साथियों ने कहा कि अगर यह बचकर अपने घर चली गई तो वे सब पकड़े जावेंगे और दण्ड पा जावेंगे । प्रोफेसर रसूल ने कहा भी कि वह

उनको बचा देगा, परन्तु वे नहीं माने और उनमें से एक ने मकान की छत पर से, जहाँ वे बातचीत कर रहे थे, नीना की माँ को धक्का देकर नीचे गिरा दिया और वह गिरते ही मर गई।"

(१३)

महेश के घाव भरने में और उसके चलने-फिरने के योग्य होने में एक मास लग गया। इतने काल में पंजाब-भर में गृह-युद्ध आरम्भ हो गया था। चार-पाँच मार्च तक लाहौर, रावलपिंडी, पेशावर, मुलतान, सरगोधा इत्यादि स्थानों में हिन्दू बसने वालों पर मुसलमानों ने आक्रमण कर लूट मचा दी थी।

लाहौर में मार्च मास के मध्य तक, पोची दरवाजा से पीपल वेड़ा का पूर्वी भाग, कनारी बाजार, मुहल्ला सत्यां इत्यादि हिन्दू स्थान जलाकर भस्म कर दिये गए। मुहल्ला सरीन में आग लगाई गई, परन्तु वहां के हिन्दू युवकों और मनचली स्त्रियों ने आक्रमण करने वालों को मार भगाया।

इन सब दिनों में चेतनानन्द भाग-दौड़ कर रहा था। दिन चढने से लेकर बहुत रात बीतने तक वह घर से बाहिर रहता था। कभी-कभी तो रात-भर घर नहीं आ सकता था। उसके इस भाग-दौड़ का उद्देश्य हिन्दुओं का एक संगठन बनाना था, जिससे वह मुसलमानों के डायरेक्ट ऐक्शन को विफल कर सके।

इस कार्य में चेतनानन्द को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के एक कार्यकर्ता, रामचन्द्र राव सरोदे से भारी सहायता मिली। इन दोनों के प्रयत्नों से, लाहौर में पांच सौ से ऊपर युवक इस संगठन में सम्मिलित हो गए। इस संगठन को नगर के कई वकीलों, डाक्टरों, बैरिस्टरों और नगर के धनी-मानी लोगों का संरक्षण भी प्राप्त हो गया।

इस संगठन का काम यह था कि जहाँ कहीं भी मुसलमान आक्रमण करते, इसके सदस्य वहाँ एकत्रित हो जाते और आक्रमण को विफल करने का यत्न करते। इसमें ऐसे भी युवक थे, जो सुन्नत करवा मुसलमानों में

मिल गए थे और उनका भेद लेकर हिन्दुओं को आक्रमण से पूर्व सचेत करते रहते थे। उन्होंने नमाज़ पढ़नी सीख ली थी और मस्जिदों में जाकर मुसलमानों की योजनाओं का पता करते रहते थे।

जब तक यह संगठन बन कर तैयार हुआ, तब तक लाहौर में कई हिन्दू मुहल्ले जलाकर भस्म कर दिये गए थे। इस संगठन के पश्चात् यह सुरक्षा दल मुसलमानों का मुकाबिला करने लगा। यहाँ पर सफलता प्राप्त करने के उपायों से जानकार लोग पेशावर, डेरा इस्माईलखां, रावलपिंडी इत्यादि स्थानों पर भी भेजे गए और उन्होंने वहाँ सुरक्षा दल बनाने आरम्भ कर दिए।

एक दिन कीचड़ से लथपथ चेतनानन्द रात के बारह बजे घर पहुँचा। कपड़े बदल थोड़ा गरम दूध पीकर वह पुनः जाने को तैयार हो गया। जब जाने लगा तो उसकी बहन रेवा, जो महेश की सेवा-सुश्रुषा के लिए वहीं रहती थी, अपने कमरे से निकल आई और पूछने लगी, "भैया जा रहे हो क्या ?"

"हाँ रेवा ! क्या है ?"

"वे आप से मिलना चाहते हैं।"

"महेश ? अभी जागता है क्या ?"

"हाँ, आपकी प्रतीक्षा कर रहे है।"

चेतनानन्द महेश के कमरे में जा पहुँचा। महेश की टाँग की पट्टी खुल चुकी थी ; परन्तु अभी तक वह चल-फिर नहीं सकता था। चेतनानन्द ने महेश को तनिक डाँटकर कहा, "अभी सोये नहीं महेश ?"

"दादा !" महेश ने चेतनानन्द की ओर देखकर कहा, "आज प्रातः-काल आपसे कुछ पूछना था। परन्तु मेरे जागने से पूर्व ही आप चले गए थे और अब आए तो फिर जाने को तैयार हो गए हैं।"

"महेश ! आज की रात सोने को नहीं है। तुम को विदित होगा कि कुछ दिन हुए मुसलमानों ने मुहल्ला सरीन पर आक्रमण किया था और वहाँ की वीर स्त्रियों ने आक्रमण करने वालों पर तेज़ाब, ईंटें, मिर्चें और गरम तैल

फेंककर भगा दिया था। इस पर पुलिस ने उन औरतों को पकड़ कर कैद कर लिया था। बहुत कठिनाई से गवर्नर के पास सीधा डेपुटेशन ले जाकर उनको छुड़ाया गया। वे कल छूटी हैं और आज पुनः उस मुहल्ले पर मुसलमानों ने आक्रमण कर दिया है। प्रातःकाल से लड़ाई हो रही है। इंच-इंच भूमि के लिये झगड़ा हो रहा है। इस बार डिब्बी बाज़ार की ओर से आक्रमण किया गया है। एक-एक कर मकान जलाये जा रहे है। हमारे स्वयंसेवक उन मुहल्ले वालों के साथ, पीछे के मकानों की छतों से पानी डाल कर आग बुझाने का यत्न कर रहे है। वहाँ से सब स्त्रियों को निकाल लिया गया है। आज तो पुलिस वाले भी सुनहरी मस्जिद की छत पर चढ़े हुए, आग बुझाने वालों पर गोली चला रहे है।

"यह युद्ध कब तक चलेगा कहना कठिन है। कुछ घायल स्वयंसेवकों को इधर छोड़ने आया था। विचार आया कि थोड़ा दूध पी जाऊं और कपड़े बदल लूँ।"

"मुझको बहुत दुःख हो रहा है कि मै इस में भाग नही ले सकता।"

"तुम्हारी विवशता ही तो कारण है। पर एक बात कहते हुए मुझे बड़ी प्रसन्नता होती है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के लोगो ने इस कार्य में बहुत भारी सहायता दी है। रामचन्द्र राव तो ऐसे कार्य कर रहा है, मानो उस पर कोई भूत सवार हो।"

"इस समय तो कर्फ्यू लगा हुआ है। आप जायेंगे कैसे ?"

"हमने नगर के प्रत्येक भाग में जाने के लिये गुप्त-मार्ग बना लिये है। कई स्थानों पर मकानों की छतों पर से कूदने से काम बनता है। अन्य स्थानों पर मकानों की दीवारें फोड़नी पड़ी हैं। फिर बाज़ारों और गलियों को, किन-किन स्थानों पर भागकर पार करना होता है, यह सब योजना पहले ही बना ली है। हमारे दल के लोग, प्रत्येक मुहल्ले में मकानों की छतों पर बैठे, रात-भर पहरा देते है। हाथों में लाल और हरे रंग के टॉर्च लिये, भय और रक्षा का संकेत साथियों को देते रहते है। हमने ऐसा प्रबन्ध कर लिया है कि किसी भी मुहल्ले में खतरा पैदा होने का समाचार पाँच मिनट से ५० की ह०—८

में ही पूरे नगर-भर में पहुँच जाता है।

"अब मैं शहर के बाहर-बाहर से दरवाज़ा शेरां वाला तक मोटर पर जाऊँगा। वहां से एक मकान तक पैदल पहुँचूंगा। पश्चात् एक गुप्त-मार्ग से मुहल्ला सरीन में जा पहुँचूंगा।"

चेतनानन्द गया तो अगले दिन दोपहर को लौटा। घर पर पहुँच स्नान और भोजन कर सो गया। सायंकाल उठा तो महेश से मिलने उसके कमरे में आ पहुँचा। चेतनानन्द का पिता भी वहाँ उपस्थित था। पार्वती और उसकी माँ भी आई हुई थीं। चेतनानन्द आया तो उसके पिता ने पूछा, "फिर जा रहे हो चेतन ?"

"अभी आज कोई प्रोग्राम नहीं है। शायद मुसलमान कल की लूट को हज़म कर रहे हैं। पिछले चौबीस घण्टे के युद्ध का परिणाम यह हुआ है कि हम मुहल्ला सरीन से सब को बचाने में सफल हुए हैं। वहाँ के घरों से कीमती वस्तुएँ निकाल लाये है और शायद मुहल्ले की भी रक्षा कर सकते, यदि पुलिस लुटेरों की सहायता न करती। अब आग मुसलमानों के मकानों तक पहुँच गई है और आग बुझाने के इंजिन पहुँच गये है।"

"चेतनानन्द !" उसके पिता ने गम्भीर होकर कहा, "जिस कार्य में तुम लगे हो, उससे मैं तुम्हारा मन हटाना नहीं चाहता था। इस कारण घर की उलझन तुमसे दूर रखता रहा हूं। परन्तु अब बात यहाँ तक पहुंच गई है कि उसको तुमसे दूर रखना, तुमसे अन्याय करना हो जाएगा। महेश और रेवा ने भी आग्रह किया है कि अब इसको तुमसे छिपाकर रखना ठीक नहीं।

"फरवरी मास में मैंने नसीम की चिकित्सा के लिये दो सहस्र रुपए भेजे थे। पश्चात् यह विचार किया था कि महेश को भेजकर नसीम को यहाँ बुला लूं। ऐसा कर नहीं सका। इस पर मैंने अपने हैड-क्लर्क श्री चरण दास को भेजा था। चरणदास ने कलकत्ता से लिखा है कि वह नसीम से मिला है। यद्यपि वह कहती है कि वह बीमार थी और है, परन्तु देखने में

ठीक प्रतीत होती है। वह लाहौर आने से इन्कार करती है और विलायत जाने की तैयारी कर रही है।

"इस समाचार के पश्चात् नसीम का एक पत्र आया था कि वह अभी तक बीमार है और उसको डॉक्टर का 'बिल' चुकाने के लिए कम-से-कम चार हजार रुपया चाहिए। मैंने यह रुपया भी भेज दिया था और आज चरणदास का पत्र आया है कि वह ढाका के एक जमींदार के लड़के शर-फुद्दीन के साथ विलायत के लिये रवाना हो गई है।

"परसों नसीम की एक चिट्ठी तुम्हारे नाम से आई थी। मैंने वह खोलकर पढ़ ली थी। तुम इधर काम में व्यस्त थे और मैंने विचार किया था कि शायद कोई आवश्यक बात हो। उसमें लिखा है कि तुम उसको भूल जाओ और दूसरा विवाह कर सकते हो। वह तुम पर अपने हक-हकूक का दावा नहीं करेगी। मै समझता हू कि यह चिट्ठी धोखा है। इस पर हस्ताक्षर नकली है। यह पीछे तुमसे रुपया ऐंठने के लिए किया गया है।"

इतना कह जीवनलाल ने जेब में से पत्र निकालकर चेतनानन्द को दे दिया। चिट्ठी टाईप की हुई थी और नीचे हस्ताक्षर थे। चेतनानन्द ने हस्ताक्षर देख कह दिया, "ये उसके हस्ताक्षर नहीं है। पिता जी! आपने रुपया भेजकर ठीक ही किया है। अब मै अपना मार्ग साफ़ देख रहा हूँ और मै समझता हूँ कि मै इस झंझट से मुक्त हो सकूंगा।"

इस समय नौकर ने नीचे से आकर कहा, "चेतन बाबू को नीचे कोई बुला रहा है।"

चेतनानन्द ने समझा कि कही अन्य स्थान पर मुसलमानो ने आक्रमण किया है। इस कारण उसने उठते हुए कहा, "मैं अब जाता हूँ।"

(१४)

नीचे डॉक्टर खन्ना मिलने आये थे। चेतनानन्द ने उसे भीतर ले जाकर बैठाया और आने का कारण पूछा। डॉक्टर खन्ना ने कहा, "आप तो कई दिनों से मिले ही नही। एक बहुत आवश्यक बात करनी थी। इस कारण

स्वयं ही मिलने चला आया हूं।"

"आप किसी के हाथ कहला भेजते, तो मैं स्वयं ही सेवा में उपस्थित हो जाता।"

"आज डिप्टी कमिश्नर ने नगर के मुख्य-मुख्य लोगों को बुलाया था। लाहौर की बिगड़ी हालत को सुधारने के लिये बातचीत हुई और उसमें आपका भी नाम आया था। डिप्टी कमिश्नर साहब ने कहा कि आपके पास दस हज़ार स्वयं-सेवक हैं और वे ही नगर में उपद्रव कर रहे हैं।"

"तो आपने पूछा होगा कि कल मुहल्ला सरीन को आग लगाने और लूटने वाले भी मेरे ही स्वयं-सेवक थे क्या ?"

"इन बातों के कहने से क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है? सब जानते हैं कि मुसलमान हिन्दुओं पर आक्रमण कर रहे हैं। आज की रिपोर्ट है कि पचास आदमियों के पेट में छुरा घोंपा गया है और घायलों में चालीस हिन्दू, नौ सिक्ख और एक मुसलमान है।"

"और ये छुरे घोंपने वाले मेरे दस हज़ार स्वयं-सेवक ही हैं न ?"

"चेतनानन्द, ! तुम कभी-कभी बच्चों को-सी बातें करने लगते हो। व्यर्थ में अफसरों से झगड़ा करने से लाभ क्या ? मैं चुपचाप सुनकर चल आया हूं।"

"तो आपने साहब बहादुर की किसी बात को गलत नहीं कहा ?"

"सब तो गलत थीं भी नहीं। कुछ अतिशयोक्ति अवश्य थी। इसमें भी भला सन्देह है कि कुछ तो स्वयं-सेवक आपके अधीन हैं ही। दस हज़ार न सही ; पाँच हज़ार तो होंगे।"

चेतनानन्द हँस पड़ा। उसने कहा, "मैं तो कहता हूँ बीस हज़ार हैं इससे क्या होता है ? देखना तो यह है कि ये लोग करते क्या है ? ये झगड़ा करने वाले हैं या झगड़ा करने वालों को झगड़ा करने से रोकने वाले हैं ? आप तो जानते ही हैं कि अभी तक तो एक भी मुसलमान मुहल्ले को आग नहीं लगी। आपको चाहिए था कि डिप्टी कमिश्नर को यह सत्य बता देते। शोक है कि आप अपना कर्तव्य पालन नहीं कर सके।"

"जो करना उचित समझता था, कर आया हूँ। उन उचित कार्यों में एक आपको सचेत करना भी है और वह कर रहा हूँ।"

यह सुन चेतनानन्द ने हाथ जोड़ नमस्ते कहा और कहा, "आपकी इस उदारता और दया के लिये आपका सदा के लिए आभारी रहूंगा; परन्तु हिन्दू जाति के साथ आपकी जो निर्लेपता है, उसके लिए आपको क्या कहा जावे, यह आप स्वयं ही विचार कर लीजिए।"

इस समय डॉक्टर खन्ना भी उठ खड़ा हुआ और मकान के बाहर निकलते हुए कहने लगा, "मैं केवल हिन्दूओं के लिए ही उत्तरदायी नहीं हूँ। मुझको दूसरों के विचारों का भी ध्यान रखना है।"

"मुसलमानों का प्रतिनिधि आपको किसने बनाया है? उनका आप पर न तो विश्वास है और न वे आपका नेतृत्व मानने के लिए तैयार हैं।"

डॉक्टर खन्ना ने मोटर में बैठते हुए कहा, "इससे क्या होता है? हमने तो दोनों मजहब वालों की नुमाइन्दगी करनी है।"

"मैं मज़हबों की बात नहीं कहता। मैं तो यह पूछता हूँ कि आप डाका डालने वालों, आग लगाने वालों और बलात्कार करने वालों की नुमाइन्दगी कब से करने लगे है।"

"यही तो देखना है कि ऐसा कौन है।"

चेतनानन्द डॉक्टर को यह कहते हुए सुन चकित रह गया। उसने डॉक्टर को जाने से रोकते हुए कहा, "ठहरिए। आप मेरे साथ चलकर देखने का कष्ट कर सकते हैं क्या? चलिए, मैं अभी दिखाता हूं। मुहल्ला सरीन की औरतों के बयान दिलवा दूं, या बैरिस्टर केवल नारायण की बीवी की 'पोस्ट मार्टम-रिपोर्ट' पढ़वा दू? कनारी बाज़ार और कसेरा बाज़ार की राख अभी ठंडी नहीं हुई। शायद आपका विचार है कि हिन्दूओं ने अपने मकानों को स्वयं आग लगा दी है। चलं साथ दिखाने के लिए?"

डॉक्टर खन्ना चेतनानन्द के क्रोध से तमतमाते मुख को एक मिनट

तक देखता रहा और पश्चात् मोटर स्टार्ट कर चल दिया।

चेतनानन्द ने डॉक्टर खन्ना की चेतावनी को हंसी-ठट्ठा नहीं समझा। उसने इस बात को सुन निश्चय कर लिया कि वह अब घर पर नहीं रहेगा और अपना पहरावा बदल लेगा। उसने अपने कमरे में जाकर, अपना खद्दर का पहरावा उतार कर मलमल की धोती, कुर्ता और दिल्ली वालों की दोपल्ली टोपी पहन ली और महेश के कमरे में आ गया। सब लोग अभी वहीं बैठे थे। चेतनानन्द को इस पहरावे में देख सब हंस पड़े। उसने डॉक्टर खन्ना की चेतावनी बताई तो सब गम्भीर हो गए।

"परन्तु दादा !" महेश ने कहा, "इस पोशाक में भले ही पुलिस से बच जाओ, पर पेट में छुरा घोंपने वालों से नहीं बच सकोगे।"

"तो फिर क्या करूं ?" चेतनानन्द ने चिन्ता प्रकट करते हुए पूछा।

"मैं बताता हूँ। अभी जाइए, किसी सैलून में फ़ैशनेबल ढंग से बाल कटवा लीजिए और रेंकन कम्पनी से फर्स्ट क्लास सूट बनवा लीजिए। एक बढ़िया हैट लगा कर घूमिए। इस पोशाक में पुलिस आपको नहीं पहचानेगी और छुरा घोंपने वाले सन्देह में ही रह जावेंगे कि आप मुसलमान हैं या हिन्दू ?"

"बहुत खूब !" चेतनानन्द ने प्रसन्न होकर कहा।

चेतनानन्द अपने कपड़े बदल, बाल कटवाने के लिये चला, तो पार्वती कमरे के बाहर उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। चेतनानन्द विस्मय में उसका मुख देखने लगा। पार्वती ने अपना प्रयोजन बतलाया, "आप कुछ दिन के लिए लाहौर से बाहर नहीं जा सकते क्या ?"

"क्यों ?"

"मैं समझती हूँ कि यहां आपका पकड़ा जाना निश्चित है।"

"तो फिर क्या होगा ?"

"मेरा मन डरता है।"

"देखो पार्वती ! मैंने यह काम करना ही है। मैंने हिन्दुओं को धोखा देकर कांग्रेस को निर्वाचनों में सफल बनवाया है। इसके प्रतिकार में अब

हिन्दुओं की रक्षा में जान तक लगा देना चाहता हूँ।"

"तो क्या हम स्त्रियाँ इसमें कुछ नहीं कर सकतीं ?"

इस प्रश्न पर चेतनानन्द पार्वती का मुख देखने लगा। वह इस प्रश्न का प्रयोजन जानना चाहता था। जब पार्वती के मुख पर किसी बात का आभास नहीं मिला, तो पूछने लगा, "यह तुम क्यों पूछती हो ?"

"जो आप करते हैं, वही मुझको भी तो करना चाहिए।"

"पर तुमने तो कुछ किया नहीं था। तुम्हारे लिए प्रायश्चित् करने आवश्यकता प्रतीत नहीं होती।"

"मुझको आपकी सहायता करनी चाहिए। इससे आपका काम शीघ्र समाप्त हो जावेगा।"

"यही तो पूछ रहा हूँ कि तुमको मेरी सहायता क्यों करनी चाहिए ?"

"मेरा मन कहता है कि करनी चाहिए। मेरा धर्म यही कहता है। आपको इसमें सन्देह क्यों हो रहा है ?"

चेतनानन्द इस कथन से बहुत प्रसन्न था। यह पार्वती से उसके सम्बन्ध की मूक स्वीकृति थी। वह समझ गया था कि पार्वती के मन में उसके प्रति पूर्ववत् भाव ही हैं। हृदय में अति प्रसन्नता अनुभव कर, वह कुछ कह नहीं सका और पार्वती का मुख देखता रह गया। पार्वती का मुख लज्जा से लाल हो रहा था। वह विचार कर रही थी कि क्या उसको अपने मन के भाव बताने के लिए स्पष्ट कहना पड़ेगा ? जब चेतनानन्द के मुख से कुछ नहीं निकला, तो उसने फिर पूछा, "क्या इस कार्य में, जिसमें आप लगे हैं, स्त्रियों के लिए कोई काम नहीं है ?"

चेतनानन्द को एक बात स्मरण हो आई। उसने कहा, "है। तुम्हारे लिए काम तो है, पर क्या तुम कर सकोगी ?"

"बहुत कठिन है क्या वह ?"

"कठिन तो नहीं। पर हर रोज़ घर से बाहिर जाना होगा और पंडित जी इसको पसन्द करेंगे क्या ?"

"आप आज्ञा करिए। मैं करने का यत्न करूँगी।"

"गंगाराम हस्पताल में घायलों की संख्या बहुत बढ़ गई है और दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। परिचारिकाओं की बहुत आवश्यकता है। कर सको, तो करो।"

पार्वती का मुख खिल गया। उसने उत्तर नहीं दिया और चुपचाप महेश के कमरे में चली गई।

(१५)

डाक्टर खन्ना की चेतावनी के पश्चात् चेतनानन्द ने अपने लिए फैशनेबल सूट बनवा लिया और अपने पिता का घर छोड़ कृष्णनगर में एक मित्र के घर रहने लगा।

उसके वारंट आये, पर वह पकड़ा नहीं जा सका। उसके साथ राष्ट्रीय स्वयं-सेवक संघ के लगभग पाँच सौ स्वयं-सेवकों के वारंट थे और उनमें से अधिकांश पकड़ लिये गए। परन्तु कार्य नहीं रुका। दिन-प्रतिदिन मुसलमानों के डायरेक्ट ऐकशन का विरोध अधिक-और-अधिक कुशलता से होने लगा। परिणाम यह हुआ कि एप्रिल और मई के महीने में आग लगने की घटनाएँ बहुत कम हो गईं। प्रान्त के अन्य भागों में भी हिन्दु डटकर मुसलमानों की लूट-खसूट का विरोध करने लगे।

मुसलमान इस विरोध से घबरा उठे और समझने लगे कि उनके मनसूबे विफल होने वाले हैं। उनके मन में यह भय समाने लगा था कि मुसलमानों पर आक्रमण होने लगे, तो हिन्दुओं के स्थान, वे प्रान्त छोड़-छोड़ भागने लगेंगे। हिन्दू, जो मार्च के दिनों में झगड़ा देख हरिद्वार, देहरादून इत्यादि स्थानों के लिये भाग गए थे, धीरे-धीरे वापिस लौटने लगे थे।

इस पर मुसलमानों ने दो आन्दोलन उठाए। एक तो यह घोषणा करनी आरम्भ कर दी कि पंजाब में झगड़े की जड़ राष्ट्रीय स्वयं-सेवक संघ है। इस आन्दोलन की गंज पंजाब से बाहिर गई और महात्मा गाँधी ने इस बात का समर्थन कर दिया। राष्ट्रीय स्वयं-सेवक संघ के अधिकारियों ने संघ की एक सभा में महात्मा जी को बुलाकर अपना कार्य दिखाने का यत्न किया

पर उन्हें इससे सन्तोष नहीं हुआ और उन्होंने पूर्व वक्तव्य का संशोधन नहीं किया। इसका परिणाम यह हुआ कि पंजाब सरकार को हिन्दू युवकों को पकड़ने का बहाना मिल गया। जहां कहीं भी, कोई मज़बूत ताकतवर हिन्दू-युवक दिखाई देता, पुलिस उसको राष्ट्रीय स्वयं-सेवक-संघ का स्वयं-सेवक घोषित कर पकड लेती और जेल में डाल देती। परिणाम स्वरूप हिन्दू-युवक पंजाब छोड़-छोड़कर भागने लगे।

दूसरा आन्दोलन, मुसलमानों का, सरकार पर यह दोष लगाना था कि सरकार गरीब मुसलमानों की रक्षा करने में असमर्थ है। इस आन्दोलन पर पजाब सरकार ने पुलिस को यह आज्ञा दे दी कि मुसलमानों के जान-माल की रक्षा करना उसका कर्तव्य है।

इसके साथ एक घटना यह घटी कि भारत के रक्षा-मन्त्री श्री बलदेव सिंह लाहौर आये और पंजाब गवर्नर की विशेष रूप में तथा पंजाब सरकार की साधारण रूप में प्रशंसा कर गए। इसका परिणाम यह हुआ कि पंजाब की पुलिस मुसलमान लुटेरों और आग लगाने वालों की प्रत्यक्ष में भी सहायता करने लगी।

लाहौर में, सुरक्षा-दल से, हिन्दू मुहल्लों पर आक्रमण करने वालों का मुकाबिला होता देख, मुसलमान नैशनल गार्ड्स ने अपनी योजनाएँ पुलिस के साथ मिल कर बनानी आरम्भ कर दी। अब लाहौर के हिन्दुओं को मुसलमान आक्रमणकारियों और पुलिस, दोनों का विरोध करना पड़ गया।

एक रात मुसलमानों ने मोची दरवाज़ा के भीतर पीपल वेड़ा के उस भाग को, जो मच्छी हट्टा बाज़ार के पिछवाड़े में था, जलाकर भस्म कर देने का निश्चय कर लिया। मुसलमानों की योजना मच्छी हट्टा बाज़ार और वच्छो वाली बाज़ार के हिन्दुओं को लाहौर से निकालने की थी। मच्छी हट्टा बाजार पर आक्रमण करने का मार्ग मोची दरवाजा के पीपल वेड़ा के पश्चिमी भाग की ओर से ही हो सकता था। इस कारण इस भाग को जला कर राख कर देना, उनकी योजना का प्रथम चरण था। चेतनानन्द और उसके साथी इस सत्य को समझते थे। इस कारण वे हिन्दू मुहल्लों की रक्षा

का मोर्चा, पीपल वेड़ा के इस भाग की रक्षा करने में समझते थे। अतएव चेतनानन्द को जब इस आक्रमण के किए जाने की चेतावनी मिली, तो वह कार्य की महत्ता को समझ गया। सूचना पाते ही चेतनानन्द के पचास के लगभग स्वयं-सेवक इस मुहल्ले की रक्षा के लिये भेजे गए। चेतनानन्द स्वयं रात के दस बजे वहां पहुंच गया। मुहल्ले के पश्चिमी भाग और पूर्वी भाग के भीतर सड़क थी, जो मोची दरवाज़े से रंग महल को जाती थी, सड़क के पूर्व की ओर, मुहल्ले का भाग मार्च में ही जलाकर भस्म किया जा चुका था और उसकी रक्षा का प्रश्न ही नहीं था।

रात के बारह बजे, जब नगर में कर्फ्यू आर्डर लगा हुआ था, कुछ मुसलमानों ने अड्डा ब्राह्मणों के सामने वाले मकान को आग लगाने का यत्न किया। मुसलमान इलाके से हिन्दू इलाके में आने पर यह पहिला हिन्दू मकान था। ज्यूं ही मुसलमान आग लगाने के लिए, इस मकान के समीप आये, मकान की छत पर से ईंटों की इतनी बौछार आई कि आग लगाने वाले अपने काम में असफल रहे और भाग खड़े हुए। इसके दस मिनट पश्चात्, वहां से पचास गज के अन्तर से, मट्टी के तेल में सने हुए पलीते जलाकर उस मकान की ओर फेंके जाने लगे।

पहिले तो पलीतों पर मट्टी डालकर बुझाने का यत्न किया गया, परन्तु पलीते इतनी अधिक संख्या में आए कि उन पर डालने के लिए मट्टी मिलनी कठिन हो गई। चेतनानन्द उस मकान की छत पर खड़ा होकर यह देख रहा था। जब उसको विश्वास हो गया कि उस मकान को आग लगे बिना नहीं रह सकती, तो उसने मुहल्ले की रक्षा का केवल एक ही उपाय समझा। वह यह कि मकानों से निकलकर पलीते फेंकने वालों पर आक्रमण कर दिया जावे और उनको मार-मार कर भगा दिया जावे। इस कारण उसने रक्षा-दल के लोगों को बाहिर निकल आने का आदेश दे दिया।

चालीस के लगभग सुरक्षा दल के लोग और कुछ मुहल्ले के युवक लाठियाँ लिये हुए बाज़ार में निकल आये और पलीते फेंकने वालों पर वज्र की भांति पिल पड़े। आक्रमणकारियों की संख्या दो-तीन सौ के लगभग थी।

इससे उनको भगा देना सुगम नहीं था। दोनों ओर के लोग दृढ़ मन के थे। इस कारण युद्ध आरम्भ होगया।

रामचन्द्र राव भी इस युद्ध में लाठी लिए उपस्थित था। उसने आज लाठी चलाने में अपनी योग्यता का परिचय दिया। सबसे आगे वह ही था। जब वह मुसलमान आक्रमणकारियों में लाठी घुमाता हुआ पहुँचा तो उसकी लाठी की मार की परिधि में किसी का आना कठिन होगया। खटाखट खोपड़ियाँ फटने लगी और आक्रमणकारी धराशयी होने लगे।

केवल रामचन्द्र राव की लाठी ने चालीस से अधिक मुसलमानों को घायल कर भूमि पर लिटा दिया। मुसलमान पन्द्रह मिनट से अधिक वहाँ ठहर नहीं सके और अपना सारा आग लगाने का सामान छोड, भाग खडे हुए। मुसलमानो के घायलों की संख्या बहुत अधिक थी। हिन्दुओं में केवल दस घायल हुए थे और वह भी साधारण सी चोटों से।

चेतनानन्द ने हिन्दू घायलों को मकानों पर ले जाने की आज्ञा दे दी और शेष आदमियों को मुसलमान घायलों को उठा, उनकी सेवा-शुश्रूषा के लिए ले चलने को कहा। यह काम अभी हो ही रहा था कि पुलिस का एक दस्ता, जिसमें बीस के लगभग बन्दूकची थे, आया और उनको घेर कर खड़ा हो गया।

चेतनानन्द ने परिस्थिति को समझ, अपने कार्य का निश्चय कर लिया। उसने रामचन्द्र राव को संकेत किया और स्वयं पुलिस सारजैन्ट के पास आकर उससे कहने लगा, "आप ठीक समय पर आ गए हैं। नहीं तो ये लोग मुहल्ले को जला ही डालते। देखिये न कितने पलीते ले कर आए थे।"

"क्या कह रहे हो? हम तो यह देख रहे हैं कि तुम लोग लाठियों से सुसज्जित हो आए हो और ये पलीते ले मुसलमान मुहल्लों को आग लगाने जा रहे हो।"

"नहीं सरकार, ऐसा नहीं है। देखिए, इन लोगों ने उस मकान को आग लगाने का यत्न किया है। परन्तु यदि हम नीचे नहीं आते तो यह सारा मुहल्ला अब तक धू-धू कर जल रहा होता।"

"ये बातें कल मजिस्ट्रेट के सामने करना ।"

इस समयतक रक्षा-दल के स्वयंसेवक पुलिस के समीप थे होगए थे और एका-एक पुलिस वाले के समीप तीन-तीन इकट्ठे खड़े हो गए थे। इस प्रबन्ध के हो जाने पर चेतनानन्द ने ज़ोर से पूछा, "तो हम सब को पकड़ लोगे ?"

"सब लोग थाने तक चलो । वहाँ विचार कर लेंगे ।"

इस समय रामचन्द्र राव ने ज़ोर से कहा, "हम अन्याय सहन नहीं करेंगे ।"

इन शब्दों को सुनते ही सब स्वयंसेवक पुलिस वालों से भिड़ गए । एक-एक पुलिस वाले पर तीन-तीन स्वयंसेवक पिल पड़े। उनकी बन्दूकें छिन गई । पुलिस सारजेन्ट, जो चेतनानन्द से बात कर रहा था, भाग खड़ा हुआ, परन्तु कुछ दूर जाकर खड़ा हो गया और पिस्तौल निकाल चेतनानन्द पर वार करने लगा । रामचन्द्र राव ने यह देख लिया और वह उसको पकड़ने के लिये उसकी ओर लपका, परन्तु पूर्व इसके कि वह उस तक पहुँचे, सारजेन्ट ने गोली चला दी । रामचन्द्र राव के एक गोली तो पेट चीरती हुई पार निकल गई और दूसरी उसकी जाँघ पर लगी । उस पर गोली चलते देख, चेतनानन्द ने भागकर सारजेन्ट को भुजाओं में दबोच लिया । इससे दोनों में कुश्ती होने लगी। इस हाथापाई में शेष गोलियां चल गई और उनमें से एक चेतनानन्द की टाँग में लग गयी ।

पुलिस के सिपाही बन्दूकें छिन जाने से भाग खड़े हुए । चेतनानन्द के घुटने में गोली लगी थी और उसकी टाँग बेकार हो गई थी । इससे उस की पकड़ से सारजेन्ट छूट गया और भाग खड़ा हुआ । इसपर भी वह अपनी पिस्तौल वहीं छोड़ गया ।

इस दिन पीपल वेड़ा का वह भाग बच गया और मच्छी हट्टा बाज़ार पर आक्रमण दूर हट गया । रक्षादल के एक स्वयंसेवक को घातक घाव लगे थे। रक्षादल के दो नेता पिस्तौल की गोलियों से घायल हुए थे। दूसरी ओर पुलिस की पन्द्रह बन्दूकें और एक पिस्तौल इनके अधिकार में आगई थीं ।"

पुलिस को इस मोर्चे पर भारी क्षति उठानी पड़ी और मुसलमानों की साख कम हो गयी। इससे पुलिस और मुस्लिम नैशनल गार्ड्स मिल कर योजनाएँ बनाने लगे। हिन्दू युवकों की पकड़-धकड़ और वेग से होने लगी और डिप्टी कमिश्नर ने यह आज्ञा दे दी कि मुहल्लों में, मकानों की छतों पर पुलिस की चौकियाँ डाल दी जायँ।

इस नादिरशाही से घबड़ाकर लाहौर के हिन्दुओं का एक डैपुटेशन केन्द्रीय सरकार को, वहाँ की घटनाएँ बताने के लिए और पंजाब में मार्शल-लॉ स्थापित करने के लिए प्रस्ताव लेकर गया। लाहौर के एक अंग्रेज़ी समाचार-पत्र के एक विख्यात कर्मचारी डैपुटेशन के नेता बन कर गए, परन्तु कुछ भी परिणाम नहीं निकला।

जौहर

(१)

रावलपिण्डी ज़िला में गूजर खां एक तहसील नगर है। लाहौर से पेशावर जाने वाली मुख्य रेल की लाईन पर रावलपिण्डी से तैंतीस मील लाहौर की ओर, इस नाम के रेल के स्टेशन से दो मील के अन्तर पर यह कसबा बसा हुआ है। सिक्खो की एक भारी जन-संख्या इसमें रहती थी। नगर के एक सिरे पर, नगर-दीवार के कुछ ही अन्तर पर एक सिक्ख परिवार का घर था। घर बहुत बडा है। बीच में एक भारी सेहन था और उस सेहन के चारो ओर कमरे बने थे। परिवार का सबसे बडा पुरखा सरदार कर्मसिंह, अस्सी वर्ष की आयु का, नगर में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति माना जाता था।

कथा-काल में कर्मसिंह के पाँच लड़के थे। पाँचो जीवित थे। सबसे बड़े की आयु साठ वर्ष और सबसे छोटे की तीस वर्ष थी। कर्मसिंह की तीन लड़कियाँ आस-पास के गाँवो मे विवाही थी। छोटी लड़की बत्तीस वर्ष की थी और उसकी ससुराल काज़ियाँ गाँव में थी, जो गूजर खाँ से पाँच मील के अन्तर पर था।

कर्मसिंह का सबसे छोटा लड़का बख्तावर सिंह परिवार की भूमि का प्रबंध करता था और सबसे बड़ा लड़का जोरावर सिंह परिवार के मुकद्दमे आदि देखता था। जोरावर से छोटा सुखवीर सिंह गाँव में तथा रावलपिण्डी में छोटे-मोटे ठेके लेता था और परिवार की आय में वृद्धि करता रहता था।

तीसरा लड़का नौनिहाल सिह वकील था। रावलपिण्डी में प्रैक्टिस करता था, परन्तु सन् १९४२ में कांग्रेस के आन्दोलन में सम्मिलित हो दो वर्ष जेल काटने पर निकला, तो उसको वकालत करने का लायसेंस नहीं मिला। इस कारण गूजर खाँ में आकर कांग्रेसी नेता बन बैठा। चौथा लड़का जगदेव सिह कलकत्ता में मोटरें चलाता था। वहाँ उसकी बीस के लगभग टैक्सियां चलती थीं। पाँचों भाईयों के परिवार गूजरखाँ के उस बड़े मकान में ही रहते थे और अभी तक परिवार संयुक्त ही था।

सरदार कर्मसिह का अपने लड़कों पर बहुत दबदबा था। यही कारण था कि न'म-गरम सब इकट्ठे रह रहे थे। लड़कों की स्त्रियाँ थी और फिर उनके बच्चे थे। परिवार में पचास से ऊपर प्राणी थे। रविवार के दिन, जब परिवार के सब लोग गुरुद्वारे में जाते थे, तो गुरुद्वारे में बैठने के लिये स्थान नहीं रहता था। पाँचों भाई और उनके लड़के, जब कभी इकट्ठे होकर गूजर खाँ के बाजार मे निकल पड़ते, तो उनके तेज को देखकर लोग ईर्षा करते थे।

कलकत्ता में डायरेक्ट ऐक्शन देखकर जगदेव सिह ने अपने घर वालों को लिखा था कि पजाब की बारी भी आवेगी। रावलपिण्डी ज़िले मे हिन्दू और सिक्खों की संख्या तीन प्रतिशत् के लगभग थी और जगदेव सिह का कहना था कि यहाँ डायरेक्ट ऐक्शन के अर्थ होंगे पूर्ण हिन्दू जनता की हत्या। इस कारण जगदेव सिह ने लिखा था कि उनके परिवार के लोग लखनऊ आ जावें, तो ठीक है।

इस पत्र के आने पर कर्मसिह ने अपने लड़कों और पोतों को बुलाकर जगदेवसिह का पत्र सुना दिया। पत्र सुनकर सब से बड़े भाई जोरावरसिह और उसके छोटे भाई सुखवीरसिह ने जगदेव के प्रस्ताव को मान लिया, परन्तु दूसरे दो भाईयों ने इसका घोर विरोध किया। नौनिहालसिह ने, जो कांग्रेस में काम करता था, इस प्रस्ताव को हंसी में उड़ा दिया। उसने कहा, "महात्मा गांधी का पूर्ण जीवन हिन्दू-मुसलमानों की एकता करने में व्यतीत हुआ है। हमको विश्वास रखना चाहिये कि उनके

जीवन-भर के कार्य के प्रभाव से नौबत यहाँ तक नहीं पहुंचेगी। सब से छोटा लड़का बख्तावरसिंह भी जगदेवसिंह के प्रस्ताव को पसन्द नहीं करता था। उसका कहना था कि उनकी सैंकड़ों बीघा भूमि है, जिन पर सैंकड़ों मुसलमान मजारे काम करते है। उनका व्यवहार सब से बड़ा अच्छा है। इस कारण उनको मुसलमानो से डरने की आवश्यकता नहीं। ये सैंकड़ों मजारे अपनी जान देकर भी उनकी रक्षा करेंगे।

इस प्रकार बात टल गई और पिता ने कलकत्ता में जगदेवसिंह को लिख दिया, "यहाँ हमारी स्थिति इतनी दृढ है कि यहाँ से जाने की आवश्यकता नही। इस आँधी का हम मुकाबिला कर सकेंगे ?"

जगदेवसिंह ने कई पत्र लिखे थे, परन्तु उनसे वह अपने परिवार वालों की राय बदल नहीं सका। इस कारण वह परिवार वालों को समझाने के लिये स्वयं आ गया। मार्ग में चेतनानन्द से आधे घण्टे की बातचीत ने उसको अपने विचारों पर और भी दृढ़ कर दिया।

उसके आने पर एक-दो दिन तो मेल-मुलाकातों का ज़ोर रहा। जगदेवसिंह की एक बहिन रावलपिंडी में विवाही हुई थी और एक डोवरॉ गाँव में। यह गांव भी गूजरखाँ की तहसील में था। जब जगदेवसिंह आया तो बहनें भी आ गई। इस प्रकार एक भारी पारिवारिक समारोह हो गया। जगदेवसिंह के गूजर खाँ में आने के तीसरे दिन विचार विनिमय होने लगा। जगदेवसिंह ने कलकत्ते के डायरेक्ट ऐक्शन का वह वृत्तान्त सुनाया, जो उसने अपनी आखों से देखा था। इसमें उसने बताया कि कलकत्ता में साठ प्रतिशत हिन्दू थे और जब हिन्दुओं ने हाथ उठाया तो मुसलमान रुके। उसका कहना था, "ज़िला रावलपिंडी के गाँवों में हिन्दू, कलकत्ते के हिन्दुओं की भाँति जवाब नहीं दे सकेंगे। परिणाम यह होगा कि हिन्दुओं का बीज नष्ट हो जावेगा। मैं इससे भी नहीं डरता। हम को तो गुरु महाराज ने दुष्ट लोगों से लड़ने के लिये अमृत पिलाया है, परन्तु औरतों का जो अपमान कलकत्ता में हुआ था, वह स्मरण कर मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

वृत्तान्त को सुन, सब के दिल दहल उठे, परन्तु नौनिहाल सिंह ने कहा, "भाषा ! यह भीरुता की बातें सुनाकर तुम हम सब को डरा रहे हो। तुम समझते हो कि यहाँ कोई राज्य-सत्ता है ही नही ? एक-आध दिन तक तो कोई ऊधम मचा सकता है, परन्तु अधिक काल तक यह अन्धेरगर्दी नहीं चल सकती। सरकार मार्शल लॉ-लागू कर शान्ति स्थापित कर देगी।"

इस बात से साहस पाकर बख्तावरसिंह ने कहा, "हम अपने मज़दूरो की सहायता से एक दो दिन क्या, एक महीने तक गाव का मोर्चा बाँध सकते है।"

"तब तक अवश्य सरकारी सहायता पहुंच जावेगी।" नौनिहाल सिंह का कहना था।

"पर मै कहता हूं," जोरावरसिंह ने कहा, "क्या हम सब मर गए है, जो अकारण ही अपनी सम्पत्ति छोड़कर भाग खड़े हों ? यहाँ इस समय सब सुख-शान्ति है। हमारे चले जाने मे सब हमारी हंसी करेंगे। और फिर हमारा सब दबदबा मिट जाएगा, जिससे पुनः यहाँ आकर बसना कठिन हो जाएगा।"

जगदेवसिंह ने एक बार फिर यत्न किया। उसने कहा, "हमको भाग कर जाने की आवश्यकता नही। हमे अपनी नकदी, भूषण और कीमती सामान यहाँ से भेज देना चाहिए। पश्चात् सब औरतो को भेजना चाहिए और यदि झगडा हो, तो हमको भी चले जाना चाहिए।"

इस पर जोरावरसिंह की स्त्री लखबीरकौर ने स्त्रियों को भेज देने का विरोध कर दिया। उसने कहा, "जायेंगे तो सभी जायेंगे, नही तो कोई नही जायेगा।"

इस प्रकार बातचीत रात के दो बजे तक चलती रही। धन-सम्पदा को छोड़कर जाना किसी को पसन्द नही आया। साथ ही गाँव के शान्त वातावरण मे किसी को समझ नही आया कि वहाँ पर कैसे कुछ हो सकता है।

जगदेवसिंह, कलकता लौट जाने से पूर्व, अपने पिता के पास पुनः आग्रह करने के लिए पहुंचा। उसने कहा, "पिता जी ! मेरी बात मान लीजिए।

कम-से कम अपने पास जो नकदी है, उसको तो पंजाब से बाहर किसी बैंक में भेज दीजिए।"

कर्मसिंह ने ज़माना देखा था। उसने एक हिन्दू और मुसलमान में अन्तर देखा था। उसने गुरु गोविन्दसिंह के कथन का कि तेल से भीगी हुई बाँह पर जितने तिल चिपट सकते हैं, उतनी सौगन्ध लेने पर भी मुसलमान का विश्वास न करो, अनुभव किया हुआ था। इस कारण उसने सब लड़कों से चोरी, परिवार के सब आभूषण और नकदी, जो पचास हज़ार से ऊपर थी, जगदेवसिंह के हाथ इलाहाबाद बैंक की लखनऊ शाखा में जमा कराने के लिए भेज दी। दूसरी बात स्त्रियों की थी। इस विषय में उसने कहा, "मैं अभी कुछ नहीं कर सकता। हाँ, समय से पूर्व उनको यहाँ से निकाल लेजाने का यत्न करुँगा।"

कर्मसिंह को यह पूर्ण विश्वास था कि मुसलमान एक बार पुनः इस्लामी राज्य स्थापित करने का यत्न करेंगे। वह इनके स्वभाव को जानता था।

जगदेवसिंह अपने आने के प्रयोजन में आंशिक सफलता प्राप्त कर कलकत्ता लौट गया। गूजरखाँ और जिला-भर में पूर्णरुप से शान्ति स्थापित थी। काम सदा की भाँति चलता रहा।

(२)

मार्च की पहली तारीख को जोरावरसिंह रावलपिण्डी में एक मुकद्दमे में हारकर आया, तो उसने अपने पिता से कहा, "सेशन जज मियां अब्दुल कादिर है। वह मुसलमान होने से और हमारे रस्मो-रिवाज को समझ न सकने से, फ़ैसला ठीक नहीं कर सका। मैं समझता हूँ कि हाई-कोर्ट में अपील करने से हम जीत जावेंगे।"

कर्मसिंह ने कुछ चिन्तित होकर पूछा, "आखिर क्या निर्णय किया है ?"

"जज साहब ने कह दिया है कि बेवा को अपने खाविन्द की जायदाद

पर हक हासिल है और उसका लड़का माँ के जीवन काल में मालिक नहीं हो सकता।"

"तो हमारी डिक्री पर कुर्की नहीं हो सकती ?"

"हमको हाईकोर्ट में अपील करनी चाहिए।"

"क्या लाभ होगा ?"

"नहीं पिता जी ! रुपया तो पाँच सौ ही है, पर ज़मीन की कुर्की हो जाने से हमारा चक सीधा हो जावेगा।"

"ठीक है। पर पाँच सौ पर तीन सौ से ऊपर अभी व्यय हो चुका है और हाई कोर्ट में जाने से तीन सौ और व्यय हो जावेगा। ज़मीन तो दो सौ रुपये की भी नहीं।"

"पर पिता जी ! मुकद्दमा हार जाने से गाँव में भद्द मच जाएगी। हमारा दबदबा एक बार कम हुआ, तो हम कहीं के भी नहीं रहेंगे।"

"तो कर दो। वहाँ भी वकील का प्रबन्ध करना होगा ?"

"हाँ ! दो सौ वकील के लिए, पचास रुपये मेरे आने-जाने के लिए, पचास रावलपिंडी के वकील के अभी पिछली फीस के देने हैं। सो चार सौ रुपए चाहिएँ। मैं कल रावलपिण्डी जा रहा हूँ और वहाँ से नकल वग़ैरह लेकर लाहौर चला जाऊँगा।"

"उस दिन तुमको पाँच सौ दिया था। क्या सब व्यय हो गया ?"

"डेढ़ मास से अधिक हो गया है। इतनी देर तक यह रुपया कैसे रह सकता है ?"

"तब तो लाहौर जाना स्थगित करना पड़ेगा। इस समय रुपया नहीं है।"

"क्या हुआ है रुपये का ?"

"वह मैंने लखनऊ में जमा करा दिया है।"

"जमा करा दिया है ? क्यों ?"

"यहाँ सुरक्षित नहीं था।"

जोरावरसिंह चुप हो रहा। पर जब इस बात का पता नौनिहालसिंह

को मिला, तो वह क्रोध से लाल-पीला होने लगा। उसी रात उस नेअपने पिता से कहा, "आपके दिमाग़ पर जगदेव के कहने का असर हो गया है। वह डरपोक हम सब को कायर बनाकर चला गया है।"

"इसमें कायरता की कौन सी बात है ? नकदी और भूषण सब निकाल कर सुरक्षित स्थान पर रख दिया है।"

"मैं तो ऐसी कायरता की बात करने वालों से सम्पर्क नहीं रखना चाहता। अब मान लीजिए, मुझको पचास रुपये की आवश्यकता है, तो गाँव में एक भी आदमी नही, जो दे सके।"

"देखो नौनिहाल !" पिता ने कुछ डाँटते हुए कहा, "यह कायरता नहीं है। यह होशियारी है। जोरावर को कल रुपये मिल जावेंगे।"

अगले दिन कर्मसिंह प्रातःकाल ही घर से निकल प्रीतम बनिये के यहाँ पहुँचा। उसको एक ओर ले जाकर, उससे पाँच सौ रुपये माँग लाया। नौनिहाल सिंह को इससे भी सन्तोष नही हुआ। उसने जोरावरसिंह को बुला कर कहा, "पिता जी ने मूर्ख जगदेवसिंह का कहा मानकर हमारी नाक कटवा दी है।"

जोरावरसिंह ने पाँच सौ के नोट सामने रखे देख, पूछा, "कहाँ से लिए है पिता जी ?"

"प्रीतमदास से।"

"उस सिर-घसिए से, जो हमसे उधार लिया करता था ?"

"देखो ज़ोरावर !" पिता ने कहा, "मैंने भीख नही ली। मैं जगदेव को चिट्ठी लिख देता हूँ। वह एक हज़ार रुपया भेज देगा।"

"यह तो ठीक है, पर हमारी हेठी तो हो गई। वह बनिये का बेटा अब गाँव-भर में अपनी शेखी बघारेगा। कहेगा कर्मसिंह ने उससे रुपये उधार लिए है।"

"तुम खूब हो। रुपये नही थे तो आफत ले आए थे और अब ला दिए हैं, तो हेठी अनुभव करने लगे हो ?"

"अपना रुपया तो जगदेव के पास रख छोड़ा है और उस बनिये के

आगे हाथ पसारा है। मुझे यह पसन्द नहीं है।"

कर्मसिंह वृद्ध हो गया था, पर वह अब भी अपने स्वभाव में दृढ़ता रखता था। उसने कहा, "आज तुमको अपने दबदबे की इतनी चिन्ता क्यों हो रही है? यह दबदबा क्या रुपये के बल पर बना है? इसका कारण तुम जानते नहीं कि तुम्हारे बाप कर्मसिंह का अकेले पचास डाकुओं से लड़ कर उनको भगाना था और फिर गाँव में मजारों को सुखीर खना, उनके घर की चिन्ता अपने घर की भाँति करना है? पर मैं कहता हूँ कि जब तक इस्लाम के साथ टक्कर नहीं है, तब तक ही ये मुसलमान तुम्हारे मित्र हैं। इस्लाम के लिए ये अपने सगे बाप का खून कर देंगे। कल यह समाचार यहाँ आया है कि हिन्दू, खिजर हयात को मुस्लिम लीग में शामिल होने से रोक रहे है। इससे कहा जा रहा है कि वे भारी अपराध कर रहे हैं।"

नौनिहालसिंह को ऐसा अनुभव हुआ कि जगदेवसिंह का पैदा किया हुआ भूत, उनके पिता के सिर पर चढ़कर बोल रहा है। इस कारण उसने कहा, "ये सब व्यर्थ की बातें हैं। पिताजी! कल कांग्रेस कमेटी की बैठक थी और उसमे हम, मुसलमान, ईसाई, छूत, अछूत सभी उपस्थित थे। हम सब ने कसम खाई है कि गाँव की शान्ति-भंग होने नही देंगे।"

कर्मसिंह की हँसी निकल गई। उसने कहा, "कसम क्यों खाई है तुमने? इसकी क्या आवश्यकता थी?"

नौनिहालसिंह इस प्रश्न का मतलब नही समझ सका। इस कारण पिता का मुख देखता रहा। कर्मसिंह ने अपने वकील पुत्र को अपनी ओर विस्मय में देखते हुए कहा, "देखो वकील साहब! इस कसम खाने में कारण यही है कि तुम्हारे मन में भय समा गया है कि झगड़ा होने की सम्भावना है। अन्यथा ऐसी कसमे तुम पिछले वर्ष अथवा आज से दो वर्ष पूर्व क्यों नहीं उठाते थे? देखो जी! इस समय भय तो तुम्हारे मन में भी है, पर तुम उस भय के निवारण का उपाय यह कसमें उठाना मान रहे हो और मैं उस भय का उपाय धन और स्त्रियों को यहाँ से भेज देना समझता हूँ।"

नौनिहालसिंह निरुत्तर हो गया; परन्तु वह माना नहीं। जिस दिन

यह समाचार आया कि खिज़र हयात खाँ ने मन्त्री-पद से त्याग-पत्र दे दिया है और लाहौर में गोली चल गई है, कर्मसिंह ने घर के सब लोगों को बुलाकर फिर कहा कि औरतों को लखनऊ भेज देना चाहिए ; परन्तु नौनिहालसिंह और बख्तावरसिंह के हठ के कारण कुछ नहीं हो सका।

(३)

ज्यूँ-ज्यूँ दिन व्यतीत हो रहे थे, वातावरण क्षुब्ध होता जाता था। गाँव के मुसलमानों के मुख गम्भीर दिखाई देने लगे थे। बख्तावरसिंह नित्य प्रातःकाल खेतों को चला जाता था और दोपहर के समय भोजन तथा विश्राम के लिए लौट आता था। सवा छः फुट लम्बा कद और चौड़ी छाती, साथ ही हाथ में सिर से भी ऊँची लाठी—देखने वालों के मन में आतंक उत्पन्न होता था। वह भी अनुभव करने लगा था कि गाँव के वातावरण में खिचाव और विरोध की भावना प्रतीत होने लगी है। सात मार्च की दोपहर के समय वह खेत से लौटा तो उसे गाँव में पाँच-पाँच दस-दस आदमियों की मण्डलियाँ खड़ी दिखाई दीं। वह एक मण्डली के समीप गया तो एक परिचित पीरबख्श को पूछने लगा, "पीरू भैया ! क्या बात है ?"

"कुछ नहीं छोटे सरदार !"

"भाई, कुछ तो है। वहाँ नूरे के मकान पर भी कुछ लोग खड़े बातें कर रहे थे। जब मैं समीप से गुज़र रहा था तो चुप हो गए थे और मेरी ओर देखने लगे थे। फिर आगे आया तो सुलताना कई लोगों को इकट्ठा कर कुछ बता रहा था। वे भी मुझको देख चुप कर गए और अब तुम भी चुप कर गए हो ?"

पीरू, अपने साथियों को छोड़ बख्तावर के साथ-साथ चलते हुए कहने लगा, "बख्तावर भापा ! छोड़ो इन लागों की बातों को। ये गँवार आदमी फ़ज़ूल की बातें कर अपनी ज़िन्दगी खराब कर रहे हैं।"

"पर क्या कर रहे हैं ?" बख्तावर घर की ओर चल पड़ा था और

पीरू उसके साथ-साथ चलता हुआ बताने लगा, "इस साल फ़सल अच्छी होने की उम्मीद मालूम होती है।"

बख्तावर ने घूरकर पीरू की ओर देखा और कहा, "मुझे बना रहे हो पीरू ? क्या वह ज़माना भूल गए हो, जब तुम्हारा बच्चा मर रहा था और रावलपिण्डी जाने के लिए तुम्हारे पास एक पैसा नहीं था ? अगर उस वक्त पिताजी तुमको पचास-रुपये न देते तो आज तुम बेऔलाद होते।"

पीरू ने बख्तावर के समीप होकर कहा, "भैया ! मैं भूला नहीं हूँ और उसी अहसान का बदला चुकाने आया हूँ।"

अब तक पीरू अपने साथियों के सुनने की सीमा के पार हो गया था। इस पर भी उसने समीप हो धीरे से कहा, "रावलपिण्डी से एक मौलवी आया है और कह रहा है कि वहाँ की जामा मस्जिद हिन्दुओं ने गिरा दी है और उसकी ईंट-से-ईंट बजा दी है।"

बख्तावर अचम्भे में खड़ा हो गया और पीरू का मुख देखने लगा। पीरू ने अपना कहना जारी रखा, "पर भापा ! मैं जानता हूँ कि ऐसा कुछ नहीं हुआ। मेरी बीवी आज इसी गाड़ी से रावलपिण्डी से आई है। वह कहती है कि हिन्दु-मुसलमानों में झगड़ा तो अवश्य हुआ है, पर जामा-मस्जिद नहीं गिराई गई। उसके समीप तो झगड़ा हुआ ही नहीं।"

"तो तुमने लोगों को बताया नहीं ?"

"बताया तो था ; परन्तु सब मुझको पीटने को दौड़े। जब तक मैंने सब के बीच में यह नहीं कहा कि मेरी बीवी जामा मस्जिद की ईंटों और पत्थरों का ढेर देखकर आई है, तब तक मेरी जान नहीं छूटी।"

"तब क्या होगा ?"

"भैया ! मेरी मानो। कुछ दिन के लिए गाँव से टल जावो। सब की नज़र आपके परिवार पर है।"

बख्तावर सिंह का मुख क्रोध से लाल हो गया और उसने कहा, "मैं समझता हूँ कि मैं अकेला ही तुम्हारे सौ आदमियों को भेड़-बकरियों की भाँति हाँक दूँगा। हम इस समय परिवार में पन्द्रह युवा-पुरुष हैं। गांव

में है किसी का दम, जो हमारे मुकाबिले में खड़ा हो सके ?"

"भापा बख्तावर ! तुम ठीक कहते हो। पर पचास गाँवों के लोग इकट्ठे होकर आएंगे, तो फिर क्या होगा ?"

इस समय बख्तावर का घर आ गया था और पीरू ने सलाम कर छुट्टी ली। बख्तावार इस समाचार से दुखित अवश्य था, परन्तु लज्जावश अपने पिता को यह समाचार सुनाने नहीं गया। उसने चुपचाप रोटी खाई, आराम किया और लाठी ले पुनः खेतों को चला गया।

खेतों में बहुत-से काम करने वाले आए नहीं थे। बख्तावर ने एक से पूछा, "मुहम्मदु ! कालू नही आया क्या ?"

"वह बाज़ सुनने गया है।" मुहम्मदु ने खेतों में मुख नीचे किये हुए घास खोदते हुए कहा।

"तुम नही गए ?"

मुहम्मदु ने उत्तर नहीं दिया। वह खुरपा चलाता ही गया। ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। मालिक के आते ही मजारे उठकर सलाम किया करते थे। बख्तावर कुएं पर पहुंचा तो बैल रहट से जुते हुए थे, पर चल नहीं रहे थे। उनको कोई हाँकने वाला नहीं था। बख्तावर सिंह ने इधर-उधर देखा तो कोई दिखाई नहीं दिया। वहाँ से वह खेतों में घुम गया। कुछ औरतें खेतों में निराई कर रही थी। बख्तावर ने उनसे पूछा, "भन्तो ! आदमी कहाँ गए है आज ?"

"हम नहीं जानते भैया !"

बख्तावर का मुख पीला पड़ गया। वह समझने लगा था कि जिनके भरोसे वह जगदेव सिंह को कायर कह रहा था, वे पहले ही झटके में साथ छोड़ते प्रतीत हो रहे है। उसने विचार किया कि घर जाकर पिताजी से राय करनी चाहिए। इससे वह खेतों के बाहर की ओर घूम पड़ा। अभी खेत में ही था कि उसी औरत की, जिसको उसने भन्तो कहकर पुकारा था, आवाज़ उसको सुनाई दी, "बख्तावर भैया ! ठहरो।"

बख्तावर घूमकर ठहर गया। वह औरत समीप आकर बोली, "भैया!

तुम लोग यहाँ से चले जाओ। आज ही, रात होने से पूर्व।"

"क्यों ?"

"गाँव में आप कितने है ? सारा गाँव मौलवी का वाज़ सुनने गया है और वह सबको आपके विरुद्ध भड़का रहा है।"

"क्या कहता है ?"

"कहता है कि आप काफ़िर है। आपने मस्जिद नापाक कर दी है। आपको जीवित रहने का हक नही।"

बख्तावर गम्भीर विचार में पड़ गया। भन्तो ने पुनः आग्रह कर कहा, "मैं हिन्दू की बेटी हूँ। मेरा आदमी मुझको जबरदस्ती पकड़ लाया था और यहां लाकर नकाह पढा लिया था। उसी नाते मैं कहती हूँ। अपना बन्दोबस्त कर लो। मैंने आज दोपहर के वक्त अपने आदमी की आँखों में वही लाली देखी थी, जो मेरे लाने के वक्त थी।"

बख्तावर ने कुछ भी उत्तर नही दिया। वह सीधा घर पर पहुँचा। वहाँ घर के सब स्त्री-पुरुष एकत्रित थे और आपस में गरमा-गरम बात-चीत हो रही थी। जोरावर हाथ में कृपाण नंगी कर कह रहा था, "इस गाँव के कमीनों को सबक सिखाना पड़ेगा। पन्द्रह हम घर के है, बीस और गुरु के प्यारे यहाँ एकत्रित हो जावेंगे। सब औरतों को हम यहां एकत्रित कर लेंगे और फिर भेड़-बकरियों की भांति इनकी ईद न कर दी तो मेरा नाम जोरावर नही।"

नौनिहालसिंह ने हाथ जोड़कर भाई को कहा, "भापा! इतना जोश दिखलाने से तो मुसलमान और भड़क उठेगे। मैं कहता हूँ कि वाहेगुरु के लिए यह कृपाण मियान में रखो। मैं मौलवी से मिलकर आया हूँ और उससे यह फैसला करके आया हूँ कि कल एक हिन्दू और एक मुसल-मान रावलपिण्डी जाकर पता लायें कि वहां की जामा मस्जिद नापाक की है या नही ? तब तक यहां झगड़ा नही होगा।"

कर्मसिंह का कहना था, "सांयकाल आठ बजे की गाड़ी से सब औरतों को यहां से भेज देना चाहिए।"

जोरावर की स्त्री ने कहा, "पिता जी ! लड़कियों और बच्चों को भेज दीजिए। हम तो आप लोगों को छोड़कर नहीं जावेंगी।" इस पर जोरावर ने फिर कहा, "किसी को भेजने की आवश्यकता नहीं। यदि घर का एक भी प्राणी भेजा गया तो यह विख्यात हो जायगा कि हम डर गए हैं और फिर जो भी यहां रहेगा, उसका बुरा हाल होगा।"

इस समय नौकर आया और कर्मसिंह के कान में कुछ कहकर चला गया। कर्मसिंह ने नौकर की बात सब को बतला दी। उसने बताया, "ननकू कह गया है कि गांव के मुसलमानों के चौधरी मुझसे मिलने आए हैं।"

नौनिहाल सिंह ने तुरन्त कहा, "आपको उनकी बात सुननी चाहिए ?"

"सुनूंगा तो। पर कहूँगा क्या ?"

"मैं आपके साथ चलता हूँ।"

कर्मसिंह और नौनिहाल बाहर आगए। गांव के पन्द्रह-बीस वृद्ध और प्रौढ़ावस्था के मुसलमान वहां खड़े थे। उनमें से एक करीमू, एक आँख से काना, उनका नेता बनकर आया था। कर्मसिंह ने उनकी आव-भक्त की और उनको घर की बैठक में ले जाकर बिठाया। जब सब बैठ गए तो कर्मसिंह ने पूछा, "आपकी मैं क्या सेवा कर सकता हूँ ?"

करीमू उठकर कहने लगा, "आज एक मौलवी रावलपिण्डी से आया है। उसने ऐसी अंट-संट बातें कहीं हैं कि कुछ लोग भड़क उठे थे और सैंकड़ों सालों के, हमारे साथ आपके ताल्लुक बिगड़ चले थे। मगर हमने उसको बहुत डाँटा है और उसको गांव से विदा कर दिया है। कुछ लोग ज़रा भड़क उठे थे। उनकी तसल्ली के लिए मैं प्रीतम लाला के लड़के के साथ, कल असली हालात जानने के लिये जा रहा हूँ। हम आपके पास इस लिए आए हैं कि आप हमारे गाँव के सिरमौर हैं। आपको न तो डरना चाहिये और न ही यहाँ से भागना चाहिये। आपके खानदान का नमक हमने खाया है। इतमीनान रखना चाहिए कि जब तक हम ज़िन्दा हैं, हम आपका बाल भी बाँका न होने देंगे।"

कर्मसिंह मन में निश्चय नहीं कर सका कि उनकी बातों पर कितना

विश्वास करे। करीमू गांव के बदमाशों में माना जाता था। वह कई औरतों को खराब कर चुका था। आज वह शान्ति का अवतार बनकर आया था। इस लिए कर्मसिंह को उसके एक भी शब्द पर विश्वास नहीं आया। परन्तु नौनिहालसिंह करीमू की बातों से बहुत सन्तोष अनुभव कर रहा था। इस कारण उसने करीमू के कहने का उत्तर दिया, "देखो भाई करीमू! हम एक ही गांव के रहने वाले हैं। राज्य बदलेगा, तब भी हम प्रजा ही रहेंगे। इस कारण हमको राज्य बदलने पर लड़ना नहीं चाहिए।"

"हाँ वकील साहब! मैं भी तो यही कह रहा हूँ।"

कर्मसिंह विस्मय में सब का मुख देखता रहा। इस प्रकार आश्वासन देकर करीमू अपने साथियों के साथ विदा होगया। मुसलमानों का यह शिष्ट-मण्डल वहां से सीधा गांव की मस्जिद में गया। वहां गांव के प्रायः सब प्रमुख आदमी उपस्थित थे। रावलपिण्डी का मौलवी अभी भी वहां बैठा अन्य लोगों को बतला रहा था। वह कह रहा था, "खुदा ने काफिरों की औरतों और माल को हलाल करार दिया है। इस लिए जो-जो लोग परसों होने वाले जिहाद में हिस्सा लेंगे, उनके लिए लूटा हुआ माल और औरतें जायज़ हैं।"

इस समय करीमू अपना काम पूरा कर वहाँ आ पहुँचा। जब वह पहुँचा तो उसने अपने कार्य की व्याख्या कर दी। उसने कहा, "मैं कर्मसिंह और उसके लड़के नौनिहाल से मिलकर आया हूँ और उनको भरोसा दे आया हूँ कि उनको गांव छोड़ने की जरूरत नहीं।"

"वे क्या कहते हैं?"

"नौनिहाल तो मान गया है। कर्मसिंह शशोपंज में पड़ा है।"

"वह बूढ़ा बहुत काईयाँ है।"

"मान लो, वे यहां से भाग भी गए, तो क्या होगा? उनका मकान और उनकी सम्पत्ति तो तुम लोगों को मिल जाएगी।" रावलपिण्डी के मौलवी ने कहा।

इस पर करीमू बोला, "नहीं जी! इससे काम नहीं चलेगा। इस परिवार में दस लड़कियाँ हैं, जिनमें पांच जवान हैं। वह भी हमारे हाथ आनी चाहिएँ। साथ ही इनके पास लाखों रुपये तिजोरी में जमा हैं। वे सब गांव वालों की जायदाद है।"

मौलवी चुप कर रहा। इस पर एक अन्य ने कहा, "ठीक है। परसों तक इनको रोक रखो। पीछे वे सब गांव के आदमियों की जायदाद बनेंगी।"

(४)

अगले दिन नौनिहाल सिंह कुछ मुसलमानों को लेकर एक शान्ति-सभा बनाने में लगा रहा। रावलपिण्डी का मौलवी गांव से चला गया था और करीमू प्रीतम बनिए के बड़े पुत्र सोहन को लेकर रावलपिण्डी जामा मस्जिद देखने जा चुका था। उनको उसी सांयकाल लौट आना चाहिए था, परन्तु वे नहीं लौटे। प्रीतम चिन्ता मे रात-भर प्रतीक्षा करता रहा। एक गाड़ी रात के एक बजे आती थी। उसका विचार था कि शायद वह उससे आजावे। गाड़ी निकल गई और घण्टा-भर प्रतीक्षा होती रही, पर सोहन नहीं आया। इससे प्रीतम का हृदय धक-धक करने लगा। उसने हरीकेन लालटेन उठाई और करीमू के घर जा पहुँचा। दरवाज़ा खटखटाया तो गांव के एक मुसलमान ने दरवाज़ा खोला और प्रीतम को देखकर बोला, "करीमू नही आया। परन्तु रावलपिण्डी से खबर आई है कि वहाँ फिर हिन्दू-मुसलमान फसाद हो गया है और बहुत ही खूंरेज़ी हुई है। खुदा फ़ज़ल करे।"

इस समाचार को सुन प्रीतम का हृदय काँप उठा। उसे समझ आया कि सोहन तो खतम हो गया है औरकरीमू कहीं भाग गया है। ऐसी भयानक घटना की सम्भावना से उसके शरीर से पसीना छूटने लगा। वह भागा हुआ नौनिहाल सिंह से सहायता मांगने के लिए, प्रातःकाल के तीन बजे उसके घर जा पहुँचा। दरवाज़ा खटखटाने पर नौनिहाल

सिंह उठकर बाहिर आया और प्रीतम की बात सुन कहने लगा, "इस समय मैं क्या कर सकता हूँ ?"

"सरदार साहब ! बड़ा बेटा है। घर में बहू है। यदि कुछ हो गया तो मैं कहीं का नहीं रहूँगा।"

"इस समय मैं कुछ नहीं कर सकता। प्रातः नौ बजे की गाड़ी से उनका पता करने किसी को भेजूंगा।"

प्रीतम निराश लौट गया, परन्तु प्रातः किसी को भेजने की आवश्यकता नहीं रही। अभी उषाकाल का धीमा प्रकाश ही था कि गाँव चारों ओर से घिर गया। गाव के हिन्दू और सिक्ख रहने वालों की नींद ढोल के बजने से खुली।

कर्मसिंह तो सवेरे के चार बजे ही जाग पड़ता था। उस समय स्नानकर वह गुरु-ग्रन्थ साहब का पाठ किया करता था। आज भी वह अपने समय पर उठा और स्नानादि से निवृत हो पाठ करने बैठ गया। अभी पाठ कर ही रहा था कि उसके कानों में ढोल बजने का शब्द पड़ा। उसके मन में जो आशंका थी, पूरी होती प्रतीत होने लगी। वह पाठ से उठ पड़ा और मकान की छत पर चढ़कर चारों ओर देखने लगा। उस अर्ध प्रकाश में भी उसको दिखाई दे गया कि चालीस-पचास हज़ार आदमी गांव को चारों ओर से घेरे खड़े है। ढोल की आवाज सुनकर गाव के मुसलमान अपने-अपने घरों से निकल आए थे और अल्ला-हू अकबर के नारे लगाने लगे थे। कर्मसिंह समझ गया कि अन्तकाल आ गया है। उसको चिन्ता इस बात की थी कि बहू-बेटियों के मान की रक्षा कैसे होगी ?"

वह मकान की छत से नीचे उतर आया और उसने घर वालों को जगाया। सबने अपनी-अपनी कृपाण सँभाल ली। नौनिहाल सिंह पहले तो समझ ही नहीं सका कि यह सब हो कैसे गया है। जब उसके पिता ने कहा, 'ऊपर छत पर जा कर देखो,' तो वह ऊपर छत पर चढ़कर अपने मन को सन्तोष देने का यत्न करने लगा कि ये लूट-मार के लिये एकत्रित नहीं हुए होंगे; ये किसी अन्य प्रयोजन से भी आ सकते हैं। इस समय तक

प्रकाश कुछ अधिक हो गया था और मुसलमानों का गाँव का घेरा पूर्ण रूप से दिखाई देने लगा था। नौनिहाल सिंह के पिता का घर गाँव में सबसे ऊँचा था, इस कारण गाँव के चारों ओर मुसलमानों की भीड़ एकत्रित हुई दिखाई देती थी। नौनिहाल सिंह लज्जित हो नीचे उत्तर आया। उसने देखा कि सब स्त्री पुरुष अपनी-अपनी कृपाण लिए खड़े हैं। बच्चे खाली हाथ थे। कर्मसिंह ने सबको कहा, "बच्चों को बीच में कर, घर से निकल गुरुद्वारे में एकत्रित हो जाना चाहिए। चलो ! देरी करने से और भी कठिनाई होगी।"

घर के बाहर और बाज़ार में अल्ला-हू अकबर के नारे लगाए जा रहे थे। कर्मसिंह अपने परिवार वालो में सबसे आगे था। उसने घर का फाटक खोला। बाहर करीमू अपने दस-पन्द्रह साथियों को लिए खड़ा था। इनके हाथों में लाठियाँ, भाले, बरछे और तलवारें थीं। करीमू फाटक खुलते ही लाठी लिये हुए भीतर घुसने को लपका। उसका विचार था कि कोई नौकर खोल रहा है ; परन्तु कर्मसिंह, अस्सी वर्ष के वृद्ध को, जिसकी दाढ़ी-मूँछ, यहाँ तक कि बरौनियाँ भी श्वेत हो गई थीं, सामने खड़ा देख झिझका। कर्मसिंह ने बिजली की भाँति अपनी कृपाण उठाई और उस पर वार किया। करीमू पीछे हटकर बचने का यत्न करने लगा। वह इतना आगे बढ़ चुका था कि लाठी घुमाने को स्थान नहीं था। कर्मसिंह की कृपाण इतनी तेज़ी से आई कि करीमू बिना चोट खाए बच नहीं सका। उसकी पीठ में कृपाण लगी और कन्धे पर साधारण सा घाव आया। इस पर भी वह भाग खड़ा हुआ। उसके साथी उसको भागते देख और सामने पूर्ण परिवार को कृपाणें उठाये हुए देख, भाग खड़े हुए।

कर्मसिंह का परिवार घर से बाहर बाज़ार में आ गया। बीच में स्त्रियाँ थीं। उनके चारों ओर पुरुष कृपाणें नंगी किये, घेरा डाले गुरुद्वारे की ओर चल पड़े। मार्ग में कुछ हिन्दू और उनमें सम्मिलित हो गए। इस प्रकार पचास-साठ की यह मण्डली जब बाज़ारों में चली तो किसी की हिम्मत नहीं पड़ी कि उनकी ओर उँगली उठा सके। इस पर भी उनकी यह यात्रा निर्विघ्न

नहीं, चल सकी। गाँव के चौक में चार-पाँच सौ मुसलमानों का मजमा, जो तलवारों और बन्दूकों से सुसज्जित था, खड़ा था। ये लोग बाहर के गाँवों के थे और गाँव के दूसरी ओर से घुस आए थे। इन्होंने हिन्दुओं की एक मण्डली को आते देख, नारा लगाया, 'अल्ला-हू अकबर।'

कर्मसिंह ने भी सिंह-नाद किया, 'जो बोले, सो निहाल।' सब बोल उठे, 'सत् श्री अकाल।'

मुकाबिला अनिवार्य हो गया। मुसलमान पूरा मार्ग रोककर खड़े थे। कर्मसिंह ने अपनी कृपाण से संकेत करते हुए कहा, "हट जाओ।"

उत्तर मिला, 'अल्ला-हू अकबर।'

"तो लो।" कर्मसिंह ने समीप के एक मुसलमान पर वार किया। उसके हाथ में भाला था, परन्तु कर्मसिंह इतनी फुर्ती से लपका था कि उसके भाला सीधा करने से पहले ही, उसका सिर धड़ से अलग हो गया। यह संकेत था घमासान लड़ाई का। कर्मसिंह तलवार बेतहाशा चला रहा था। उसके चारों ओर बहुत-सा स्थान खाली हो गया था और वह आगे बढ़ रहा था। उसके पीछे उसके लड़के-पोते और उनके बीच लड़कियाँ-पुत्रवधुएँ आगे और आगे बढ़ रही थीं। चारों ओर से मुसलमान वार कर रहे थे—और ये उनका उत्तर दे रहे थे। सबसे पहले कर्मसिंह पर, उसके बुढ़ापे के कारण मुसलमानों का सफल आघात हुआ। एक का बर्छा उसकी छाती में लगा और वह भूमि पर लोट-पोट हो गया। इस पर भी वह मण्डली आगे और आगे, मारकाट करती और अपना मार्ग साफ करती हुई चलती गई। इस प्रयास में दूसरा बलिदान नौनिहाल सिंह का था।। उसके पेट में भाला लगा था और वहाँ से रक्त का फव्वारा फूट निकला था। वह वहीं बैठ गया। ज्यूं-ज्यूं यह मण्डली आगे बढ़ती गई, इसके चारों ओर शवों के ढेर लगते जाते थे। सबसे अधिक भार, मार्ग साफ करने का, बख्तावर सिंह पर पड़ा था। अपने पिता के गिरने पर, वह भागकर मण्डली के आगे-आगे चलने लगा था।

प्रीतम बनिये के मकान के सामने एक और भारी मजमा इकट्ठा हो

रहा था। प्रीतम बनिये को अपनी दुकान के खम्भे के साथ बाँध दिया गया था। उसकी स्त्री और दो कुंवारी लड़कियों को बाज़ार में घसीट कर लाया जा चुका था और मकान तथा दुकान में से रुपया, जवर, कपड़े तथा दूसरा सामान लूटा जा रहा था।

कर्मसिंह के परिवार की मण्डली जब वहाँ पहुंची तो लूटमार करने वाले भागने शुरु हो गए। करीमू के कन्धे से रक्त बह रहा था। इस पर भी वह एक ओर खड़ा, लोगों को हिन्दुओं को मारने और लूटने के लिये जोश दिला रहा था। बख्तावर सिंह को अपनी चार फुट लम्बी कृपाण से, अपने सामने आने वालों का काम तमाम करते देख, वह भी घबराया। उसने भागते लोगों को कहा, "भागो नहीं; प्रीतम के घर मे घुस जाओ।" लोगों को, जो लूट का माल उठाये हुए थे, यह सुझाव ठीक प्रतीत हुआ। करीमू ने प्रीतम की दोनों लडकियों को धकेलकर घर में ले जाने का यत्न किया। उसकी माँ ने उन दोनों को पकड़कर जाने से रोका। इस पर करीमू के एक साथी ने प्रीतम की औरत के पेट में अपना भाला घोंप दिया। उसके पेट से रक्त की धारा वह निकली। इस पर भी उसने दोनों लड़कियों को पकड़ रखा था। पेट फट जाने के कारण उसकी पकड़ ढीली पड़ रही थी। बड़ी लडकी को करीमू घसीटकर मकान के अन्दर ले गया। छोटी लड़की को एक और आदमी घसीटना चाहता था, परन्तु घायल माँ लडकी को पकड़े हुए भूमि पर पड़ी थी। उस आदमी ने पाँव की ठोकर से माँ की पकड़ छुडानी चाही, परन्तु इस समय बख्तावर की कृपाण ने उसका काम तमाम कर दिया। उस लड़की को भी अन्य लड़कियों के साथ घेरे में ले लिया गया।

इस समय तक अन्य गाँव से आय हुए लोग भारी सख्या में गाँव के भीतर आ गए थे और गांव में चारों ओर लूट-मार मच गई थी। यदि मुसलमानों का ध्यान लूट-मार और औरतों से बलात्कार करने में न लगा होता, तो कर्मसिंह के परिवार के लोगों में से कोई भी बचकर गुरुद्वारे तक न पहुँच सकता।

बख्तावर सिंह और जोरावर सिंह बुरी तरह घायल हो गए थे; इस पर भी वे जीवित गुरुद्वारे तक पहुँच गए। औरतों और लड़कियों में सब-की-सब सही-सलामत पहुँच गई थीं। जोरावरसिंह के दो लड़के मार्ग में घायल हो गिर गए थे। कर्मसिंह और नौनिहाल सिंह तो मार्ग में ही समाप्त हो चुके थे। सुखवीर सिंह और उसका लड़का भी, मार्ग में लड़ते-लड़ते मण्डली से पृथक् हो गए थे और कोई नहीं जनता था कि उनका क्या हुआ है।

(५)

गूजर खां में हिन्दू और सिक्खों के घर मुसलमानों से कम थे। इस पर भी वे वहाँ के मुसलमानों पर पूरा दबदबा रखते थे। मुसलमान प्रायः मज़ारे थे और हिन्दू तथा सिक्ख ज़मीन्दार और दुकानदार। इनका प्रत्येक परिवार धन-धान्य से सम्पन्न और यूं भी शक्तिशाली था। यदि केवल गाँव के मुसलमानों से ही झगड़ा होता, तो हिन्दुओं की विशेष हानि न होती, परन्तु गूजर खाँ के आसपास के पचास गाँवों के लोग एकत्रित होकर आए थे।

रावलपिण्डी से आए मौलवी ने तो यह समझा था कि गाँव की आबादी के साठ प्रतिशत् मुसलमान ही वहाँ के हिन्दुओं के लिए पर्याप्त होंगे, परन्तु करीमू और उसके साथियों ने जब वहाँ की वास्तविक परिस्थिति बताई तो उसने झगड़ा दो दिन के लिए रोक दिया और वहाँ के अड़ोस-पड़ोस के गाँवों में सन्देश भेज दिया। उनमें रहने वाले मुसलमानों को लूटमार का लालच देकर एकत्रित कर लिया। एक ओर उनके साम्प्रदायिक भावों को यह कहकर उभारा गया कि रावलपिण्डी की जामा मस्जिद को नापाक कर दिया गिया है और दूसरी ओर धन-दौलत और औरतों की लूट के लोभ ने भी भारी काम किया। परिणाम यह हुआ था कि गूजर खाँ के चारों ओर पचास हज़ार के लगभग मुसलमान एकत्रित हो गए थे।

करीमू और उसके साथी गूजर खाँ में माने हुए बदमाश थे। जब पंजाब में झगड़े का अवसर आया तो मुस्लिम गाईस को इनकी सहायता

भारी मूल्यवान प्रतीत हुई। मुस्लिम गार्ड्स के अधिकारियों का विचार था कि जिस दिन रावलपिण्डी का मौलवी आए, उसी दिन झगड़ा आरम्भ हो जाय, परन्तु करीमू का कहना था कि वहाँ के प्रायः हिन्दू बचकर निकल जायेंगे। इस पर यह सन्देह किया गया कि लड़ाई न शुरु करने पर तो सब-के-सब भाग जायेंगे और लूट में कुछ अधिक नहीं मिलेगा। इस पर एक षड्यन्त्र रचा गया। कांग्रेस में सम्मिलित कुछ मुसलमानों को बुलाकर कहा गया कि गांव में शान्ति रखने के लिए शान्ति-सभाएँ बनाई जायँ। वे मुसलमान नौनिहाल सिंह के पास गए और शान्ति-सभाएँ होने लगां। मुसलमान, सिक्ख और हिन्दू प्रतिनिधि एकत्रित किये गए और यह निर्णय किया गया कि एक हिन्दू और एक मुसलमान रावलपिण्डी जाकर निश्चय करें कि जामा मस्जिद नापाक हुई है अथवा नहीं और वहाँ के हालात गूजर खाँ के लोगों को बतावें।

इस योजना के अनुसार प्रीतम बनिए का लड़का सोहन और करीमू अगले दिन प्रातःकाल रावलपिण्डी जाने के लिये तैयार हो गए। अगले दिन करीमू प्रीतम के घर से सोहन को साथ ले गया। वे रेल्वे स्टेशन तक भी नहीं पहुँच पाए थे कि मार्ग में, पूर्व निश्चयानुसार उन पर कुछ मुसलमानों ने हमला किया और सोहन मार डाला गया . करीमू लौटकर गाँव में आ गया और अपने घर में छिपकर बैठ गया।

जब गाँव के बाहर ढोल बजे तो सब मुसलमान समझ गए कि लूट का समय आ गया है। इस समय करीमू भी अपने साथियों के साथ घर से बाहर निकल आया और उनको ले कर कर्मसिंह के घर के बाहर जा पहुँचा। परन्तु वहाँ पन्द्रह चमचमाती तलवारें देख और वहाँ से एक छोटा-सा घाव खा, वह अपने साथियों को लेकर चौक की ओर भाग गया। वहाँ प्रीतम बनिये का मकान लूटा जा रहा था। एक आदमी दुकान की सन्दूकची में से नोटों के बंडल निकाल रहा था। एक दूसरा एक बड़ी सी तिजोरी हथौड़े से तोड़ रहा था। करीमू के साथियों के मुख में पानी भर आया। उनमें से एक ने कहा, "उस्ताद ! हाथ रंग लें ?"

करीमू के मन में बख्तावर सिंह की छोटी लड़की, जिसको वह कई बार गुरुद्वारे जाते देख चुका था, बार-बार स्मरण आ रही थी। इससे उसने कहा, "कर्मसिंह भारी बेईमान हैं। उससे पहले निपटना चाहिए।"

"यहाँ बात आसान है। पहले इस काम को कर डालें तो ठीक रहेगा।" एक दूसरे साथी ने उत्तर दिया।

करीमू कुछ कह नहीं सका। इससे उसके साथी प्रीतम के मकान में घुस गए। प्रीतम को तो पहिले ही पकड़ कर दुकान के खम्भे से बांध दिया गया था। भीतर मकान में कुछ लोग संदूकों को तोड़-तोड़ कर, उनमें से सामान निकाल रहे थे। दूसरी ओर सोहन की बीवी से बलात्कार किया जा रहा था। वह बेचारी एक, इस पैशाचिक कार्य करने वाले के नीचे पड़ी चीखें मार रही थी। दूसरी ओर कुछ लोग प्रीतम की लड़कियों को नंगा करने के लिए बलपूर्वक कपड़े उतार रहे थे।

इस समय करीमू वहाँ पहुँचा। उसने देखा कि प्रीतम की लड़कियां बख्तावर की लड़कियों से कम सुन्दर नहीं। इस कारण उसने उनके चारों ओर खड़े हुओं से कहा, "बाहर दुकान की तिजोरी टूट गई है।"

इस पर लोग बाहर दुकान की ओर लपके और करीमू ने लड़कियों पर अपना अधिकार जमा लिया। वह उनको घसीट कर बाज़ार में ले आया। उसके मन में सोचा कि पहले उनको अपने घर पहुँचा दे। इस समय कर्मसिंह के परिवार के लोग और उनके आगे बख्तावर सिंह लम्बी कृपाण से मार्ग साफ करते हुए आ पहुँचा। करीमू का घर उसी ओर था, इस कारण उसने उधर जाने का विचार छोड़, पुनः प्रीतम के घर में घुस कर जान बचाने का निश्चय कर लिया। उसने भागते हुए मुसलमानों को कहा, "प्रीतम के घर में घुस जाओ।"

वह स्वयं भी लड़कियों को लेकर उस घर की ओर लपका; परन्तु लड़कियों की माँ उनसे चिपट गई। इस पर भी वह एक लड़की को ले जाने में सफल हो गया।

मकान के भीतर इस समय कितने ही लोग सोहन की बीवी से

बलात्कार कर चुके थे। वह इससे अचेत हो चुकी थी। वहां खड़े अन्य लोगों ने करीमू से प्रीतम की लड़की मांगी। करीमू ने जब इन्कार किया तो वे उससे लड़ने को तैयार हो गए। विवश करीमू ने लड़की को उनकी ओर धकेल दिया और स्वयं मकान से बाहर दुकान में चला आया। इस समय तक कर्मसिंह के परिवार के लोग आगे निकल चुके थे।

करीमू ने बाहर आ दूकान में से नकदी लुट चुकी देख, किसी और के मकान को लूटने का विचार कर लिया।

(६)

गुरुद्वारे में और भी बहुत से हिन्दू तथा सिक्ख एकत्रित हो चुके थे। कर्मसिंह के परिवार के लोगों के वहाँ पहुँच जाने से सबका ढाढ़स बंध गया। गांव की सात-आठ हज़ार हिन्दू आबादी में से लगभग पाँच सौ लोग गुरुद्वारे पहुँच सके थे। इनमें से तीन सौ के लगभग स्त्रियां और बच्चे थे। सौ से ऊपर पुरुष थे। बहुतों के पास कृपाणें थीं। कुछ लाठियां लिए हुए थे। पाँच बन्दूकें भी थीं। बख्तावर सिंह ने अपने घावों को बांधा और आगे विचार करने के लिये तैयार हो गया। सब पुरुषों ने गुरुद्वारे में बैठ कर कसमें खाई कि जीते जी गुरुद्वारे को अपवित्र नहीं होने देंगे। इसके पश्चात् गुरुद्वारे की छत पर चढ़ कर, गुरुद्वारे की रक्षा के प्रबन्ध पर विचार होने लगा। चारों कोनों पर बन्दूकची बैठा दिये गये। एक आदमी गुरुद्वारे के कलस को पकड़ कर गुमटी पर चढ़ गया और वहाँ से गांव में हो रही लूट को देख-देखकर, नीचे के लोगों को बताने लगा।

नीचे स्त्रियों ने भण्डारे में से अन्न-अनाज निकाला और खाना बनाने लगीं। सबसे पहले बच्चों को खिलाया गया और पश्चात् स्त्री-पुरुषों ने मिलकर भोजन किया।

इस समय प्रत्येक प्रकार का पैशाचिक कृत्य गांव में सम्पन्न किया गया। कोई युवा स्त्री नहीं बची थी, जो गांव में रह गई हो और जिससे एक से अधिक ने बलात्कार न किया हो। अनेकों स्त्रियों ने बलात्कार होते-होते

अपने प्राण त्याग दिए थे । कइयों को बलात्कार के पश्चात् मार डाला गया था ।

एक भी हिन्दू और सिक्ख घर नहीं बचा था, जिसको लूटा न गया हो । प्रायः हिन्दू और सिक्ख मार डाले गए थे । कुछ गुरुद्वारे में बचे थे और कुछ छुप-छुपकर जान बचा सके थे ।

जब कर्मसिंह का परिवार लड़ता-मरता अपना मार्ग गुरुद्वारे की ओर बना रहा था, तब सुखवीर सिंह और उसके लड़के प्रतापसिंह और नन्रेद्र मण्डली से पृथक् हो गए थे । दोनों अच्छे जवान और बलवान थे। वे मुसलमानों से घिर गए, तो जी तोड़कर लड़ने लगे । मुंड रुंडों से पृथक् लुढ़कने लगे । मुसलमान लाठी-भाले लिए आगे बढ़ते थे, परन्तु इन दोनों वीर पिता और पुत्र की तलवारें खटाखट चल रही थीं । होते-होते शवों का ढेर लग गया । अब मुसलमान इनके समीप आने से डरने लगे । अवसर पा प्रतापसिंह ने अपने पिता से कहा, 'अब गुरुद्वारे की ओर भागिए ।"

सुखवीरसिंह की जांघ पर घाव लगा था । इससे वह भागने में कठिनाई अनुभव कर रहा था । इस पर भी वह लड़खड़ाता हुआ प्रतापसिंह का आश्रय लेकर चलने लगा । इस समय पड़ोस के गांव का एक रिटायर्ड फ़ौजी जमादार अपनी बन्दूक लिए आ पहुँचा । मुसलमान स्वयं तो इन दो घायल सिंहों के पास आने से डरते थे । वे उस जमादार को इन पर गोली चलाने के लिए कहने लगे । जामादार ने जब परिस्थिति देखी तो निशाना बांधकर गोली चला दी । गोली सुखवीर की पीठ पर लगी और वह वहीं ढेर हो गया । प्रतापसिंह समझ गया कि पिता का काम तमाम हो गया है, इससे वह उनको छोड़कर भागा । मार्ग में जो मुसलमान आया, उसको तलवार की धार का मज़ा चखाता हुआ भागता गया। जब वह चौक में प्रीतम के मकान के पास पहुँचा, तो पीछे से एक और गोली चली, जो उसकी टांग में लगी । वह गिर पड़ा और अचेत हो गया

इस दिन इतना माल, धन और औरतें लुटीं कि लूटने वालों को इसके समेटने की चिन्ता होने लगी । परिणाम यह हुआ कि अन्य गांवों के बहुत

से लोग, जिनकी जेबें नोटों से भर गई थीं, जिनको कोई भूषण या अन्य कीमती सामान मिल गया था, अथवा जिनको कोई सुन्दर लड़की मिल गई थी, वे ये ले अपने गांव को लौट गए।

परिणाम यह हुआ कि दिन के तीसरे प्रहर तक बहुत से लोग लौट गए थे। गूजर खाँ के मुसलमान और कुछ अन्य, जिनको कुछ खाने को मिल गया था, वहां रह गए थे। सांयकाल वहां की जामा मस्जिद में गांव के प्रायः लोग एकत्रित हो गए और आगे के लिए विचार होने लगा। वही रावलपिण्डी वाला मौलवी वहां उपस्थित था। उसने उठकर बताया, "जिन लोगों ने आज के जिहाद में हिस्सा लिया है, खुदा उनको बहिश्त देगा। रावलपिण्डी की जामा मस्जिद नापाक करने का बदला हमने ले लिया है। अब तो केवल एक बात रह गई है। कुछ काफ़िर गुरुद्वारे में इकट्ठे हो गए हैं। वहां वे साजिश कर रहे हैं कि किस तरह हम सबको फांसी दिलवायें। इसलिए यह आखिरी कांटा भी निकाल देना चाहिए।"

करीमू, जिसके अभी तक कोई लड़की हाथ नहीं लगी थी और जो शेष आयु-भर के लिए खाने-पहरने को लूट का माल ले गया था, मौलवी की इस तजवीज़ पर फड़क उठा। उसको पुनः बख्तावर सिंह की लड़की स्मरण हो आई। उसने उठकर ताईद कर दी और वहां उपस्थित लोगों को कहा, "कुफर का यह आखिरी मोर्चा भी तबाह कर देना चाहिए।"

इसका सबने समर्थन किया और लगभग पाँच सहस्र मुसलमान, हाथों में तलवारें और बन्दूकें लेकर गुरुद्वारे की ओर चल पड़े। उनको वहां जाते देख और भी इनमें सम्मिलित हो गये।

गुरुद्वारे को घेर लिया गया। कभी-कभी बाहर और भीतर से बन्दूकें चलती रहती थीं। भीतर से बख्तावरसिंह और उसके साथियों ने गुरुद्वारे की छत पर चढ़कर अपनी परिस्थिति का अनुमान लगाया। यद्यपि बाहर के गांव के बहुत से मुसलमान अपनी लूट के माल को छिपाने में लग गए थे, इस पर भी गुरुद्वारे को घेरा डालने वालों की संख्या छः-सात हज़ार से कम नहीं थी। इस परिस्थिति के साथ २ बाहर के समाचार गुरुद्वारे में आ

रहे थे; किस प्रकार बच्चों और औरतों के साथ दुर्व्यवहार किया गया था, यह बात अनेकों प्रमाणों सहित गुरुद्वारे के भीतर लोग लेकर आये थे। एक-एक कथा जब वर्णन की जाती थी, तो सुनने वालों के रोंगटे खड़े हो जाते थे और घटनाओं में क्रूरता का अनुमान लगा लोगों की आँखों से आँसू बहने लगते थे।

(७)

इस अवस्था में अपनी जान और स्त्रियों की मान-मर्यादा बचाने के अन्तिम प्रयत्न पर विचार किया जाने लगा। एक उपाय यह सोचा गया कि सभी पुरुष, घेरा बनाकर स्त्रियों को बीच में रख, उनको बचाते हुए रेल के स्टेशन पर ले जावें; परन्तु वहाँ पर उनकी सुरक्षा का कोई प्रबन्ध होगा, इसका कोइ भरोसा नहीं था। इससे यह योजना स्वीकार नहीं हुई। स्त्रियों ने एक योजना यह उपस्थित की कि वे सब गुरुद्वारे के भीतर चिता बनाकर, पुरानी राजपूत स्त्रियों के सदृश अपने को जलाकर भस्म कर दें और पुरुष गुरुद्वारे से बाहर निकल स्टेशन तक पहुँचने का यत्न करें। यद्यपि इससे उपयुक्त कोई योजना नहीं बन सकी, इस पर भी पुरुषों के हृदय इस क्रूरता पूर्ण कार्य करने को तैयार नहीं होते थे।

समय बहुत कम था। मुसलमानों की संख्या गुरुद्वारे के बाहर बढ़ रही थी। नगर के अन्य स्थानों को छोड़, सब लूटमार करने वाले इसी स्थान पर एकत्रित होते जाते थे। गुरुद्वारे के बाहर अल्ला-हू-अकबर के नारों की घनघोर गर्जना प्रतिक्षण बढ़ रही थी। इसी से गुरुद्वारे के भीतर के लोग और अधिक त्रसित हो, किसी अन्तिम निर्णय पर पहुँचने के लिए विवश होते जाते थे।

सूर्यास्त हो रहा था। इस समय गुरुद्वारे के पीछे के मकानों पर से किसी ने गुरुद्वारे की छत पर चढ़े हुए लोगों का ध्यान कंकड़ फेंककर आकर्षित किया। सायंकाल के धुसमुस में लोगों ने देखा कि दो व्यक्ति हैं। पर कौन हैं, यह नहीं जान सके। एक ने आवाज़ देकर पूछा, "कौन हो ?"

"प्रीतम का बेटा मक्खन।"

"तुम यहाँ क्या कर रहे हो ?"

"कोई रस्सा हो तो लटका दीजिए। हम दो हैं।"

"दूसरा कौन है ?"

"नरेन्द्र। सुखवीर सिंह का लड़का।"

इन दोनों के जीवित होने की किसी को आशा नहीं थी। इससे उनके इस प्रकार गुरुद्वारे के साथ सटे हुए पीछे के मकान की छत पर खड़े होने से उत्सुकता और प्रसन्नता की तरंग दौड़ गई। गुरुद्वारा मकान से ऊँचा था। इस कारण उसकी छत से रस्सा लटका दिया गया और बारी-बारी दोनों को ऊपर खेंच लिया गया। जब वे गुरुद्वारे में पहुँच गए, तो सब उनके बच कर निकल आने का समाचार जानने के लिए उत्सुक हो, उनके चारों ओर एकत्रित हो गए।

बख्तावर सिंह के पूछने पर नरेन्द्र ने बताया, "चाचा ! गांव के चौक से कुछ दूर पर ही मैं और पिता जी मुसलमानों से घिर गए थे। हम दोनों अपनी रक्षा करते हुए आपसे मिल जाने का यत्न करते रहे; परन्तु यह हो नहीं सका। हमारे चारों ओर कई मुसलमान मर कर गिर चुके थे। उनके शवों से निकले रक्त से भूमि गीली और फिसलनी हो गई थी। मेरा पांव फिसला और मैं गिर पड़ा। मेरे गिरते ही तीन-चार घायल मुसलमान मेरे ऊपर गिर पड़े। मुझे इस समय भी उनके गरम-गरम रक्त का अपने ऊपर पड़ना स्मरण है। इस समय मेरे सिर में चक्कर आया और मैं बेहोश हो गया।

"जब मुझको होश आई तो मुझे प्यास लगी हुई थी। पहिले तो मुझको ऐसा अनुभव हुआ कि मुझ पर भारी बोझा पड़ा हुआ है। जब मुझ में चेतना पर्याप्त आ गई और मेरे शरीर में कुछ ताकत आ गई, तो मैंने अपने ऊपर से शवों को धकेल कर एक ओर कर दिया। बाज़ार सुनसान हो गया था। इससे मैं उठा और पानी की खोज में चल पड़ा। चौक में पहुंच कर देखा कि प्रीतम लाल का शव अपनी दुकान के खम्भे से बंधा हुआ है। उसके पेट में भाले से घाव कर उसकी हत्या की गई थी। लाला के मकान

का दरवाज़ा खुला हुआ था। मैं भीतर चला गया। मकान के सेहन में सोहन की बहू और प्रीतम की बडी लड़की, दोनों के नग्न शव, जिनके पूर्ण शरीर लहूलुहान हुए थे, पड़े थे।

"चाचा ! इतना भयानक दृश्य देखकर मैं हताश हो गया। और मैं बैठ गया। मेरे सिर में चक्कर आने लगा। इस समय पीछे से किसी ने मुझको बुलाया। मैंने घूम कर देखा तो यह मक्खन दीवार के साथ काँपता हुआ खड़ा था। मैंने पूछा तो इसने बताया कि जब मुसलमान आए, तो वह मकान की चोर-छत में घुस गया था। पिता जी बहिन और माता जी को भी वहां भेज देना चाहते थे, पर उनको छुपने का समय नहीं मिला।

"मैंने पूछा कि उसकी बहिन और भौजाई के साथ क्या हुआ है, तो चाचा ! इसने बताया कि इतने अधिक पैशाचों ने उन पर बलात्कार किया कि वे मर गईं। उनके मरे शव के साथ भी ये लोग बलात्कार करते रहे। मक्खन देखता-देखता अचेत हो गया था। पर ये लोग न जाने कब तक यह कुछ करते रहे। मेरे उनके घर में पहुँचने से पूर्व ही वह सचेत हो चुका था और मुझको वहां देख, वह चोर-छत से बाहर आ गया।

"पीछे हमने जल पिया और फिर मकानों की छतों पर से कूदते हुए यहां तक पहुँच गए है।"

(८)

प्रीतम के लडके और नरेन्द्र ने बचा-खुचा भोजन किया और गुरुद्वारे में उपस्थित लोगों में, जो पुनः रक्षा के प्रबन्ध पर विचार करने लगे थे, सम्मिलित हो गए। इस समय तक बाहर के लोग गुरुद्वारे का फाटक तोड़ने का यत्न करने लगे थे। बख्तावरसिंह ने समझ लिया कि गुरुद्वारे से बच कर निकलना कठिन है। इस कारण औरतों के प्रस्ताव का समर्थन करते हुए, उसने कहा, "हम में से कोई नहीं बचेगा। इस कारण शीघ्र चिता बनाओ और इनके जौहर करने पर हम गुरुद्वारे से बाहर निकल पड़ेंगे। हम यहाँ, इसमें जलकर मरने के स्थान युद्ध में मरना पसन्द करेंगे।"

औरतों ने अब कोई चारा न देख, लंगर की लकड़ियां और गुरुद्वारे की मेज-कुर्सियां एकत्रित कर एक विशाल चिता बनानी आरम्भ कर दी। गुरुद्वारे के ग्रन्थी ने 'जपजी साहब, का पाठ आरम्भ कर दिया। पुरुषों ने अपनी कृपाणों पत्थरों पर रगड़-रगड़कर तेज़ करनी आरम्भ कर दीं।

इस सब तैयारी को देख प्रीतम बनिये के लड़के मक्खन ने गुरुद्वारे की छत पर चढ़कर, रस्से से पुनः साथ के मकान पर उतर जाने का निश्चय कर लिया। उसने अपने मन की बात किसी को बताई नहीं, वह समझता था कि सब लोग उस मार्ग से निकल नहीं सकेंगे।

जब औरतें बच्चों सहित चिता पर बैठ गईं, तो बच्चों की चीख़-पुकार और औरतों के 'सत् नाम श्री वाहे गुरु बोल' के शब्दों की गूंज और पुरुषों के अरदास पढ़ने की गर्जना में मक्खन गुरुद्वारे की छत पर चढ़ गया और रस्सा, जो अभी तक वहाँ पर बँधा था, पकड़कर नीचे उतर गया।

चारों ओर घोर अन्धकार था। गुरुद्वारेके बाहर मुसलमानों ने कुल्हाड़ियों, बरछों और भालों से फाटक तोड़ना आरम्भ कर दिया था। कुछ लोगों ने चिथड़ों को तेल में भिगो कर बरछों पर बांध कर जला लिया था। इससे प्रकाश कर सब गुरुद्वारे में घुसने के लिए तैयार हो गए थे।

भीतर जब चिता को आग लगी, तो तुमुल नाद हुआ। बच्चों की चीख-पुकार बन्द करने के लिए औरतों ने और भी ज़ोर से 'सत् नाम श्री वाहे गुरु बोल' का पाठ करना आरम्भ कर दिया। जब आग चारों ओर फ़ैल गई और चीख-पुकार और वाहे गुरु की आवाज़ धीमी पडने लगी तो बख्तावरसिंह ने कृपाण ऊंची कर गर्जना की, 'जो बोले सो निहाल' डेढ़ सौ कण्ठों से आवाज निकली, 'सत् श्री अकाल।'

गुरुद्वारे का फाटक प्रायः टूट चुका था। इस पर वह अब खोल दिया गया और विद्युत की भाँति लोग कृपाणें लिये हुए मुसलमानों पर टूट पड़े। जैसे आँधी में बवण्डर बन चलने लगता है, वैसे ही ये डेढ़ सौ जीवन से निराश और अपने प्रिय बाल-बच्चों तथा माताओं, बहिनों और पत्नियों को चिता पर भस्म की ढेरी कर, जिस ओर चले, विनाश करते गए।

जब ये लोग गुरुद्वारे से निकल चुके, तो औरतों के लोभी गुरुद्वारे में भाग कर गए; परन्तु वहाँ एक विशाल चिता धू-धू कर जलती देख आवाक-मुख खड़े रह गए ।

हिन्दू और सिक्खों की मण्डली रेल्वे स्टेशन की ओर बढ़ने लगी। दो मील का अन्तर लड़कर निकल जाना, सुगम नहीं था। इस पर भी मुसलमान इतनी जल्दी-जल्दी मारे जाने लगे कि मार्ग साफ़ होता गया और ये लोग अपने ध्येय की ओर बढ़ते गए ।

इस समय हिन्दू और सिक्खों में से भी मर-मरकर गिर रहे थे और प्रतिक्षण उनकी संख्या कम हो रही थी। रात के आठ बजे इन डेढ़ सौ वीरों की यात्रा आरम्भ हुई और रेल के स्टेशन तक पहुँचने में चार घंटे से ऊपर लग गए। वहां पर पहुँचने वालों की संख्या छः थी। शेष सब मार्ग में काम आए थे।

रेल्वे स्टेशन पर छः आदमियों में कर्मसिह के परिवार में से केवल प्रताप सिह बचा था। इसको छोटे-छोटे घाव तो कई लगे थे। एक बड़ा घाव कंधे पर था। अन्य पाँचों बच कर आने वाले लोग भी घायल थे। रेल्वेस्टेशन की रक्षा के लिए पुलिस पहरा दे रही थी। इस कारण जब ये लोग वहां पहुँचे, तो इनका पीछा करने वाले भाग खड़े हुए और ये प्लैटफॉर्म पर जा पहुंचे। वहां जाकर मक्खन को प्लैटफॉर्म पर खड़ा देख, सब को आश्चर्य हुआ। प्रताप सिह ने पूछा, "मक्खन ! तुम कैसे पहुंच गए हो ?"

"मैं भी आ गया हूँ। जान बची है भगवान की कृपा से। सारे रास्ते-भर में गोलियां चलती रही हैं।"

रात के एक बजे की गाड़ी से ये लोग दिल्ली के लिए रवाना हो गए। मक्खन ने सब के लिए टिकट के दाम दिए। वह अपने घर की चोर छत में रखे पिता के धन को उठा लाया था। कई हज़ार रुपये के नोट थे।

दिल्ली जाने की योजना प्रताप सिह की थी। उसका विचार था कि जो कुछ हुआ है, वह भारत सरकार की एग्ज़ेक्टिव कौन्सिल के सदस्यों को, विशेष रूप में श्री पटेल और पं० जवाहर लाल नेहरू को बताना चाहिए।

प्रताप सिंह का कहना था कि जब वे यहाँ का वृत्तान्त बताएँगे तो सरकार तुरन्त हिन्दुओं की रक्षा का प्रबन्ध करेगी। प्रताप सिंह ने सुना था कि बिहार में छोटा-सा झगड़ा होने पर नेहरू जी ने फौज भेज दी थी।

इनकी गाड़ी दिन के समय लाहौर से गुज़री। उस समय भी स्टेशन पर हज़ारों लोगों की भीड़ इकट्ठी थी, जो लाहौर छोड़ कर जाने के लिए तैयार खड़ी थी। अगले दिन ये लोग प्रातःकाल दिल्ली पहुंच गए। प्रताप सिंह ने दिल्ली पहुँचते ही जगदेव सिंह को कलकत्ता तार दिया और उसमें अपने होटल का पता भी लिख दिया।

जगदेव सिंह के आने पर इनका डेपुटेशन नेताओं से मिला। उनको पूर्ण वृत्तान्त से परिचित कराया गया। सुनने वालों की आँखों में से आँसु निकल पड़े। इससे डेपुटेशन के लोगों को आशा बंध गई कि अवश्य उस इलाके के लोगों की रक्षा का प्रबन्ध कर दिया जायेगा।

(६)

जगदेव सिंह को यह सुनकर कि उसके घर के पचास प्राणियों में से केवल एक बचा है और गूजर खां के गांव की पूर्ण हिन्दू जनता में से केवल सात-आठ प्राणी बचे हैं, भारी मानसिक क्लेश हुआ था। उसको सब से अधिक दुःख इस बात का था कि उसके अपने घरवालों को समय पर सचेत करने पर भी यह हुआ। जगदेव सिंह महात्मा गांधी से भी मिलने गया। वे इन दिनों भंगी कौलोनी, नई दिल्ली में ठहरे हुए थे। जगदेव सिंह ने पूर्ण वृत्तान्त, जैसा प्रताप सिंह इत्यादि ने बताया था, कह सुनाया। उसने यह भी बताया कि वह इस सब की भविष्यवाणी कर, अपने कुटुम्ब वालों को बता चुका था; परन्तु महात्मा जी की शिक्षा और कांग्रेसी नेताओं की परिस्थिति से अनभिज्ञता ने सब चौपट कर दिया है।

महात्मा जी को यह वृत्तान्त सुनकर बहुत दुःख हुआ। इस पर भी उन्होने कहा,—"मैं तो हिंसा करने वालों पर भी हिंसा करने की राय नहीं दे सकता।"

"ठीक है। पर मैं तो सरकार के विषय में कह रहा हूँ। सरकार का बनाव ही हिंसा पर निर्भर है। इस कारण हिंसा के प्रयोग का यह बहुत अच्छा अवसर है।"

"मेरा इससे कोई सम्बन्ध नहीं। मेरी तो नीति यह है कि किसी भी अवस्था में हिंसा का बदला हिंसा से नहीं देना चाहिए।"

"पर क्या यह नियम केवल हिन्दुओं की रक्षा के लिए ही चल रहा है?"

"नहीं; मैं तो सबके लिए कहता हूँ।"

"पर महात्मा जी! जब एक पक्ष आपकी नीति पर नहीं चलता और आपका उस पर प्रभाव नहीं, तो दूसरे पक्ष के लिए तो पूर्ण विनाश को प्राप्त होने के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग ही नहीं रह जाता।"

"अहिंसा का उपासक विनाश को प्राप्त होता ही नहीं।"

"पर पंजाब में तो ऐसा ही हो रहा है, महाराज!"

"आपने भी तो लड़ने में कसर नहीं छोड़ी।"

"और यदि यह भी न करते तो पूर्ण गाँव में से जो पाँच-छः बचकर आए हैं, वे भी न आते। पर मैं तो यह निवेदन कर रहा हूँ कि आपकी नीति के अनुयायी पं० जवाहरलाल जी बिहार में तो हवाई जहाज से गोले फेंकने के लिए उद्यत हो गए थे और यहाँ पर एक लाठी भी नहीं चली। क्या इसके यह अर्थ नहीं कि अहिंसा हिन्दुओं के विरुद्ध और हिंसा भी हिन्दुओं के विरुद्ध; यही आपका अहिंसावाद है क्या?"

"जवाहरलाल जी मेरी विचारधारा मानने के लिये बाध्य नहीं हैं।"

"तो आप पं० जवाहरलाल के समर्थन के लिए किस प्रकार बाध्य हैं। कांग्रेस के प्रधान श्री कृपलानी जी को छोड़कर पंडित जी किस आधार पर सरकार में उप प्रधान बन गए हैं।"

"मैंने कांग्रेस को कभी नहीं कहा कि पं० जवाहरलाल जी को नेता बनाये।"

"मैं समझता हूँ कि आपके समर्थन के बिना पंडित जवाहरलाल कुछ

भी नहीं थे और कुछ नहीं रह सकते। सन् १९२९ में आपने ही पंडित जी को कांग्रेस का प्रधान बनने मे सहायता दी थी। इसके अतिरिक्त जिस प्रकार आप हिन्दू संस्थाओं की हिंसा के लिए निन्दा करते हैं, वैसे आप पंडित जवाहरलाल जी की हिंसात्मक प्रवृति के विरुद्ध कभी कुछ नहीं कहते।"

"हिन्दू संस्थाएँ देश-द्रोह कर रही है। वे अपने व्यवहार से विदेशी तत्वों को सुदृढ़ करती हैं।"

"क्षमा करें महात्मा जी! हमारा विचार है कि आपकी नीति और उसके साथ कांग्रेस की नीति देश में देशद्रोही तत्वो को प्रोत्साहन दे रही है।"

यह महात्मा जी के लिए एक बहुत बड़ी बात थी। इस कारण बात-चीत बन्द हो गई और जगदेव सिंह बिना कुछ प्राप्त किए, दिल्ली में एक दरवाजे से दूसरे दरवाजे पर भटकता रहा।

(१०)

मार्च गया, एप्रिल गया और अब मई मास आ गया। पंजाब जल रहा था और दिल्ली में कांग्रेसी नेता मुसलमानों को प्रसन्न करने के उपाय विचार रहे थे। वे पंजाबी लोग, जो पेशावर, रावलपिण्डी, लाहौर, मुलतान, मुजफ्फरगढ़ इत्यादि झगड़े के स्थान छोड़-छोड़कर दिल्ली, हरिद्वार, देहरादून इत्यादि स्थानों पर आ गए थे, बेचैनी अनुभव करने लगे थे। वे कुछ दिनों के लिये घरों को छोड़कर आए थे और यहाँ व्यतीत हो रहे थे महीनों। पंजाब के लोग बार बार महात्मा जी और अन्य कांग्रेसी नेताओं से मिलकर अपना दुखड़ा रोते थे। कांग्रेसी नेता सुनते थे, आँसू बहाते थे, परन्तु कुछ करते नहीं थे।

परिणाम यह हुआ कि हिन्दुओं ने महात्मा जी की ईमानदारी पर सन्देह करना आरम्भ कर दिया। महात्मा जी हरिद्वार गए और वहाँ वे यह यत्न करने लगे कि वहाँ पर आये हुए पंजाब के लोग अपने-अपने घरों को

वापिस लौट जायें, परन्तु जब लोगों ने अपनी कठिनाई वर्णन की तो महात्मा जी चुप रह गए। किसी ने कहा, "हम कैसे लौट जायें, जब हमारी बहू-बेटियों का मान वहां सुरक्षित नहीं।"

महात्मा जी का उत्तर था कि औरतों को अपने मान की रक्षा के लिए अपने पास आत्मघात के अर्थ अफीम रखनी चाहिए।

यह राय मूर्ख से मूर्ख भी मानने को तैयार नहीं था। परिणाम यह हुआ कि हरिद्वार में महात्मा जी का व्याख्यान नहीं हो सका।

पंडित जवाहरलाल जी हरिद्वार गए तो उनका अपमान कर दिया गया। कारण यह कि भारत सरकार का सबसे बड़ा पदाधिकारी होने पर भी, घरों से भागकर आये हिन्दुओं की एक रत्ती-भर की सहायता नहीं कर सका। न ही उनके माल, जान और मान की रक्षा का आश्वासन दे सका।

इस समय चेतनानन्द लाहौर मोची दरवाजे से मुसलमानों को मार कर भगाने के पश्चात् पुलिस की गोली से घायल हो दिल्ली में आ गया। यहां वह लाला बनारसी दास की कोठी में ठहरा था। लाला बनारसी दास चेतनानन्द के पिता लाला जीवन लाल का परम मित्र था और दोनों परिवारों में मेल-जोल था।

दिल्ली की अवस्था लाहौर से भिन्न थी। जहाँ लाहौर नगर में निरन्तर युद्ध हो रहा था, वहां दिल्ली में उसके अनुपात से शान्ति थी। इस पर भी कहीं-कहीं और कभी-कभी झगड़ा हो ही जाता था। कभी मुसलमानों के मस्तिष्क में दिल्ली को भी पाकिस्तान में सम्मिलित करने की इच्छा जागृत हो उठती और परिणाम स्वरूप दस-बीस हिन्दुओं को इस लोक को छोड़ परलोक-यात्रा करनी पड़ती थी। दिल्ली नगर में तो जन संख्या आधी हिन्दू और आधी मुसलमान थी, परन्तु दिल्ली के देहातों में हिन्दू ही अधिक संख्या में थे।

अतएव जब मुसलमानों के मस्तिष्क में यह विचार आया कि दिल्ली को पाकिस्तान में ले जाना चाहिये, तब दिल्ली के देहातों को हिन्दुओं से खाली करने की योजना बन गई। यह विचार और यह योजना लॉर्ड माउन्टबेटन के

देश-विभाजन की योजना से पहले बनी और इस पर कार्य भी पहले से ही आरम्भ हो गया।

इस योजना के अनुसार मुसलमानों ने पटौदी, अलवर, भरतपुर इत्यादि रियासतों और मथुरा के जिला में हिन्दुओं के गांव जलाने आरम्भ कर दिए। यहां के मुसलमान मेव जाति के थे। उन्होंने गूजर, अहीर और जाटों के विरुद्ध जिहाद बोल दिया। पहले तो ये देहाती लोग भयभीत होकर भागे, परन्तु पीछे उन्होंने अनुभव किया कि इस प्रकार मिट जाना तो ठीक नहीं। इस कारण इन्होंने रक्षा का प्रबन्ध करना आरम्भ किया। इस प्रकार दिल्ली नगर के तीन ओर घेरे में दिल्ली के चालीस मील के अन्तर पर मोर्चाबन्दी हो गई और युद्ध आरम्भ हो गया। दोनों ओर, सहस्त्रों की संख्या में, लोग लाठियों, बरछों, भालों और बन्दूकों से सुसज्जित हो आक्रमण-प्रत्याक्रमण करने लगे। छोटे छोटे दमदमे, देसी ढंग की तोपें भी बनवाई गईं और प्रयोग की जाने लगीं। दिल्ली और आसपास के नगरों में गंधक और शोरा की चोर बाज़ारी गर्म हो गई।

दिल्ली से उन्नीस मील, फरीदाबाद के कसबे से एक मील के अन्तर पर युद्ध आ गया। रात को कसबे के लोग मकानों की छतों पर चढे हुए, जलते हुए गांवों को देख सकते थे। यह सब-कुछ हो रहा था और दिल्ली की सरकार, जिसमें श्री पं० जवाहर लाल उप-प्रधान थे और श्री वल्लभ भाई पटेल गृह-मंत्री थे, मुस्लिम लीग से मैत्री करने में संलग्न थे।

यह युद्ध, एक ओर सहस्त्रों की संख्या में मेवों और दूसरी ओर जाटों और गूजरों में, छः मास से चल रहा था, परन्तु सरकार की ओर से इसके शान्त करने में कुछ भी यत्न नहीं किया गया। इस युद्ध का क्षेत्र पंजाब, अलवर, भरतपुर और संयुक्त प्रांत के जिला मथुरा तक फैला हुआ था। धीरे-धीरे मुसलमान दिल्ली के चारों ओर अपना घेरा पूर्ण करते जाते थे।

यदि ये जाट और अहीर इस दिल्ली पर चढ़ाई का विरोध न करते तो दिल्ली का क्या होता, कहना कठिन है। या तो दिल्ली सरकार अपनी रक्षा के लिए फ़ौज भेजती। अथवा दिल्ली को इन मेवों के हाथों में छोड़

देती। शायद मुस्लिम लीग की योजना यह थी कि दिल्ली के चारों ओर से हिन्दू जनता को भगा दिया जाए और फिर दिल्ली को पाकिस्तान में सम्मिलित करने की माँग खड़ी की जाए। यह माँग और भी सुदृढ़ हो जाती, यदि सारा पंजाब पाकिस्तान में मान लिया जाता। मुसलमानों की यह योजना सफल नहीं हो सकी क्यों कि लाहौर में मुसलमानों के, हिन्दुओं के विरुद्ध 'जेहाद' का डटकर विरोध किया गया था। साथ ही अलवर, भरतपुर, मथुरा और गुड़गाँव जिलों के जाट और अहीरों ने मेवों के आक्रमण को छः मास तक रोके रखा था। यदि एक बार दिल्ली के देहाती क्षेत्र में हिन्दुओं की भगदड़ मच जाती, तो दिल्ली में हिन्दू-मुसलमानों के बीच खुला युद्ध प्रारम्भ हो जाता और दिल्ली नगर की हालत वही होती, जो लाहौर की हुई थी। विस्मय करने की बात तो यह थी कि अभी तक दिल्ली में डिप्टी कमिश्नर और चीफ कमिश्नर अंग्रेज़ थे, जो किसी प्रकार भी मुसलमानों का विरोध करने को तैयार नहीं होते थे।

यह परिस्थिति चेतनानन्द पलंग पर लेटा-लेटा सुनता और इस पर दाँत पीसा करता था। लाला बनारसी दास के कारोबार में एक स्टेनोटाइपिस्ट लड़की थी। चेतनानन्द, जब बंगाल सरकार की नौकरी करता था, तो यह लड़की उसके साथ वहाँ कार्य करती थी। पीछे डायरेक्ट ऐक्शन के दिनों में, इस लड़की ने कलकत्ता में मुसलमानों के अत्याचारों के विरोध में आन्दोलन चलाया था, जिससे इसका चेतनानन्द के विचारों पर भारी प्रभाव पड़ा था। वास्तव में चेतनानन्द के दृष्टिकोण में परिवर्तन का आरम्भ इसी लड़की के विचार और कार्य ने किया था।

जब चेतनानन्द घायल हो वहाँ आया, तो उस लड़की को, जिसका नाम अनिमा था, चेतनानन्द से मिलने-जुलने का अवसर मिलने लगा। कार्यालय के समय के पूर्व और पश्चात्, वह अपना बहुत-सा समय चेतनानन्द के पलंग के समीप बैठ व्यतीत करने लगी। दिल्ली की वास्तविक परिस्थिति का ज्ञान अनिमा देवी ने ही चेतनानन्द को कराया था।

इस वर्ष बकराईद के दिन कुर्बानी की गाय की सवारी एक नये मार्ग

से ले जाने की स्वीकृति दे दी गई। यह नया मार्ग हिन्दू बस्ती पहाड़गंज में से होकर जाता था। हिन्दुओं ने विरोध किया। सरकारी पुलिस ने गोली चला दी। इस पर भी कुछ मनचले हिन्दुओं ने कुर्बानी वाली गाय को छीन लिया और भगाकर ले गए। इस पर मुसलमान रूठ गए।

दिल्ली सरकार ने अगले दिन कुर्बानी की गाय का जलूस पुनः निकाले जाने की स्वीकृति दे दी और पुलिस की संरक्षा में, गाय को पुनः हिन्दू मुहल्लों में लाया गया। जलूस के साथ नगर के प्रमुख कांग्रेसी नेता हिन्दुओं को समझाने के लिए आये। लाठी चली, गोली चली, बीसियों घायल हुए, दो मरे और जलूस हिन्दू मुहल्लों में से गुज़ारा गया।

यह उस समय हो रहा था, जब दिल्ली से बीस-पचीस मील के अन्तर पर मेवों और जाटों में युद्ध चल रहा था।

जून की दो तारीख को महात्मा जी की विख्यात घोषणा कि 'पाकिस्तान मेरी हड्डियों पर बनेगा', समाचार-पत्रों में छपी। हिन्दुओं के मन इससे प्रफुल्लित हो उठे। परन्तु तीन जून को भारत के वॉयसराय लॉर्ड मौन्टबेटन का वक्तव्य, जिसका समर्थन श्री जवाहरलाल नेहरू तथा सरदार बलदेवसिंह और दूसरी ओर श्री जिन्ना ने किया था, प्रकाशित हो गया। इस वक्तव्य को श्री वल्लभ भाई पटेल ने भी माना। इस समय महात्मा गांधी चुप रहे।

तीन जून तक चेतनानन्द का घाव भर चुका था और वह उठने-बैठने लगा था। वह सायंकाल कोठी के लॉन में आकर बैठ जाता था और उसके समीप अनिमा देवी तथा लाला बनारसी दास के सुपुत्र इन्द्रजीत और उसकी पत्नी कमला देवी आकर बैठ जाते थे। जब-जब देश की परिस्थिति पर बातचीत होती थी, चेतनानन्द व्याकुल हो उठता था। चेतनानन्द घण्टों ही बैठा हुआ, पुनः लाहौर में जाकर मुसलमानों के विरोध में कार्य करने की सोचा करता था; परन्तु जब लार्ड मौन्टबेटन का वक्तव्य प्रकाशित हुआ, उसका उत्साह भंग हो गया।

"आज आप बहुत उदास प्रतीत होते हैं?" अनिमा देवी ने चेतनानन्द

के मलिन-मुख को देखकर पूछा।

"मैं समझता हूँ कि आज देश की हत्या हो गई है। सिद्धान्त रुप में हिन्दू और मुसलमान के लिए पृथक्-पृथक् देश और राज्य का होना मान लिया गया है। इस प्रकार सिद्धान्त रुप में यह भी मान लिया गया है कि अल्प-संख्यक जाति के लिए बहु-संख्यक जाति का हित हनन किया जा सकता है।"

"परन्तु इसमें आज नवीन बात क्या हुई है ?"

"कांग्रेस के लोगों ने निर्वाचन के समय में दिए अपने सब वचनों को भंग किया है।"

"यह भी नवीन बात नहीं।" अनिमा ने पुनः गम्भीर भाव में कहा—"नवीन बात यह है कि अब पंजाब में हिन्दुओं ने जो युद्ध छेड़ रखा है, वह व्यर्थ हो गया है। रावी से उस पार के हिन्दुओं को अब चुपचाप इधर आ जाना चाहिए। इनकी संख्या अस्सी-नब्बे लाख के लगभग है। फिर पूर्वी बंगाल में हिन्दुओं की संख्या डेढ़ करोड़ के लगभग है। सिन्ध में भी इनकी संख्या पन्द्रह लाख है। ये सब मिल-मिलाकर तीन करोड़ के लगभग हिन्दू पाकिस्तान में नहीं रह सकेंगे। उनको यहां लाना, बसाना एक ऐसा कार्य है, जिसके लिए क्या हो सकेगा, कहा नहीं जा सकता।"

"पर कल के महात्मा जी के वक्तव्य से कुछ आशा बंधती है। यदि कांग्रेस कमेटी में पं० जवाहरलाल जी के पाकिस्तान के बनने की स्वीकृति को न माना गया, तो फिर देश में सिविल वार हो जाएगी।"

"ऐसा कुछ नहीं होगा। महात्मा जी अपने वक्तव्य को भूल जावेंगे और कांग्रेस कमेटी में पं० जवाहरलाल जी के वचन का समर्थन करवाने में सहयोग देंगे।"

"कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि शायद महात्मा जी का कल का वक्तव्य लोगों को धोखे में रखने के लिए था। कुछ भी हो, बात इतनी बिगड़ गई है कि अब सदियों के लिए भारत का सर्वोतम भाग, और वह भाग, जो भारत की सुरक्षा के लिए परमावश्यक है, भारत से बाहर हो जायेगा।

बंगाल और आसाम की रक्षा कठिन हो जाएगी और बर्मा भारत से भौगोलिक विचार से भी पृथक् हो जाएगा।"

अनिमा देवी यह सब अनुभव कर रही थी। इस कारण वह चुप थी। इन्द्रजीत भी समीप बैठा हुआ बेचैनी अनुभव कर रहा था। अन्त में चेतनानन्द ने अपना भावी कार्यक्रम निश्चित करते हुए कहा, "दो-तीन दिन में मैं लाहौर चला जाना चाहता हूँ। वहाँ की परिस्थिति के अनुसार ही अपना कार्यक्रम बनाऊँगा।"

(११)

पर ऐसा हो नहीं सका। एक तो लाहौर से समाचार आया कि महेशा पकड़ लिया गया है। इसके अर्थ यह थे कि वह भी लाहौर पकर ही जो सकेगा और अपने घर में आराम नहीं कर सकेगा। इस कारण उसका दिल्ली में रहकर अभी कुछ और स्वस्थ होने के लिए आराम करना आवश्यक हो या। इसके साथ-साथ एक और घटना घट गई। चेतनानन्द, इन्द्रजीत और कमला के साथ, मोटर में घूमने जाया करता था। पाँच जून को वह मोटर में इन्द्रजीत और कमला के साथ निकला। चांदनी चौक में कुछ कपड़ा आदि खरीदने के लिए वे खद्दर-भंडार पर गये। वहाँ भंडार के बाहर एक सिक्ख, सिर नंगा, बाल बिखरे और पागलों की भांति लोगों को कहते हुए कि 'पाकिस्तान नहीं बनेगा, पाकिस्तान नहीं बनेगा' खड़ा दिखाई दिया। ये भंडार से कुछ कपड़ा खरीद, बाहर आ, मोटर में सवा रहो रहे थे। चेतनानन्द खड़ा हो उस सिक्ख की ओर देखने लगा। कमला और इन्द्रजीत भी खड़े हो गए। चेतनानन्द ने उस सिक्ख को कहीं देखा था और वह स्मरण कर रहा था कि कहां देखा है। कमला ने चेतनानन्द से पूछा, "यह कौन है ?"

"मैंने इसको कहीं देखा है। स्मरण कर रहा हूँ।" इसके पश्चात् उसने पागलों की भांति ऊंचे-ऊंचे बोलने वाले के सामने जाकर पूछा, "यह क्या कह रहे हो ? यह किस को कहते हो ?"

"मैं जनता को कहता हूँ। महात्मा गांधी को कहता हूँ। पाकिस्तान नहीं बनेगा, नहीं बनेगा।"

"तुम कौन हो ?"

"एक पंजाबी।"

"कहां के रहने वाले हो ?"

"रावलपिण्डी में गूजर खां का।"

गूजर खां का नाम सुनते ही चेतनानन्द को स्मरण आ गया कि यह वही सिक्ख है, जिससे उसकी, कलकत्ता से आते समय रेल गाड़ी में भेंट हुई थी और जिसने उसकी निन्दा की थी। इससे उसने स्मरण कर उसका नाम लिया, "आप जगदेव सिंह हैं ?"

"हां, तो क्या हुआ ? मुझको पकड़ लो। मुझको फांसी चढ़ा दो। मुझको मार डालो। जो मन आये करो। मैं कहता हूँ कि पाकिस्तान नहीं बनेगा।"

"जगदेव सिंह !" चेतनानन्द ने उसकी बाँह पकड़ हिलाते हुए, उसके ध्यान को अपनी ओर करते हुए कहा, "जानते हो मैं कौन हूँ ?"

जगदेव सिंह इस प्रकार सम्बोधन किए जाने पर ध्यानपूर्वक चेतनानन्द की ओर देखने लगा। इस पर चेतनानन्द ने उसको स्मरण कराने के लिए अपना नाम बता दिया और कहा, "मैं चेतनानन्द हूँ। मैं आपसे कलकत्ता से आते समय रास्ते में मिला था।"

जगदेव सिंह चुपचाप चेतनानन्द की ओर देखने लगा। ऐसा प्रतीत होता था कि वह कुछ स्मरण कर रहा है। कुछ देर तक देखने के पश्चात् उसने कहा, "मुझे स्मरण नहीं पड़ रहा।"

"कहाँ ठहरे हो ?"

"कहीं भी नहीं।"

चेतनानन्द को उस सिक्ख से, जिसको सब लोग पागल समझ रहे थे, इस प्रकार बातें करते देख, लोग इकट्ठे होने आरम्भ हो गए थे। चेतानानन्द इससे घबराया। परन्तु वह जगदेव सिंह के पागल हो जाने की समस्या को

सुलझाना चाहता था। इस कारण उसने कहा, "मेरे साथ चलोगे ?"

"कहां ?"

"गूजर खां।" चेतनानन्द ने उसको उकसाने के लिए कहा।

वह खिल-खिलाकर हंस पड़ा। उसने अपनी हंसी रोकने का यत्न करते हुए कहा, "वह खत्म हो गया है। सब खत्म हो गया, कुछ नहीं बचा। मैं कहता हूँ, पाकिस्तान नहीं बनेगा। पाकिस्तान .....।"

चेतनानन्द को जगदेव सिंह के पागल हो जाने का विश्वास होने लगा था। 'सब खत्म हो गया, कुछ नहीं बचा।' ये वाक्य उसकी मानसिक अवस्था का कारण बता रहे थे। चेतनानन्द ने इन्द्रजीत से कहा, "प्रतीत होता है कि यह पंजाब के बलवों में गहरी चोट खा गया है, इस कारण पागल-सा हो गया है। कहो तो इसको कोठी पर ले चलें। वहां इसके मन को शान्ति मिलेगी।"

"ले चलो।" कमला का उत्तर था।

इस पर चेतनानन्द ने कहा, "भाई जगदेव सिंह ! मेरे साथ चलो। मैं तुमको तुम्हारे सम्बन्धियों से मिला दूंगा।" इतना कह चेतनानन्द ने बांह से पकड़कर उसको गाड़ी में ड्राईवर के पास बिठा दिया।

घर पहुंचकर उसको स्नान कराया गया, नये कपड़े पहिनाए गए और अच्छा खाना दिया गया। पश्चात् आराम से बैठा कर उसको अपना परिचय दे स्मरण कराने का यत्न किया गया। अब जगदेव सिंह की बुद्धि कुछ काम करने लगी थी। सब से पहली बात जो उसको स्मरण आई, वह प्रतापसिंह का लापता होना था। उसने कहा, "मेरा भतीजा, प्रतापसिंह नहीं मिला आप से ?"

"कहां था वह ?"

"मैं नहीं जानता। मैंने समझा था कि जनता को पाकिस्तान के विरुद्ध करने का यही उपाय है। सो मैं रात-भर यही कहता रहा। फिर बाज़ार में निकल आया।"

"रात कहां ठहरे हुए थे तुम ?"

"फतेहपुरी के एक होटल में।"

"होटल का नाम क्या है ?"

होटल का नाम स्मरण करने में जगदेव सिंह को भारी प्रयत्न करना पड़ा। अन्त में उसने कहा, "रॉयल होटल में।"

चेतनानन्द ने टेलिफोन किया तो पता चला कि एक पागल सिक्ख एक युवक के साथ रहता था। वह पागल, जब युवक स्नानादि में लगा था, होटल से निकल गया। अभी तक नहीं मिला। वह सिक्ख लड़का उसको ढूंढ रहा है।

चेतनानन्द ने होटल में कोठी का पता लिखा दिया और प्रतापसिंह सायंकाल तक वहाँ पहुँच् गया। प्रताप सिंह ने जब गूजर खाँ पर बीती घटना सुनाई, तो जगदेव सिंह के पागल हो जाने का कारण स्पष्ट हो गया।

जगदेव सिंह के ठीक होने में तीन सप्ताह लगे। धीरे-धीरे उसका मस्तिष्क काम करने लगा था और वह देश की वास्तविक परिस्थिति को समझने लगा था। इन दिनों महात्मा गांधी और मिस्टर जिन्ना का एक संयुक्त वक्तव्य निकला, जिसमें दोनों सम्प्रदाय के लोगों से शान्ति रखने की प्रार्थना की गई थी।

इस वक्तव्य से यह बात स्पष्ट प्रतीत होती थी कि महात्मा जी के मस्तिष्क में पाकिस्तान में हिन्दुओं का और हिन्दुस्तान में मुसलमानों का शान्ति-पूर्वक रह सकना सम्भव है। परन्तु इस वक्तव्य ने चेतनानन्द, जगदेव सिंह और इनके साथियों के मन में भ्रम उत्पन्न नहीं किया। ये लोग मुसलमानों के आश्वासनों का मूल्य देख चुके थे।

इस समय लाहौर में एक और घटना घटी। लाहौर में हिन्दुओं के एक मुहल्ले शाहालमी दरवाज़ा और पापड़ मंडी में सैकड़ों मकानों को जलाकर भस्म कर दिया गया। इतना बड़ा कार्य केवल पुलिस की सहायता से ही सम्भव था।

मकानों की छतों पर बैठी पुलिस-चौकियों का एक परिणाम तो यह

हुआ था कि हिन्दू लोग अपने परिवारों को लेकर लाहौर छोड़ भागने शुरू हो गए थे। दूसरे सुरक्षा दल के लोग आग लगाने वालों का विरोध नहीं कर सके थे। पुलिस उनको मकानों की छतों पर चढ़ने नहीं देती थी और साथ ही इस बार तो पुलिस ने खुले रूप में विरोध किया था। कुछ हिन्दुओं ने जब यह देखा कि म्युनिसिपल कमेटी के आग बुझाने के दमकल हिन्दुओं के घरों में लगी आग नहीं बुझाते, तो उन्होंने एक अपनी दमकल खरीद ली। शाहालमी दरवाजे में लगी आग देखकर वे लोग अपनी दमकल लेकर आग बुझाने आए, परन्तु पुलिस अफसरों ने एक मैजिस्ट्रेट की सहायता से इस दमकल को काम करने की स्वीकृति ही नहीं दी। जब लोग आज्ञा की अवहेलना कर कार्य करने लगे, तो म्युनिसिपल पाईपों में पानी नहीं मिला। जब पानी दरवाजे के बाहर वाली नहर से लेने का यत्न किया गया, तो मैजिस्ट्रेट ने पुलिस को आज्ञा दे, इस दमकल के 'हौजों' को कटवा दिया। पश्चात् दमकल पर अधिकार कर, उसको कार्य करने से रोक दिया।

अगले दिन जिन लोगों के मकान जलाए गये थे, ऐसे लगभग दो सौ लोग थे, उनको पकड़कर धूप में बिठा लिया गया। इस समय उनका सामान और मकान धू-धू करते हुए जल रहे थे। आग लगाने वाला कोई आदमी पकड़ा नहीं गया। एक बिजली का इंजीनियर, जो रात में अपनी ड्यूटी पर था और जिसके पास रात को घूमने का पास भी था, इस मैजिस्ट्रेट ने गोली से मार डाला।

इस समाचार का प्रभाव चेतनानन्द और जगदेव सिंह पर भिन्न-भिन्न हुआ। चेतनानन्द ने जब यह वृत्तान्त समाचार-पत्रों में पढ़ा तो वह अपना बिस्तर बाँध, लाहौर जाने को तैयार हो गया। जगदेव सिंह ने भी पंजाब जाने को तैयार होते हुए चेतनानन्द से कहा, "मैं पटियाला और अमृतसर जा रहा हूँ। जो लाखों हिन्दू पश्चिमी पंजाब से आ रहे हैं, उनके रहने के लिये पूर्वी पंजाब में स्थान बनाना है।"

चेतनानन्द उसके कहने का अर्थ समझ गया। परन्तु वह समझ नहीं

सका कि यह कैसे हो सकेगा। चेतनानन्द को प्रश्न-भरी दृष्टि से अपनी ओर देखते हुए पा, उसने अपने मतलब को स्पष्ट कर दिया। उसने कहा, "पूर्वी पंजाब को मुसलमानों से खाली करना है, जिससे पश्चिमी पंजाब के हिन्दू रहने को स्थान पा सकें।"

जगदेव सिंह ने पटियाला, जालन्धर और अमृतसर में एक ऐसी टोली तैयार करनी आरम्भ कर दी, जो समय पड़ने पर मुसलमानों को पंजाब के इस भाग से निकाल सके। इस टोली में प्रायः वे लोग सम्मिलित हुए थे, जिनके सम्बन्धी गुजरात, रावलपिंडी, मुलतान इत्यादि स्थानों पर मारे गए थे तथा जिनकी औरतों पर अत्याचार हुए थे।

यत्न करने पर दो सौ के लगभग ऐसे मनचलों का एक जत्था तैयार हो गया। इस जत्थे के बनने में श्री वल्लभ भाई पटेल के वक्तव्य ने, जो उन्होंने अमृतसर में हिन्दुओं के साथ हुए दुर्व्यवहार को सुनकर दिया था, बहुत सहायता दी। श्री पटेल जी ने कहा था, "सरकार पंजाब के हिन्दुओं की सहायता करने में असमर्थ है। उनको अपनी सहायता अपने-आप करनी चाहिए।"

जगदेव सिंह ने लोगों को यह कह-कहकर अपने जत्थे में सम्मिलित होने की प्रेरणा दी कि श्री पटेल जी कहते हैं कि अपनी रक्षा आप करो।

जगदेव सिंह के साथ कार्य करने वाला एक मूलसिंह था। वह मुलतान का रहने वाला था। उसका पूर्ण परिवार मुलतान शहर के मकान में मार डाला गया था। उसकी युवा लड़कियों से, उसकी आँखों के सामने बलात्कार किया गया था। इस कारण जब उसको पता चला कि पटियाला में एक इस प्रकार का जत्था तैयार किया जा रहा है, तो वह हरिद्वार से चल वहाँ जा पहुँचा। ढूंडते-ढूंडते वह जगदेव से मिला और जत्थे में सम्मिलित हो गया।

जत्थे के सब लोग ऐसे थे, जो मुसलमानों के अत्याचार से पीड़ित थे। इन दो सौ आदमियों के लिये बन्दूकें, कारतूस, तलवारें, बरछें, भाले सब एकत्रित किये गए। इनको इन अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग का ढंग बताया

गया और अभ्यास कराया गया। जत्थे के प्रायः सब लोग अपनी-अपनी आपबीती और अपने सम्बन्धियों के साथ हुए दुर्व्यवहार का उल्लेख कर, इस दुष्कर कार्य के लिए एक-दूसरे को उत्साहित किया करते थे। मूलसिंह इन सबसे तेज़ था। यह एक अति कठिन समस्या थी कि इन लोगों को नियन्त्रण के भीतर रखा जाए। जब इनको कहीं हिन्दुओं के साथ हुए दुर्व्यवहार का समाचार मिलता, तो वे जोश में भर जाते थे और कभी-कभी जगदेव सिंह को, जो उनको कार्य न करने का आदेश दिया करता था, गालियाँ दिया करते थे।

जगदेव सिंह ने यह अनुभव किया कि सारे जत्थे को एक स्थान पर रखना कठिन है। कहीं पुलिस को सन्देह हो गया तो ऐक्शन के पहले ही सब पकड़ कर मरवा डाले जायेंगे। इस कारण इनको पाँच-पाँच दस-दस करके भिन्न-भिन्न स्थानों पर रखा गया। पटियाला, नाभा, जींद, जालंधर फगवाड़ा, माना वाला इत्यादि स्थानों पर इस जत्थे की टुकड़ियां भेजी गईं और योजना बना दी गई कि प्रत्येक टुकड़ी सूचना मिलने पर मुसलमानों को निकालने का यत्न करे।

प्रतिकार

नीना का सम्बन्ध रामचन्द्र राव से केवल पाँच दिन का था। वह उन लोगों से सर्वथा भिन्न प्रकार का था, जिनसे नीना और उसके माता-पिता का मेल-जोल था। कम बोलने वाला, जो कहे वह करके दिखाने वाला, धीर और वीर, ये उसके कुछ गुण थे। जिस दिन उसकी माँ के साथ दुर्घटना हुई थी, उस दिन से लेकर नीना के शिमले जाने तक, वह प्रायः नित्य उससे मिलता रहता था। नीना पहले तो पार्वती के घर रही थी और जब उसका पिता आ गया, तो वह अपनी कोठी में चली आई थी। इन सब दिनों में वह मिलने जाता तो सूचना भेज देता कि रामचन्द्र पूछने आया है कि सब ठीक है न। उसने कभी यह नहीं कहा कि वह मिलना अथवा बात करना चाहता है। जब नीना बाहर आ उससे मिलती तो वह खड़ा-खड़ा ही पूछता, "कुछ चाहिए? कुछ करने को है? अच्छा अब चलता हूँ।"

"आप बैठिए। आपसे एक बात पूछनी है।"

"हाँ पूछिये।" वह खड़ा-खड़ा ही कहता।

"तो आप बैठियेगा नहीं?"

रामचन्द्र बैठ जाता, परन्तु कह देता, "मुझको जाना है। आज लाहौर में एक क्षण भी व्यर्थ गंवाने को नहीं।"

"क्या काम रहता है आपको?"

"कल नगर-भर में साठ आदमियों के पेट में छुरा घोंपा गया था। इन में से दस तो वहीं मर गए। तीस के लगभग बुरी तरह से घायल हुए हैं। उनको सरकारी हस्पताल में रखने को स्थान नहीं। वहां सेवा-शुश्रूषा करने वाले लोगों की कमी है। यह सब देखना है। जो मर गए हैं, उनमें कुछ लावारिस हैं। उनका दाह-संस्कार भी करना है। फिर कल रात कसेरे बाज़ार में आग लगा दी गई थी। वहां से औरतों और बच्चों को निकालकर सुरक्षित स्थान पर ले जाना था। जो लोग लाहौर छोड़कर जा रहे हैं, उनकी सहायता के लिये स्टेशन पर कुछ स्वयंसेवक नियुक्त करने हैं। इस प्रकार काम इतना अधिक है कि सोने के लिये भी समय नहीं।"

"तो मैं आपका समय लेकर क्या करूँगी ?"

"यदि कुछ काम हो तो बताइये। मैं करने को समय निकाल लूंगा।"

जब नीना का पिता आ गया तो रामचन्द्र राव उसके पास जा पहुँचा और नीना की माँ के हत्यारों के पकड़े जाने के विषय में बातचीत कर, केवल यह पूछकर चलने को तैयार हो गया, "नीना देवी ठीक हैं ?"

"हाँ।"

रामचन्द्र राव बाहर निकल आया। उसको मालूम नहीं था कि नीना पर्दे के पीछे खड़ी उसकी बातें सुन रही है। जब रामचन्द्र राव नीना के पिता के कमरे से बाहर निकला, तो वह दूसरे दरवाज़े से बाहर आकर उसके सामने खड़ी हो गई। उसने पूछा, "आप जा रहे हैं ?"

"हां ! आप ठीक तो हैं ?"

"वाह ! मैंने पकड़ लिया तो पूछने लगे।"

"यह बात नहीं नीना देवी ! मैंने आपके विषय में आपके पिता से पहले ही पूछ लिया था। उनका कहना है कि आप भली-भाँति हैं।"

"उनसे पूछ लेने और मुझसे पूछने में आप अन्तर नहीं समझते क्या ? देखिए मैं कल शिमले जा रही हूँ। मैंने पिता जी से भी चलने के लिए कहा है, परन्तु उनको अपने ऑफिसर मित्रों पर अभी भी भरोसा है। उनका विश्वास है कि हत्यारों का पता चल जाएगा।"

दोनों कोठी से बाहर निकल लॉन में आ गए थे। यहाँ घास पर खड़े-खड़े बातें होने लगीं। रामचन्द्र ने कहा, "कितना अच्छा होता, यदि हम आज से तीस वर्ष पूर्व इस सत्य को समझ लेते कि हिन्दू और मुसलमान दो भिन्न जातियाँ हैं और हिन्दुस्तानी कौम हिन्दू है, मुसलमान नहीं।"

"तो क्या होता? लोग तो कहते हैं कि आज जो-कुछ हो रहा है, वह अंग्रेज़ करा रहे हैं।"

"यह भी सत्य से इतना दूर है, जितना उत्तरी ध्रुव दक्षिणी ध्रुव से। अँग्रेज़ों का बस चलता तो हमको कुलियों से ऊँचा न होने देते। जब-जब भी देश के शासन में सुधार हुआ है, अँग्रेज़ों ने अपनी इच्छा से नहीं किया। अब देश स्वराज्य प्राप्ति का यत्न कर रहा है और स्वराज्य मिलने जा रहा है। क्या यह अँग्रेज अपनी इच्छा से दे रहे हैं? इसी प्रकार मैं कहता हूँ कि अँग्रेज कितना भी चाहते कि हिन्दू-मुसलमान लड़ें, यह कभी न होता, यदि मुसलमान अपने को हिन्दुस्तान का नागरिक समझते और हिन्दुस्तान की उन्नति में अपना हित मानते। अँग्रेज तो बहुत-कुछ चाहते थे और चाहते हैं, परन्तु होता वह है, जिसको हम चाहते हैं और जिसको करने के लिए यत्न करते हैं। हमने भारत में भारतीयों का राज्य स्थापित करने का यत्न ही नहीं किया। हम अँग्रेज़ी पढ़े-लिखे हिन्दुस्तानियों के भ्रममूलक प्रचार से प्रभावित हो, यह यत्न करते रहे हैं कि भारत में हिन्दू-मुसलमानों का संयुक्तरूप से राज्य स्थापित हो। यह असम्भव था, क्योंकि मुसलमान यह नहीं चाहते थे। वे सदैव से यह चाहते रहे हैं कि यहाँ पर इस्लामी हकूमत कायम हो।"

"यदि हम हिन्दू राज्य स्थापित करना चाहते, तो क्या वह कर सकते थे?"

"हाँ, अवश्य। हिन्दु-मुसलमान संयुक्त राज्य स्थापित करने से हिन्दू राज्य प्राप्त करना सुगम था। यदि कांग्रेस इस हिन्दू-मुलसमान बनावटी ऐक्य का विचार छोड़, शुद्ध हिन्दू-राष्ट्र के लिए प्रयत्न करती होती, तो भारत में स्वराज्य इस शताब्दी के आरम्भ में स्थापित हो चुका होता।"

"यह सब 'फैन्टास्टिक' (अनहोना स्वप्न) प्रतीत होता है।"

"ऐसा ही सब अँग्रेजी आचार में पले लोगों को दिखाई देता है। इसमें तुम्हारा दोष नहीं है।"

"तो आप समझाइये।"

रामचन्द्र राव ने मुस्कुरा कर कहा, "मैं कल आपको रेल्वे-स्टेशन पर मिलूंगा। अब यदि कुछ काम न हो तो जाऊँ?"

"मैं आपसे बहुत-कुछ पूछना चाहती हूँ, परन्तु आप तो आते हैं पीछे, जाने के लिए पहले ही तैयार हो जाते हैं।"

"समय ही ऐसा है। यदि इस संघर्ष में जीता रहा, तो फिर बातें करने के लिए बहुत अवसर मिलेगा।"

"तो क्या जीवन जाने की सम्भावना भी है?"

"देखा नहीं कि माता जी के साथ क्या हुआ है? यहाँ रहता हुआ कोई नहीं कह सकता कि कल उसका क्या हो जायगा।"

अगले दिन रेल की गाड़ी छूटने से आधा घंटा पहले ही नीना और उसके पिता स्टेशन पर पहुँच गए थे। जब रामचन्द्र राव और चेतनानन्द नीना को मिलने गए, तो नीना रेलगाड़ी में बैठ चुकी थी। उनको देख वह लपककर बाहर चली आई। वह फर्स्ट क्लास के डिब्बे में बैठी थी। रामचन्द्र राव ने पहुंचते ही पूछा, "बैरिस्टर साहब भी जा रहे है क्या?"

"नहीं।" नीना का उत्तर था। "वे अभी हत्यारों के पकड़े जाने की आशा में हैं।"

"व्यर्थ है। तुम्हारा जाना तो ठीक ही है! यहाँ जान से अधिक मान जाने का भय है।"

"दीदी का पत्र आया है कि एक कोठी ले ली गई है। सो मैं आप दोनों को वहाँ आने का निमन्त्रण देती हूँ।"

चेतनानन्द हँस पड़ा। उसकी, सूहा बाज़ार में लगी आग बुझाने के प्रयत्न से हुई थकावट अभी उतरी नहीं थी। नीना ने पूछा, "इसमें हँसी की कौन बात है?"

"बात यह है नीना देवी ! कि हम दोनों में से एक भी आपके निमंत्रण से लाभ उठा सकने के लिए जीवित रह सकेगा, कहना कठिन है।"

नीना के मन पर यह अंकित हो चुका था कि दोनों बहुत ही भय-युक्त काम में लगे हुऐ है। इससे वह दुःख अनुभव करती थी और यही कारण था कि उसकी अन्तरात्मा उनको लाहौर क्षेत्र से बाहर चले जाने की राय देती थी। निमन्त्रण तो इस राय का बाहरी स्वरूप था। उसने कहा, "मैं देखती हूँ कि आप बहुत थके हुए हैं; इससे ही कहती हूँ कि कुछ दिन आराम कर फिर कार्य में लग जाइयेगा।"

"आराम करना तो दूर, उसके लिए विचार करने का भी अवकाश नहीं।"

"यह कब तक चलने की सम्भावना है ?"

"जून १९४८ तक तो चलेगा ही। अंग्रेजी सरकार ने भारत की दासता समाप्त करने की यह तिथि घोषित की है।"

"यह तो अभी बहुत दूर है। अच्छी बात है, आप लोगों ने मुझ पर और हमारे परिवार पर बहुत अहसान किया है। इससे मैं आपकी कृतज्ञ रहूँगी। यदि शिमले आना हो सके, तो बताइयेगा। हो सका तो अवश्य मिलूँगी।"

चेतनानन्द और रामचन्द्र राव, दोनों में से किसी को भी यह आशा नहीं थी कि वे नीना के निमन्त्रण का उपयोग कर सकेंगे, परन्तु मोची दरवाजे और पीपल वेड़े की दुर्घटना के कारण राम चन्द्र राव को भी लाहौर छोड़ना पड़ा। जब चेतनानन्द दिल्ली गया तो राम चन्द्र राव शिमले जा पहुँचा। रामचन्द्र राव का घाव बहुत गहरा था और गोली उसकी जाँघ में ही रह गई थी। इस कारण उसको मोटर में लादकर शिमले पहुँचा दिया गया। रामचन्द्र राव के कहने पर नीना को तार द्वारा सूचित किया गया था। वह मोटर के अड्डे पर आई हुई थी और रामचन्द्र राव का पीला मुख, जो बहुत रक्त बह जाने के कारण हो गया था, देख भय से आवाक् मुख रह गई।

"क्या हुआ है ?" इसके अतिरिक्त वह कुछ नहीं पूछ सकी।

रिक्शा में मोटर अड्डे से केवल नारायण की कोठी, जो मुशोबरा रोड पर थी, रामचन्द्र को पहुँचाया गया और डॉक्टर को वहीं बुलाकर ऑपरेशन कर गोली निकाली गई। इससे घाव बहुत गम्भीर हो गया। रामचन्द्र अभी खाट पर ही था, जब तीन जून की घोषणा हुई। इससे उसका उत्साह भंग हो गया। नीना ने पलंग के समीप बैठे-बैठे लॉर्ड माउन्टबेटन, भारत के वायसराय, की यह घोषणा समाचार पत्र में से पढ़कर सुनाई, तो रामचन्द्र के मुख से निकल गया, "सत्यानाश हो गया है।"

"क्यों ?" नीना ने, जो इस समाचार से प्रसन्नता अनुभव कर रही थी, विस्मय में पूछा, "क्या बात है ? आपका मुख विवर्ण क्यों हो गया है ?"

(२)

"तुम, जो देश के विषय में कुछ नहीं जानती, इस वेदना को अनुभव नहीं कर सकती। भारत खंडित होते देख, मुझको असह्य दुःख हो रहा है। कठिनाई यह है कि एक बार यह सिद्धान्त मानकर फिर पीछे हटना कठिन हो जाएगा।"

"मैं आप की बात जानकर तो यह समझी थी कि आपको देश की इस बाँट से दुःख नहीं होगा। एक ओर तो आप कहते हैं कि मुसलमान भारतीय नहीं हैं और दूसरी ओर उनके लिए पृथक् देश की माँग स्वीकार नहीं करते ?"

"वाह ! यह भी भला कोई युक्ति है ? जब बाहर से आकर अथवा यहां पर ही उत्पन्न होकर कुछ अभारतीय एकत्रित हो जावें, तो देश को बांटकर टुकड़े कर दिए जाने चाहियें क्या ? मुसलमान भारतीय बनकर रह सकते थे, परन्तु वे नहीं रह रहे। इस कारण उनका देश पर अधिकार नहीं होना चाहिए।"

"पर मैं पूछती हूँ कि देश का कुछ भाग मुसलमानों को दे दिया गया, तो हानि ही क्या है ?"

"देश की सीमा, जो प्रकृति ने बनाई है, बिगड़ जाएगी। उस सीमा के बिगड़ जाने से देश अरक्षित हो जाएगा। जो प्राकृतिक साधन देश को अपने जीवन-मान रखने के लिए मिले हैं, वे बँट जाएंगे और सब देश में बसने वाले त्रसित, निर्धन और भूखे हो जाएंगे। देश की सीमाएँ प्रकृति बनाती है, मनुष्य की अल्प बुद्धि नहीं बना सकती।"

"पर इतिहास इस बात का साक्षी है कि भारत देश कभी भी एक नहीं रहा।"

"यह बात नहीं। बात यह है कि जब-जब देशवासियों की मूर्खता के कारण भारत खण्डित हुआ है, तब-तब ही देश में दुर्व्यवस्था, दुर्भिक्ष, विग्रह और आक्रमण हुआ है। कभी-कभी देश के भिन्न-भिन्न अंगों में, भिन्न-भिन्न राज्य होते हुए भी, सांस्कृतिक और व्यापारिक ऐक्य रहने से शान्ति रह सकी है। मुसलमानों के हाथ में यह भाग देने से न तो सांस्कृतिक और न ही व्यापारिक ऐक्य रह सकेगा।"

नीना इस नई ऐक्य की विवेचना से आश्चर्य कर रही थी। इस विवेचना से उसके मन का संशय मिट गया था, परन्तु अपनी शिक्षा और अपने पिता के मित्रों की विचारधारा के प्रभाव से वह इस बात को मानने के लिए तैयार नहीं हो रही थी।

सांस्कृतिक और व्यापारिक ऐक्य राजनीतिक ऐक्यता से भिन्न हैं। राज्य प्रबन्ध भिन्न-भिन्न हो सकते हैं, परन्तु संस्कृति और व्यापार सुविधा पूर्ण देश के लोगों की समान हो। समस्या का सुझाव बहुत सुन्दर था, परन्तु नीना मन में सोचती थी, यह कैसे हो सकेगा ?

नीना को चुप और विचारग्रस्त देख रामचन्द्र उसके मन में मच रही उथल-पुथल का अनुमान लगा रहा था। उसने अपने अनुमान से कहा, "यह बात तुम्हें नई प्रतीत होगी। इस पर भी है यह सत्य है। राष्ट्र का विचार आज कल की राजनीति में नहीं है। राष्ट्र उस जन-समूह को कहते हैं, जो प्राकृतिक सीमाओं में रहने से, अपनी रक्षा अथवा भोजन-व्यवस्था में और अपनी विचार-ऐक्यता के कारण एक हों ; जो अपनी भलाई एक रहने में

अनुभव करते हों। इस भावना में भौगोलिक अवस्था तो प्रभाव डालती है, परन्तु इसमें राजनीतिक प्रबन्ध को हस्तक्षेप नहीं रखना चाहिए। मुसलमानी राज्य इन बातों में हस्तक्षेप करेगा, इस कारण वांछनीय नहीं है।"

इस प्रकार नीना और रामचन्द्र में घनिष्ठता होने से विचार-ऐक्यता बढ़ती जाती थी। नीना के सामने एक नया संसार खुल रहा था। मनुष्य का स्वार्थ और उसमें भी विवाह, मानवता तथा कर्तव्य के सम्मुख, गौण होते जा रहे थे। विचार-ऐक्य से कार्य-ऐक्य की ओर प्रगति होने की स्थिति उत्पन्न हो गई थी।

"यह सिद्धान्त आपका मैं मानती हूँ।" एक दिन नीना ने कहा, "परन्तु इसकी प्राप्ति के लिए क्या करना चाहिए ?"

"देखो नीना ! देश की एकता और भारतीय राष्ट्र की स्वतन्त्रता तथा प्रभुता पुनः प्राप्त करने के लिए नागपुर के एक महान् दीर्घ-द्रष्टा ने एक संस्था को जन्म दिया था। बहुत कठिनाई से और भारी तपस्या के पश्चात् उस संस्था ने भारत में उक्त विचारधारा को सजीव करने का यत्न किया, परन्तु कई कारणों से वह संस्था अभी इतनी प्रभावशाली नहीं हो सकी, जितनी कि कांग्रेस, जो राष्ट्र की उक्त विवेचना की हत्या करने पर तुली हुई है। इंग्लैंड को अपनी कठिनाईयों के कारण समय से पूर्व ही भारत छोड़ना पड़ रहा है। इस कारण राष्ट्र के अस्तित्व को न समझने वाली संस्था राष्ट्र-अहित अर्थात् देश की हत्या करने पर प्रस्तुत हो गई है।

"राष्ट्रवादी संस्था, जिसके जन्मदाता अब नहीं रहे, प्रबल होते हुए भी इस स्थिति में नहीं कि कांग्रेस के भारत खण्डित करने वाले सौदे को अस्वीकार कर सके। अब भारत के खण्ड तो होंगे ही। राष्ट्र के वे अंग, जो पाकिस्तान में हैं, भारत में आवेंगे और देश में इतनी गड़-बड़ मचेगी कि बीस-तीस वर्ष तो इस झमेले को समेटने में लग जावेंगे। पश्चात् ही खंडित को अखण्ड करने का समय आएगा।

"तब तक हमारा कार्य यह है कि भारत के राष्ट्रवादी तत्वों को भारत का सुरक्षण प्रदान किया जाए; भारत में अराष्ट्रवादी तत्वों को भारत से

बाहिर किया जाए ; भारत में राष्ट्रीयता को एकरस, एकरूप और एक रंग कर दिया जाए। यह कार्य बहुत लम्बा है। अनेकों कार्यकर्ताओं की इसके लिए आवश्यकता है।"

"परन्तु इसका आरम्भ कहाँ से किया जाए ?"

"प्रथम कार्य है, भारत के राष्ट्रवादी तत्वों को भारत का सुरक्षण प्रदान करना। आज मैं अपने कार्य को इस प्रकार समझ रहा हूँ कि पाकिस्तान में रहने वाले हिन्दुओं को प्रथम तो वहां निर्भय होकर रहने की शक्ति प्रदान की जाए। यह भारत सरकार कर सकती है। जैसे कल का समाचार था कि लाहौर के हिन्दू मुहल्लों को मुसलमानों ने पुलिस की सहायता से जला दिया है, तो भारत सरकार को पंजाब में मार्शल-लॉ लागू कर देना चाहिए, जिससे पुलिस पुनः ऐसा कार्य न कर सके। हिन्दुओं की रक्षा के लिए हिन्दू फौजी लाहौर में नियत कर देने चाहिएं ; परन्तु यह बात कांग्रेस नहीं कर सकेगी। पाकिस्तान के हिन्दुओं को अभयदान श्री पटेल और श्री नेहरू की सरकार नहीं दे सकेगी। इस कारण यह हम लोग करेंगे। कैसे ? यह तुम शीघ्र सुनोगी।

"हमारा अभयदान स्थायी नहीं हो सकता। इस कारण भारतीय राष्ट्र के वे अंग जो पाकिस्तान में हैं, उनको निर्भय करने के लिए दूसरा उपाय करना है। वह है उनको पाकिस्तान से निकाल कर भारत-भूमि पर लाना और फिर बसाना। इसमें भी भारत सरकार को कार्य करना चाहिए। वह करें अथवा नहीं, कुछ कहा नहीं जा सकता। अभी तक भारत सरकार ने इस ओर ध्यान भी नहीं दिया। हम इसमें भी कुछ तो करेंगे ही।"

"पर मैं तो पूछ रही थी कि मैं इसमें क्या कर सकती हूँ ?"

"पार्वती देवी को जानती हो ?"

"हाँ ! मैं उनसे पढ़ती रही हूँ।"

"इस समय वे सर गंगाराम हस्पताल में नर्स का काम कर रही हैं। ऐसा ही तुमको भी कुछ करना चाहिए।"

नीना पार्वती को नर्सिंग का काम करते सुन गम्भीर विचार में पड़ गई। उसने निर्णय कर लिया और पार्वती को लाहौर मे लिखा। पार्वती

ने उत्तर दिया कि यह काम बड़ा कठोर है और उसके मान का भी नहीं; परन्तु शक्ति और दुर्बलता मन की अवस्था पर निर्भर हैं, इस कारण नीना मानी नहीं। परिणाम यह हुआ कि उसको 'वाह' कैम्प में जाकर काम करने की स्वीकृति मिल गई।

मीना और केवल नारायण रामचन्द्र राव से नीना के मेल-जोल को पसन्द नहीं करते थे। अब नीना को बाहर जाने के लिए उद्यत देख वे लड़ पड़े। रामचन्द्र राव को कोठी से निकल जाने का आदेश हो गया। रामचन्द्र गया तो नीना भी चली गई।

(३)

लाहौर के एक उपनगर कृष्णनगर में, एक मकान के भीतर चेतनानन्द बैठा हुआ कुछ स्वयंसेवकों से एक योजना पर विचार कर रहा था। एक स्वयंसेवक ने, जिसका नाम नारायण राव था, कहा, "चेतनानन्द जी! इस योजना का एक प्रभाव तो होगा ही। लाहौर के हिन्दुओं के उत्साहहीन मन पुनः प्रफुल्लित हो उठेंगे और फिर उनको यहां से निकल जाने में अधिक सुविधा मिलेगी।"

"अभी आशा की एक झलक शेष है। लाहौर का विषय अभी विचाराधीन है। यह भी हो सकता है कि यह हिन्दुस्तान में ही रह जाए।"

"यह ठीक है, परन्तु इस विषय का निर्णय हमारे इस झगड़े से नहीं। लाहौर हिन्दुस्तान में भी आ गया तो यहाँ से गए हुए लोग वापस आ जायेंगे। इस समय तो सुरक्षा के लिए निकलना ही परम लक्ष्य होना चाहिए।"

चेतनानन्द ने योजना की स्वीकृति दे दी। दूत दौड़ा दिये गए और उसी सांयकाल, जब कर्फ्यू लगा हुआ था, कृष्णनगर के कई घरों में युवक एकत्रित हो किसी कार्य की तैयारी कर रहे थे। स्वयंसेवक नहीं जानते थे कि क्या हो रहा है। चेतनानन्द भी कमीज और नीकर पहनकर तैयार खड़ा था। उसके हाथ में एक पिस्तौल थी, जिसमें वह गोलियां डाल रहा था।

रात के बारह बजे तक कर्फ्यू की पाबन्दी देखने वाले पुलिस कॉस्टेबल अपनी-अपनी रौंद पूरी करके थानों को लौटने लग गए थे । कुछ, जिनकी ड्यूटी देख-भाल की थी, कहीं सिर छुपा ऊँघ रहे थे । इस समय कृष्णराव मकान की छत पर चढ़ लाल रंग की टॉर्च से संकेत कर नीचे उतर आया । इस मकान में भी पन्द्रह के लगभग संरक्षण दल के लोग तैयार बैठे थे। कृष्ण राव के छत पर से उतरते ही ये सब लोग आज्ञा पाने के लिए खड़े हो गए। ये चेतनानन्द के साथ जाने वाले थे और चेतनानन्द जानता था कि उन्होंने कहां जाना है और क्या करना है ।

कृष्णराव ने एक क्षण के लिए आँखें मूंदी, विचार किया और आज्ञा दे दी, "चलिए ।"

चेतनानन्द ने कहा, "हम विजयी होंगे । वीरो ! चलो ।" यह कह वह मकान से बाहर अकेला गया और हाथ से संकेत कर उत्तर की ओर चल पड़ा । उसके कुछ क्षण पश्चात् एक अन्य स्वयंसेवक मकान से बाहर गया । वह भी इधर-उधर देख, पीछे आने वाले को संकेत कर चेतनानन्द के पीछे चल पड़ा । इस प्रकार आधा-आधा मिनट पीछे एक-एक कर मार्ग साफ़ देख सब चेतनानन्द के पीछे चलते गए और आठ मिनट में सब स्वयंसेवक घर से निकल गए ।

चेतनानन्द कृष्णनगर से उत्तर की ओर चलता हुआ, बख्शी जैशी राम के मैदान की बगल से होता हुआ, वैटरनियरी कॉलेज के पश्चिम में जा पहुँचा । वहाँ कुछ लोग पहले ही खड़े थे । उनके काले सायों को देख चेतनानन्द ने जेब से टॉर्च निकाल, जलाकर उनके मुख पर प्रकाश डाला । दूसरी ओर से भी एक ने टॉर्च जलाकर संकेत किया । वे इनके ही लोग थे । वे भी चेतनानन्द की भांति अन्य स्थानों से आए थे। इस समय उनके पीछे आने वाले भी एकत्रित होने आरम्भ हो गए । देखते-देखते दो सौ से ऊपर युवक वहाँ एकत्रित हो गए । इस समय चेतनानन्द ने धीमे स्वर में सबसे पूछा, "जिनको भय लगता हो, वे चले जाएं ।"

किसी ने उत्तर नहीं दिया और न ही कोई वहाँ से लौटा । इस पर

चेतनानन्द ने आज्ञा दी, "चलो।"

सब वहाँ से उत्तर की ओर चल पड़े। मार्ग खेतों में से था। कहीं पक्की सड़क भी आ जाती थी। श्मशान भूमि के पीछे से वे पश्चिम् की ओर घूम गऐ। वहाँ राजगढ़ी गाँव था। गाँव में अन्धेरा था। केवल एक स्थान पर से, जो गाँव का मध्य भाग प्रतीत होता था, प्रकाश होने के लक्षण प्रतीत हो रहे थे। चेतनानन्द सबका मुखिया था। इस कारण उसने स्वयंसेवकों को तीन भागों में विभक्त किया और उनसे कहा, "पूर्व, उत्तर और दक्षिण की ओर से घूमकर सब को उस स्थान पर पहुँचना है, जहाँ आग जल रही प्रतीत होती है।"

परिणाम यह हुआ कि ये लोग तीन भागों में बंट गए और गाँव में तीन ओर से घुस गए। कृष्ण राव सबसे पहला व्यक्ति था, जो गाँव में उस स्थान पर पहुँचा, जहाँ प्रकाश प्रतीत होता था। वह कृष्णनगर में मकान की छत पर चढ़, टॉर्च से संकेत कर और चेतनानन्द को कार्य करने का आदेश दे, बाईसिकल पर चल पड़ा था। वह अपने सौभाग्य पर विस्मय कर रहा था कि मार्ग में उसे कोई नहीं मिला। साधारण लोग तो कर्फ्यू के कारण घरों से निकल नहीं सकते थे। इस रात नगर के इन भागों में शान्ति थी, इस कारण पुलिस वालों की भागदौड़ भी दिखाई नहीं दी। जब कृष्णराव राजगढी के पास पहुंचा, तो वहाँ भी शान्ति और अन्धकार दिखाई दिया। यह विस्मयकारक था। अब उसने बाईसिकल अन्धेरे में एक पेड़ के नीचे रखदी और दबे पाँव गाँव में प्रवेश कर गया। गर्मी की ऋतु में गांव के पुरुष मकानों के बाहर सड़क के किनारे खाट डाल सोया करते थे। आज रात वहां कोई नहीं था। कृष्ण राव को ऐसा अनुमान हुआ कि उनके आक्रमण का समाचार गांव वालों को मिल गया है और सब गांव छोड़, नगर में सुरक्षित स्थानों पर चले गये हैं। इससे उसको निराशा हुई। वह चला जा रहा था और विचार कर रहा था कि कहीं उसके लोग किसी फन्दे में न फंस जाएँ। इस समय उसे गांव के मध्य भाग में 'फिटसन लैम्पों' के प्रकाश का आभास हुआ। वह उस ओर ही चल पड़ा।

अब कहीं-कहीं खाली खाटें भी पड़ी दिखाई दीं। इससे कृष्णराव को आबादी के चिह्न देखकर कुछ सन्तोष हुआ। परन्तु जब वह गाँव के मध्य; के चौक में पहुँचा, तो वह चकाचौंध-सा रह गया। बीस-तीस गैस के हंडों के प्रकाश में सारा गाँव वहाँ उपस्थित था। एक ओर एक तख्त-पोश पर बैठा एक वृद्ध मौलवी वाज़ कर रहा था। आसपास के मकानों में औरतें बैठीं वाज सुन रही थीं।

कृष्णराव वहाँ पहुँचा, तो मौलवी कह रहा था, "खुदा परवरदिगार ने हज़रत को एक नमूना बना कर हमारे पास भेजा है। हमको उनकी बातों को अमल में लाना चाहिए। हज़रत नबी ने काफिरों की हर शै को हलाल बताया है। इसलिए आप लोगों को काफिरों की लूटी हुई धन-दौलत और उनसे छीनी हुई औरतें हलाल हैं। आपको उनकी औरतें और धन-दौलत लेने पर कोई गुनाह नहीं लगेगा, बल्कि सवाब होगा। इस की वजह साफ है। आप अपने इस फेल से खुदा की उम्मत बढ़ायेंगे।"

कृष्णराव एक ओर भीड़ के पीछे खड़ा हो वाज सुनने लगा। ज्यूं-ज्यूं मौलवी अपने कथन की व्याख्या करता जाता था, सुनने वालों का साहस और उत्तेजना बढ़ती जाती थी। कृष्णराव भी उस वाज़ के कहने वाले की मानसिक अवस्था सुन कर अचम्भा अनुभव कर रहा था। मौलवी का कहना था, "इस हिन्दुस्तान में हमारे बुजुर्गों ने इस्लाम का अलम गाड़ा था। उन्होंने सात सौ साल तक इस सर ज़मी पर इस्लाम का डंका बजाया था। अँग्रेज़ों के यहाँ आ जाने पर यहाँ की तीस करोड़ की खलकत को इस्लाम के नूर से पुर करने का काम रुक गया। अब फिर मौका आ गया है। खुदा के फज़ल से हिन्दुस्तान के एक छोटे-से हिस्से में फिर इस्लामी हकूमत कायम होने जा रही है। हमारे लिए यह मौका है कि हम इस हकूमत को सही मायनों में इस्लाम की अमल बरदार बनाएँ। इसके लिए यह जरुरी है कि यहाँ कुफ्र न रहे। हमको इसके लिए पूरी कोशिश करनी चाहिए। ऐसा करने में, गाज़ियों और शहीदों, दोनों को बहिश्त मिलेगा।"

कृष्ण राव के मन में यह विचार आ रहा था कि इनकी इस्लामी

हकूमत तो आज यहाँ स्थापित हो जाएगी। इस वाज़ के सुनने वाले प्रायः बहिश्त का मज़ा चखने लगेंगे।

मौलवी कह रहा था, "हमें लाहौर काफ़िरों से खाली करना है। कल हमारा प्रोग्राम मुहल्ला सत्थां का है। यह मुहल्ला मुसलमानी इलाके में एक काँटा है। कल इसकी सफाई होनी चाहिए। शाहालमी दरवाजे का काँटा जिस खूबी से निकाला गया था, उसी तरह इसकी भी सफाई होनी चाहिए। सवेरे चार बजे यहाँ से चला जायगा···।"

इस समय कृष्ण राव के अभ्यस्त कानों में दूर से आने वाले स्वयं-सेवकों के पावों की टप-टप सुनाई दी। उसने घूमकर देखा, पचास के लग-भग स्वयंसेवक अन्धेरे में खड़े दिखाई दिये। कृष्णराव वाज़ सुनने वालों को छोड़, स्वयंसेवकों के समीप चल पड़ा। वह जब उनके समीप पहुँचा तो उसने घडी में समय देखा और पिस्तौल की एक गोली हवा में चला कर संकेत कर दिया।

गोली का शब्द होते ही गाँव के भिन्न मार्गों से गगन-भेदी नारों की आवाज़ आनी शुरू हो गई —"जयकारा-ए-वीर बजरंगी। हर हर महादेव।"

इन नारों से वाज की मजलिस में एक क्षण के लिए चुप्पी और पीछे चीख-पुकार और एक-दूसरे के ऊपर गिरना-पड़ना आरम्भ हो गया। मौलवी ने अपने पूरे बल से कहा, "भागो नहीं। कुछ नहीं है।" परन्तु लोग तो सुन रहे थे—'हर हर महादेव।'

जब तक लोग जलसे से उठकर अपने घरों की ओर भागते, धराधर लाठी और छुरे चलने लगे। मौलवी मंच पर से उठ साथ के मकान में घुस गया। वाज़ सुनने वाले बहुत से लोग चौक के मकानों में घुस गए। जो भी नीचे रहे, मौत के घाट उतार दिये गए।

कुछ मुसलमानों ने मकानो के ऊपर से ईंटें फेंकनी आरम्भ कर दीं। इसका उत्तर स्वयंसेवकों के पास था। गाँव के एक कोने से आग लगानी आरम्भ कर दी गई। जिस मकान में वाज़ करने वाला मौलवी छुपा था, उसमें से गोलियां चलने लगीं। कुछ स्वयंसेवकों के पास बन्दूकें भी थीं।

उन्होंने उन गोलियों का उत्तर दिया। इस प्रकार आक्रमण आरम्भ होने से पन्द्रह मिनट के भीतर सारे गांव में चीख-पुकार मच गई थी। गांव के चारों ओर मकान जलने आरम्भ हो गए थे। औरतें भागती हुईं जलते मकानों से बाहर निकल, खुदा का वास्ता डालतीं, रोतीं-चीखतीं बच्चों को गोदी में लिए गांव से भागने का यत्न करने लगीं।

कृष्णराव यह दृश्य देख कांपने लगा। उसने आज्ञा दी, "कोई स्वयंसेवक औरतों और बच्चों को हाथ न लगाये।"

औरतें भागीं, तो उनके घर वाले भी पीछे-पीछे भागे। इस पर स्वयं सेवकों ने औरतों में से पुरुषों को पृथक् करना आरम्भ कर दिया। इससे औरतें अपने पुरुषों से चिपट गईं। इस प्रकार इतना हाहाकार मचा कि मनुष्य हृदय की कठोरता की सीमा आ गई।

यह देख कृष्णराव ने गांव छोड़कर वापिस लौट जाने का बिगुल बजा दिया। स्वयंसेवक आग से धू-धू करते हुए गांव को छोड़, चुपचाप लौट पड़े।

(४)

राजगढ़ी की घटना का प्रभाव लाहौर के भिन्न-भिन्न श्रेणी के नागरिकों पर भिन्न-भिन्न हुआ। मुसलमानों को विचार करने का अवसर मिला कि उनकी भी हानि हो सकती है। जब राजगढी के मुससमानों ने अपना रोना अफसरों के सामने रोया तो अफसर आग-बबूला हो गए। पुलिस राजगढ़ी में आग लगी देख समझी थी कि आग भाटी दरवाजे में मुहल्ला सत्थां में लगी है। उसकी सूचना के अनुसार मुहल्ला सत्थां में आग प्रातः चार बजे के पीछे लगने वाली थी। रात के एक बजे आग की लालिमा देख वह समझी कि ऐक्शन कुछ घण्टे पहिले हो गया है। राजगढ़ी के गांव के लोगों ने वैटरनियरी कॉलेज में आकर टेलिफ़ोन किया तो पुलिस को अपनी भूल का ज्ञान हुआ। तुरन्त आग बुझाने का इंजिन भेजा गया और पुलिस आग लगाने वालों को पकड़ने के लिए गई; परन्तु आक्रमणकारी अपने-अपने स्थानों पर वापिस पहुँच चुके थे।

हिन्दू इस घटना से यह समझ पाये कि वे भी चाहें तो बदला ले सकते हैं। अभी तक लाहौर और पंजाब के हिन्दू रक्षा का प्रबन्ध ही करते थे। आज पंजाब के डायरेक्ट ऐक्शन में पहला दिन था, जब हिन्दुओं ने प्रत्याक्रमण किया था। इससे हिन्दुओं में साहस बढ़ गया।

चेतनानन्द इस आक्रमण में हुए घायलों को लेकर सर गंगाराम हस्पताल में मरहम-पट्टी कराने गया, तो पार्वती, जो पिछली रात की घटना का टूटा-फूटा विवरण सुन चुकी थी, उससे मिलने चली आई।

"सुनाओ पार्वती! कैसा काम चल रहा है?" चेतनानन्द ने उसको अपने समीप आते देख नमस्कार कर पूछा।

पार्वती ने बताया, "अब तो यहां काम इतना अधिक हो गया है कि हम सोलह घंटे रोज़ काम करती हैं, फिर भी रोगियों की शुश्रूषा भली-भांति नहीं हो पाती। नित्य चालीस-पचास घायल आ जाते हैं। हमने आस-पड़ोस के अई मकान ले लिए हैं और घायलों को वहां रखने लगे हैं। मैं तो नित्य काम करती-करती इतनी थक जाती हूँ कि घर जाने की हिम्मत ही नहीं रहती और यहाँ ही सो जाती हूँ।"

"तो पंडित जी बहुत नाराज़ होते होंगे?"

"वे कल दोपहर के समय आए थे और मेरे लिए बहुत चिन्ता प्रकट कर रहे थे, परन्तु जब मैंने उन्हें रोगियों को दिखाया तो चुप कर गए और आँसू बहाते हुए, बिना कुछ कहे, मेरे सिर पर हाथ फेर आशीर्वाद देकर चले गए।"

"धन्य हो तुम, पार्वती! मैं तुम से इतनी अधिक आशा नहीं रखता था।"

"आज प्रातःकाल यहाँ चर्चा हो रही थी कि हिन्दू युवकों ने मुसलमानों का एक गाँव जला दिया है। वहाँ बहुत गोली चली हैं और सैकड़ों मारे गए हैं। मुझको तो आपकी चिन्ता लग रही थी। सो आपको आया देख मिलने चली आई हूँ।"

चेतनानन्द ने बताया, "लोग बात का बतंगड़ तो बनाते ही हैं। न

सैकड़ों मरे हैं, न कोई विशेष गोली चली थी । हिन्दुओं में कोई नहीं मरा ।"

"मैं समझती हूँ कि चूहों की भाँति बिलों में घुसे रहकर, जलते मकानों में जलने से यह अच्छा है।"

"क्या अच्छा है ?"

"दो-चार ऐसे आक्रमण और हुए कि मुसलमान किसी हिन्दू को छुएँगे भी नहीं ।"

"तुम ऐसा समझती हो पार्वती ?"

"बिल्कुल ? यहाँ आए घायलों को देख-देख मेरा हृदय कठोर हो गया है । न जाने यह निर्दयी जाति कैसी बनी है ! बूढ़ों तक के लिए भी तो इनमें दया नहीं है।"

सायंकाल राजगढी की घटना पर कृष्णराव से चर्चा करते हुए चेतनानन्द ने कहा, "लोगों पर चाहे कुछ भी प्रभाव हो, पर मेरे मस्तिष्क में तो रात का दृश्य, जब हमारे स्वयंसेवक पुरुषों को औरतों से पृथक् करना चाहते थे और औरतें उनसे चिपटकर उनको पृथक् होने नहीं देती थीं, बार-बार आ रहा है और प्रत्येक बार उस समय की हाहाकार स्मरण कर मुझे रोमांच हो जाता है।"

कृष्णराव ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर चेतनानन्द की ओर देखा और फिर पूछा, "दुवेरां का किस्सा आपने ही तो बताया था । क्या आप भूल गये हैं कि बताते बताते आपके आँसू निकल पड़े थे। क्या यह सत्य नहीं कि वहाँ बाजार में ही हिन्दू लड़कियों से बलात्कार किया गया था और पीछे उनको जीवित ही, चीखते-पुकारते हुओं पर तेल डालकर जला दिया गया था ?

"हमने तो कुछ भी नहीं किया । मैंने यत्न किया कि एक भी औरत मरने न पावे । बलात्कार करना तो दूर रहा, हमारे स्वयंसेवकों ने एक पाई भी किसी के घर से नहीं लूटी ।"

"तुम ठीक कहते हो भैया ! पर क्या करूँ ? अभी तक हिन्दू मुहल्लों

की सुरक्षा में लड़ता रहा हूँ और अभी तक अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित पुलिस और मुसलमानों का विरोध करता रहा हूँ। रात मैंने एक नया दृश्य देखा है। कोई भी मनुष्य इसको देखकर इस अवस्था पर सन्तोष नहीं कर सकता।"

"ठीक है। यह उस असन्तोष का ही फल है, जो रावलपिंडी के गाँवों में हुए अत्याचारों से उत्पन्न हुआ है। देखो चेतन जी! फल का विचार नहीं करना चाहिए। मै समझता हूँ कि अब एक मास तक तो लाहौर में लगभग शान्ति ही रहेगी।"

लाहौर में कांग्रेस के कुछ बचे-खुचे नेताओं पर इसका प्रभाव अति भयानक हुआ। एक श्री गंगाराम थे। उन्होंने जब सुना कि हिन्दुओं ने मुसलमानों का गाँव जला डाला है तो भय के मारे वह अनिद्रा के रोगी हो गए। एक सप्ताह तक उन्होंने एक भी झपकी नहीं ली और परिणाम यह हुआ कि वे पागल हो गए। विवश हो उनके सम्बन्धियों ने उन्हें लाहौर से बाहर ले जाना उचित समझा।

मुसलमान तो एक ही चोट में घबरा उठे। कुछ मुस्लिम लीगियों ने शान्ति की अपीलें शाया कर दीं। कांग्रेसी हिन्दू इससे गद्‌गद् प्रसन्न हो उठे। मिस्टर जिन्ना ने भी यह घोषणा कर दी कि जो इलाके पाकिस्तान में चले गए हैं, वहाँ शान्ति हो जानी चाहिए। लाहौर के विषय में दोनों जाति के लोग समझते थे कि लाहौर उनके पास रहेगा। इस कारण शान्ति से प्रतीक्षा कर रहे थे कि इस विषय में क्या निर्णय होता है।

राजगढ़ी के आक्रमणों के पीछे लाहौर में कुछ-कुछ शान्ति दिखाई देने लगी। चेतनानन्द कार्य में कुछ कमी देख लोगों को लाहौर से चले जाने की सम्मति देने लगा। रेल्वे स्टेशन पर स्वयंसेवकों का एक कैम्प लगा दिया गया, जो लाहौर से जाने वालों की सहायता करता था। यद्यपि पूर्ण शान्ति तो नहीं हुई थी, तो भी अब छुरे घोंपने की घटनाएं कम होने लगी थीं।

डॉक्टर खन्ना, आजकल प्रायः शिमले आता-जाता रहता था। सरकारी

कार्यालय के बहुत-से विभाग शिमले चले गए थे। इससे लोगों की यह धारणा दृढ़ होती जाती थी कि लाहौर पाकिस्तान में जायगा और पूर्वी पंजाब की राजधानी शिमला बनेगी।

चेतनानन्द रेलवे स्टेशन पर खड़ा, जाने वालों की सहायता का प्रबन्ध देख रहा था। एक अटूट शृंखला लोगों की थी, जिनमें हिन्दू पुरुष-स्त्री, बाल-वृद्ध अपने बचे-खुचे सामान सहित स्टेशन पर आ रहे थे। स्टेशन पर कुली नहीं रहे थे। जो कुछ भी थे, वे एक-एक बंडल के उठाने का चाँप-पाँच रुपया माँग रहे थे। लोग विवश हो देते थे। गाड़ियाँ पीछे से ही भरी हुई आती थीं। इस कारण उनमें स्थान पाना एक विकट समस्या थी। रेल के बाबू सवारियों को रेल गाड़ी में बिठाने का सौ-सौ रुपया माँगते थे। लोगों का सामान गाड़ियों में ठूस दिया जाता था और सामान वाले बाहर रह जाते थे। यदि लोगों को भीतर घुसेड़ दिया जाता था, तो उनका सामान बाहर रह जाता था। कोई ही भाग्यशाली होता, जो अपने परिवार के सब सदस्यों और सामान सहित बैठ पाता।

स्वयंसेवक यत्न कर रहे थे कि लोगों को गाड़ी में चढ़ने में सहायता दें; परन्तु चढ़ने वाले इतने थे कि स्वयंसेवक सब की सहायता नहीं कर पाते थे।

चेतनानन्द एक परिवार को रेल गाड़ी में बिठाकर देख रहा था कि वह और किसी की क्या सहायता कर सकता है। इस समय उसकी दृष्टि डॉक्टर खन्ना पर पड़ी। खन्ना उसी समय शिमला से आई गाड़ी से उतर कर बाहर को जा रहा था। डॉक्टर साहब की दृष्टि भी चेतनानन्द पर पड़ी। प्रातःकाल से चेतनानन्द यात्रियों का सामान ढोता रहा था। उसके कपड़े मैले हो चुके थे और एक-दो स्थानों पर से फट भी गए थे। इसके अतिरिक्त चेतनानन्द को दाढ़ी बनाए भी कई दिन हो चुके थे। इस कारण डॉक्टर खन्ना चेतनानन्द को पहचानने में कठिनाई अनुभव कर रहा था। डॉक्टर साहब की कठिनाई समझ चेतनानन्द ने नमस्ते कह दी। डॉक्टर चेतनानन्द के पास आकर पूछने लगा, "यह क्या सूरत बनाई है आनन्द जी?"

"बहुत खराब मालूम हो रही है क्या ?"

"पहचाने ही नहीं जाते आप।"

"तो सूरत भी बदल रही है।"

"हाँ।"

"मन तो पहले ही बदल चुका है। सुनाइये, कहाँ से तशरीफ ला रहे हैं ?"

"शिमले गया था।"

"हाँ, सुना है राजधानी वहीं बनेगी ?"

"अस्थाई रूप में। स्थायी राजधानी किसी अन्य स्थान पर होगी।"

"लाहौर का क्या होगा ?"

"यह एक सीमा-समीप का नगर रह जायगा।"

"तो आपका विचार है कि लाहौर हिन्दुस्तान में आएगा ?"

"लगभग विश्वास ही है।"

"पर आप अपना मकान तो खाली कर गए हैं ?"

"जब शान्ति होगी, तो सामान वापिस ले आऊँगा।"

"कुछ इन लोगों के लिए भी कर दीजिए ?"

"किनके लिए ?"

"ये, जो यहाँ से जाना चाहते हैं।"

"ये क्यों जाना चाहते है ? अब तो पहले से शान्ति है।"

"शायद है, पर आप जैसे नेताओं को जाता देख, इनके मन सन्देह से भर जाते हैं।"

"इस प्रकार भगदर मचाने से तो अपनी ही हानि कर रहे हैं।"

"आप को गया देख ये यहाँ रहना स्वीकार नहीं करेंगे। मैं तो यह कह रहा हूँ कि आपको केन्द्रीय सरकार को कहकर, अधिक-से-अधिक रेल-गाड़ियों का प्रबन्ध करवा देना चाहिए।"

"मेरा इसमें क्या बस है ? फिर हम क्यों इनके लिए कुछ करें ? अभी कुछ दिन हुए महात्मा जी काश्मीर जा रहे थे, तो इन ही लोगों ने उनको

अमृतसर पर काले झंडे दिखाए थे और गांधी मुर्दाबाद के नारे लगाए थे।"

"बस ? यह तो कुछ नहीं। जो-कुछ इनके साथ बीत रही है, उसके बदले में दो-चार नारों से क्या बनता है ?"

"तो महात्मा जी की हत्या करने से बनेगा ?"

"डॉक्टर साहब ! जो-कुछ रावलपिंडी और मुलतान के गांवों में इन लोगों के साथ बीती है, वह हत्या से भी धोई नहीं जा सकती।"

चेतनानन्द के नथुने क्रोध से फूलने लगे थे। वह कुछ और भी कहना चाहता था, परन्तु आवेश में कुछ कहते नहीं बना। इससे वह बिना कुछ कहे मुख मोड़कर खड़ा हो गया। उसका ध्यान एक वृद्धा पर, जो भीड़ के धक्के से गिर पड़ी थी, चला गया। वह भागकर उसके पास गया और उसके शरीर पर से मिट्टी झाड़ उसे उठाने में लग गया।

(५)

'वाह' रावलपिंडी से पेशावर जाने वाली सड़क पर हसन अबदाल स्टेशन से पाँच मील रावलपिंडी की ओर एक छोटी-सी बस्ती है। यहाँ सीमेन्ट के कारखाने के कारण मज़दूर और पढ़े-लिखे लोगों की बस्ती थी। मार्च मास में जब मुस्लिम लोग ने डायरेक्ट ऐक्शन शुरु किया और जिला रावलपिंडी के गांव में अँधेर-गर्दी मचाई, तब आस-पड़ोस के गाँवों के लोग यहाँ एकत्रित होने लग गए। सीमेन्ट का कारखाना एक अंग्रेज़ी कम्पनी का था। इस कारण कारखाने की रक्षा के लिए गवर्नर पंजाब ने फौज भेज दी और फौजी सुरक्षा के कारण, अपने घरों से निकाले गए हिन्दू वहाँ एकत्रित होने लगे।

लोगों ने पेड़ों के नीचे डेरा लगा दिया। पश्चात् वहाँ खेमे लगाने आरम्भ कर दिए। मई मास में एक बार फिर प्रान्त में झगड़ा हुआ और 'वाह' में पचास हज़ार से ऊपर बाल-वृद्ध, पुरुष-स्त्रियां एकत्रित हो गईं। लोग वहाँ भूखों मरने लगे, तो 'वाह' के सीमेन्ट कारखाने वालों ने समाचार-

पत्रों में छपवा दिया। समाचार चेतनानन्द और उसके साथियों ने पढ़ा, तो उनकी सहायता के लिए खेमे, कपड़े, अन्न-अनाज एकत्रित कर भेजना आरम्भ कर दिया। दो दिन में चालीस ट्रक कपड़े, पचास हज़ार रुपया और सहस्त्रों खेमे ट्रकों में भरकर 'वाह' भेज दिये गए।

इस मनुष्यता के कार्य में काँग्रेसी कार्यकर्ताओं ने भी हाथ बटाया और वे 'वाह' कैम्प में प्रबन्धक बन बैठे। उस कैम्प का नाम 'शरणार्थियों का डेरा' (रिफ्युजी कैम्प) रखा गया और पंजाब कांग्रेस के मुख्य-मुख्य कार्यकर्ता वहाँ प्रबन्ध करने जा पहुँचे।

पेशावर, रावलपिंडी, कोहमरी, कोहाट, एबोटाबाद से राष्ट्रीय स्वयं-सेवक संघ के स्वयंसेवक सैकड़ों की संख्या में वहाँ जा पहुँचे। कार्य होने लगा। वहाँ पर पहुँचे दुःखियों की अवस्था इतनी करुणाजनक थी कि रा० स्व० सं० के कार्यकर्ता और कांग्रेसी परस्पर के विचार भेद भूल गए और लोगों की सेवा का कार्य करने लगे।

जून के अन्तिम सप्ताह में रामचन्द्र राव सरोदे वहाँ जा पहुंचा। उसका घाव तो भर चुका था, परन्तु टाँग में दुर्बलता थी। इस कारण वह छड़ी लेकर चलता हुआ प्रबन्ध देखता था। उसके वहाँ पहुँचने के दो दिन पश्चात्, नीना वहाँ जा पहुँची। रामचन्द्र उसको वहाँ आया देख आश्चर्य में खड़ा रह गया। जब वह शिमला से आया था, तो उसको निश्चय रुप में बताया गया था कि नीना किसी भी अवस्था में घर छोड़ कर नहीं जा सकती। अब उसको स्टेशन से उतर, कैम्प के कार्यालय में प्रवेश करते देख, रामचन्द्र आँखें फाड़-फाड़कर उसकी ओर देखने लगा। नीना ने उसको मेज़ के पीछे कुर्सी पर बैठे देख पहिचान लिया और सामने आ खड़ी हुई। रामचन्द्र ने छड़ी का आश्रय ले खड़े होकर पूछा, "नीना देवी! तुम यहाँ किस लिए आई हो?"

"दुःखियों की सेवा करने के लिए।"

"पिता जी से पूछकर आई हो?"

"अपनी आत्मा की प्रेरणा पाकर।"

"पर इससे तो बहुत झगड़ा होगा।"

"किससे ?"

"कैम्प वालों से तुम्हारे पिता का।"

"मैं अपनी इच्छा से आई हूँ।"

"ठीक है, परन्तु तुम नाबालिग़ हो।"

"तो मेरी इच्छा कुछ नहीं ?"

"एक नाबालिग़ की इच्छा, उसके माता-पिता की इच्छा ही होती है।"

"तो मैं यहाँ सेवा-कार्य नहीं कर सकती ?"

"केवल अपने माता-पिता की स्वीकृति से।"

"यह असम्भव है।" नीना ने कहा और चुप हो खड़ी रह गई। उसकी मोटी-मोटी आँखों से अश्रु ढुलक पड़े। रामचन्द्र को इससे बहुत दुःख हुआ। इसी समय कान्तादेवी, एक कांग्रेसी कार्यकर्ता, वहाँ आ पहुँची। उसने नीना को रोते देख पूछा, "क्या है ?"

रामचन्द्र चुप रहा। उत्तर नीना ने दिया। उसने अपने मनके भावों को छिपा, झूठ बोल दिया, "मैं एक रिफ्यूजी हूँ। ये कैम्प-मैनेजर कहते हैं कि मैं रिफ्यूजी मालूम नहीं होती। मैं निःसहाय हूँ, अब कहाँ जाऊँ ?"

कान्तादेवी ने घृणा के भाव में रामचन्द्र की ओर देखकर कहा, "ये मैनेजर नहीं हैं। मुफ्त की रोटियाँ तोड़ने के लिए यहाँ पड़े हुए हैं ?"

रामचन्द्र की इच्छा थी कि वास्तविक बात बता दे, परन्तु कान्तादेवी की घृणापूर्ण दृष्टि को देख उसने चुप रहना ही उचित समझा। वह छड़ी का आश्रय लेते हुए कार्यालय से बाहर निकल गया। नीना ने उसको जाते देख, अवसर पाकर अपने झूठ का विस्तार कर दिया। उसने कहा, "मैं ऐबटाबाद के एक इन्जीनियर बूटाराम की लड़की हूँ। हमारा सारा परिवार मार डाला गया है और मुझको पकड़कर खान मुहियुद्दीन की नज़र करने के लिए ले जा रहे थे कि मैं अवसर पा भाग गई। मैं ऐबटाबाद से रावलपिण्डी गई तो वहाँ स्वयंसेवकों ने मुझको 'वाह' का टिकट देकर गाड़ी में बिठा दिया। यहाँ आई तो ये 'लंगड़दीन' मुझको मिले और कहने

लगे कि मैं कोई जालसाज़ हूँ। किसी मुसलनान की लड़की हूँ और यहाँ जासूसी करने आई हूँ।"

कान्तादेवी नीना के कहने से बहुत प्रभावित हुई और उसको अपने कैम्प में ले गई। कुछ समय पश्चात् रामचन्द्र राव कार्यालय में लौटा तो कान्तादेवी ने कहा, "मिस्टर रामचन्द्र ! आप यहाँ से कब जा रहे हैं ?"

"क्यों ? मैं क्यों जाऊँगा ? मैंने क्या बिगाड़ा है, यहाँ का ?"

"आप बेचारे दुखियों के साथ बुरा व्यवहार करते हैं।"

"किसके साथ बुरा व्यवहार किया है ?"

"वह सुमति देवी के साथ। आपने उससे कहा है कि वह आपको जासूस मालूम होती है।"

रामचन्द्र समझ गया कि नीना ने अपना नाम सुमति बताया है। उसने इस विषय पर प्रकाश डाले बिना कहा, "उसके कपड़ों को साफ देख यही मालूम होता है।"

"आप महामूर्ख हैं। वह एक इन्जीनियर की बेटी है।"

"सत्य ?" रामचन्द्र ने विस्मय में आँखें फैलाकर पूछा।

"हाँ।"

"तो भूल हो गई है।"

"कुछ भी हो। मैं आपको आज्ञा देती हूँ कि आप आज सायंकाल की गाड़ी से चले जाइये। आपकी यहाँ आवश्यकता नहीं।"

"कान्ता देवी ! मैं आपको क्या हानि पहुँचा रहा हूँ ? दो रोटी ज़रुर खाता हूँ, परन्तु उससे अधिक तो काम कर देता हूँ।"

"कुछ भी हो। आपकी और मेरी बनेगी नहीं; इससे आपका यहाँ रहना ठीक नहीं।"

रामचन्द्र राव के मन में बातें तो बहुत आई थीं, परन्तु वह चुपचाप सुनता रहा। उसकी इच्छा इस बात को यहीं पर समाप्त कर देने की थी, परन्तु कान्ता देवी मानी नहीं और उसने कार्यालय में कार्य करने वाले स्वयं-सेवकों को आज्ञा दे दी कि रामचन्द्र राव यहाँ कुछ भी नहीं हैं; उनका यहाँ

कैम्प में रहना ठीक नहीं । उनको आज्ञा दे दी गई है कि वे आज ही यहाँ से चले जाएं ।"

स्वयंसेवक विस्मय में कान्तादेवी का मुख देखने लगे; परन्तु किसी ने उत्तर नहीं दिया। सायंकाल, रामचन्द्र राव जिस कैम्प में रहता था, उसमें स्वयंसेवकों की एक सभा हुई। सभा में स्वयंसेवकों ने यह निर्णय किया कि वे कान्ता देवी का कहना नहीं मानेंगे। एक दूसरा कार्यालय बन गया और वहाँ से कार्य सम्पन्न होने लगा।

(६)

सायंकाल सभा के पश्चात् रामचन्द्र इस वैमनस्य के कारण पीड़ितों की सहायता में विघ्न की सम्भावना पर विचार करता हुआ, छड़ी के आश्रय टहलता हुआ कैम्प से बाहर निकल गया। सूर्यास्त हो चुका था, परन्तु आकाश अभी प्रकाशयुक्त था। वह विचार कर रहा था कि कान्ता देवी का कुछ अधिक दोष नहीं। वह बेचारी जानती नहीं कि धन, अन्न, वस्त्र आदि कहाँ से और कौन भेज रहा है। सरकार ने तो यहाँ के रहने वालों की रक्षा का भी प्रबन्ध नहीं किया; कांग्रेस के अपने लोगों में भी विभाजन के कारण फूट पड़ी हुई थी। पंजाब कौन्सिल के वे सदस्य, जो पाकिस्तानी क्षेत्रों से निर्वाचित हुए थे, अपनी स्थिति से असन्तुष्ट थे। भारतीय क्षेत्रों से निर्वाचित सदस्य कह रहे थे कि उनको पाकिस्तानी पंजाब कौन्सिल का सदस्य मान लिया जाए। इस कारण वे सदस्य, यह यत्न कर रहे थे कि पश्चिमी पंजाब में जितने अधिक-से-अधिक हिन्दू रह जावें, उतना ही उनके लिए ठीक रहेगा। अतः उन क्षेत्रों के कांग्रेसी सदस्य, नेताओं से यह वक्तव्य दिलाते रहते थे कि पश्चिमी पंजाब के हिन्दुओं को अपने घरों में ही रहना चाहिए ।

वाह कैम्प जब बनने लगा था तो पश्चिमी पंजाब के कांग्रेसी, इसको ही अपना केन्द्र बनाकर हिन्दुओं को पंजाब छोड़ने से रोकने का यत्न करने लगे। कान्ता देवी इन्हीं में से एक थीं। उसने कैम्प में पहुँच सब मुख्य

स्थानों पर कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं को लगा दिया था और छोटा तथा सेवा का कार्य स्वयंसेवकों को दे दिया था। इस प्रकार कार्य चल रहा था। जब रामचन्द्र का कान्तादेवी से झगड़ा हुआ तो वह विचार करने लगा कि इस झगड़े को बन्द करने का क्या उपाय करे। इस समय उसको पीछे से नीना देवी ने बुलाया "क्या मैं आपसे, बिना माता-पिता की आज्ञा के बात कर सकती हूँ ?"

रामचन्द्र एक क्षण के लिए उसके व्यंग का अर्थ न समझ सका। पश्चात् समझ, घूम कर उसको देखते हुए कहने लगा, "तुमने झुठ क्यों बोला है ?"

"नहीं बोलती तो मुझको यहाँ रहने की स्वीकृति कैसे मिलती ?"

"मैंने मना नहीं किया था। मैंने तो यह कहा था कि माता-पिता की स्वीकृति लेकर ही रहो।"

"वह असम्भव है। देखिये, मैंने अपना नाम भी गलत बताया है। मेरा नाम सुमति है। मुझको काम भी मिल गया है।"

"तुम जानो और कान्ता देवी जाने।" रामचन्द्र ने मुसकराते हुए कहा।

"ठीक है, पर मेरा आपसे मेल-जोल तो कान्ता देवी के अधीन नहीं है ?"

"इसकी क्या आवश्यकता है ?"

"मेरा मन करता है कि आपसे मिल कर बातचीत करूँ।"

"तो कान्ता देवी जान जायेंगी कि तुम मुझ से पूर्व परिचित हो।"

"पर मैं तो आपसे पूर्व-परिचित नहीं हूँ ?"

"हो क्यों नहीं ?"

"नीना से आपका परिचय था न ? मैं तो सुमति हूँ। क्या आप जानते हैं कि सुमति किसकी लड़की है और कहाँ की रहने वाली है ?"

रामचन्द्र की हँसी निकल गई। जब नीना उसकी ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखने लगी तो उसने कहा, "यह पुरानी कहानी है। आदम को हव्वा ने शैतान के कहने पर फुसलाया था।"

"तो आप फिसल गए हैं क्या ?"

"तुमने तो यत्न किया ही है कि मैं भी तुम्हारे झूठ में सम्मिलित हो जाऊँ ?"

"मैं आपसे भगवान् के लिए कहती हूँ कि मेरा पूर्व परिचय न दें। मैं यहां सेवा-कार्य करना चाहती हूँ। अपने पिता के घर में व्यर्थ का जीवन व्यतीत करते-करते तंग आ गई हूँ।"

"क्या कार्य मिला है तुमको ?"

"स्त्रियों में कपड़े बाँटने का।"

"कपड़े आ गए हैं आज ?"

"यह मैं क्या जानूँ ? सुना है कपड़े बहुत रखे हैं। उनमें मुरम्मत होने योग्य हैं। उनको मुरम्मत करवाकर जिनको आवश्यकता हो, उनको देने हैं।"

"अच्छी बात है करो। मैं किसी से तुम्हारे विषय में नहीं कहूँगा। पर मुझसे मिला करोगी तो सब जान जायेंगे कि हम परिचित हैं।"

"मैं कह दूंगी कि आप भले पुरुष हैं, इसी कारण आपसे मिला करती हूँ; परन्तु कान्ता देवी कहती थी कि आप यहां से चले जाएंगे। लंगर में कह दिया गया है कि आपको रोटी मिलनी बन्द कर दी जाए।"

"तब तो मैं भूखा मर जाऊंगा ?"

"आपको रावलपिण्डी भेजने का प्रबन्ध किया जा रहा है।"

"पर मैं तो जाऊंगा नहीं।"

"आप चिन्ता न करें। मैं आपको भोजन ला दिया करूँगी।"

रामचन्द्र मुसकराया। पश्चात् बोला, "मैं आपका धन्यवाद कर दिया करूंगा। देखो न, बिना भोजन जीवन कैसे चलेगा ?"

रामचन्द्र जब कैम्प में आया तो उसके विचारों में परिवर्तन आ चुका था। वह सोच रहा था कि इस झगड़े को शीघ्र ही इसके स्वाभाविक परिणाम तक ले जाने के लिए क्या किया जाय।

उसको रोटी मिलनी बन्द तो हुई नहीं। रसोईया केवल मुसकराया, जब रोटी परस रहा था। उसके मुख पर मुसकराहट देख रामचन्द्र ने पूछा, "क्या है साधु ?" साधुराम रसोईये का नाम था।"

"जी, आपको भोजन न देने की आज्ञा है।"

"किसने आज्ञा दी है?"

"जिसको आज्ञा देने का अधिकार नहीं। श्रीमती कान्ता देवी जी ने यह कहा है।"

"तो तुमने क्या कहा?"

"कुछ नहीं। मैं चुप रहा।"

"बहुत अच्छा किया है। तुमको उससे झगड़ा नहीं करना।"

वे अभी बातें कर ही रहे थे कि कान्तादेवी, अपने कैम्प में से, अपनी दाल की कटोरी उठाए हुए चली आई और चिल्ला कर बोलीं- "ओ साधू के बच्चे! दाल जला दी है आज?"

"नहीं बहिन जी!" साधू ने उत्तर दिया।

"यह देखो! इसमें मिर्चें-ही-मिर्चें पड़ी हैं।"

"पर यह कैसे हो गया? दूसरों की दाल में तो नहीं हैं।"

कान्ता देख रही थी कि रामचन्द्र भोजन कर रहा है। इससे आग-बबूला हो दाल फेंककर चली गई। बात यहीं समाप्त नहीं हुई। अगले दिन रामचन्द्र, नवीन कार्यालय में, जो एक दूसरे खेमे में बनाया गया था, बैठा था और कैम्प के कार्य का संचालन कर रहा था। कान्ता देवी तथा उसके अन्य अधिकारी साथियों के पास कोई स्वयंसेवक नहीं जा रहा था।

औषधालय में औषधियों की आवश्यकता थी। डॉक्टर ने औषधियों की सूची लिख भेजी। स्वयंसेवक कान्ता देवी के पास जाने के स्थान रामचन्द्र के पास जा पहुँचे। रामचन्द्र ने देखा कि गुदाम में कुछ औषधियां हैं, उनको दिलवा दिया। जो नहीं थीं, उनके लिए लाहौर लिख दिया। राशन डिपो में अन्न वितरण होता था। वहाँ गुदाम से अन्न आता था। वे स्वयंसेवक, जो अन्न लाते थे, आज्ञा कान्तादेवी से लेने नहीं गए। वे रामचन्द्र के पास जा पहुँचे। इस प्रकार कार्य-केन्द्र बदल गया।

कार्यकर्ताओं के लिए राशन पृथक् से आता था। स्वयंसेवक चार पाकशालाओं में खाते थे और अधिकारी, जो प्रायः कांग्रेसी कार्यकर्ता थे, एक

पृथक् पाकशाला में खाते थे। रामचन्द्र स्वयंसेवकों के साथ भोजन खाता था और कान्ता देवी अन्य अधिकारियों के साथ। अधिकारियों की पाकशाला के लिए घी और चीनी का विशेष प्रबन्ध था। रामचन्द्र ने यह सब बन्द कर दिया। परिणाम यह हुआ कि स्वयंसेवकों और शरणार्थियों के समान सबको भोजन मिलने लगा।

कान्ता साधुराम से लड़ पड़ी। उसने पूछा, "घी का क्या हुआ आज ?"

"रामचन्द्र जी की आज्ञा से बन्द हो गया है। उनका कहना है कि जैसा भोजन स्वयंसेवकों को मिलता है, वैसा ही अधिकारियों को मिलना चाहिए।"

"रामचन्द्र कौन है ?"

"आप उनसे पूछ लीजिए।"

"तुमने उनका कहना माना क्यों ?"

"इस कारण कि वे कैम्प के हितों की बात करते हैं।"

"जब हमको खाने को नहीं मिलेगा, तो हम कार्य कैसे करेंगे ?"

"जैसे अन्य स्वयंसेवक करते हैं।"

इससे असन्तुष्ट हो कान्ता देवी रामचन्द्र के पास जा पहुँची। रामचन्द्र को स्वयंसेवकों से घिरा हुआ देख पूछने लगीं, "आप यहाँ क्या कर रहे हैं ?"

"कैम्प का प्रबन्ध कर रहा हूँ।"

"आपको इस कार्य के लिए किसने नियुक्त किया है ?"

"यहाँ के कार्यकर्ता, स्वयंसेवकों ने।"

"कैसे ?"

"देख लीजिए। सब मेरी आज्ञानुसार कार्य कर रहे हैं।"

"पर मुझको श्रीमती·····ने नियुक्त किया है।"

"ठीक है, पर इन स्वयंसेवकों को किसी ने नियुक्त नहीं किया। ये अपनी इच्छा से यहाँ कार्य करने आए हैं।"

इस प्रकार झगड़े का निर्णय नहीं हो सका। कम्प-कार्य तो चलता रहा, परन्तु कान्ता देवी और उसके साथी, जो कैम्प में थे, सबने डॉक्टर

खन्ना और श्रीमती···को लिख भेजा। श्रीमती···जी ने राय साहब तेज नारायण के पास शिकायत की और तेज नारायण ने चेतनानन्द और कृष्णराव से कहा। कृष्णराव ने बताया, "जो लोग घर का सुख और आराम छोड़कर वहाँ जंगलों में निर्वासितों की सेवा के लिए पड़े हैं, उन को अपना नेता चुनने का अधिकार है।"

"यहाँ से जो धन भेज रहे हैं, क्या उनका कुछ भी अधिकार नहीं ?" श्रीमती···जी ने पूछा।

कृष्णराव ने कह दिया, "उनका भी अधिकार है, परन्तु आपको उन्होंने अधिकार दिया है, यह मैं कैसे मान लूं ?"

(६)

यह झगड़ा बहुत बढ जाता, यदि लाहौर में एक और नई परिस्थिति उत्पन्न न हो जाती। सीमा कमीशन, जिसके प्रधान 'सिरल रेड क्लिफ' थे, लाहौर और कलकत्ता में कार्य करने लगा। लाहौर तथा कलकत्ता नगर दोनों विवादस्पद विषय थे। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान, दोनों इन नगरों को अपने देश में चाहते थे। इस पर घोर विवाद चल पड़ा था।

इस समिति के प्रधान, सिरल रेड क्लिफ, स्वयं तो समितियों के अधिवेषणों में सम्मिलित नहीं हो सके; परन्तु वे इन अधिवेषणों की रिपोर्टों पर ही निर्णय देने वाले थे। लाहौर और कलकत्ता की जनसंख्या, इनमें हिन्दुओं की संख्या, मुसलमानों की संख्या, दोनों की सम्पत्ति और इन नगरों की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक उन्नति में हिन्दू और मुसलमानों का प्रभाव, सब पर विचार हुआ।

ज्यूं-ज्यूं इस समिति के अधिवेषण होते गए और विचार तथा युक्तियाँ दी जाने लगीं, हिन्दुओं के मन में यह विश्वास होने लगा कि लाहौर और कलकत्ता हिन्दुस्तान में रहेंगे। मुसलमानों के मन में इससे दुःख होने लगा। परिणाम यह हुआ कि अगस्त मास के आरम्भ से ही लाहौर में पुनः छुरे घोंपने की घटनाएँ होने लगीं। मुस्लिम-लीग समाचार पत्र, विशेष रूप

में 'डान', जो दिल्ली से प्रकाशित होता था, खुले रूप में लिखने लगा कि यदि लाहौर और कलकत्ता पाकिस्तान में नहीं दिया गया, तो तीन जून का समझौता मुसलमानों को मान्य नहीं होगा।

अगस्त मास के आरम्भ में अमृतसर में, जो निश्चित रूप से हिन्दुस्तान में था, पुनः मुसलमानों ने हिन्दू घरों को आग लगानी आरम्भ कर दी और लूटना शुरू कर दिया। अमृतसर में डिप्टी कमिश्नर एक मुसलमान था। इन दिनों में मुसलमानों का, हिन्दुओं के घरों को, अमृतसर में लूटना एक आश्चर्यकारक घटना थी। इसका एक ही अर्थ निकल सकता था कि मुसलमान लाहौर पर सन्तोष न कर अमृतसर पर भी अपना दावा कर रहे हैं।

तीन या चार अगस्त को लुधियाना में भी मुसलमानों ने झगड़ा खड़ा कर दिया। यद्यपि यह झगड़ा एक हिन्दू डिप्टी कमिश्नर की सतर्कता से आरम्भ में ही रुक गया, तो भी इसका प्रभाव हिन्दूओं के मन पर बहुत गहरा पड़ा।

आठ अगस्त को पूर्ण लाहौर में बड़े-बड़े विज्ञापन लगाये गये कि यदि लाहौर हिन्दुस्तान को दिया गया तो लाहौर के मुसलमान इस निर्णय को नहीं मानेंगे और लाहौर को बल पूर्वक अपने अधिकार में रखेंगे।

लाहौर के कांग्रेसी नेता लाहौर से अपना सामान निकालने अथवा शिमले में पूर्वी पंजाब की सरकार बनाने में लीन थे। उनका इन घटनाओं की ओर कुछ भी ध्यान नहीं था। दिल्ली के कांग्रेसी नेता, जो सन् १९४६ के निर्वाचनों के बल पर दिल्ली में सरकार बनाने के अधिकारी थे, पंजाब और बंगाल की दशा की ओर ध्यान देने की न तो रुचि रखते थे और न ही इसके लिए उनके पास अवकाश था।

जगदेव सिंह का प्रबन्ध पूरा हो रहा था। पहली अगस्त को अमृतसर में मुसलमानों से हिन्दूओं को लुटते और पुलिस को मुसलमानों की सहायता करते देख, उसकी आंखों से खून टपकने लगा। वह इन दिनों अमृतसर में ही था। गुरु के बाग के समीप एक मकान में उसने अपने दल का कार्यालय रखा हुआ था। पहली अगस्त को अमृतसर में छुरे घोंपने की घटनाएँ

प्रातःकाल से होने लगी थीं। दोपहर तक नगर में एक-दो स्थानों पर से धूएँ के बादल उठते दिखाई देने लगे थे।

जगदेव सिंह मकान की छत पर गया, तो धूआँ देख समझ गया कि कहीं आग लग गई है। इस समय उसको समाचार मिला कि 'कर्मो की ड्योढ़ी' में दुकानें लूटी जा रही हैं।

"कौन लूट रहा है ?" जगदेवसिंह ने पूछा।

"मुस्लिम नैशनल गार्ड्स के लोग और अन्य मुसलमान भी है।" समाचार लाने वाले का उत्तर था।

"यह क्यों ? अब यहाँ तो पाकिस्तान नहीं बन सकेगा ?"

"यह बात नहीं। यहाँ के मुसलमान समझ रहे हैं कि एक दिन उनको पाकिस्तान जाना ही होगा, इस कारण जितना कुछ लूटकर यहाँ से ले जाएँ, उतना ही ठीक रहेगा।"

इस समय एक और आदमी समाचार लाया कि मुसलमान डिप्टी कमिश्नर ने नौ तारीख को नये डिप्टी कमिश्नर को चार्ज देना है। इस कारण उसने मुसलमानों से कह दिया है कि नौ तारीख तक वे लूट लें, जितना लूट सकते हैं। इसी कारण अमृतसर में फ़िर लूट मार शुरू होगई है।

जगदेव सिंह गम्भीर विचार में मग्न हो गया। वह अति विकट निर्णय लेने के विषय में सोच रहा था। वह उठ कर अपने निजी कमरे में चला गया और गुरु महाराज के चित्र के सम्मुख बैठ हाथ जोड़ विनती करने लगा, "गुरुदेव ! मैं छोटी बुद्धि, तेरा बन्दा तेरे थांई प्रकाश वास्ते हथ बन बिनती करना वां। मैं नहीं चाहन्दा सी कि प्यारे हिन्दुस्तान दे विच रक्त-पात करां, पर भावी प्रबल प्रतीत होंदी ए। मैंनू राह दस। मैं की करां ?

"बाबा जी ! मैं जो कुछ कर रिहा हां, अपनी प्यारी जन्म भूमि ते अपनी कौम लई कर रिहा हां। मेरा ऐस गल दे विच कोई स्वारथ नहीं इस कारण मैं अपने आप नूं आप जी दे चरणां दे विच डाल के आज्ञ मंगना हां।"

इतना कह जगदेव सिंह ने अपना सिर जमीन से लगा कर गुरु महारज

के चरणों में नमस्कार किया और कितनी ही देर तक इसी अवस्था में पड़ा रहा। पश्चात् उठा और कमरे से बाहर निकल आया।

बाहर और भी लोग एकत्रित हो रहे थे। सब नगर के भिन्न-भिन्न भागों में लूट-मार के समाचार लेकर आए थे। जगदेवसिंह ने सब की बात सुनी और फिर कहा, "गुरु महाराज की आज्ञा है कि जिस बात की तैयारी हम पिछले दो मास से कर रहे हैं, उसके करने का समय आ गया है। अमृतसर की वर्तमान स्थिति ने हमको अपने प्रोग्राम को शीघ्र करने पर विवश कर दिया है। मैं तो यह चाहता था कि शान्तिपूर्वक भारत से इन अभारतीयों को बाहर चले जाने पर विवश कर देता, जिससे रावी के उस पार से आये हुए भारत के भक्तों को स्थान मिल सके; परन्तु इन लोगों ने तो इस देश को छोड़ने से पूर्व, इसको बरबाद करने का विचार कर लिया है। ऐसा नहीं होने दिया जायेगा। यह देश केवल उन स्वार्थी कांग्रेसियों का नहीं, जो षड्यन्त्र कर देश के राजा बन जाना चाहते है। यदि वे इसकी रक्षा करने में असमर्थ है तो हम, गुरु महाराज की कृपा से इसकी रक्षा करेंगे।

"जो कुछ सरकार पाकिस्तान के लिए देगी, हम उसमें आपत्ति नहीं करेंगे। परन्तु यह लूट-खसूट कर जनता का माल हम पाकिस्तान में नहीं जाने देंगे।

"मैं आप सब को आज्ञा देता हूँ कि अपने नियत स्थान पर चले जाओ और अपना नियत कार्य आरम्भ कर दो।

"कल से हमारा प्रतिक्रियात्मक कार्य आरम्भ हो जाएगा।"

"पहले निश्चय के अनुसार ही कार्य होगा क्या ?"

"हां ! यह ठीक है कि हम अमृतसर में झगड़े की आशा नहीं करते थे। इस पर भी हमारे कार्य का क्रम, इससे कोई सम्बन्ध नहीं रखता। हम देहातों मे कार्य आरम्भ करेंगे।"

(७)

इससे अगले दिन यह समाचार आया कि माना वाला में कुछ सिक्खों

ने, जिनके पास बन्दूकें भी थीं, गांव के मुसलमानों को धमकाया और गांव से भाग जाने को कहा । इस पर पुलिस ने इन सिक्खों का पीछा किया और गांव से बाहर, एक स्थान पर इन सिक्खों और पुलिस वालों में जम कर मुकाबिला हो गया ।

जगदेव सिंह स्वयं इस मुकाबिले में उपस्थित था । आधा घंटा भर दोनों ओर से गोलियां चलती रहीं । अन्त में हिन्दू और सिक्खों के जत्थे के पास कारतूस समाप्त हो जाने से उनको भागना पड़ा । एक सिक्ख की मृत्यु हो गई, दो सिक्ख घायल हुए । इसके विरुद्ध दस पुलिस वाले मरे। साथ ही सब को घाव लगे ।

इस मुकाबिले का समाचार सब देहातों में फैल गया । समाचार पत्रों में भी इस युद्ध का समाचार बहुत बिगाड़ कर छापा गया । यह बताया गया कि सिक्खों की मंडली में दो सौ जवान थे और पुलिस वाले केवल पचीस-तीस ।

इस अतिशयोक्ति का परिणाम यह हुआ कि अमृतसर जिला के मुसलमानों के मन में आतंक छा गया । रात को सोए मुसलमान घबरा कर उठ पड़ते थे और भागो-भागो चिल्ला कर हल्ला-गुल्ला करने लगते थे।

तीन अगस्त को एक-आध बंदूकची सिक्ख कहीं भी पहुंच जाता, तो मुसलमान गांव छोड़ कर भाग जाते । दो अगस्त के मोर्चे के पश्चात् पुलिस को पुनः इन सिक्खों से मुकाबिला करने का साहस नहीं हुआ । गांव के थाने से मुसलमान कॉन्स्टेबल, थाना छोड़ अमृतसर चले गये और हिन्दुओं की लूट में भाग लेने लगे ।

चार अगस्त को जगदेव सिंह का गांव में से मुसलमानों को बाहर करने का प्रोग्राम आरम्भ हो गया । इस समय गांवों की हिन्दू और सिक्ख जनता, जो अभी तक त्रसित अवस्था में पड़ी हुई थी, मुस्लिम पुलिस को थाना छोड़ भागते देख, उत्साहित हो जगदेव सिंह की पार्टी में सहयोग देने लगी। इस पर बिना किसी प्रकार के झगड़े के मुसलमान गाँव छोड़ कर भागने लगे । कहीं-कहीं मुसलमानों से झगड़ा हुआ और ज्यूं ही एक-दो के सिर धड़ से

पृथक् हुए कि सब लोग वास्ता डालते हुए, अपने बाल-बच्चों और बहू-बेटियों को बैलगाड़ियों पर लाद, अमृतसर की ओर चल पड़े।

मुसलमानों को यह विदित था कि अमृतसर का डिप्टी कमिश्नर मुसलमान है और वहां उनकी रक्षा भी होगी। ऐसा हुआ भी। ये सब मुसलमान न केवल अपने को वहां सुरक्षित मानने लगे, प्रत्युत अमृतसर जैसे धनी-मानी नगर के धनधान्य सम्पन्न हिन्दुओं के घरों की लूट-खसूट में भाग लेने लगे।

यह अधिक काल तक नहीं चल सका। जगदेव सिंह को इस लूट-खसूट को बन्द करने के लिए अपने प्रायः स्वयंसेवकों को अमृतसर बुलाना पड़ा। अमृतसर में पहला मुकाबिला दरवाज़ा लोह गढ के बाहर हुआ। मुसलमानों के अनुमान उस काल के बने हुए थे, जब पुलिस के मनों में भी देहात के बढ-चढ़ कर आये समाचारों को सुन कर आतंक छा रहा था और प्रायः मुसलमान जनता व पुलिस हिन्दुओं का धन लूट-खसूट कर पाकिस्तान जाने का विचार करने लगी थी। इस अवस्था में जब जगदेवसिंह के वीर लड़ाके लूट-खसूट करने वाले मुसलमानों पर लपके, तो वे भाग खड़े हुए। पुलिस के अफसर, जो पहली, दूसरी और तीसरी अगस्त को अपने आदमियों को लूट में भाग लेते देख आँखें मूंद चुप पड़े थे, चार अगस्त को उन्हें वापिस थानों में बुला नहीं सके।

परिणाम यह हुआ कि बिजली के स्विच को बदलने के समान, एक-दम पासा पलट गया। जहाँ चार अगस्त को प्रातः काल तक मुसलमान हिन्दुओं के घरों को लूट रहे थे और हिन्दू अपनी बहू-बेटियों की रक्षा के लिए अपने मकानों को छोड़ हिन्दू मुहल्लों की ओर जा रहे थे, वहाँ उसी दिन मध्यान्होत्तर, मुसलमान अपना लूटा हुआ माल लेकर पाकिस्तान की ओर भागने की योजनाएँ बनाने लगे। चार अगस्त की सायंकाल तक नगर में शान्ति स्थापित हो गई। रात-भर शान्ति रही और पाँच की प्रातःकाल को पहले एक-एक, दो-दो और फिर सैकड़ों की संख्या में, तदनन्तर सहस्रों की टोलियों में मुसलमान लूटा हुआ माल गठरियों और

जेबों में भर, कई अटूट पंक्तियों में अमृतसर से निकल लाहौर की ओर जाने लगे।

यह बात भी जगदेव सिंह और उसके साथियों को भली प्रतीत नहीं हुई। इसका विरोध भी आवश्यक हो गया। जाने वाले मुसलमानों को रोका जाने लगा और उनकी तलाशी लेकर कीमती वस्तुएँ छीननी आरम्भ कर दी गई।

अमृतसर का मुसलमान डिप्टी कमिश्नर समय से पूर्व ही चार्ज देकर चला गया। वह मुसलमानों की लूट-मार को रोक नहीं सका था और अब मुसलमानों को अमृतसर छोड़ने से मना नहीं कर सका। हिन्दू डिप्टी कमिश्नर ने आने पर देखा कि सब मुसलमान पुलिस वाले नगर छोड़कर भाग गए हैं, देहातों के मुसलमानों की भीर नगर में हो रही है और सिक्खों के भय से, जो देहाती मुसलमान पैदा कर रहे थे, मुसलमान भाग रहे हैं। हिन्दुओं ने, जो मार्च मास से लेकर चार अगस्त तक मुसलमानों से पिट रहे थे, अब अवसर पाया तो अपना बदला चुकाने लगे।

परिणाम अति भयंकर हुआ। जो-जो अत्याचार मार्च से लेकर अगस्त तक मुसलमानों ने हिन्दुओं के साथ किए थे, उसकी पुनरावृत्ति हिन्दू करने लगे।

आरम्भ में तो यह कार्य बदले की भावना से नहीं, प्रत्युत पाकिस्तान से आए हिन्दुओं के लिए स्थान बनाने तथा हिन्दुओं से लूटे हुए माल को देश से बाहर जाने से रोकने की भावना से आरम्भ हुआ था। जहाँ तक जगदेव सिंह का बस चला, उसने औरतों की मान-मर्यादा पर किसी को हाथ उठाने नहीं दिया; परन्तु जब मुसलमानों का भागना आरम्भ हुआ और उनमें हिन्दुओं का विरोध करने का साहस नहीं रहा, तो हिन्दुओं में भी ऐसे लोग आगे आ गए, जो बदले की भावना से प्रेरित हो कार्य में लग गए। परिणाम यह हुआ कि जो कुछ रावलपिण्डी, जेहलम और वहाँ के देहातों में हुआ, उसकी नकल अमृतसर जिले में और पश्चात् पूर्ण जालन्धर विभाग में होने लगी।

जगदेव सिंह अटारी में भागते हुए मुसलमानों की तलाशी के बहाने उनकी स्त्रियों को भी छीनने के प्रयत्न देख कर दुःखी मन से अमृतसर को लौट आया। उसने निर्णय कर लिया था कि वह अपने आदमियों को इस म्लेच्छ कार्य से पृथक् कर लेगा। इस समय हाथी दरवाजे के पास उसने एक दृश्य देखा। पाँच औरतें बुर्का पहिने हुए, एक बैल गाड़ी में सवार थीं और एक वृद्ध मुसलमान उस गाड़ी को हाँक रहा था। एक वृद्धा गाड़ी में बिना बुर्का के बैठी हुई थी।

कुछ स्वयंसेवकों ने गाड़ी को रोका हुआ था। जगदेव सिंह के मस्तिष्क में अभी भी अटारी में हो रही मुसलमान स्त्रियों से छेड़-छाड़ का चित्र विचर रहा था। इस कारण उसने झट अपनी कृपाण निकाल ली और स्वयंसेवकों से पूछा, "इनको तंग क्यों कर रहे हो ?"

"हमारा विश्वास है," एक स्वयंसेवक ने कहा, "कि ये हिन्दू लड़कियाँ हैं और यह बूढा इनको भगा कर ले जा रहा है।"

इस पर बूढ़ा, जो पहले सर्वथा भयभीत हो काँप रहा था, अब साहस पकड़ कहने लगा, "सरदार साहब ! खुदा की कसम खा कर कहता हूँ कि इनमें चार मेरी लड़कियाँ है और एक लड़के की, जो मार डाला गया है, बहू है।"

"हम इनको देखकर विश्वास करना चाहते है। इनका बुर्का उतारो।"

इस पर उस वृद्धा ने काँपते हुए हाथ जोड़ कर कहा, "बेटा ! घर में माँ बहन हैं या नही ? उनका पर्दाफ़ाश करोगे क्या ?"

इस प्रकार बातों में समय जाते देख एक स्वयंसेवक ने एक औरत का बुर्का पकड़ कर खींच लिया। यह देख जगदेव सिंह का रक्त उबल उठा और उसने स्वयंसेवक पर वार करने के लिए कृपाण उठाई। स्वयंसेवक पैंतरा बदल पीछे हट गया और बुर्का अपने साथ ले गया। वार खाली गया। स्वयंसेवक के हाथ बुर्का था। वह भाग कर दस कदम पीछे हट गया। परन्तु जगदेव सिंह के हाथ से कृपाण गिर पड़ी, जब उसने देखा कि लड़की, जो बुर्के के भीतर से निकली थी, के मुख पर पट्टी बंधी है और उसके

हाथ पीठ पीछे बंधे हुए हैं ।"

जगदेव सिंह को विस्मय में आवाक मुख देख बूढ़ा, गाड़ी हांकने वाला गाड़ी से उतर कर भागा; परन्तु दूसरे स्वयंसेवकों ने उसे पकड़ लिया ।

लड़की की पट्टी खोली गई तो जगदेव सिंह ने पूछा, "क्या नाम है तुम्हारा ?"

"लक्ष्मी ।"

जगदेव सिंह के क्रोध का वारा पार नहीं रहा । उसका मस्तिष्क चक्कर खाने लगा था । उसने गाड़ी पकड़ अपने को गिरने से रोका । वह स्वयं सेवक, जो बुर्का उतार कर भागा था, अब समीप आ गया और जगदेव सिंह को उल्हाना देने लगा, "देखा न सरदार ! मैं ठीक कहता था न ?"

जगदेव सिंह ने अपनी कृपाण ज़मीन से उठाई और मियान में डालते हुए बोला, "मैं बहुत भूल करने जा रहा था । क्षमा कर दो भाई !"

इस समय अन्य स्त्रियों के भी बुर्के उतारे गए । पाँचों की पाँचों लड़कियाँ हिन्दू थीं और सब के मुख पर कपड़ा बंधा हुआ था ।

जगदेव सिंह ने देखा कि बूढ़े गाड़ीवान का सिर कट कर अलग भूमि पर लुढ़का पड़ा है । वह वहां से हट कर घर वापिस चला आया । वहां जाकर गम्भीर विचार में मग्न हो गया । उसने विचार किया कि वह क्यों इस कांड को रोके ? कौन जाने कि मुसलमान हिन्दू औरतों से दुर्व्यवहार कर रहे हैं या हिन्दू मुसलमान औरतों से ?

इस प्रकार मन में समाधान कर उसने अपने लोगों को अम्बाला विभाग में भी कार्य करने को कह दिया ।

(८)

चेतनानन्द के मन में यह बात बैठ गई थी कि लाहौर पाकिस्तान में रहेगा और हिन्दुओं का लाहौर में रहना असम्भव हो जाएगा । जब अगस्त के प्रथम सप्ताह में पुनः छुरे घोंपने की घटनाएँ होने लगीं, तो उसने अपने माता-पिता को और अपनी बहिन रेवा तथा उसकी सास स्वसुर को लाहौर से चले जाने के लिए कह दिया ।

लाला जीवनलाल ने अपनी पूर्ण चल सम्पत्ति पहिले ही देहरादून पहुँचा दी थी। उसने चेतनानन्द को भी चलने के लिए कहा। वह तैयार नहीं हुआ। उसका कहना था कि यहाँ लाहौर में काम बहुत अधिक है। इस समय लोगों को निःसहाय छोड़कर जाना विश्वासघात करना होगा।

रेवा भी जाने के लिए तैयार नहीं हुई। महेश अभी तक जेल में ही था। उसका कहना था कि महेश को छुड़ाने का यत्न पहिले करना चाहिए।

चेतनानन्द ने कहा भी—"यत्न कर रहा हूँ रेवा! अभी तक सफलता नहीं मिली। ऐसा प्रतीत होता है कि पन्द्रह तारीख को, प्रातःकाल उसको छोड़ दिया जाएगा।"

"तो मैं उनके साथ ही यहाँ से जाऊँगी।"

"पर तुम्हारी अवस्था में तो कोई भी स्त्री यहाँ रहकर बोझा बन जाएगी। फिर तुमको यदि कुछ हो गया तो कितना कष्ट होगा?"

रेवा सातवें महीने में जा रही थी, इस पर भी वह नहीं मानी। परिणाम यह हुआ कि कोई नहीं गया। अब मुसलमानों से झगड़े का प्रश्न नहीं था। अब तो लाहौर से बाहर निकलने की बात रह गई थी। रेल द्वारा लोगों को बाहर भेजना कठिन होता जाता था, इस कारण दूसरे साधनों का प्रयोग चाहिए था। हवाई जहाज एक बहुत ही छोटा साधन था। मोटर सड़क द्वारा यह बात हो सकती थी; परन्तु लाहौर से बारह मील के अन्तर पर बनने वाली सीमा तक, रक्षा का प्रबन्ध सरकार के बिना होना कठिन था। साथ ही लाहौर के आसपास के गाँवों के लोग लाहौर में एकत्रित हो रहे थे और सड़कों पर छुरे घोंपने की घटनाएँ बढ़ती जा रही थीं। इसी कारण कई सार्वजनिक संस्थाओं ने कैम्प बनाने आवश्यक समझे।

इस समय लाहौर में विज्ञापन लगाये गए कि लाहौर बल-पूर्वक ले लिया जायगा। अमृतसर और साथ के देहातों के लोग लाहौर में आने आरम्भ हो गए थे। इन लोगों ने लाहौर के हिन्दुओं की विशाल रिक्त इमारतों को देख उन पर अधिकार करना चाहा। यह नौ तथा दस अगस्त

की बात है। लाहौर के मुसलमानों ने देखा कि कई हिन्दू अपने मकानों में अभी भी डटे हुए हैं। इससे उन्होंने पूर्ण नगर को जलाकर राख कर देने का विचार कर लिया। इस समय यह बात भी नगर में प्रचलित हो गई कि लाहौर को हिन्दुस्तान में दे दिया गया है। इससे मुसलमानों को क्रोध चढ़ गया और ग्यारह अगस्त को दिन निकलने से पूर्व सैंकड़ों स्थानों से प्रचण्ड अग्नि की लपटें निकलती दिखाई देने लगीं। हिन्दू मुहल्लों पर सहस्रों मुसलमानों के शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित जत्थे आक्रमण करने लगे। नगर से रेल्वे स्टेशन को जाने का मार्ग रोक लिया गया और रेल्वे स्टेशन की ओर जाने वालों को रोककर उनकी तलाशी ली जाने लगी। हिन्दू सुरक्षा-दल का कैम्प, जो स्टेशन पर यात्रियों की सहायता के लिए लगा हुआ था, जलाकर राख कर दिया गया और उस स्थान पर मुसलमान आक्रमणकारियों ने अधिकार कर लिया।

स्टेशन के प्लैटफॉर्म पर एकत्रित हिन्दू यात्रियों की इतनी भारी संख्या में हत्या की गई कि प्लैटफॉर्म रक्त से भीग गया। रेल के वर्कशॉप में जो हिन्दू कारीगर उस दिन गये, सबका काम तमाम कर दिया गया।

इन सब समाचारों को सुन चेतनानन्द को नगर में यह घोषणा करवानी पड़ी कि कोई भी हिन्दू रेल्वे स्टेशन पर न जाए। जो लोग बेघर हो गए हैं, वे डी० ए० वी० कॉलेज में आ जावें, वहाँ से उनको निकालने का प्रबन्ध किया जाएगा। इस पर भी मारकाट चलती रही।

पार्वती पन्द्रह-बीस दिन से घर नहीं आई थी। यह ठीक था कि जुलाई मास में घातक आक्रमण कम हुए थे और घायलों की संख्या हस्पतालों में कम हो गई थी; साथ ही यह भी ठीक था कि सेवा करने वाली नर्सों और डॉक्टरों की संख्या भी कम हो गई थी। इस प्रकार कार्य करने वालों के लिए उतना ही काम रहा था। और फिर अगस्त के प्रथम सप्ताह में तो काम कई गुना बढ़ गया। पार्वती और कुछ अन्य सेवा करने वाली नर्सों पर काम का बोझा इतना अधिक था कि उनको सोलह घण्टे नित्य काम करना पड़ता था। सोने और अन्य आवश्यक कार्यों के अतिरिक्त किसी

भी अन्य कार्य के लिए न तो अवकाश था और न ही शक्ति।

पार्वती नित्य यह विचार करती थी कि अगले दिन वह माता-पिता से मिलने जाएगी। रेवा के विषय में वह चिन्तित रहती थी। परन्तु प्रायः उठने से पूर्व ही काम उसकी प्रतीक्षा करता होता था और फिर रात के बारह बजे तक उसको अपनी भी सुध नहीं रहती थी।

ग्यारह अगस्त को इतने घायल हस्पताल में आये कि उनको भीतर ले जाने को भी स्थान नहीं रहा। डॉक्टर उनकी मरहम पट्टी सड़क पर आकर ही करने लगे। सरकारी हस्पताल पूर्णतया मुसलमान डॉक्टरों के अधीन था। वहाँ हिन्दू अपने घायलों को ले जाते हुए डरते थे। कई महीने हो गए थे कि वहाँ से कोई हिन्दू घायल जीवित बाहर नही निकला था, इस कारण वहाँ जाने का प्रश्न ही उपस्थित नही होता था। लोग सड़क पर पड़े तड़फड़ाना पसन्द करते थे, परन्तु सरकारी हस्पताल में ले जाये जाने से इन्कार कर देते थे। आज हालत अत्यन्त नाजुक हो गई। डॉक्टर अहूजा काम को देखकर घबरा उठा। हस्पताल में दो सौ से ऊपर रोगी थे। इस दिन प्रातःकाल से मध्याह्न तक सौ से अधिक घायल आ चुके थे और बाहर सड़क पर ही पड़े थे। आज तो पार्वती भी हताश हो, मुख देख रही थी कि क्या करे, किसकी सेवा पहले करे? किस-किसको पानी दे? यह और अनेकों ऐसी बातें उसके मस्तिष्क में एक साथ आने लगीं। परिणाम यह हुआ कि वह कुछ भी कर सकने में समर्थ नहीं रही।

दूसरी ओर मच्छी हट्टा बाज़ार का प्रायः पूर्वी भाग धू-धू कर जल रहा था और जलते मकानों से कोयले और लकड़ियों के टुकड़े, उड़-उड़ कर वच्छो वाली बाज़ार में हस्पताल के ऊपर गिर रहे थे।

पार्वती के साथ चार और नर्सें भी थीं। एक थी राधा। वह अति कोमल प्रकृति की स्त्री थी। उसके पति की मृत्यु मार्च मास में मुलतान के बलवे में हो गई थी और बेघर होने से, इस भीड़ के समय अपने सम्बन्धियों को छोड़ यहां आ सेवा करने लगी थी। इस दिन के घायलों को देख,

हताश हो, वह एक ओर बैठ गई। पार्वती ने उसको उत्साहित करने के लिए, उसके पास जा कर कहा, "राधा बहिन ! उठो न। अब तीन-चार दिन की बात और है। पन्द्रह तारीख को तो हमें चले ही जाना है।"

राधा अत्यन्त थक चुकी थी; इस पर भी पार्वती की बात सुन उठने लगी, पर इसी समय उसे चक्कर आ गया। वह गिर पड़ी और अचेत हो गई। इस पर पार्वती ने डॉक्टर को आवाज़ दी, "डॉक्टर! डॉक्टर!!" एक आदमी की टांग का डबल फ्रैक्चर हो गया था। डॉक्टर उसको सप्लिन्टर्ज़ बांध रहा था। और कोई वहां था नहीं, इससे वह आ नहीं सका। इस कारण पार्वती ने राधा को उठाया और हस्पताल के भीतर ले गई। वहां कोई भी पलंग खाली नहीं था। हस्पताल के ऊपर एक कमरे में नर्सें रात को सोती थीं। वहां राधा को ले जाकर पार्वती ने भूमि पर लिटा दिया। वहाँ पर कोई भी चारपाई नहीं थी। पार्वती भागी हुई नीचे आई और एक जग में पानी ले जाकर राधा को सचेत करने का प्रयत्न करने लगी।

बहुत कठिनाई से वह होश में आई। इस समय पार्वती ने उसको अपने थर्मौस से एक प्याला चाय दी। इसके पीने से उसका चित्त स्थिर हुआ तो पार्वती ने उसको कहा, "राधा बहिन ! अब तुम यहां से जाने का प्रबन्ध करा लो। यह काम तुम्हारे बस का नहीं रहा।"

राधा ने लम्बी सांस ली और चुप कर रही। इस पर पार्वती ने पूछा, "क्यों ! क्या बात है ?"

"मैं खाट में मरते पिस्सू को भी नहीं देख सकती थी। एक दिन वे एक पिस्सू को निकाल मारने लगे तो मैं उनसे लड़ पड़ी थी। मैंने कहा था कि मेरे सामने मत मारो। पर उनकी हत्या के पीछे तो मैं अपने मन को अति कड़ा कर यह काम कर रही थी। जब मेरा मन दुर्बल पड़ता था और मैं इस काम से भागना चाहती थी, तो मेरे मन में उनकी याद आ जाती थी और मैं उनकी हत्या का बदला यही समझती थी कि जितनों के जीने में सहायक हो सकूं, होऊँ। परन्तु पार्वती बहिन ! आज तो हद्द हो गई है।

मैं अब और सहन नहीं कर सकती। जानती हो मेरा मन क्या कहता है ? मैं कहती हूँ कि इन लोगों की यहाँ सेवा और मरहम पट्टी करने के स्थान उन लोगों की हत्या करूँ, जो इनकी और मेरे घरवाले की मृत्यु में कारण हुए हैं। मैं यह सोच रही थी कि कितना व्यर्थ काम हम कर रही हैं ! हम क्या उस स्रोत को बन्द नहीं कर सकतीं, जहां से इन घायलों की नदी प्रवाहित हो रही है ?

"मैं तो आज यहाँ से जा रही हूँ। मुझसे यह मरहम पट्टी नहीं हो सकती। मैं एक छुरी ले आऊँगी और किसी हत्यारे को मारते हुए मर भी जाऊँगी तो अपने को धन्य मानूंगी।"

पार्वती ने शोकग्रस्त मुख से किंचित् मुसकराकर कहा, "तुम क्या कर सकोगी राधा ?"

"मैं जो पिस्सू को मरते देख अचेत होने लगती थी, अब बीसियों को मरते देख चुकी हूँ। मैं, मौका मिला तो दो-चार को तो मार ही डालूंगी।

"पार्वती ! मुझको कुछ खाने को दो। मुझमें जरा ताकत आए तो मैं चली जाऊँगी। मैं कुछ करूँगी। अब सहन-शक्ति की सीमा आ गई है।"

पार्वती ने समझा कि राधा का मस्तिष्क खराब हो गया है; इस कारण उसने उसको कहा, "अच्छा ठहरो, मैं तुम्हारे लिए दूध लाती हूँ। आज ही एकसौ डिब्बा 'कन्डेन्स्ड मिल्क' का आया है।"

यह कह वह डॉक्टर को बताने नीचे आई। वहाँ एक आदमी, जिसका पेट फाड़ आँतें बाहर निकल आई थीं, आया हुआ था और डॉक्टर उसको क्लोरोफार्म सुंघाकर, उसका रक्त बन्द करने का यत्न कर रहा था। पार्वती इसमें डॉक्टर की सहायता करने लगी। फिर दो और केस आए और इसके बाद केस-पर-केस आते गए। पार्वती राधा के विषय में भूल गई। लगभग चार बजे उसको भूख लगी तो वह अपने और डॉक्टर के लिए दूध बनाने अपने कमरे में चली गई। इस समय उसको राधा की याद आई। वह वहाँ पर नहीं थी। पार्वती समझ गई की पागलपन में वह उठकर कहीं भाग गई होगी। इससे अधिक विचार करने का समय ही नहीं था। वह दूध बनाने लगी।

(६)

चेतनानन्द ग्यारह तारीख को ट्रकों और लारियों का प्रबन्ध कर हिन्दू मुहल्लों से लोगों को निकालने का काम करने लगा। मोची दरवाज़ा, पीपल वेड़ा, मच्छी हट्टा, सूआ बाज़ार, चूना मण्डी, मुहल्ला सरीन, चुहट्टा बस्ती भगत, मुहल्ला सत्थां और सैंद मिट्ठा बाज़ार के हिन्दू वच्छो वाली और हठार बाज़ार में एकत्रित हो रहे थे। इनको निकालने के लिए ट्रक और लारियाँ गुमटी बाज़ार में लाकर खड़ी की जाती थीं और वहाँ से निकलने वाले लोगों को चढ़ाकर लंगे मण्डी, हीरा मण्डी इत्यादि से हो कर, बाहर रावी रोड पर से डी० ए० वी० कॉलेज ले जाती थीं।

इस प्रकार काय चल रहा था। प्रत्येक ट्रक के साथ तीन बन्दूकधारी स्वयंसेवक रहते थे। चेतनानन्द हठार बाज़ार में से घायलों और स्त्री-बच्चों को पहले, वृद्धों को पश्चात् और अन्त में युवकों को निकालने का कार्य कर रहा था। यत्न यह किया जाता था कि परिवारों को पूर्ण रखा जाए।

इस समय एक स्त्री आई, जो अति थकी हुई प्रतीत होती थी और जिसके सिर के बाल अस्त-व्यस्त हो रहे थे। वह हठार बाज़ार में से लोगों की भीड़ चीरती हुई गुमटी बाज़ार में, जहाँ ट्रक खड़े थे, आ पहुँची। एक ट्रक सवारियों से भर चुका था। वह स्त्री उस भरे हुए ट्रक में चढ़ने लगी, तो ड्राइवर ने कहा, "बस, पिछले ट्रक में चढ़ना।"

"क्यों ?" उस स्त्री ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर पूछा।

"जगह नहीं है।"

"है तो।"

"ट्रक इतना बोझा नहीं खींच सकेगा।"

"मुझको बहुत जल्दी है।"

"जल्दी है ? क्या करने जा रही हो तुम ?" चेतनानन्द, जो पीछे ही खड़ा सुन रहा था, पूछने लगा।

"मैं जा रही हूँ।"

"कहाँ ?"

उस स्त्री का मुख लाल हो गया। उसने कहा, "नहीं बताऊँगी।"

चेतनानन्द की हँसी निकल गई; परन्तु उसे धुंधला-सा स्मरण हो रहा था कि इस स्त्री को कहीं देखा है। इससे गम्भीर हो उसने एक पुरुष को ट्रक से उतारकर उसको चढ़ा दिया; पश्चात् वह अन्य कार्य में लग गया।

वह स्त्री राधा थी, जो सर गंगाराम हस्पताल में से भागकर आई थी। ट्रक डी० ए० वी० कॉलेज के सामने आकर रुका ही था कि वहाँ डॉक्टर खन्ना अपनी जीप गाड़ी में जाने को तैयार बैठा दिखाई दिया। ड्राइवर जीप को चलाने ही वाला था कि राधा ने हाथ खड़ा कर रोका, और डॉक्टर साहब के समीप आकर पूछने लगी, "डॉक्टर साहब ! कहाँ जा रहे है आप ?"

"जहन्नुम में।"

"मैं भी आपके साथ चलूंगी।" इतना कह वह लपककर डॉक्टर साहब के पीछे जीप में चढ़ने लगी। डॉक्टर साहब जीप में आगे, ड्राइवर के पास बैठे थे। पीछे जीप में कुछ ट्रंक और कपड़ों की गठरियाँ रखी थीं और दो फौजी अफसर बन्दूकें लिए बैठे थे। जब राधा गाड़ी में चढ़ने लगी तो डॉक्टर ने डाँट कर कहा, "क्या कर रही हो औरत ?"

"मुझको जल्दी है।"

"उतरो नीचे।" इस समय मोटर स्टार्ट हो गई थी। राधा जीप पर चढ़ने का यत्न कर रही थी। उसने एक पाँव साइड बोर्ड पर रखा और हाथ से जीप की पीठ को पकड़ कर ऊपर चढ़ने का यत्न किया; परन्तु जीप चल पड़ी और उसका पाँव खिसक गया, पर हाथ पीठ को पकड़े रहे। फौजी अफसर ने उसे गिरता देख पकड़ लिया और उसको ऊपर खींच लिया। डॉक्टर ने कहा, "यह क्या कर रहे हो ? कितनों को चढ़ा लोगे ?"

"यह गिर चली थी डॉक्टर साहब !"

"गिरने दो। मैं सरकारी काम से जा रहा हूँ।"

इस समय राधा जीप में बैठ चुकी थी और उसके मुख पर विजय

के लक्षण दिखाई देने लगे थे। वह बोली नहीं और अपना संतुलन ठीक रखते हुए वह फौजियों के पाँव में बैठी रही। फौजियों ने डॉक्टर साहब की बात का उत्तर नहीं दिया। डॉक्टर पेचोताब खा रहा था। उसने ड्राइवर को कहा, "गाड़ी रोककर इसे उतार दो।"

ड्राइवर ने, जो स्वयं एक फौजी अफसर था, डॉक्टर साहब से कहा, "अपने बाई और देखिए। खड़ी करुँगा, तो सब मार डाले जावेंगे।"

डॉक्टर खन्ना ने देखा कि पचास-साठ मुसलमान एक वृद्ध आदमी को लाठियों से पीट रहे है। इस कारण वह बोल उठा, "भागो यहाँ से।"

इस प्रकार राधा जीप में ही रह गई। फौजी अफसरों ने उसे अपने बीच में ही बिठा लिया। राधा के मन में सन्तोष हुआ और वह अपने बालों को, जो उसकी आँखों के सम्मुख आ गए थे, हाथों से ठीक करने लगी।

गाड़ी जब माल पर पहुँची तो डॉक्टर ने पुनः उस स्त्री को उतारने के लिए कहा, "कहाँ जाना है तुमको ?"

"जहाँ आपने जाना है।"

"कैसी बेहया औरत हो तुम ! मैं सरकारी काम से शिमला जा रहा हूँ।"

"मुझको शिमला जाने में कष्ट नहीं होगा।"

"वहाँ तुम्हारा कोई है ?"

"है।"

"कौन है ?"

"जान कर क्या करेंगे आप ?"

इस समय तक राधा का चित्त स्थिर हो गया था। वह विचार करने लगी थी कि उसको करना क्या है। वह अभी तक फौजियों के पांव में बैठी हुई थी। इस समय एक फौजी ने उसको ऊपर अपने समीप बैठने को कहा। "नहीं आपको कष्ट होगा।" राधा ने कहा।

"तुम इतनी छोटी और पतली-सी तो हो। यहाँ डॉक्टर साहब का

बिस्तर खराब हो जाएगा।"

राधा ने भी मुसकरा कर कहा, "ओह, मैंने देखा ही नहीं था।" फौजी ने एक ओर खिसक कर स्थान कर दिया और राधा उसके समीप बैठ गई। इस पर दूसरे फौजी ने कुछ हमदर्दी-भरे शब्दों में पूछा, "कहाँ जा रही हो तुम?"

राधा ने अभी उत्तर नहीं दिया था कि डॉक्टर ने पूछ लिया, "कहाँ से आ रही हो तुम?"

"नरक धाम से आ रही हूँ और नरक धाम को ही जा रही हूँ।"

डॉक्टर ने मुख में बुरबुराते हुए कहा, "पगली मालूम होती है।"

राधा ने केवल मुसकरा दिया। उसकी मुसकराहट देख फौजी अफसर ने, जो उससे हमदर्दी दिखा रहा था, कहा, "डॉक्टर साहब! कोई दुखियारी प्रतीत होती है।"

"क्या नाम है तुम्हारा?"

"फातिमा।"

डॉक्टर घबराकर पीछे देखने लगा। फ़ौजी अफ़सर का मुख गम्भीर हो गया। राधा मुसकरा रही थी।

"तुम हँसी कर रही हो मुझसे।"

"आजकल हँसी के दिन नहीं हैं। मैं जानना चाहती हूँ कि आप मेरा नाम-धाम क्यों पूछते हैं? मैं अपने ठिकाने पर पहुँच कर आपकी गाड़ी से उतर जाऊँगी। पश्चात् आपके लिए मैं, जैसे थी ही नहीं, हो जाऊँगी।"

"तुम हिन्दू हो या मुसलमान?"

"मुसलमान तो पाकिस्तान जा रहे हैं, वहाँ से आ नहीं रहे।"

डॉक्टर निश्चिन्त हो चुप बैठ गया। अब फ़ौजी ने फिर उससे बातें करनी आरम्भ कर दीं, "मालूम होता है कि तुमको झगड़े में बहुत हानि हुई है?"

राधा ने उत्तर नहीं दिया।

"तुम्हारा घर जल गया मालूम होता है।"

राधा अब भी चुप रही।

"सब कुछ जल गया मालूम होता है?"

राधा की आँखें भीग गईं। उस अफसर ने देखा तो उसके समीप खिसक कर सहानुभूति पूर्ण शब्दों में पूछा, "तुम्हारे पति भी मारे गए मालूम होते हैं?"

राधा की आँखों से आँसू ढुलक, उसकी गालों पर दिखाई देने लगे थे। यह देख उस अफसर ने उसके साथ सट कर कहा, "तुम घबराओ नहीं, मैं तुम्हारी हर प्रकार से सहायता करूँगा। तुमको किसी बात की आवश्यकता नहीं रहेगी। मैं तुमको अपने गाँव में पहुँचा दूंगा। वहाँ तुम्हें खाने, पहरने की बिल्कुल कमी न रहेगी।"

राधा ने पहले तो उससे दूर हटने का यत्न किया, परन्तु और आगे हटने को स्थान नहीं था। वह जीप गाड़ी की पीठ और उस फौजी अफसर के बीच फँस गई थी। अफसर ने अपना मुख राधा के समीप ले जाकर कहा, "कहाँ भटकती फिरोगी? हम रात को जालन्धर ठहरेंगे। अगर तुम मेरे साथ रहना पसन्द करो तो मैं तुमको रात को अपने घर छोड़ आऊँगा। मेरा गाँव जालन्धर से पाँच मील के अन्तर पर है।"

राधा बहुत परेशान थी। उसने देखा कि वह आदमी बुरी नीयत से उसकी ओर देख रहा है। उससे छुटकारा पाने के लिए डॉक्टर साहब की दुहाई देनी पड़ेगी और वह उसको नीचे उतर जाने को कह सकता है। चुप रहने से वह फौजी अफसर और हाथ फैलाता जाता है। इससे उसने यही उचित समझा कि उसको बातों में टालना चाहिए। वह बोली, "गाँव में भी तो मुसलमान होंगे?"

"थे; अब नहीं हैं। मार-मारकर निकाल दिए गए हैं।"

"किसने निकाले हैं?"

"गाँव के हिन्दुओं ने।"

"तब तो ठीक है। मुझको मुसलमानों से बहुत डर लगता है।"

"हमारे परिवार का वहाँ इतना रसूख है कि यदि तुम वहाँ चलोगी तो तुम्हारी ओर कोई उंगली भी नहीं उठा सकेगा।" इतना कह उसने राधा की कमर में हाथ डाल उसको अपनी ओर खींचा। इस पर राधा ने कहा, "वह देखो, तुम्हारा साथी इस बात को पसन्द नहीं करता।"

"उसको खीजने दो।"

"नहीं! मुझको शर्म लगती है। ज़रा पीछे हटकर बैठो।"

"तो मेरे साथ चलने का वचन दो।"

"आज रात ही?"

"हाँ। मैं डॉक्टर साहब से यह जीप दो घण्टे के लिए ले लूंगा और जब तक वे आराम करेंगे, तुमको मैं गाँव छोड़ आऊँगा।"

"मुझको डर लगता है।"

"डरने की बात नहीं। तुम वहाँ बहुत आराम से रह सकोगी।"

"अच्छी बात है। ज़रा पीछे हटकर बैठो। देखो डॉक्टर साहब तुम्हारी बात सुनने का यत्न कर रहे हैं।"

डॉक्टर पीछे झुककर और थोड़ा घूमकर बैठा हुआ था।

(१०)

जालन्धर पहुँचने तक सांयकाल हो गया। एक मिस्टर मैहरा डॉक्टर खन्ना के मित्र वहाँ रहते थे। डॉक्टर ने जीप उसकी कोठी को ले जाने के लिए कह दिया। जब जीप वहाँ पहुँची तो मैहरा गाड़ी का शब्द सुन बाहर आ गया और डॉक्टर को देख, प्रसन्नता से हाथ मिलाते हुए पूछने लगा, "किधर से आ रहे हो?"

"एक आवश्यक कार्य से, गवर्नर से मिलने लाहौर गया था।"

इस समय मैहरा की दृष्टि दुबककर बैठी राधा पर चली गई। उसने पूछा, "यह कौन है?"

"यह कैप्टन रघुवीर हैं और उनकी बीवी है। लाहौर अपने रिश्तेदारों के साथ मुसलमानों में फँस गई थी; बहुत कठिनाई से छुड़ाकर लाए हैं।

"कैप्टन ! तुम यह गाड़ी ले जा सकते हो और उसको अपने गाँव छोड़ आ सकते हो। प्रातः दस बजे से पहले लौट आना।"

जब मिस्टर मैहरा डॉक्टर साहब को कोठी में ले गया, तो दूसरे फौजी अफसर ने कहकहा लगाते हुए कहा, "दोस्त ! अकेले ही ? हमें भी ले चलो न साथ।"

इस समय राधा कूदकर जीप से नीचे उतर आई। कैप्टन रघुवीर अपने साथी को उत्तर देने के स्थान उसको पूछने लगा, "कहाँ जा रही हो तुम ?"

"कहीं पेशाब करने की जगह होगी ?" इतना कह कोठी की ड्योढ़ी में जाकर वहाँ खड़े चपरासी से बोली, "गुसलखाना दिखाओ।"

चपरासी उसको कोठी के एक पहलू में ले जाकर बोला, "इधर चली जाईये।"

राधा गुसलखाने में घुस गई। भीतर से चिटकनी लगा ली। गुसलखाने में भँगी के आने के लिए एक दरवाज़ा पीछे से बना था। राधा ने वह दरवाज़ा धीरे से खोला और वहाँ से निकल कोठी के पिछवाड़े में जा पहुँची। वहाँ एक प्रौढ़ा स्त्री से सामना हो गया।

"कौन हो तुम ?" उसने पूछा।

"घर की मालकिन से मिलना चाहती हूँ।"

"क्या काम है ?"

"कोठी के पिछवाड़े से निकल जाने का मार्ग देखना है।"

"क्यों ?"

"उधर से बाहर निकल जाऊंगी।"

"तुम कौन हो और आई कहाँ से हो ?"

"बताने में देर लगेगी और पकड़ ली जाऊंगी।"

उस स्त्री ने राधा को सिर से पैर तक देखा और फिर उससे बोली, "मेरे साथ आओ।"

राधा उसके पीछे हो ली। वह उसको एक कमरे में ले गई। वहाँ पहुँच उस स्त्री ने अन्दर से दरवाज़ा बन्द कर पूछा, "सच बताओ कि कौन

हो और क्यों आई हो ? नहीं तो मरवा कर इस कोठी के कोने में गड़वा दूंगी।"

"क्यों ?"

"आजकल मुसलमान स्त्रियाँ हिन्दुओं के घरों में घुस कर उनका भेद ले रही हैं।"

"मैं मुसलमान नहीं हूँ। माताजी ! मेरा नाम राधा है। दुःख की मारी मैं लाहौर से निकलना चाहती थी कि डॉक्टर खन्ना की जीप आती दिखाई दी। उनकी मिन्नत कर उनकी गाड़ी में बैठ यहां आई हूँ। अब डॉक्टर साहब का एक अंगरक्षक सिक्ख कप्तान मुझको ज़बरदस्ती अपने घर ले जाकर, मुझसे व्यभिचार करना चाहता है। मैं गुसलखाने में, पेशाब करने के बहाने जाकर पीछे से निकल भागना चाहती थी।"

"लाहौर की रहने वाली हो क्या ?"

"नहीं ! दीवान जस्साराम मुलतान वाले की लड़की हूँ। मार्च के महीने मेरे पति मारे गये थे। घर लुट गया और सब सम्बन्धी उसी मकान में बन्द कर जला दिये गए। मैं अपने पिता के घर में थी, इस कारण बच गई। वे लाहौर आ गए और मैं सर गंगाराम के हस्पताल में नर्स का काम करने लगी। मेरे दो भाई लाहौर में मारे जा चुके हैं। पिता जी हरिद्वार गए थे। मालूम नहीं वहां पहुँचे कि नहीं। मैं आज के लाहौर के हत्याकाँड के समाचार को सुन कर पागल हो उठी और वहां से भाग आई हूँ।"

"तो आज लाहौर में बहुत झगड़ा हुआ है ?"

"झगड़ा ? इसे झगड़ा नहीं कहा जा सकता। वह तो एक विशाल हत्याकाँड ही था। हमारे आने तक जारी था।"

वह स्त्री गम्भीर हो राधा का मुख देखती रही। राधा सामने खड़ी उसके कहने की प्रतीक्षा कर रही थी। अन्त में उसने कहा, "तुम यहीं बैठो। मैं पता करती हूँ कि तुम सत्य कहती हो या नहीं ?"

वह राधा को उसी कमरे में बन्द कर गई। बाहर से कुंडा लगा कर

कोठी में, जहां मिस्टर मैहरा डॉक्टर खन्ना से बातें कर रहा था, चली गई। डॉक्टर कह रहा था, "लाहौर में अब शान्ति ही है। मुसलमान नेता पाकिस्तान सरकार की मशीनरी बनाने में लगे हुए हैं। लोग भी यत्न कर रहे हैं कि नगर में शान्ति हो जाए, तो वहां प्रबन्ध स्थापित किया जाए।"

इस समय डॉक्टर, मैहरा की स्त्री को अन्दर आया देख, चुप कर गया। श्रीमती मैहरा ने डॉक्टर साहब की लाहौर में शान्ति की बात सुन ली थी। इससे उसे राधा की बात पर सन्देह हो गया। उसने मन को सन्तोष देने के लिए पूछा, "तो लाहौर में हिन्दू-मुसलमान परस्पर मैत्री करने का यत्न कर रहे हैं ?"

डॉक्टर ने निश्चिन्त मन से कहा, "हाँ; मैं आशा करता हूँ कि पन्द्रह तारीख तक वहाँ जशन मनाने की तैयारियाँ मुकम्मिल हो जायेंगी।"

"पर मैंने तो सुना है कि आज प्रातःकाल से मुसलमानों ने हिन्दुओं का कत्ले-आम कर रखा है।"

"यह गलत है। इक्का-दुक्का कहीं कोई मारा गया हो, तो बात दूसरी है। अनारकली बाज़ार में दुकाने खुलवाने का यत्न हो रहा है।"

श्रीमती मैहरा राधा को एक मुसलमान जासूस समान कुत्तों से फड़वा देना चाहती थी। उसके मन में विश्वास बैठ गया कि वह झूठ बोल कर घर में घुस आने का अपराध छिपाना चाहती है। इस कारण वह कमरे से बाहर निकल आई और राधा को डाँटने के लिए उसके कमरे की ओर चली। इस समय चपरासी भागता हुआ आया और कहने लगा, "बीबी जी ! कप्तान साहब की बीवी गुसलखाने में गई थी कि बाहर ही नहीं निकली। बहुत दरवाज़ा खटखटाया है। भीतर से कोई बोलता ही नहीं।"

इस समाचार से श्रीमती मैहरा आश्चर्य में मुख देखती रह गई। वह कितनी ही देर तक मन में उस स्त्री की बातों पर विचार करती रही। मन में इस मामले की जाँच करने के लिए कोठी की ड्योढ़ी में आ गई और बोली, "कहाँ है कप्तान साहब ?"

कैप्टन रघुवीर सिंह, जो गुसलखाने के पास खड़ा आवाज़ दे रहा था, ीमती मैहरा के सामने आ गया। उसके आते ही श्रीमती मैहरा ने छा, "उस औरत को कहाँ से पकड़ लाए हो ?"

वह फौजी अफ़सर घबरा उठा। उसको चुप देख श्रीमती मैहरा ने फिर डाँटते हुए पूछा, "कहाँ से लाए हो इस औरत को ? वह मुसलमान ालूम होती है ?"

रघुवीरसिंह के मुख से अनायास ही निकल गया, "वह कहती थी के हिन्दू है।"

"तो वह तुम्हारी बीवी नहीं है ?" श्रीमती मैहरा को उस औरत ी बात का समर्थन मिल गया। "तुमने उसे बीवी क्यों कहा था ?"

रघुवीरसिंह घबराया। फिर कुछ मुसकरा कर जीप की ओर लौटने के लिए घूमा तो श्रीमती मैहरा ने कहा, "वह औरत घर के भीतर है। क्या चाहते हो उससे ?"

इस समय कैप्टन रघुवीर सिंह का साथी, जो अभी तक दूर खड़ा वार्तालाप सुन रहा था, समीप आकर कहने लगा, "वह औरत लावारिस है और इसके साथ गाँव जाने को स्वयं तैयार हो गई थी।"

"कहाँ मिली थी आपको ?"

"डी० ए० वी० कॉलेज कैम्प में थी। हमें जाने को तयार देख गाड़ी में आकर बैठ गई।"

इस प्रकार राधा की बातों का समर्थन होते देख उसने फिर पूछा, "लाहौर में आज शान्ति है क्या ?"

"खून की नदियाँ बह रही हैं।"

"डॉक्टर साहब तो कह रहे हैं कि हिन्दू-मुसलमान मित्रता करने में लगे हुए हैं।"

फौजी अफसर की हंसी निकल गई। उसने अपने जूतों को दिखाते हुए कहा, "हम स्टेशन पर गए थे। वहाँ के प्लैटफॉर्म पर का रक्त अभी भी जूतों को लगा हुआ है।"

श्रीमती मैहरा को और अधिक जानने की आवश्यकता नहीं थी। वह जान गई थी कि राधा ने सत्य कहा है। डॉक्टर साहब ने झूठ क्यों बोला, यह उसकी समझ में नहीं आया। इस पर मस्तिष्क को दुःख न देकर, वह लौट कर राधा के पास चली आई। राधा बैठी-बैठी उस कमरे में सो गई थी। कई दिनों से निरन्तर परिश्रम करने और उस दिन हस्पताल में घायलों की करुणाजनक अवस्था देख, अपने मस्तिष्क के तनाव की अवस्था में वह सो नहीं सकी थी। अब यहाँ पर अपने को सुरक्षित पा वह बैठी तो उसको नींद आ गई। श्रीमती मैहरा को जाँच करने में एक घन्टा लग गया था। इस काल में वह खुर्राटे भरने लगी थी।

श्रीमती मैहरा ने उसको इस प्रकार सोया देख, जगाया नहीं। उसने एक नौकर से वहाँ एक खाट और उस पर बिस्तर लगवाया। इस प्रकार उसके सोने का प्रबन्ध कर और उसके पीने के लिये दूध मंगवा कर खाट के समीप रख, नौकरानी से उसको जगवाया। उसको दूध पिला सो जाने को कहा। कमरे को पुनः बाहर से बन्द कर ताला लगवा, वह अपने कमरे में चली गई।

(११)

मिस्टर मैहरा ने जब राधा की कहानी सुनी तो एक भले घर की स्त्री के साथ ऐसा व्यवहार होता देख, उसको डॉक्टर साहब पर क्रोध चढ आया। अगले दिन उसने डॉक्टर साहब से कहा, "आपके कैप्टन की बीवी कहाँ है ? जरा उससे पूछिये तो।"

डॉक्टर ने कैप्टन को बुलाकर जब सब बात जानी, तो बोले, "वह पगली-सी मालूम होती थी। जब वह कैप्टन के साथ उसके गांव जाने को तैयार हो गई तो भला मैं क्या कहता ! मैंने कह दिया कि उसकी बीवी है।"

"मैं आपके स्थान पर होता तो आपकी भांति इसे इतनी मामूली बात न समझता और इस कैप्टन को, जब वह ड्यूटी पर था, ऐसी हरकत करने पर दंड दिलवाने की सोचता।"

डॉक्टर खन्ना ने मुसकरा कर कहा, "तभी तो आप मेरे स्थान पर नहीं हैं

और आप हो भी नहीं सकते।"

मिस्टर मैहरा इसका अर्थ समझ नहीं सका, परन्तु वह क्रोध वश चुप रहा। जब डॉक्टर जाने लगा, तो वह उसको विदा करने बाहर भी नहीं आया। इस दिन दोपहर के समय राधा ने अपने मन में उठ रहे विचार मिस्टर मैहरा और श्रीमती मैहरा को बताए। उसने कहा, "मैं समझती थी कि दुःखी और घायलों की सेवा कर मैं अपने पति और सम्बन्धियों की हत्या का बदला ले सकूंगी, परन्तु इस बात को पत्तों पर पानी देना मान, अब हत्यारों को जड से नाश करने घर से निकली हूँ।"

मिस्टर मैहरा खिलखिलाकर हंस पड़ा। राधा आँखें नीचे किए बैठी रही। मिस्टर मैहरा जब मन भर कर हंस चुका तो बोला, "यह विचार देरी से आया है तुम्हारे मन में। आज तो हत्यारों की जड़ दृढ़ हो गई है। वह तुम्हारे दुर्बल हाथों से कट नहीं सकती।"

राधा ने मिस्टर मैहरा का अर्थ समझने के लिए आँखें उठा उसके मुख पर देखा। उसकी इस प्रश्न-भरी दृष्टि को देख मिस्टर मैहरा ने अपने भावों को पुनः स्पष्ट करते हुए कहा, "पाकिस्तान बनाने वाले हत्यारे है। उनकी जड़ स्थापित हुई है महात्मा गाँधी और अन्य कांग्रेसियों की तुष्टिकारक नीति से। वे अपनी अदूरदर्शिता से पाकिस्तान रूपी बीज को सींचते रहे है। अब पाकिस्तान एक पेड़ बन गया है। इसको तुम काट कर बाहर निकाल नहीं सकतीं।"

"अभी भी इस पेड़ को जल देने वालों को रोक सकूं, तो आशा है कि यह कोमल जड़, जलाभाव के कारण सूख कर पेड़ न बन पाए।"

मैहरा पुनः हँस पड़ा। उसका स्पष्ट कहना था, "क्या कह रही हो तुम, राधा देवी! तुमसे बहुत बड़े-बड़े विद्वान् और शक्तिशाली लोग महात्मा जी को समझा-समझा कर हार चुके हैं। तुम क्या रोकोगी उन्हे!"

"किसी काम को रोकने के लिए क्या समझाने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं?"

"तुम पागल हो रही हो राधा।"

"सो तो है ही। आप नहीं जानते कि मैं क्या थी और क्या बन गई हूँ। मैं इस अनर्थ को रोकना चाहती हूँ। मुझको उपाय दिखाई देता है कि पाकिस्तान के बीज को नष्ट कर दिया जाए। जो इसको रोकने में सहायता दे रहे हैं, उनका सत्यानाश कर दिया जाए।"

"यही तो मैंने कहा है कि अब इसका समय निकल चुका है। यह हत्यारों का वृक्ष अब जड़ पकड़ चुका है। अब इसको जल देने वाले भी इसको पनपने से रोक नहीं सकते।"

"मैं आप जितना पढ़ी-लिखी नहीं। पर मेरा मन कहता है कि आप का कहना ठीक नहीं है। पाकिस्तान क्या बना रहेगा? इसका नाश नहीं हो सकेगा क्या? फिर क्या पाकिस्तान में हिन्दू सदा मारे-काटे जाते रहेंगे?"

"नहीं; जब सब हिन्दू पाकिस्तान छोड़ हिन्दुस्तान में आ जायेंगे, तो उनकी मार-काट बन्द हो जाएगी।"

"तो वे आते क्यों नहीं?"

"अभी उनके लिए हिन्दुस्तान में स्थान नहीं बना। यहाँ तो न उनके रहने को मकान हैं और न जोतने को भूमि। वे आएँ भी तो कहाँ रहेंगे? क्या खायेंगे? कैसे निर्वाह होगा? उनकी सम्पत्ति, फिर बहुतों के परिवार वहाँ हैं और ऐसी स्त्रियाँ हैं, जिनके भाई-बन्धु मारे गए हैं। वे हिन्दुस्तान में आने में कष्ट अनुभव करती हैं।"

ये सब बातें राधा को पागल बना देने में पर्याप्त थीं। वह चुप कर गई, परन्तु उसका मन चुप नहीं रह सका। यह भीतर ही भीतर सोचती रही और उसका मन उसको बातें बताता रहा।

राधा सोचती थी, "मैं अब अबला हूँ; पर मेरा मन दुर्बल नहीं। शरीर तो मन से अधिक कार्य करता है। जब मन बलवान है, तो शरीर भी बलवान होना चाहिए। दुर्बल शरीर की सहायता के लिए मनुष्य ने यंत्र बनाए हैं, पर दुर्बल मन को बलवान करने के लिए कोई यंत्र नहीं। जब मन बलवान हो गया है, तो शरीर की दुर्बलता यन्त्रादि से मिटाई जा सकती है।

"मुझे सब दुर्बल कहते हैं। वे मेरे शरीर को दुर्बल देख ऐसा कहते हैं। इस दुर्बल शरीर की सहायता के लिए कोई ऐसा शस्त्र ढूंढना चाहिए, जिसके प्रयोग के लिए कोई भारी शारीरिक बल की आवश्यकता न पड़े। यह शस्त्र पिस्तौल भी हो सकता है। कहां से पिस्तौल लूं? पिस्तौल लेकर क्या करूँ? पाकिस्तान बनने का स्रोत बन्द कर दिया जाये। कहाँ है इसका स्रोत? पाकिस्तान से बाहर है। तभी तो मैं लाहौर से बाहर आई हूँ।

"कहां है उसका स्रोत? मिस्टर चर्चिल? वह तो अब प्राईम-मिनिस्टर नहीं। तो ऐटली है? वह भी अकेला कैसे इसको बना सकता है? पूर्ण अंग्रेज़ जाति? व्यक्तिगत रूप में कोई ऐसा नहीं कर सकता। फिर आज जो कुछ हो रहा है, क्या अंग्रेज़ अपनी इच्छा से कर रहे हैं? अपनी इच्छा से अंग्रेज़ हिन्दुस्तान को स्वराज्य दे रहे हैं क्या? कोई भी इसको नहीं मानेगा। परन्तु स्वराज्य तो दिया जा रहा है। तो जो स्वराज्य दिलवा रहा है, वही पाकिस्तान बनवा रहा है।

"महात्मा गांधी स्वराज्य ले रहे हैं क्या? यदि महात्मा गांधी स्वराज्य लेने वाले होते, तो वे पाकिस्तान कैसे मान जाते? तो क्या महात्मा गांधी ने अंग्रेज़ों को जाने पर विवश नहीं किया? यदि किया होता तो पाकिस्तान न बनाने के लिए विवश क्यों नहीं किया?

"कैसी विडम्बना है? महात्मा गांधी स्वराज्य प्राप्त करने वाले हैं, पर पाकिस्तान बनाने वाले नहीं। अंग्रेज़ पाकिस्तान बानने वाले, हैं रप स्वराज्य देने वाले नहीं। मिस्टर जिन्ना स्वराज्य के विरोधी पर पाकिस्तान के प्राप्त करने वाले हैं। मुसलमान अंग्रेज़ों के सहायक पाकिस्तान पा गए; हिन्दू अंग्रेज़ों के विरोधी भारत का राज्य पा गए। क्या संसार मिथ्या है, जो ऐसा हो रहा है?

"कुछ हो, मुझको कुछ करना है। मैं निरपराध विधवा हो गई। भ्रातृ-विहीन, पिता की रक्षा से वंचित और सब सम्बन्धियों से पृथक्, निःसहाय—क्यों? मेरे साथ अन्याय हुआ है। अत्याचार हुआ है। क्यों? किसी ने तो

किया है। उसका सत्यानाश करूँगी।"

इस प्रकार मन में उठ रहे बवन्डर, उसको दुःखी कर रहे थे। दो दिन भर वह श्री मैहरा की कोठी में रही। उसको एक भले परिवार की स्त्री समझ खाने-पहिनने को मिलता रहा। वह उठते-बैठते, खाते-पहिरते, स्नान करते, सोते सदैव एक ही प्रश्न पर विचार करती रही कि वह क्या करे।

क्षमा, दया, शान्ति किस के साथ और किस के लिए? ये प्रश्न उसके मन को विक्षुब्ध करते थे। देखने वाले, मालिक-मालकिन, बच्चे-बूढ़े, नौकर-नौकरानियाँ, सब उसको पागल समझते थे।

दूसरे दिन सांयकाल मिस्टर मैहरा के कमरे में कुछ सिक्ख और कुछ अन्य लोग एकत्रित हो वार्तालाप कर रहे थे। राधा कमरे के पास से निकली तो लोगों को आवेश में बातें करते देख दरवाज़े के एक ओर खड़ी हो सुनने लगी। एक सिक्ख खड़ा-खड़ा कह रहा था, "मैहरा साहब! आपकी बातें ठीक हैं। मैं भी आज से तीन-चार दिन पहले यही समझता था; परन्तु एक नहीं, बीसियों उदाहरण मेरी नज़र में आए हैं, जहा ये मुसीबत जदा मुसलमान भारत से निकलते-निकलते भी हिन्दू लड़कियों और हिन्दुओं के घरों से लूटा धन साथ ले जाते मिले हैं। अमृतसर में एक बूढ़े मियाँ पाँच हिन्दू लड़कियों के मुखों पर पट्टी और उनके हाथ पीठ के पीछे बांध, उन पर बुर्का डाल बैलगाड़ी पर चढ़ा लिए जा रहे थे। कल जालन्धर में एक मियाँ गधे पर सवार हो जा रहे थे। वह हिन्दूओं के से कपड़े पहने थे। किसी को सन्देह हुआ तो उसकी तलाशी ली गई उसकी जेबो मे पाँचसौ तोला सोने के आभूषण निकले।

"यह मेरी शक्ति से बाहर है कि सब जाने वालों को देखने में लगा रहूँ कि कौन बुर्के में हिन्दू औरत है और किसकी जेब में लूटा हुआ धन।"

"जगदेवसिंह जी! यह तो अन्याय हो रहा है?"

"इस बात को सोचने का समय नहीं रहा। विराट नीति को चलाते समय छोटी-छोटी अन्याय की बातों पर विचार नहीं किया जाता। यह घरेलू-युद्ध हमने आरम्भ नहीं किया। सब पाप उनके माथे पर होगा,

जिन्होंने इसका श्रीगणेश कलकत्ते में किया था। अथवा जिन्होंने इसकी नींव १९०८ में पृथक् प्रतिनिधित्व की माँग कर रखी थी। इसके पाप के भागी वे भी हैं, जिन्होंने अपनी कुनीति से पाकिस्तान के विचार की पुष्टि की है।"

"तो उन पापियों को मारो। इन निर्दोष मुसलमानों की हत्या क्यों हो रही है?"

"ये निर्दोष कैसे हो गए? इन्होंने मुस्लिम-लीग को वोट दिये थे और उसके चलाए डायरेक्ट ऐक्शन में सहायता दी थी। अब ये भारत का माल और औरतें लूटकर ले जा रहे है।"

"ये तो उस विचार के अधीन कार्य कर रहे हैं, जिसको चलाने वाले कोई और हैं।"

"विचार चलाना तो पाप है ही; पर विचार पर कार्य करने वाला सब से अधिक दोषी है। कर्म का फल करने वाले को भी मिलना चाहिए।"

इस समय एक नौकर राधा को दरवाजे के साथ चिपके देख बोला, "पगली! क्या कर रही हो यहाँ?"

राधा वहाँ से चल दी, परन्तु उसका मन इस वार्तालाप से और भी उद्विग्न हो उठा। विराट् नीति के चलाने में छोटे-मोटे न्याय-अन्याय की बातों का विचार नहीं किया जा सकता। उसका मन पूछ रहा था कि विराट् नीति क्या है? किसने चलाई है? और किस प्रकार वह उद्देश्य सिद्ध कर सकेगी?

भारत की ओर प्रयाण

(१)

'वाह' कैम्प में शरण लेने वालों की संख्या इतनी बढ़ गई थी कि राशन और कपड़ों का टोटा होने लगा था। साथ ही इस कैम्प के लिए धन, वस्त्रादि लाहौर, रावलपिंडी और काश्मीर से आ रहे थे। लाहौर और रावलपिंडी की सहायता बन्द हो गई, क्योंकि दोनों नगर प्रायः उजड़ चुके थे।

जो लोग धन एकत्रित करके भेजते थे, वे इन नगरों से हिन्दुओं को निकालने में लग गए थे। परिणाम यह हुआ था कि कैम्प में भुखमरी का भय हो रहा था। कान्तादेवी के साथी धीरे-धीरे खिसकने आरम्भ हो गए थे।

रामचन्द्र राव इन परिस्थितियों को जान चिन्तित होने लगा। अभी सब लोगों के लिए पन्द्रह दिन का राशन शेष था कि वह कैम्प को उठा देने का विचार करने लगा। उसका विचार था कि जब तक विशेष रेल गाड़ियों का प्रबन्ध नहीं किया जाता, तब तक कैम्प के रहने वालों को निकालकर ले जाना सुगम नहीं और रेल गाड़ियों का प्रबन्ध केन्द्रीय सरकार के अधीन था। रामचन्द्र राव ने ऐसा करने के लिए उचित अधिकारियों को लिखा, परन्तु इसका परिणाम कुछ नहीं निकला। इस पर उसने स्वयंसेवकों और प्रबन्धकों की एक सभा बुलाई और उसमें अपनी कठिनाई वर्णन कर दी।

कान्तादेवी अभी कैम्प छोड़ कर गई नहीं थी, परन्तु परेशान बहुत थी। एक तो अब उसकी आज्ञा चलती नहीं थी और दूसरे भोजन-व्यवस्था कुछ तो रामचन्द्र की आज्ञा से और कुछ पीछे से अन्न-अनाज न आ सकने से, बिगड़ गई थी। कान्तादेवी कैम्प से चले जाने की सोच रही थी।

इस पर जब रामचन्द्र ने स्वयंसेवकों की सभा बुलाई और उसमें भविष्य में कैम्प के न रखने का प्रश्न उपस्थित किया, तो कान्तादेवी ने कैम्प को तोड़ने का विरोध करते हुए कहा, "कैम्प सरकारी प्रबन्ध है। यह हम बन्द नहीं कर सकते।"

रामचन्द्र का कहना था, "सरकार इसमें शरण लेने वालों की कोई सहायता नहीं कर रही। इस कारण उसका कोई अधिकार नहीं।"

"यह ठीक है, परन्तु इतनी संख्या में लोग कहाँ चले जाएँ और कैसे चले जाएँ ? बिना सरकार की सहायता के इनको वापिस घरों को भेजा नहीं जा सकता।"

रामचन्द्र ने कहा, "इन लोगों के घरों को लौटने का तो प्रश्न ही नहीं है। इनको भारत ले चलना चाहिए। वहाँ इनके रहने का प्रबन्ध भारत-सरकार करेगी। अभी कुछ दिनों में यह स्थान विदेश होने वाला है। यहाँ रहते हुए हम विदेशी माने जाएँगे और हमारी सहायता, भारत सरकार करने में अशक्त हो जाएगी।"

"यह सब व्यर्थ है। न यह हमारे लिए विदेश होगा और न हम यहाँ परकीय होंगे। इन लोगों को पुनः अपने खेतों को जाकर जोतना-बोना है। यह यहाँ रहने से ही हो सकेगा।"

परिणाम यह हुआ कि कैम्प को तोड़ने का विचार अभी स्थगित कर दिया गया। इस पर कैम्प के मुख्य-मुख्य लोगों को एकत्रित कर पूर्ण परिस्थिति से उनको परिचित करा दिया गया। कांग्रेस के कार्यकर्ताओं ने यह समझाया कि उनको पाकिस्तान में ही रहना है, इस कारण कुछ काल तक कैम्प में और रहें। तब तक उनके घरों को लौट जाने का प्रबन्ध हो जाएगा।

रामचन्द्र और उसके साथी अपनी सम्मति देने में संकोच करते थे।

उनका कहना था, "कैम्प की अवस्था सब को बता दी गई है। यहाँ रहना अथवा भारत जाना यह आप लोगों के विचार का विषय है। हाँ, जो लोग भारत जाने की इच्छा रखते हैं, उनको अपना नाम लिखा देना चाहिए, जिससे उनके भेजने का प्रबन्ध शक्ति अनुसार किया जा सके।"

कांग्रेसी कार्यकर्ताओं के अनुरोध करने पर भी तीन-चौथाई कैम्प भारत जाने को तैयार हो गया। इससे क्रोध में कान्तादेवी शरणार्थियों को डाँटने लगी, "क्या है भारत में जो वहाँ जाने के लिए व्याकुल हो ?"

"वहाँ शान्ति, मान और उन्नति का मार्ग मिलेगा।"

"कैसे जानते हो तुम ?"

"वहाँ महात्मा गाँधी हैं, जो राम-राज्य ले आएँगे। वहाँ पंडित जवाहरलाल नेहरू हैं, जो हमारी रक्षा करेंगे।"

"पर तुम्हारा देश तो यह है। यहाँ तुम्हारे खेत हैं, मकान हैं, धन-सम्पदा है। इन सबको छोड़कर जाओगे क्या ?"

"सब कुछ है, पर यहाँ मान-मर्यादा नहीं है। धन दौलत, मकान, खेती-बाड़ी सब कुछ भी अपमान का मूल्य नहीं हो सकता।"

रामचन्द्र राव वहाँ से जाने वालों के निकालने की योजनाएँ बनाने लगा। उसने रेल अधिकारियों को लिखा। प्रतिदिन प्रत्येक गाड़ी में एक-एक दो-दो डिब्बे मिलने लगे, परन्तु यह प्रबन्ध भी अपर्याप्त था। इस प्रकार लोगों को भेजने में कैम्प खाली होने के लिए एक वर्ष से ऊपर लग सकता था।

किसी ने यह सुझाव रखा कि बहुत-से लोग इकट्ठे मिलकर मोटर सड़क पर यात्रा कर निकल जाएँ तो ठीक रहेगा। इस रीति से जाने में तो सुगमता थी, परन्तु मार्ग में खाने-पीने और सुरक्षा का प्रबन्ध अति कठिन था। इस पर भी पर्याप्त संख्या में यात्रा करने पर तो सुरक्षा में कठिनाई कम होने की आशा प्रतीत होती थी। सुविधा और कठिनाई का विचार कर इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया गया। रामचन्द्र ने पंजाब सरकार को लिखा, पर वहाँ से कोई उत्तर नहीं आया। दिल्ली सरकार को लिखने पर

उत्तर आया कि इस प्रकार की यात्रा का सम्बन्ध एक विराट् नीति से है, इस कारण इस यात्रा को अभी आरम्भ न किया जाए।

इस उत्तर के आने से पूर्व ही कान्तादेवी और उसके साथी वहाँ से भाग चुके थे।

(२)

नीनादेवी प्रतिदिन रामचन्द्र से मिलती थी और कैम्प में चल रही हलचल से परिचित थी। उसके सम्मुख भी यह प्रश्न रखा गया कि वह कैम्प से चली जाना चाहती है या पाकिस्तान में रहना। नीना का स्पष्ट कहना था कि वह तो रामचन्द्र के साथ रहने के लिए आई है। यदि वह जाएगा तो वह भी चली जाएगी।

बातचीत रामचन्द्र से ही हो रही थी। इस कारण उसकी बात सुन रामचन्द्र ने पूछा, "मेरे साथ रहने का क्या प्रयोजन है ?"

"यह बात डेढ़ मास साथ रहने के पश्चात् पूछने की आवश्यकता क्यों पड़ी है ? अब तो मैं आपके साथ ही रहूँगी।" इतना कह नीना ने मुसकरा दिया।

"नीना देवी ! मुझ फक्कर के पीछे लगकर क्या पाओगी ? न मेरा घर है न कोई घाट। अपने विषय में स्वतन्त्रतापूर्वक विचार करो।"

"स्वतन्त्रता का आनन्द बहुत भोग चुकी हूँ। माता-पिता ने पैदा होते ही यह चम्मच में घोलकर पिलाई थी। अब अनुभव कर रही हूँ कि प्राणी के लिए स्वतन्त्रता अवाभाविक है। परिस्थितियों और आवश्यकताओं के बन्धन से मुक्ति न हितकर है और न सम्भव।"

रामचन्द्र इस बन्धन के कारण और भी परेशान हो गया। वह सोच रहा था कि लगभग बीस हज़ार कैम्प-वासियों को अढाई सौ मील लम्बी यात्रा पर ले जाना एक असाधारण कठिनाई की बात होगी और अब उन बीस हज़ार में यह एक को साथ ले जाना शायद सारी कठिनाई को दुगुना कर देगा। इस कारण वह इससे मुक्ति प्राप्त करने का उपाय सोचने लगा।

"पर नीना ! तुम ऐसा क्यों नहीं करतीं कि कान्तादेवी के साथ चली जाओ। मैं तुमको रावी के उस पार मिल लूँगा।"

"वे तो लायलपुर जा रही हैं। उनका विचार है कि लायलपुर में ही रहेंगी। शान्ति होने के पश्चात् वे पाकिस्तान की नागरिक बनकर रहेंगी।"

"और तुम क्या चाहती हो ?"

"मैंने सुना है कि आप कैम्प के लोगों के साथ पैदल अढ़ाई सौ मील की लम्बी यात्रा करना चाहते हैं। मैं आपके साथ चलूँगी।"

"बहुत कष्ट होगा इसमें ?"

"जहाँ बीस हज़ार जा रहे हैं और उनमें बच्चे, वृद्ध और स्त्रियाँ भी हैं, वहाँ एक और अधिक से क्या अन्तर पड़ता है ?"

"पर तुमको पैदल चलने का अभ्यास नहीं है ?"

"उन बीस हज़ार में क्या सबको अभ्यास है ?"

"पर ये तो शरणार्थी हैं और साथ ही विवश हैं। तुम्हारे पास साधन हैं। तुम रेल से रावलपिण्डी चली जाओ और वहाँ से हवाई जहाज़ से चली जाना।"

"यह सब रुपया कहाँ से आएगा और फिर हवाई जहाज़ में स्थान मिलना कठिन है। रेल में मेरा मन काँपता है।"

रामचन्द्र उसको मना नहीं कर सका। जब कान्तादेवी ने नीना का निर्णय सुना तो चकित रह गई। उसने पूछा, "यह क्यों ?"

"मैं रामचन्द्र राव से प्रेम करती हूँ और उनके साथ जाऊँगी।"

"तो यह बात है। मैं समझती थी कि तुम्हारा उससे झगड़ा हुआ है।"

"झगड़ा तो था, परन्तु ऐसा ही जैसा परस्पर प्रेमियों का होता है।"

कान्तादेवी की हंसी निकल गई। उसने कहा, "तुम आयु में तो बहुत छोटी हो पर बातें बहुत जानती हो। देखो, इस रामचन्द्र राव से सचेत रहना। यह अच्छा आदमी प्रतीत नहीं होता।"

"मैं उनसे बहुत सतर्क हूँ। आप चिन्ता न करें।"

(३)

पन्द्रह अगस्त को बीस हज़ार लोगों का पाँच मील लम्बा काफिला चल पड़ा। सामान लादने के लिए प्रत्येक प्रकार की गाड़ियाँ, ठेले, हथ-रेड़ियाँ, बाईसिकलें और बच्चों के पिरेम्बुलेटर्ज़ प्रयोग में लाये गए। सब लोग पैदल थे। प्रातः पाँच बजे काफिले का प्रथम सिरा कैम्प से निकल पड़ा। स्वयंसेवक लाठियों, तलवारों और बरछों से सुसज्जित कुछ-कुछ अन्तर पर साथ थे। काफिले का अन्तिम सिरा सात बजे निकला। भुने चने, जो बीसियों खच्चरों पर लदे थे, मार्ग में बाँटे जा रहे थे। पानी पीने का प्रबन्ध भी स्थान-स्थान पर किया जा रहा था। मार्ग जानने वाले काफिले के आगे-आगे चल रहे थे। रामचन्द्र राव काफिले के साथ अपनी बाईसिकल पर था। वह पूर्ण काफिले का निरीक्षण कर रहा था। नीना स्त्रियों की एक मण्डली के साथ काफिले के मध्य में, साथ-साथ जा रही थी।

सब ग्यारह बजे तक चलते रहे। पश्चात् जल का प्रबन्ध देख काफिला रोका गया और एक बजे के लगभग सब लोग एकत्रित हो गए। यात्रा फिर आरम्भ हुई। सायंकाल तक ग्यारह मील की यात्रा सम्पूर्ण कर रात्रि के लिए पढ़ाव डाला गया।

रावलपिण्डी आने तक कोई दुर्घटना नहीं हुई। परन्तु उसके आगे बढ़ना सुगम नहीं था। एक तो स्त्रियाँ और बच्चे नित्य चलने में थकावट अनुभव करने लगे थे। कुछ बीमार भी हो गए थे। इस के अतिरिक्त कठिनाई यह थी कि गाँव-के-गाँव उजड़े हुए और बरबाद मिलने आरम्भ हो गए थे। इनको देख काफिले वाले अपने घरों, मकानों, गाँवों की बरबादी का स्मरण कर दुःख अनुभव करने लगे थे। यह विनाश देख उनके हृदय बैठने लगे थे। वे उन लोगों के निर्दयता के व्यवहार को अपने साथ होने का अनुभव करने लगे थे।

ऐसा ही हुआ। चौबीस अगस्त को जेहलम के समीप डेरा डाला हुआ था। रात के एक बजे एकाएक चार-पाँच सौ मुसलमानों ने आक्रमण

कर दिया। पिछले नौ दिन के शान्तिपूर्वक व्यतीत होने से काफिले के लोग निश्चिन्त हो सो रहे थे। रात को पहरा देने वाले स्वयंसेवक भी ऊंघ रहे थे। डेरे के एक कोने में हा-हाकार मचा तो सब जाग पड़े। प्रकाश पर्याप्त न होने से कोई किसी की सहायता न कर सका। रामचन्द्र ने घूम-घूम कर सांत्वना देनी आरम्भ की। 'घबरओ नहीं। भागो नही। नहीं तो सब मारे जाओगे।' परन्तु कौन किस की सुनता था? दो घण्टा भर यह कोलाहल रहा। पश्चात् लोग शान्त हुए। जिस ओर से आक्रमण हुआ था, उधर हानि हुई। बीस से ऊपर औरतें चुराई गई और बहुत-सा सामान लूट लिया गया। लड़ाई में कई घायल हुए और लगभग बीस के करीब मारे गए। इनमें तीन आक्रमणकारी भी थे। इस हानि के अतिरिक्त चालीस से ऊपर बच्चे अपने ही लोगों के पाँव-तले आकर कुचले गए। सैकड़ों को चोटें आई। प्रातः दिन चढ़ने पर जब पूर्ण हानि का ज्ञान हुआ, तो रामचन्द्र ने सब को डाँटा और कहा, "आक्रमण से इतनी हानि नहीं पहुँची, जितनी आप लोगों की घबराहट से हुई है।"

एक दुःख की बात यह भी हुई कि पहले ही आक्रमण में नीना लापता हो गई। यह स्पष्ट था कि उसका अपहरण हुआ है। जब घायलों की मरहम पट्टी हुई तो विचार होने लगा कि क्या किया जाए। कई यात्रियों का यह विचार था कि दिन-भर वहीं रहा जाए और जितनी स्त्रियाँ गई हैं, समीपवर्ती गाँवों में छापे मारकर उतनी स्त्रियाँ मुसलमानों की उड़ाई जाएँ।

परन्तु यह योजना क्रियात्मक प्रतीत नहीं हुई, कारण यह कि पाकिस्तान बन चुका था। पाकिस्तान सरकार की प्रजा और पुलिस वाले उनका विरोध करते और जो बचे थे, उनका भी निकलकर भारत में जाना कठिन हो जाता। इस कारण विवशता देख लोग दाँत पीसते रह गये। प्रत्येक अपने को ऐसा अनुभव करता, जैसे एकाएक माता-पिता की मृत्यु के पश्चात् शिशु करता है।

लोग अपनी इच्छा को मन के भीतर-ही-भीतर पीकर रह गये। आठ बजे के लगभग फिर डेरे ने कूच कर दिया।

तीस अगस्त के लगभग वे गुजरात के समीप से गुज़रे और यहाँ उन पर दूसरा आक्रमण हुआ। इस बार रामचन्द्र के समझाने-बुझाने पर काफिले के लोग पहले ही तैयार थे। रात के समय पूर्ण कैम्प पाँच विभागों में बँट जाता। एक भाग मध्य में और अन्य भाग चार बाजुओं पर बनाए जाते थे। पाँचों का प्रबन्ध पृथक्-पृथक् कर दिया जाता। बीच के भाग में औरतें और बच्चे रखे जाते थे और चारों ओर पुरुष होते थे। स्वयंसेवक अधिक सतर्कता से कार्य करने लगे थे। चारों विभागों के भिन्न-भिन्न संकेत बनाये गए और यह सब को बता दिया गया था कि जिस भाग पर आक्रमण होगा, उसका संकेत दिया जायगा, जिससे पूर्ण कैम्प में खलबली न मच जाए।

गुजरात के आक्रमण में आक्रमणकारियों की संख्या अधिक थी और वहाँ के मुसलमानो को एक-आध दिन पहले रेलगाड़ी के लूटने का चस्का पड़ चुका था। इस पर भी रामचन्द्र राव के सुप्रबन्ध के कारण आक्रमणकारी कुछ विशेष फल प्राप्त न कर सके। एक भी स्त्री का अपहरण नहीं हुआ। पुरुषों में हत्याएँ केवल चार की हुई और घायल भी बहुत कम हुए। इसके विपरीत मुसलमान अपनी तीन लाशें वहाँ छोड़ गए।

इस बार स्वयंसेवकों ने रात में ही सब की मरहम पट्टी कर दी और प्रातःकाल होते ही काफ़िला आगे को बढ़ चला।

सितम्बर की तीन तारीख को काफिले का अग्र भाग रावी के पुल पर पहुँच गया। यहाँ एक नवीन समस्या उपस्थित हुई। पूर्ण काफिले को रोक दिया गया। बीस बलोची फौजी वहाँ बन्दूकें, स्टेन गनें और हथ-बम्ब लिए सुसज्जित खड़े थे। कारण पूछने पर बलोचियों ने बताया कि उनको आज्ञा है कि न तो एक पैसे का माल कोई हिन्दू यहाँ से लेकर जाए और न ही कोई युवा स्त्री यहाँ से भागने पाए। उनका कहना था कि पाकिस्तान सरकार को सन्देह है कि हिन्दू लोग पाकिस्तान का धन-दौलत लूटकर हिन्दुस्तान जा रहे हैं और मुसलमानों की स्त्रियाँ कैद कर लिए जा रहे हैं।

'इसके विरुद्ध बलपूर्वक आपत्ति उठाई गई, परन्तु आपत्ति उठाने वालों के सिर-कलम कर दिये गए। रामचन्द्र राव ने अफ़सरों से मिलकर बहुत

युक्ति की। इस पर उसको पकड़ लिया गया और काफिले पर धावा बोल दिया गया। परिणाम यह हुआ कि काफिले में कत्ले-आम शुरू हो गया। फौजियों ने मोर्चा बांध गोलियां चलानी आरम्भ कर दीं और पुल के दोनों बाजुओं में लगी स्टेन-गनों से गोलियों की बौछार की जाने लगी, जिससे काफिले के दो हज़ार से ऊपर लोग मारे गए और घायल हुए। शेष उलटे पाँव लौट गए। पुल से चार मील पीछे हटकर स्वयंसेवकों ने अपने बचे हुए लोगों को एकत्रित किया और विचार करने लगे कि अब क्या किया जाए। किसी ने सुझाव दिया कि सियालकोट की ओर से काश्मीर में चला जाए। यह भी सुझाव दिया गया कि बड़े नगरों से दूर रहकर गाँवों में से ही गुजरा जाए।

(३)

पन्द्रह अगस्त से पहली रात को ग्यारह बजे फौजी ट्रकों में चार सौ के लगभग हिन्दुओं को लाहौर से निकाल कर और डी० ए० वी० कॉलेज कैम्प में पहुँचा, चेतनानन्द अपने माता-पिता से मिलने के लिये अपने घर चला आया। वहां पर उसको सूचना मिली कि निस्बत रोड पर पार्वती के पिता के घर को आग लगा दी गई है और पंडित जी बहुत कठिनाई से रेवा को निकालकर ला सके हैं। वे तो मार डाले जाते, यदि दो डोगरा फौजियों के ट्रक उधर से न निकल आते और उनको लादकर यहाँ न ले आते। चेतनानन्द का पुनः यह आग्रह था कि सब लोगों को डी० ए० वी० कॉलेज कैम्प में चला जाना चाहिए और वहां से हवाई जहाज में उनके जाने का प्रबन्ध कर दिया जाएगा। रेवा को अभी भी आपत्ति थी कि महेश के आने से पहले वह लाहौर नहीं छोड़ सकती।

इस समय घड़ी ने बारह बजाए। चेतनानन्द का ध्यान स्वराज्य-प्राप्ति की ओर चला गया। लाला जीवनलाल ने बताया कि आज दिन के समय रेडियो पर यह घोषणा की गई थी कि रात के बारह बजे विधान सभा बैठेगी और पंडित नेहरू, बाबू राजेन्द्र प्रसाद और सर्दार पटेल वॉयसराय के

पास जायेंगे और उनसे रस्मी तौर पर स्वराज्य प्राप्त करेंगे। इसके पश्चात् वे विधान-सभा में आएँगे और स्वराज्य-प्राप्ति की घोषणा करेंगे।

इस समय मकान के नीचे भारी चीख-पुकार का शब्द हुआ। लाला जीवनलाल ने अपना पिस्तौल, जो सामने की मेज़ में भरा हुआ था, उठा लिया और सब के सब खिड़की में जा पहुँचे। मकान के नीचे बहुत से बलोची फौजी कुछ औरतों को घेरकर लिए जा रहे थे। औरतें और बच्चे चीख-पुकार मचा रहे थे और वे उनको घेरकर मोरी दरवाज़े की ओर ले जाना चाहते थे। फौजियों की संख्या दस के लगभग थी और औरतें चौदह-पन्द्रह थीं। जीवन लाल ने पिस्तौल एक सिपाही की ओर तान दाग दी; परन्तु निशाना ठीक नहीं बैठा। इस पर सिपाहियों ने बन्दूकें मकान की ओर तान लीं। चेतनानन्द समझ गया कि अब लड़े बिना काम नहीं चलेगा। इस कारण वह भागकर मकान के भीतर जा अपनी दुनाली बन्दूक और कारतूसों का डिब्बा उठाकर ले आया।

उसके आने तक मकान की सब खिड़कियाँ बन्द कर ली गई थीं और जीवन लाल निशाना साधकर दो गोलियां और चला चुका था। इन गोलियों ने अपना काम किया था। दो फौजी घायल हो चुके थे। इस समय चेतनानन्द ने भी अपना निशाना साधा। गोली चलते ही एक फौजी भूमि पर लोट-पोट हो गया। औरतें मोरी दरवाज़े से उलटी ओर भागीं। बलोचों ने शिकार हाथ से जाता देख मकान पर गोली चलानी छोड़ दी और औरतों की ओर लपके। इस समय चेतनानन्द ने दूसरी गोली चला दी और एक और फौजी भूमि पर लेटे गया।

इस समय मोरी दरवाज़े की ओर से दो फौजी ट्रक आ गए। ये डोगरों के थे। उन्होंने औरतों और बलोचों को घेर लिया। बलोची भूमि पर बैठ डोगरों का मुकाबिला करने लगे। पाँच मिनट में ही बलोचियों ने हाथ खड़ा कर शान्ति की याचना कर दी। इस समय तक स्त्रियाँ भाग गई थीं। डोगरे सिपाही ट्रकों पर सवार हो कचहरी की ओर चले गए और बलोच अपने घायलों को उठा मोरी दरवाज़े की ओर।

इस परिस्थिति में सो सकना असम्भव था। सब कमरे में बैठ एक-दूसरे का मुख देख रहे थे। ध्यान को दूसरी ओर ले जाने के लिए चेतनानन्द ने रेडियो खोल दिया। जब दिल्ली स्टेशन लगाया गया तो विधान-सभा की कार्यवाई सुनाई पड़ने लगी। 'वन्दे मातरम्' बेसुरे स्वर में गाया जा रहा था।

वन्दे मातरम् के पश्चात् रेडियो वाले दिल्ली के इस उत्सव पर आलोचना करने लगे। रेडियो सुना रहा था, "रात के साढ़े बारह बज रहे हैं। पार्लियामेन्ट हॉल के बाहर दिल्ली के लोगों का अपार जन-समूह हर्ष और उल्लास से भरा हुआ नवजात स्वतन्त्रता का स्वागत करने के लिए ठाठें मार रहा है। इस समय जिधर भी दृष्टि जाती है, लोगों के सिर-ही-सिर दिखाई देते हैं।

"नगर में से लोग नदी की भाँति पार्लियामेन्ट हॉल तक पहुँचने के लिए उमड़ रहे हैं। लोग खुशी में फूले नहीं समाते। प्रसन्नता से उछलते, कूदते और नेताओं की जय-जय कार बुलाते चले आ रहे है। सुनिये···।"

रेडियो में जनता की आवाज़ आने लगी। "वन्दे मातरम्, भारत माता की जय, महात्मा गांधी की जय, पंडित जवाहरलाल नेहरू की जय।" इत्यादि।

जीवनलाल ने चेतनानन्द को कहा, "बन्द करो इस व्यर्थ की नकल को।"

चेतनानन्द ने रेडियो बन्द कर दिया। इस पर जीवनलाल ने कहा, "सब अब सोने का यत्न करो। भगवान् जाने कल क्या देखने को मिलता है।"

सब लेट तो गए। पर सब के मन में एक आशंका विद्यमान थी, जो कोई भी मुख से निकालने का साहस नहीं करता था। सब के मन में था कि क्या महेश कल जीवित जेल से निकल आयेगा। किसी को आशा नहीं थी। प्रायः सब के मन में भय समाया हुआ था।

चेतनानन्द दिन-भर की भाग-दौड़ से थका हुआ था। इस कारण वह तो शीघ्र ही सो गया। पीछे अन्य लोग भी सोने का प्रयत्न करने लगे। आधे घण्टे के व्यर्थ के यत्न के पश्चात् महेश के पिता उठ बैठे और बिस्तर पर बैठ ध्यानावस्थित हो जप करने लगे।

प्रातः चेतनानन्द सबसे पहले उठा और अपनी मोटर गैरेज से निकाल जेल की ओर चल पड़ा। महेश कैम्प जेल में था, जो चबुर्ज़ी के पास, लोहे की तारों के भीतर कच्ची इमारतों में बनाया गया था। चेतनानन्द के फाटक पर पहुँचते ही बहुत से कॉन्स्टेबल उसको घेरकर खड़े हो गए। एक ने पूछा, "क्या लेने आए हो साहब ?"

"आज कैदी छूटने वाले है। अपने भाई को लेने आया हूँ।"

"हुक्म आ गया है। कोई नहीं छूटेगा।"

"मैं दारोगा से मिलना चाहता हूँ।"

"आप यहाँ से चले जाईये। हमें डर है कि आपको कुछ नुकसान न उठाना पड़े।"

चेतनानन्द के मन में विचार आया कि डिप्टी कमिश्नर से मिलकर सब परिस्थिति जान ले। इस कारण उसने मोटर स्टार्ट की और डिप्टी कमिश्नर की कोठी मे जा पहुँचा। डिप्टी कमिश्नर कपड़े पहन कहीं जाने को तैयार खड़ा था। चेतनानन्द ने 'गुडमार्निंग' की और समीप जा कहने लगा, "मैं कुछ जानकारी प्राप्त करने आया हूँ। क्या मैं जान सकता हूँ कि डेटिन्यूज़ छोड़ दिए जायेंगे या नहीं ?"

"कल की सरकार ने उन्हें छोड़ देने की आज्ञा दी थी; परन्तु आज की सरकार ने उनको पकड़ रखने की आज्ञा दी है। दोनों आज्ञायें जेल भेज दी गई है।"

चेतनानन्द इससे बहुत परेशान हुआ। उसको चिन्तित देख डिप्टी कमिश्नर ने कहा, "मैं समझता हूँ कि कैदियों को अभी छोड़ने का समय नहीं आया। उनके जेल के फाटक से निकलते ही, लोग उन पर कुत्तों की भाँति झपटेंगे और जीते ही फ़ाड़ डालेंगे।"

चेतनानन्द आवाक् खड़ा रह गया। डिप्टी कमिश्नर अपनी गाड़ी में सवार हो चला गया।

वह निराश हो घर लौट आया। इस समाचार से सब उदास हो गए और कोई निश्चय नहीं कर सका कि क्या करना चाहिए।

(४)

चेतनानन्द हवाई जहाज़ के टिकट खरीद लाया। सत्रह तारीख के टिकट मिले थे। रेवा को जब से यह समाचार मिला था, रो रही थी। उसकी इच्छा जाने की नहीं हो रही थी, परन्तु वह समझती थी कि सारे परिवार को भय में डालने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर नहीं लेगी। इस कारण वह इस जाने की तैयारी पर चुप थी।

चेतनानन्द के लिए पार्वती को हस्पताल से लाना एक और काम था। हस्पताल पहुँचने के लिए मार्ग रावी रोड से हीरा मंडी और वहाँ से गुमटी बाजार और वच्छों वाली में हस्पताल तक जाने का था। परन्तु प्रातःकाल से ही मुसलमान शाही मुहल्ला, जो मार्ग में पड़ता था, लूटने में लगे हुए थे; इस कारण उधर से निकलना असम्भव था। अतएव चेतनानन्द को अपने साथ फौजी ट्रक ले जाना पड़ा। वह डी० ए० वी० कॉलेज में गया और अपने रसूख के कारण दो ट्रक लेने में सफल हो गया।

सर गंगाराम हस्पताल में तीन दिनों से घायलों का आना कम हो गया था। प्रायः हिन्दू अपने मकान और नगर छोड़ चले गए थे। सहस्रों की संख्या में मारे जा चुके थे। अब मुसलमानों के जत्थे खुलेआम घूम रहे थे, इस कारण घायल करने का प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता था। एकदम परलोक की यात्रा का ही प्रबन्ध होता था। इस पर भी कुछ रोगी और घायल, जिनके सम्बन्धी लाहौर में नहीं थे और जिनको हस्पताल से कैम्प भेजना सम्भव नहीं था, अभी हस्पताल में थे। दो डॉक्टर और दो नर्सें रह गई थीं। चेतनानन्द पहुँचा तो पार्वती से कहने लगा, "मैं तुम को लेने आया हूँ।"

"इनको किनके हवाले छोड़ जाऊँ ?" पार्वती ने रोगियों की ओर संकेत कर कहा।

"अब केवल तुम्हारे लिए पूर्ण परिवार को खतरे में डालना उचित नहीं।"

"उनको कहिये वे जाएँ। मैं आ जाऊँगी।"

"देखो पार्वती ! तुम नहीं जाओगी तो मैं भी नहीं जाऊँगा। मैं नहीं गया तो कोई नहीं जाएगा। तुम्हारी भाँति रेवा भी कहती थी, पर विवश उसको तैयार होना पड़ा। महेश के लिए दिल्ली जाकर यत्न किया जा सकता है। यदि वहाँ मुसलमान-कैदी छोड़ दिये गए तो महेश वगैरह भी छोड़ दिये जायेंगे। नहीं तो सब मार डाले जाएँगे।"

पार्वती इतनी भयंकर बात सुन अवाक् रह गई। इस पर चेतनानन्द ने कहा, "परसों प्रातः आठ बजे हवाई जहाज़ छूटने का समय है। हम घर से प्रातः छः बजे ही चल देंगे। यदि परसों नहीं गए, तो फिर नहीं मालूम हवाई जहाज में कब स्थान मिल सकेगा।"

डॉक्टर से, जब चेतनानन्द का प्रस्ताव पार्वती ने रखा, तो डॉक्टर ने कहा, "इन रोगियों को ले जाने का प्रबन्ध भी होना चाहिए।"

चेतनानन्द इस समस्या पर चुप रह गया। इस पर पार्वती ने यह सुझाव रखा कि परिवार चला जाए और वहाँ जाकर रोगियों को निकालने का प्रबन्ध करे। इन रोगियों के साथ वह भी अमृतसर चली जाएगी।

चेतनानन्द, जो स्वयं जान हथेली पर रखकर घूमता था, पार्वती के प्रस्ताव को अस्वीकार नहीं कर सका। वह उसके कहने को भी स्वीकार नही कर सका। कारण वह जानता था कि लाहौर में किसी हिन्दू का रहना सुरक्षित नहीं। वह चुपचाप खड़ा था। इस पर डॉक्टर ने चेतनानन्द को ढाढ़स बँधाते हुए कहा, "चेतनानन्द जी ! आप चिन्ता क्यों करते हैं ? भगवान् पर विश्वास नहीं क्या आपको ? पिछले छः मास से जो-कुछ हम देख रहे है, उसमें अभी तक बचकर यहाँ बैठे रहना क्या मनुष्य के किये से है ? आपके काम को लाहौर में कौन नहीं जानता ? पर 'जाको राखे साईयाँ, ताको कौन मिटाय'।"

चेतनानन्द उन भयंकर परिस्थितियों को स्मरण कर, जिनमें वह पिछले छः मास से पड़ा हुआ था, काँप उठा। उसने बहुत ही करुणा-जनक दृष्टि से पार्वती की ओर देखा और पार्वती की आँखें डबडबा आई।

चेतनानन्द इसका अर्थ नहीं समझ सका। पार्वती ने भी अनुभव किया

कि उसके आँसू उसके मन की दुर्बलता प्रदर्शित कर रहे हैं। इस कारण शीघ्र ही उसने रुमाल से आँसू पोंछते हुए कहा, "आप जाईये। मुझको अपने कर्तव्य से च्युत् न कीजिए।"

इस कठोर वाक्य से चेतनानन्द सचेत हो गया। उसने हाथ जोड़ नमस्ते की और कहा, "मैं फिर आऊँगा।"

इतना कह वह हस्पताल से बाहर निकल गया।

वह प्रातःकाल से घूम रहा था और दोपहर हो गई थी। इससे स्नानादि के लिए घर की ओर चल पड़ा। वहाँ एक भयंकर समाचार मिला कि कैम्प जेल से कैदी छोड़ दिये गए थे और जब कैदी जेल के फाटक से बाहर निकले तो पुलिस वालों ने उन पर गोलियाँ चलाई। प्रायः सब घायल हुए या मारे गए हैं। लाला जीवनलाल तथा महेश के पिता मोटर ले जेल के फाटक पर पता करने गए हैं। चेतनानन्द यह समाचार पा उल्टे पाँव घर से निकल गया और अपनी मोटर में जेल की ओर चला गया।

जेल के फाटक पर महेश के पिता और जीवनलाल खड़े थे। वे जेलर से भीतर जा लाशों को देखने की स्वीकृति की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनको जेलर का यह संदेश मिला था कि लाशों का पोस्टमार्टम हो रहा है और घायलों की मरहम पट्टी हो रही है। जब तक यह कार्य समाप्त नहीं हो जाता, तब तक उनसे कोई बात नहीं की जा सकती।

लगभग दो बजे दोपहर को भीतर जाकर जेलर से भेंट करने का अवसर मिला। फाटक के समीप एक खेमे में वह उनको मिला। जेलर ने कैदी का नाम पूछा और फिर अपने हाथ में पकड़ी फाईल को देखकर बताया, "प्रातः छप्पन कैदी छोड़े गए थे। यह उस हुक्म के मुताबिक था, जो कल शाम को आठ बजे मुझको मिला था। मैं उन्हें उसी वक्त छोड़ देता, पर शहर में कर्फ्यू लगा हुआ था और उस वक्त छोड़ने का मतलब था कि उन्हें मौत के मुँह में देना। मैंने सबेरे छोड़ा; लेकिन वे लोग अभी फाटक से निकले ही थे कि दूसरा हुक्म आ गया कि उनको न छोड़ा जाये। मैंने उन्हें पकड़ने का हुक्म दे दिया। पुलिस के लोग जब पकड़ने के लिए गये तो कैदी भाग

खड़े हुए। जेल के रूल के मुताबिक उन पर गोली चलाई गई। कुछ मारे गए हैं और कुछ जख्मी पकड़ लिए गए हैं। महेश न मारे गयों में है और न ही पकड़े हुओं में।"

"हम शवों को देख निश्चय करना चाहते हैं।"

"मैं आपको यह स्वीकृति नहीं दे सकता।"

वहाँ से सब लोग डिप्टी कमिश्नर के बँगले में जा पहुँचे। वे उससे शव देखने की स्वीकृति लेना चाहते थे। डिप्टी कमिश्नर गवर्नर से मिलने गया हुआ था और चार बजे के बाद वापिस आने वाला था।

इस पर सब घर लौट आए। चेतनानन्द स्नानादि से निवृत हुआ और उसका विचार, कुछ देर पश्चात् पुनः जाकर डिप्टी कमिश्नर से शव देखने की स्वीकृति प्राप्त करने का था। इस समय टेलिफोन की घंटी बज उठी। प्रायः सब धनी-मानी लोग नगर छोड़कर जा चुके थे। इस कारण कई दिनों के पश्चात् टेलिफोन की घंटी का शब्द, उस समय की अवस्था में विचित्र-सा लगा। चेतनानन्द ने टेलिफोन उठा कान से लगाया तो यह सुन, 'महेश बोल रहा हूँ' उसके हृदय की गति बन्द होती-सी प्रतीत हुई। उसके मुख से एक शब्द भी नहीं निकल सका। टेलिफोन की बातें सुन उसने कहा, "तुम भीतर बैठे रहो। मैं अभी आता हूँ।"

चेतनानन्द उसी स्थिति में यह कहता हुआ मकान के नीचे की ओर भाग खड़ा हुआ, "महेश का पता मिल गया है। उसे लेने जा रहा हूँ।"

(५)

चेतनानन्द के कथन पर सब लोग पीछे-पीछे मकान के नीचे की ओर भागे; परन्तु चेतनानन्द मोटर पर चढ़ पहिले ही भाग चुका था। अन्य लोग अधिक कुछ भी न जान सके।

चेतनानन्द को वापिस आने में एक घण्टे से ऊपर लग गया। इस समय तक सब मकान के नीचे ड्योढ़ी में ही खड़े रहे। किसी को ऊपर जाने का विचार भी नहीं आया। रेवा सीढ़ियों में बैठी थी। रेवा की

सास और ससुर ड्योढ़ी में खड़े थे। उनके पीछे, ऊपर की सीढ़ियों में रेवा की माँ थी और जीवनलाल तो मकान के बाहिर सड़क के किनारे खड़ा था। एक घण्टा एक युग के समान प्रतीत हुआ। चेतनानन्द की मोटर दिखाई दी तो जीवनलाल हाथ ऊँचा कर उसकी ओर को भागा। वह अपनी उत्सुकता को रोक नहीं सका।

महेश बहुत ही दुर्बल हो चुका था। सब भागकर सड़क पर ही उसका स्वागत करने चले आए, परन्तु रेवा नहीं आई। वह वहीं सीढ़ियों पर, हाथ में ठुड्डी और हाथ की कोहनी को घुटने पर रखे हुए बैठी रही। उसके आनन्द के आँसू निकल गालों पर लुढ़क पड़े थे। महेश बाहर सड़क पर ही सबसे गले मिल रहा था, परन्तु उसकी दृष्टि रेवा को ढूँढ रही थी। यत्न करने पर वह उसको ड्योढी में सीढ़ियों पर बैठी दिखाई दी। वह उन सब को छोड़ रेवा के सामने आ खड़ा हुआ। "तुम यहाँ···क्या कर रही हो ?"

"आप आ गए···भगवान् का धन्यवाद है···मैं बहुत प्रसन्न हूँ··· खुशी से मुझमें हिलने की शक्ति नहीं रहीं···।"

सब ऊपर की मंज़िल पर गये। महेश रेवा को भी आश्रय देकर ऊपर ले आया। वहाँ पहुँचते ही चेतनानन्द ने कहा, "महेश को इस घर में नहीं रहना चाहिए। इसके पुनः पकड़ लिए जाने की आशंका है। इस कारण मैं कल प्रातःकाल ही इसके चले जाने का प्रबन्ध कर रहा हूँ। पहिला काफिला फौजी देख-रेख में कल जाएगा। उसके साथ महेश और रेवा अपनी मोटर में जाएँगे।"

मोटर को गैरेज में रख दिया गया और ड्योढ़ी को बाहर से ताला लगा कर, एक खिड़की से भीतर आ, अन्दर से सब दरवाज़े और खिड़कियाँ बन्द कर दी गईं। इस प्रकार बाहर से देखने वाले के लिए ऐसा कर दिया गया, मानों घर में कोई नहीं है।

जब मकान के भीतर सब बैठ गए तो महेश ने अपने जेल से निकल आने की घटना सुनाई। उसने बताया, "प्रातः सात का घण्टा बजते ही हमको जेलर के कमरे में लाया गया और हुक्म सुना

दिया गया कि हम मुक्त हैं। हम सब साठ के लगभग थे। जेल के फाटक से बाहर निकल कर अभी हम यह सोच ही रहे थे कि कहाँ जाएँ, जब दो दर्जन के लगभग बन्दूकधारी पुलिस वाले जेल से निकले और हमको घेरा डालने लगे। मैं समझ गया। इस कारण मैंने अपने साथियों से कहा, 'भाग जाओ। मारे जा रहे हो।'

"हमने परिस्थिति को एक क्षण में ही समझ लिया और सब भाग खड़े हुए। इस पर पुलिस वालों ने हम पर गोलियाँ चलानी आरम्भ कर दीं।

"मैं चुबुर्जी से युनिवर्सिटी ग्राऊंड की ओर भागा था। मेरे साथ चार और भी थे। गोलियाँ चलती गईं और एक-एक कर हममें से गिरते गए। भगवान् की कृपा से मैं भागता गया और गोलियाँ मेरे इधर-उधर से निकल गईं। मुझको कोई नहीं लगी। कपूरथला हाऊस तक मैं भागता आया और वहाँ तक गोलियों का शब्द सुनता रहा। मैंने देखा कि मेरा कोई भी साथी मेरे साथ नहीं है। इस स्थान पर ठहर कर मैं विचार करने लगा कि कहाँ जाना चाहिए। मैंने देखा कि सामने पुरानी अनारकली में कुछ लोग एकत्रित होकर नारे लगा रहे हैं। उधर जाना उचित न मान मैं माल की ओर घूम गया। डाकखाने के समीप से माल को पार कर मैक्लोड रोड और वहाँ से रत्नचन्द रोड से हो निस्बत रोड पर जा पहुँचा। वहाँ अपने मकान को जला हुआ देख, मोहनलाल रोड पर पता करने के विचार से लौटा, परन्तु सामने हस्पताल रोड से पाच-छः सौ मुसलमानों का एक झुण्ड नारे लगाता हुआ और छुरियाँ, तलवारें चमकाता हुआ आता दिखाई दिया। मेरे मन में विचार आया कि किला गूजरसिंह की ओर भाग जाऊँ; परन्तु उधर भी दूर अल्ला-हु-अकबर के नारे लगते सुन, अपने को फंस गया पा, भारत बिल्डिंग में घुस गया। इस इमारत में कई सरकारी और नीम सरकारी कार्यालय हैं।

"मैं सीढ़ियों से ऊपर चढ़ कर दूसरी मंजिल पर जा पहुँचा। वहाँ दो बाबू एक कोने में पहले ही छिपे हुए बैठे थे। हम तीनों वहाँ छिपे हुए, वहाँ से निकलने पर विचार करने लगे। नीचे सड़क पर मुसलमान छुरियाँ लिये

हुए घूमने लगे थे। बहुत से मुसलमान भारत बिल्डिंग और हस्पताल के बीच की सड़क पर खड़े थे। हम भारत बिल्डिंग की ऊपर की मंज़िल में छिपे हुए दरवाज़ों के शीशों से उनको देख रहे थे। नीचे छुरेबाज़ जब किसी जाते-आते को पकड़ पाते, तो पहले उसके कपड़े उतार कर देखते कि उसकी सुन्नत हुई है या नहीं। जब उनको पता चलता कि पकड़ा हुआ आदमी हिन्दू है, तो उसकी तलाशी लेते और नकदी आदि को निकाल, उसके पेट को फाड़, उसका काम तमाम कर देते।

"मेरे साथियों ने बताया कि वे भारत इंश्योरैंस कम्पनी के क्लर्क है और वे कम्पनी के काग़ज़ातों की रक्षा के लिए नियत किये गए हैं। यूं तो इस इमारत की रक्षा के लिए दो फौजी पहरे पर बैठा दिये गये थे, परन्तु आज प्रातः से वे फौजी गायब थे।

"नीचे सड़क पर हत्याकाँड हो रहा था। लगभग बारह बजे तक चालीस-पचास से ऊपर हत्याएँ हो चुकी थीं। इसी समय रत्नचन्द की सराय की ओर से लगभग पाँच सौ मुसलमान आए और कूदते-फाँदते भारत बिल्डिंग के अहाते में आ पहुँचे।

"मैंने साथियों से कहा, 'अब यहाँ रहना सुरक्षित नहीं।'

"उनमें से एक का मुख बिल्कुल पीला पड़ गया। दूसरे ने पूछा, 'कहाँ जायें?'

'तुम यहाँ के विषय में जानते हो कि यहाँ कोई खुफिया स्थान है?'

'है तो। यदि इमारत को आग लगा दी गई तो?'

'तो उसके अन्दर जल जायेंगे। पर अब नीचे भागकर तो जाया नहीं जा सकता।'

"वे दोनों मुझको नीचे की मंज़िल पर ले गये। वहाँ बैंक का सेफ्टी वॉल्ट था। उसके बाहर ताला लगा हुआ था और एक गोरखा चौकीदार हाथ में बन्दूक लिये बैठा था। साथी बाबुओं ने कहा, 'हम को भीतर घुस जाने दो।' चौकीदार ने बन्दूक हमारी तरफ तानकर कहा, 'भाग जाओ, नहीं तो गोली मार दूंगा।'

"मैंने भी सोचा कि ये बाबू मूर्ख हैं। यह तो चूहेदानी में फँस जाने वाली बात होगी। वे दोनों उससे झगड़ा करने लगे। मैंने इधर-उधर कोई स्थान देखने का यत्न किया। दूसरी ओर 'अल्ला-हु-अकबर' और 'पाकिस्तान ज़िन्दाबाद' के नारे समीप और समीप आते-जाते थे। मैंने देखा कि सामने ट्रिब्यून कार्यालय और साथ डाकखाना है। मेरे मन में विचार आया कि ये लोग डाकखाने को हानि नहीं पहुँचायेंगे। सरकारी इमारतों को इन्होंने कभी हानि नहीं पहुँचाई। साथ ही यदि उसको आग लगा भी दी गई तो सरकार बुझाने का यत्न करेगी। इस कारण मैं डाकखाने में घुस जाने की साचने लगा। जहाँ हम खड़े थे, वहाँ से अभी और नीचे उतर कर जाना था। सीढ़ियों को ताला लगा हुआ था। इस कारण मैं कमरे से निकल लकड़ी के छज्जे को पकड़ नीचे लटक गया और कूद पड़ा। मेरे साथी मुझको मूर्ख समझ मेरे साथ नहीं आए और उस चौकीदार की मिन्नत-ख़ुशामद करते रहे।

"मैं नीचे फर्श पर पहुँचा तो विचार करने लगा कि डाकखाने में कैसे जाऊँ। आज डाकखाना बन्द था। वह जगह चैम्बरलेन रोड के लैवल पर थी और हस्पताल रोड ऊँची थी। हस्पताल रोड की तरफ से 'पाकिस्तान ज़िन्दाबाद' के नारों के शब्द समीप आते जाते थे। बहुत सोचने का समय नहीं था, इस कारण मैं डाकखाने के पास गया और खिड़की के एक शीशे को घूंसा मार तोड़ डाला। हाथ बीच में डाल चिटकनी खोल ली और भीतर घुस गया। खिड़की को पुनः बन्द कर दिया और अपने छिपने का स्थान देखने लगा।

"मैं एक-दो क्षण ही, समय से पूर्व आया था। मैंने अभी खिड़की बन्द की ही थी कि सामने से गोली चलने का शब्द हुआ। मैंने खिड़की के शीशे में से देखा कि बहुत से मुसलमान भारत बिल्डिंग में घुस आए हैं और उस स्थान पर खड़े हैं, जहाँ चौकीदार और दोनों बीमा कम्पनी के बाबू थे।

"मुझको यह समझ आया कि चौकीदार ने गोली चलाई है। पर वह

एक गोली से ज्यादा नहीं चला सका। मुसलमानों ने उस पर काबू पा लिया था। दूसरी गोली नहीं चली और तीन लाशें छज्जे से, जहाँ से मैं कूदा था, नीचे सेहन में गिर पड़ीं।

"डाकखाने में टेलिफोन लगा हुआ था। मैंने डायरेक्टरी देख पुलिस में टेलिफोन किया। बहुत देर बाद कोई बोला तो उसने कहा कि पुलिस के पास काफ़ी लोग नहीं हैं, जो इस समय बलवा करने वालों पर काबू पा सकें। पुलिस ने मुझसे पूछा कि मैं कहाँ से बोल रहा हूँ, पर मैंने नहीं बताया और टेलिफोन बन्द कर दिया।

"मैं नहीं जानता कि मेरे टेलिफोन करने के परिणाम से अथवा अपने आप ही कुछ फौजी बाहर आ गए और गोली चलने का शब्द हुआ। स्टेनगन भी चल रही थी। लूटमार करने वालों में भगदड़ मच गई। लोग ट्रिब्यून कार्यालय में से चैम्बरलेन रोड की ओर भागे। उनके पीछे-पीछे बन्दूकें लिये फौजी दिखाई दिए।

"इस सब समय मैं एक बैंच के नीचे छिपा हुआ बैठा था। फौजी बलोच थे। मेरे मन में यह भय समाया हुआ था कि कहीं पुनः पकड़ा न जाऊँ। दो घण्टा भर फौजी पहरा रहा और समय-समय पर गोलियाँ चलती रहीं। इसका अर्थ यह था कि बाहर अभी शान्ति नहीं हुई। एकाएक मुझको स्मरण हो आया कि शायद आपका टेलिफ़ोन न कटा हो और यदि आप में से कोई मकान पर हो तो पता करूँ। मैंने टेलिफोन घुमाया और मेरे आनन्द का वारापार नहीं रहा, जब भैया की आवाज़ पहचानी।"

चेतनानन्द ने कहा, "महेश! तुम्हारी आवाज़ सुन तो मैं इतना प्रसन्न हुआ कि मुझे इन लोगों को भी बताने का ध्यान नहीं रहा कि मैं कहाँ जा रहा हूँ। जब तुमने अपने छिपने का स्थान बताया तो मैं बेतहाशा भागा। मोटर ले पहले डी० ए० वी० कॉलेज गया और वहाँ से फौजी सहायता से तुमको निकाल लाया।"

"ईश्वर का बहुत धन्यवाद है कि महेश आ गया है। पर पार्वती का क्या करें? वह तो आती ही नहीं।" महेश के पिता ने कहा।

"वह आ जायेगी। उसको लेकर मैं आऊँगा। आप कल यहाँ से चले जाईये। अब यदि महेश पकड़ा गया तो भगवान भी इसे नहीं बचा सकता।"

(६)

'वाह' कैम्प के शरणार्थियों के काफ़िले पर जेहलम के समीप आक्रमण के फलस्वरूप लूट में प्राप्त सामान और औरतों का बंटवारा करने के लिए नगर के बाहर जंगल में लुटेरों की भीड़ लगी हुई थी।

भीड़ के बीचों-बीच सामान का ढेर लगा हुआ था और एक ओर सब औरतें एकत्रित कर बैठाई गई थीं। जब से आक्रमण करने वाले लूट का माल लेकर आए थे, परस्पर झगड़ रहे थे कि कौन क्या ले। अन्त में पंच नियत किये गए और बंटवारा उनके हाथ सौप दिया गया। पंच कई घण्टे के विचार के पश्चात् बंटवारे की योजना बना पाए थे। इस समय दिन चढ़ आया था और लुटेरे औरतों को प्रकाश में भली भाँति देख रहे थे। नीना को देख युवक लुटेरों के मुख में पानी भरने लगा था। पर यह विचार कि एक औरत के लिए उनमें परस्पर भारी झगड़ा न हो जाये, वे पंच के निर्णय की प्रतीक्षा में थे। अन्त में सरपंच ने अपना निर्णय सुनाया—

"सबसे पहले इस आक्रमण में भाग लेने वालों की फहरिस्त बननी चाहिए। चौदह साल से कम उमर वालों की अलैहदा और बड़ों की अलग फहरिस्त बने। सब सामान खोलकर गिन लिया जाए और प्रत्येक बच्चे को आधा और बड़े को पूरा हिस्सा मिलेगा।

"इसके पीछे औरतों की नीलामी होगी। जो सबसे ज्यादा देगा, वह दाम ले लेने पर उसको मिल जायेगी। जो धन इस तरह एकत्रित होगा, वह फिर उसी तरह बाँट दिया जाएगा।"

सब को यह योजना पसन्द आ गई; परन्तु एक युवक, जो किसी अच्छे परिवार में से प्रतीत होता था, कहने लगा, "मेरी राय यह है कि औरतों को अपना-अपना मालिक पसन्द करने की इजाज़त दे दी जाए।"

सरपंच ने इसको स्वीकार नहीं किया। उसका कहना था कि काफिरों की औरतों को इतने हक-हकूक नहीं दिए जा सकते।

इस पर सबने प्रसन्नता प्रकट की और सामान खोल-खोलकर देखा जाने लगा। कपड़े तो कुछ अधिक नहीं निकले, परन्तु सोना-चाँदी के भूषण कई मन एकत्रित हो गए। तोल-तोल कर भूषण बाँट दिये गए; वस्त्र निर्धनों को दे दिये गए। अन्त में औरतों की बारी आई। एक-एक औरत को सब लोगों के भीतर खड़ा कर बोली बोली गई। पचास रुपये से लेकर पाँच सौ तक दाम पड़े। नीना पाँच सौ पर बिकी। शायद बोली और अधिक जाती यदि यह शर्त साथ न होती कि रुपया तुरन्त दिया जाना चाहिए। दाम पाँच सौ पर आकर अटक गया। बोली बोलने वाले अन्त में दो आदमी रह गए थे। एक जेहलम का ठेकेदार था और दूसरा वही युवक, जो औरतों को मालिक चुनने के पक्ष में कह रहा था। ठेकेदार पचास वर्ष की आयु का प्रौढावस्था का आदमी था। युवक तेईस-चौबीस वर्ष की आयु का। जब ठेकेदार ने एक-दम चार सौ से पाँच सौ दाम बोले तो युवक ठहर गया। उसने सरपंच से पूछा, "क्या मैं दाम कुछ देर में दे सकता हूँ?"

"नहीं, फौरन मिलना चाहिए।"

युवक ने जेब से रुपये निकाल गिन डाले। वह पाँच सौ से कम थे। इस पर उसने कहा, "जो सोना मुझको अभी मिला है, क्या वह उसकी कीमत में दे सकता हूँ?"

सरपंच ने फिर कहा, "नहीं, नकद नोटों में या रुपयों में दाम चाहिएँ।"

युवक को ऐसा समझ आया कि सरपंच उस ठेकेदार की हिमायत कर रहा है। इस कारण उसने जोर से कहा, "यह तो बे-इन्साफी है। क्या सोना-चाँदी, जो मुझको अभी मिला है, कीमती चीज़ नहीं है?"

सरपंच ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, "मैं जो-कुछ कह रहा हूँ, दोनों के लिए कह रहा हूँ। मुझको क्या मालूम था कि तुम्हारी जेब में

कितना रुपया है ?"

"इस अनवर का घर नज़दीक है। वह घर से रुपये मंगवा सकता है। मेरा घर यहाँ से दस कोस पर है। मैं नहीं मंगवा सकता।"

"यह ठीक है, पर मैं पूछता हूँ कि क्या तुमको लूट का हिस्सा अनवर से ज्यादा मिला है ? वह तो तुम दोनों बोली में लगा दोगे। असल में फैसला तो उस रुपये से होगा, जो तुम घर से दे सकोगे। रही रुपयों के लिए कल तक की इन्तज़ार की बात, मैं तो ठहर सकता हूँ, पर ये लोग अपने-अपने घरों को जाने के लिए बेताब हो रहे हैं।"

इस प्रकार नीना की किस्मत का फैसला हो गया। उसको अनवर के हाथ दे दिया। जब अनवर उसे घसीटता हुआ ले जा रहा था, तो उसका प्रतिस्पर्धी युवक अपने चार-पाँच साथियों सहित, उसके पीछे-पीछे हो लिया था। वह मन में नीना को अनवर से छीनकर ले जाने की योजना बना रहा था।

जेहलम शहर में ये लोग पहुंचे तो शहर के बाल-वृद्धों तक नीना के पाँच सौ रुपये में बिकने की बात पहुँच गई थी और नीना के दोनों हाथ पीठ पीछे बँधे, गले में रस्सी बाँध खींचते हुए लाए जाने को देखने के लिए सब एकत्रित हो गए थे।

नीना के मन में इस अन्याय तथा अत्याचार से एक बवण्डर उमड़ रहा था। जन्म से हठी लड़की अपने को इस प्रकार सर्वसाधारण में अपमानित किए जाते देख अति दुःख अनुभव कर रही थी। उसकी आँखों के सामने, यह सब-कुछ जो रात से हुआ था, एक दुखद् चलचित्र की भाँति निकल रहा था और वह अनुमान नहीं लगा सकती थी कि इसका अन्त कहाँ होगा। विवश एक गाय की भाँति हाँक कर ले जाती हुई, वह चली जा रही थी।

अनवर का घर आया तो नीना को घसीट कर भीतर ले जाया गया। उसको जनानखाने में भेज दिया गया। अनवर की दो बीवियाँ वहाँ पहले मौजूद थीं। वे दोनों पहले ही सुन चुकी थीं कि नीना खरीद कर लाई गई

है। इससे वे, उस बकरी की तरह लाई गई नीना को देखकर मुसकराईं और फिर गम्भीर हो गईं। अनवर ने अपनी बीवियों से कहा, "इसे खिलापिला कर ठीक करो। इसने रात से कुछ नहीं खाया।"

यह कह कर अनवर बाहिर निकल गया। दोनों ने नीना के हाथ खोल दिए और गले की रस्सी खोल कर उसको भीतर एक कमरे में ले गईं। वहाँ एक, जो काफी बड़ी आयु की प्रतीत होती थी, उससे बोली, "बैठो।"

नीना बैठ गई। वे दोनों उसके पास बैठ गईं। बड़ी ने पूछा, "क्या नाम है ?"

जब नीना चुप रही तो उसने ज़रा डाँट कर पूछा, "बोलती नहीं ? क्या गूँगी हो ?"

नीना की आँखें आँसुओं से भरने लगीं। तब अनवर की छोटी बीवी ने उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा, "देखो, बीबी ! रोओ नहीं। रोने-धोने से काम कहीं बनेगा। तुमको खुदा का शुकर करना चाहिए कि इस तरह एक के हवाले तो कर दी गई हो। कुछ दिन हुए कि एक रेलगाड़ी से कुछ औरतें पकड़ कर लाई गई थीं और उनसे, शारअ आम में, कईयों ने बदफेली की थी।"

नीना यह सुन अपनी माँ की दशा को स्मरण कर कांप उठी।

"क्यों, मैंने ठीक कहा है या नहीं ? खुदा तुम पर मेहरबान है कि हमारे मियां तुम पर लट्टू हैं और तुम किसी और के पल्ले नहीं पड़ीं। वे बहुत अच्छे हैं और तुम्हारी खूब खातिर तवाज़ा करेंगे।"

नीना को टट्टी-पेशाब के लिए कहा गया। वास्तव में उसको अपनी परिस्थिति का उचित ज्ञान तब हुआ, जब वह स्नानादि से निवृत हो खाना खा कर विचार करने के योग्य हुई। उसको वहां से भागने की चिन्ता हुई। वह सोचने लगी कि यह किस प्रकार हो सकता है।

अनवर ने उसको बलपूर्वक अपनी बीवी बना लिया। इससे तो नीना में प्रतिकार की भावना जाग उठी। वह सोचने लगी, मरना तो है ही, फिर इस दुराचारी पर हाथ साफ कर पीछे मरना चाहिए।

इसी प्रकार कई दिन बीत गए। वह अपने मन की योजना के विषय में सोचती थी, परन्तु घर से बाहर की बातों से सर्वथा अनभिज्ञ होने से वह कोई योजना नहीं बना सकती थी। उसकी बहुत इच्छा थी कि कोई छुरी व चाकू इत्यादि उसको मिल जाए, तो रात को जब अनवर सोया हुआ हो, उसका पेट फाड़ डाले; परन्तु उसके पास कोई हथियार नहीं था और अनवर उससे बहुत बलिष्ट था।

एक दिन नीना के पास अनवर की दुसरी बीवी आ कर बैठी और उसको देख मुसकराने लगी। नीना इसका अर्थ नहीं समझ सकी। वह प्रश्न-भरी दृष्टि से उसकी ओर देखने लगी। अनवर की बीवी ने कहा, "तुम कितनी खुशकिस्मत हो कि रहीम तुमको खरीदने के लिए थैली में रुपये भर कर लाया है।"

"तुम इसको खुशकिस्मती मानती हो ?"

"तुम्हारी शादी तो हुई नहीं। तुम्हारा दरजा रखेल का है। हमारे मियां ने रहीम से पांच सौ रुपया अपना, जो उन्होंने तुमको खरीदने में दिया था, और दो हज़ार रुपया तुम्हारे लिए मांगा है। रहीम अभी इतना देने के लिए तैयार नहीं; पर मैं समझती हूँ कि तैयार हो जायेगा।"

"तो मैं गाय-बैल की भांति बेची जा रही हूँ।"

"पर दो हज़ार तो तुमको मिलेगा। गाय-बैलों को रुपया कहाँ मिलता है ?"

"पर तुम्हारे मियाँ तो कहते थे कि मुझसे मुहब्बत करते है। तो क्या अपनी मुहब्बत बेच रहे हैं ?"

अनवर की बीवी बहुत पढ़ी-लिखी नहीं थी। इससे इस युक्ति का उत्तर नहीं जान सकी। उसको जो समझ आया, वही उसने कह दिया। उसने कहा, "मुहब्बत तो हमबिस्तर होने के वक्त होती है; नहीं तो एक आदमी तीन-तीन औरतों से मुहब्बत कैसे कर सकता है ? एक वक्त एक से ही मुहब्बत हो सकती है।"

नीना समझ गई कि वह कुछ नहीं समझी, इस लिए चुप रही। इस

पर उसने कहा, "रहीम जवान है। उसकी और कोई बीवी नहीं। वह तुमको बहुत मुहब्बत करेगा।"

"तुम तो कहती थीं कि तुम्हारे मियाँ बहुत अच्छे आदमी हैं?"

"इसमें भी शक है क्या? तभी तो वे तुम्हारे लिये दो हज़ार रुपये माँग रहे हैं।"

इस समय अनवर भीतर आया। उसने दो हज़ार रुपये के नोटों का बॅडल नीना के सामने फ़ेंकते हुए कहा, "चलो। वह शादी भी करने के लिए तैयार है।"

(७)

रहीम नीना को लेकर अपने गाँव नहीं गया। उसके साथ रहने का सुख पूर्ण रूप से लेने के लिए, उसको भिम्बर के मार्ग से काश्मीर ले गया। काश्मीर की वादी में गुलमर्ग की घाटी सबसे अधिक सुन्दर और स्वास्थ्य-प्रद थी। श्रीनगर में पहुँचते ही उसने खेमों का प्रबन्ध किया और गुलमर्ग के लिए चल पड़ा।

ज़मींदार का लड़का होने के कारण तीन नौकर तो घर से लेकर आया था और खच्चरों के, जिन पर सामान लादा था और नीना को सवार कर लाया था, कुली भी साथ थे। श्रीनगर में उसने पांच कुली खेमों के साथ और कर लिए। इस प्रकार एक भारी दल-बल के साथ वह गुलमर्ग जा पहुंचा। हिन्दुस्तान की हालत खराब होने के कारण इस वर्ष सैर करने वाले बहुत कम लोग आए थे। एक दो अंग्रेज़ों के खेमे लगे थे।

नीना अभी भी अपनी अवस्था से प्रसन्न नहीं थी। रहीम अनवर से ज्यादा सभ्य और धनी मालूम होता था। उसकी मुहब्बत नीना का भोग करने के लिए ही नहीं, प्रत्युत उसको प्रसन्न करने के लिए भी प्रयोग होती थी। भोजन, वस्त्र, फल इत्यादि सब उसको इच्छानुसार मिलते थे। इस पर भी नीना किसी बात में रुचि नहीं रखती थी।

रहीम पूछता, "आज किधर घूमने चला जाए?"

"जिधर मर्ज़ी हो।"

"घोड़े पर चलोगी या डांडी पर ?"

"जैसे आपका मन करे।"

"पोशाक क्या पहनोगी ?"

"जो आप कहें।"

"साथ खाने को क्या क्या ले चलें ?"

"जो आपको पसन्द हो।"

नित्य इस प्रकार का आत्म-समर्पण देख रहीम का मन बुझ-सा जाता था। रात के समय जब वह उससे प्यार करने लगता तो वह चुप-चाप आँखें मूँद उल्लास-हीन अवस्था में पड़ी रहती।

रहीम के लिए यह असह्य हो जाता था। एक दिन उसने, जब वे एकान्त में खुले मैदान में बैठे थे, पूछ ही लिया, "प्यारी जान ! मैं यह जानने की कोशिश करता हूँ कि तुम किस तरह खुश हो सकती हो। मैं पूछता-पूछता थक गया हूँ, पर अभी नाउम्मीद नहीं हुआ। क्या तुम मेरी मदद करोगी ?"

नीना ने स्वभावानुकूल कह दिया, "जैसी आज्ञा हो।"

"इसमें भी मेरे हुकम की ज़रूरत है क्या ?"

"मैं आपकी ज़रखरीद बांदी हूँ।"

इसने रहीम के दिल पर चोट लगाई। उसने कहा, "मैंने तो सरपंच से यह कहा था कि औरतों को नीलाम न किया जाए। उनको आज़ादी से अपना खाविन्द चुनने की इजाज़त दी जाये। मगर वह माना नहीं।"

"उसने ठीक ही किया था। कोई भी औरत अपनी इच्छा से उन लुटेरों में से किसी को पसन्द नहीं करती। मजबूरी को आज़ादी नहीं कहा जाता।"

"तो तुम अनवर ठेकेदार और मेरे में कुछ फरक नहीं समझतीं ?"

"फरक तो है, मगर इसमें मैं आज़ाद हूँ, यह नहीं समझ सकी।"

"अगर मैं कहूँ कि तुम आज़ाद हो तो तुम क्या करोगी ?"

"मैं क्या करूँगी ? तो आपका हुकम है कि बताऊँ ?"

"हाँ, हाँ।"

"जी करदा ए तोड़-मरोड़ सुट्टाँ
इस सोने दे सोनियां जालां नूं
जे तोड़दियां जान हलाक होवे
छुट जावां सौ बवालां तों।"

रहीम चुप कर गया। उसके मन में अनेकों विचार उठने लगे। उस के मुख की मुद्रा दृढ़ होने लगी। अन्त में वह उठ पड़ा और बोला, "चलो चलें।"

नीना बिना बोले उठ पड़ी। वे अपने खेमे से तीन मील के अन्तर पर थे और घोड़ों पर वहाँ आए थे। दोनों घोड़ों पर सवार हो खेमे में लौट गए। जब नीना खेमे में गई तो रहीम ने नौकरों को ऊँची आवाज़ में कहा, "देखो, इस खेमे के चारों ओर पहरा रहे। बेगम के जानोमाल की रखवाली तुम्हारे हाथ में देता हूँ और इसके लिए आज से तुम्हारी तनख्वाह दुगनी की जाती है।"

रात को नीना ने अपने सब ज़ेवर उतार कर देने की इच्छा की तो रहीम ने पूछा, "क्यों ?"

"एक गुलाम को इतने कीमती ज़ेवर शोभा नहीं देते।"

"तुम औरत बनना नहीं चाहतीं, इसलिए तुमने गुलाम बनना ठीक समझा है ?"

"जी हज़ूर !"

"मेरा हुकम है कि जेवर पहनकर शृङ्गार करो।"

नीना विवश थी। वह जानती थी कि वहाँ से भाग नही सकती। भागेगी तो पकड़कर पीटी जाएगी। इससे चुपचाप उठ जेवर पहनने लगी। अब नीना सदा दो नौकरों की देख-भाल में रहती थी। जब रहीम के साथ जाती, तब भी दो नौकर बन्दूक साथ लिये उसके आगे-पीछे रहते थे।

इस समय अक्तूबर का महीना आ गया था और दूर पश्चिम की ओर काले-काले बादल दिखाई देने लगे थे। इन बादलों को केवल धुआँ समझ रहीम अभी भी गुलमर्ग में ठहरा हुआ था। ये बादल इतने वेग से आए

कि इनकी भयंकरता का ज्ञान होते-होते वहाँ से निकल जाने का मार्ग नहीं रहा।

पाकिस्तान की सहायता से कबाइलियों ने काश्मीर पर आक्रमण कर दिया। श्रीनगर से गुजरात जाने का मार्ग तथा बारहमूला से मरी जाने का मार्ग, कबाइलियों के हाथ आ गया था। बारहमूला में आक्रमणकारियों का अधिकार हो गया था और वे लूटमार मचाने लगे थे। बारहमूला से कुछ आक्रमण करने वाले गुलमर्ग में भी आ गए और समीप के गाँव में आग लगाकर, वहाँ का सब धन-दौलत और औरतें लूटकर बारहमूला को वापस लौट गए।

जब रहीम के कैम्प में लूट मची तो उसने कहा भी कि वह मुसलमान है, परन्तु किसी ने नहीं सुना। आक्रमणकारियों के सरदार ने कहा, "देखो, हम यहाँ पाकिस्तान की हकूमत कायम करने आया है। तुमको हमारी मदद करना चाहिए।"

"पर खान ! तुम तो मुझको लूट रहे हो।"

"हमको हमारा उजरत चाहिए। वह कौन देगा ? तुमको देना होगा।"

"पर तुम तो मेरी बीवी भी ले जा रहे हो।"

"हम तुमको मार डालेगा। यह बेवा हो जायगा। तब हम शादी कर लेगा।"

"तुम और भी तो यहाँ से कितनी ही औरतें ले जा रहे हो ?"

"वे हमारा गुलाम बनेंगी। यह हमारी बीवी बनेगी।"

यह कह सरदार ने रहीम को कत्ल करने के लिए बन्दूक तानी तो नीना ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा, "इसको मारो नही। यह मेरा खाविन्द नहीं है। यह मुझको लूटकर लाया है।"

"कहाँ से ?" सरदार ने हाथ रोकते हुए पूछा।

"एक हिन्दू के घर से।"

"तो तुम हिन्दू है ?"

"हाँ।"

"तब ठीक है। हम तुमको बहुत अच्छी तरह से रखेगा।"

रहीम को छोड़ दिया गया और सरदार नीना को एक खच्चर पर तथा लूट का सामान दूसरी खच्चरों पर लादकर नीचे को चल दिया। उसके साथियों ने भी एक-एक दो-दो औरतें रस्सी से बाँध अपने साथ कर ली थीं।

इस समय तक काश्मीर के युद्ध का पाँसा पलट चुका था। हिन्दुस्तानी फौजें श्रीनगर के हवाई अड्डे पर पहुँच आक्रमणकारियों को पीछे धकेलने लगी थीं। जब नीना को पकड़ने वाला बारहमूला में पहुँचा, तो वहाँ हिन्दुस्तानी और पाकिस्तानी फौजों में घमासान युद्ध हो रहा था। नीना को पकड़ कर लाने वाला हिन्दुस्तानी फौजों के पीछे पहुंचा था, इससे पकड़ लिया गया और कैद कर श्रीनगर भेज दिया गया। नीना और अन्य औरतें, जो छुड़ाई गई थीं, एक कैम्प में रख दी गईं। अभी किसी को फुर्सत नहीं थी कि इनके विषय में जाँच-पड़ताल करे। श्रीनगर एक फौजी कैम्प बन चुका था और धड़ाधड़ भारत से और अधिक फौजें आ रहीं थीं। इनके अतिरिक्त भारी संख्या में उन इलाकों से, जहाँ कबाइलियों का आक्रमण हुआ था, शरणार्थी आ रहे थे।। सरकारी अफसर और जनता के लोग शरणार्थी लोगों की सेवा-शुश्रूषा कर रहे थे। सब लोग कार्य में व्यस्त थे और किसी को सुध नहीं थी कि स्त्रियों की जाँच-पड़ताल करे।

नीना का ऐसा अनुमान था कि उसके पेट में बच्चे का बीजारोपण हो गया है। वह जब से गुजरात के पास से पकड़ी गई थी, तब से ही अपने को परिस्थितियों की तरंगों पर बहती हुई पाती थी। एक बात वह समझ गई थी कि वर्तमान विरोधी परिस्थितियों का मुकाबिला करने की क्षमता उसमें नहीं है। इस कारण पत्थर की दीवार से माथा टकराने से लाभ न मान, उसने अपने को मझधार में तरंगों की दया पर छोड़ दिया था।

जब उसको पता चला कि वह माँ बनने वाली है, तब भी उसके मन में भविष्य के लिए चिन्ता नहीं हुई। क्या होगा, यह विचार करने की शक्ति

उसमें नहीं रही थी। कैम्प में प्रातः से सायं तक वह अन्य औरतों की देख-भाल अपनी शक्ति और समझ के अनुसार करती रहती थी।

एक आशा उसके मन में थी। वह यह कि अब हिन्दुस्तान पहुँच सकेगी और वहाँ रामचन्द्र राव से मिल कर किसी सेवा-कार्य में लग जायेगी। गृहस्थ जीवन अपने पिछले दो मास के जीवन के पश्चात् असम्भव अतीत हो रहा था।

(८)

काँग्रेसी नेताओं की सब गणनाएँ मिथ्या सिद्ध हुई थीं। उनका विचार था कि हिन्दू-मुसलमान एक जाति है। यह भ्रम १९४६ के निर्वाचनों ने असत्य सिद्ध किया। फिर उन्होंने समझा था कि मुसलमानों के सम्मुख घुटने टेक देने से वे उनके साथ स्वराज्य-आन्दोलन में सम्मिलित होंगे। स्वराज्य-प्राप्ति के अन्तिम दिन तक मुसलमानों ने सहयोग नहीं दिया। केन्द्रीय सरकार के काम में भी मुस्लिम लीग ने बाधाएँ ही खड़ी की थीं। वे यह भी समझते थे कि देश-विभाजन पर मुसलमान संतुष्ट होकर अपने देश के निर्माण में लग जावेंगे और उनको अपनी किस्मत अजमाई करने देंगे। यह नहीं हुआ। ३ जून १९४७ की घोषणा के पश्चात् भी मुसलमान हिन्दुस्तान में बलवे और झगड़े करते रहे। दिल्ली, मथुरा, आगरा, अम्बाला जालन्धर इत्यादि नगरों में भी मुसलमान-हिन्दू झगड़े होते रहे और वे अपना अधिकार पाकिस्तान की सीमा से बाहर भी जमाने का प्रयत्न करते रहे। कश्मीर पर आक्रमण और हैदराबाद का केन्द्र की अधीनता न मानना, इस प्रवृत्ती के उदाहरणों में थे। काँग्रेसी नेताओं का विचार था कि मिस्टर जिन्ना चाहे कुछ कहे, भारत का विभाजन भौगोलिक आधार पर है और दोनों भूखण्डों में सब विचार के लोग रह सकेंगे। ऐसा नहीं हुआ। पाकिस्तान विशेष रूप से पश्चिमी पाकिस्तान से हिन्दूओं का विकास विभाजन के पीछे भी होता रहा। किसी हिन्दू के लिए, पाकिस्तान में रह सकना असम्भव हो गया।

सबसे भारी भूल काँग्रेसी नेताओं की यह थी कि वे भारत के मुसल-

मानों के इस्लाम को एक शुद्ध मज़हब मानते थे। यह धारणा भी असत्य निकली। भारत के मुसलमान अपने को एक जाति अर्थात् राजनीतिक इकाई मानते रहे।

इन और इसी प्रकार की अनेकों भूलों का परिणाम यह हुआ कि काँग्रेसी नेताओं ने स्वतन्त्रता-दिवस बहुत धूम-धाम से मनाया। इस समारोह में लोगों का उत्साह भंग न हो, इसलिए प्रथम अगस्त से लाहौर तथा अन्य निकटवर्ती स्थानों में हो रहे कत्लेआम का समाचार भारत में प्रकाशित होने से रोक दिया।

जब लाहौर की सड़कें हिन्दुओं के रक्त से रंगी जा रही थीं, जब ट्रेनों पर आने वाले हिन्दुओं को ट्रेनें रोक-रोककर कत्ल किया जा रहा था तथा उनको लूटकर उनकी स्त्रियों का अपहरण किया जा रहा था और जब पंजाब के हिन्दुओं के सहस्रों परिवारों में मातम छाया हुआ था, उस समय दिल्ली और भारत के अन्य नगरों में झण्डियाँ, फनूस, जलूस, जलसे, भाषण और राग-रंग मनाया जा रहा था। पाकिस्तान से भारत सरकार बधाईयाँ ले और दे रही थी।

पंजाब में पन्द्रह अगस्त को रेडियो पर इन उत्सव-समारोहों के समाचार सुन हिन्दुओं के दिलों पर छुरियाँ चल रही थीं। वे अपने मनों में पूछते थे—क्या भारत में सब नर-नारी पत्थर के हृदय वाले हो गए हैं? क्या मानवता की कोमलता सबमें विलुप्त हो गई है? उन बेचारों को यह ज्ञान नहीं था कि पहली अगस्त से पंजाब के समाचार लोगों तक पहुँचने बन्द हो गए थे। समाचार-एजन्सियाँ लॉर्ड माउन्टबेटन और श्री जिन्ना की चिकनी-चुपड़ी बातें भेजने में अपनी चतुराई मानने लगी थीं। किस प्रकार देश के कुछ लोगों ने देश की आत्मा को सुलाए रखा, यह एक चमत्कार भारत में अगस्त १९४७ में सम्पन्न हो गया।

जालन्धर में मिस्टर मैहरा के घर के सब लोग दिल्ली में हो रहे उत्सव-समारोह का वर्णन रेडियो से सुन रहे थे। लॉर्ड माउन्टबेटन की गवर्नर जनरल

मौन्टबेटन की जय-जयकार, इण्डिया गेट के समीप स्वतन्त्रता-उत्सव और दिल्ली की सजावट, लोगों का सड़कों और बाज़ारों में 'जन गण मन अभिनायक जय हे' गाते हुए गुज़रना और इन सब दिल्ली में हो रहे राग-रंगों पर रेडियो-विभाग की समालोचना अति रंगीन भाषा में वर्णन की जा रही थी। इस पूर्ण वर्णन में एक शब्द भी नहीं था, जिससे पता चले कि लाहौर में क्या हो रहा है।

रेडियो समालोचक कह रहा था, "पूर्ण भारत में स्वराज्य के स्वागत में जलसे-जलूस नाच-रंग ही हो रहे हैं। पूर्ण दिल्ली नगर रंग-रंग के फूल, झंडियों, वेलों वाले दरवाजों से सजाया गया है। लोग खुशी में पागल हुए गाते-बजाते सड़कों पर घूम रहे हैं।

"इण्डिया गेट के सामने का खुला मैदान जन-समूह से समुद्र की भाँति ठाठें मार रहा है। मैदान में कोने-कोने से 'महात्मा मौन्टबेटन की जय' हो रही है।"

रेडियो में दिल्ली में हो रहे समारोह का वर्णन सुनने के लिए घर के सब लोग एकत्रित थे। यह नहीं कि सब लोग इस वर्णन से प्रसन्न हो रहे हों; परन्तु जो कुछ भी हो रहा था, वह सब इनके लिए आकर्षण रखता था। वे जानते थे कि एक नवीन वस्तु प्रस्तुत हुई है। दिल्ली के लोग इसको शताब्दियों के पाप का कटना मान उल्लास से पागल हो रहे हैं; परन्तु वे जालन्धर में बैठे अपने घावों को चाट-चाटकर उनकी पीड़ा कम कर रहे थे।

मिस्टर ए० पी० मैहरा के मन में भी विचारों का बवण्डर उठ रहा था। वह मन में सोच रहा था कि इस सब समारोह के करने का क्या यही अवसर था? क्या इस उत्सव को कुछ महीनों अथवा दिनों के लिए स्थगित नहीं किया जा सकता था? जो अनर्थ और अत्याचार देश के एक भाग में हो रहा है, उसकी उपस्थिति में यह आनन्द नाद अस्वाभाविक और घावों पर नमक छिड़कने वाला नहीं है क्या? यह विचार कर उस की आँखों में [illegible]

भी वहीं बैठी थीं। सबके मुख पर भी यही बात स्पष्ट थी। उनमें से कोई भी नहीं था, जो इस उत्सव-वर्णन का स्वाद ले रहा हो। इस पर भी सब वहाँ एकत्रित थे और सुन रहे थे।

एकाएक राधा, जो सबसे पीछे खड़ी थी, मैहरा के पुत्र तथा वधू को धकेलते हुए आगे आ गई और रेडियो को उठा भूमि पर पटकती हुई क्रोध में बोली, "यह क्या शिशिर में बसन्त मनाया जा रहा है?"

पूर्व इसके कि कोई उसको रोकता, रेडियो उसके हाथ से फेंका जा कर टूक-टूक हो गया था। मैहरा का लड़का ज्योति 'ओ पगली ! ओ पगली !' कहता हुआ उसकी ओर भागा। उसने एक थप्पड़ उसके मुख पर लगाया और उसको गले से पकड़ घर से बाहर करने के लिए धकेलने लगा।

इस समय तक सबको ज्ञान हो गया था कि क्या हो गया है। मैहरा ने ज्योति द्वारा राधा को गले से पकड़ बैठक से बाहर धकेलते देख, आगे बढ़कर, ज्योति का हाथ पकड़ लिया। उसने उसको डाँटकर कहा, "छोड़ो इसको। छोड़ो इसको।"

ज्योति ठहर गया। पिता ने पुत्र को राधा से पृथक् कर कहा, "यह क्या पागलपन कर रहे हो?"

"पिताजी चार सौ रुपये का सेट.....।"

"चुप !" पिता ने घूर कर कहा। "शुक्र करो कि इसने कोठी को आग नहीं लगा दी।"

"कोठी को आग?"

"हाँ ! तुम नहीं समझ सकते कि इसके हृदय में कितनी आग धधक रही है।"

'पर पिता जी ! हमने इसका क्या बिगाड़ा है?"

"मूर्ख ! समझने का यत्न करो।"

ज्योति मूर्ख कहे जाने पर उस कमरे से बाहर निकल अपने कमरे में चला गया। उसके पीछे उसकी स्त्री रुक्मणी भी चली गई। सब खड़े विस्मय में पिता की ओर देख रहे थे। मैहरा ने अपनी आँखों से आँसू

पोंछ डाले और राधा को कुछ कहने के लिए उस ओर घूमा। पर वह सिर झुकाए कमरे से बाहर जा रही थी। मैहरा ने उसको आवाज दी, "राधा !"

राधा घूम कर वहीं दरवाजे पर खडी हो गई।

मैहरा ने पूछा, "कहां जा रही हो ?"

"कहीं। मैं नहीं जानती कहाँ ?"

"घर छोड रही हो ?"

"हाँ।"

"दो-तीन दिन और ठहर जाओ। बाहर शान्ति हो जाने दो।"

"नहीं, मैं जा रही हूँ।"

(६)

परन्तु वह जा नहीं सकी। मिस्टर मैहरा ने अपनी स्त्री को कहा, "इसको मत जाने दो।" वह राधा की बाँह पकड़ कर उसको उसके कमरे में ले गई और वहाँ बैठा उसको सान्त्वना देने लगी। राधा ने कहा, "माताजी ! मेरा दिमाग खराब हो गया है। मेरा अपने कामों पर अधिकार नहीं रहा। इस कारण मैं आपके परिवार में रहकर यह विषमता उत्पन्न करना नहीं चाहती। मुझको जाने दीजिए।"

"तुम्हारे मन की अवस्था में लालाजी तुमको जाने देना नहीं चाहते। वे बहुत ही उदार चित्त रखते हैं। इस कारण वे तुम्हारी बातों पर ध्यान नहीं देगें। तुम यहां रहो। अभी कुछ दिन तो अवश्य ही रहो। जब बाहर शान्ति स्थापित हो जाएगी, तो जहां मन करे चली जाना। हमको डर है कि कहीं डॉक्टर खन्ना के अंगरक्षक जैसा कोई और न तुमको मिल जाए।"

इस पर भी राधा ने मन में निश्चय कर लिया था कि वह अब अधिक काल तक वहां नहीं रहेगी; परन्तु श्रीमती मैहरा जब गई तो राधा के कमरे को बाहर से ताला लगा गई। राधा इससे विस्मय में बैठी रही। वह यह नहीं जान सकी कि इसको श्रीमती मैहरा की सौजन्यता माने अथवा निर्दयता।

सायं समय राधा को टट्टी पेशाब के लिये निकाला गया और उसको श्रीमती मैहरा ने अपने पास बैठा कर भोजन कराया। भोजन करते समय राधा ने पूछा, "मैं आपकी कैदी हूँ क्या ?"

"कैदी नहीं हो। तुम हमारी संरक्षता में हो।"

"किसने आपको संरक्षक बनाया है ?"

"भगवान ने। जब तक तुम्हारा मन स्वस्थ नहीं हो जाता, तुमको यहां रखने के लिए आज्ञा है।"

"तो आप यह समझती हैं कि मैं पागल हूँ।"

"पागल नहीं, पर अस्थिर मन तो हो।"

"पर आपके इस ताला लगाने से मुझको बहुत दुःख हो रहा है।"

"दुःख अथवा कष्ट ?"

"कष्ट तो कुछ नहीं, दुःख है। मैं समझती हूँ कि मैं कैदी हूँ। यही समझना मेरे दुःख का कारण है।"

"पर तुम कहना भी नहीं मानती। देखो, तुम्हारे लिए लालाजी ने ज्योति को मूर्ख कह दिया।"

"इसी कारण तो यहाँ से जाना चाहती हूँ।"

"और मैं समझती हूँ कि तुमको लालाजी का कहना मानना चाहिए और यहाँ से जाना नहीं चाहिए।"

"पर ज्योति का क्या होगा ?"

"तुम समझती हो कि ज्योति अनुभव नहीं करता। उसने क्रोध में आकर तुमको चाँटा मार दिया था, परन्तु वह इस पर भारी पश्चात्ताप कर रहा है।"

इस समाचार ने राधा को कुछ शान्ति दी और वह अपनी अवस्था पर सन्तोष कर अपने कमरे में चली गई। अगले दिन ज्योति की स्त्री ने भी उसको अपने पति के पश्चात्ताप करने की बात कही और कहा कि उसको अपने किए पर बहुत शोक है।

अभी बात टल गई। इस पर भी राधा उस सब पागलपन को, जो

उसके चारों ओर हो रहा था, विस्मय में देख रही थी और उसको बन्द कर देने का उपाय सोच रही थी। मैहरा की कोठी रेल के स्टेशन के समीप ही थी। कोठी के चबूतरे पर खड़े होकर रेल की लाईन पर गुजरती गाड़ियाँ देखी जा सकती थीं। चौबीसों घंटे पाकिस्तान से निकाले गए लोगों की गाड़ियाँ गुजरते देख, कोठी के सब लोगों के मन व्याकुल रहते थे। कभी-कभी रात को बारह बजे, एक बजे और कभी इसके भी पीछे गुजरती गाड़ी के लोगों के नारों से नींद खुल जाती। 'महात्मा गाँधी की जय, हर हर महादेव' दो परस्पर भिन्न भाव-प्रदर्शक नारे प्रायः एक ही मुख से निकलते थे।

एक दिन गाड़ी मैहरा साहब की कोठी के सामने ही खड़ी हो गई। रात के दो बजे थे। 'हर-हर महादेव' के नारों से सब लोग जाग पड़े और बाहर निकल, चबूतरे पर खड़े हो, गाड़ी देखने लगे। गाड़ी यात्रियों से खचाखच भरी हुई थी। डिब्बों की छत पर और बाहर पायदानों पर एक इंच-भर भी स्थान खाली नहीं था।

राधा अब ताले में बन्द नहीं की जाती थी, इस कारण वह भी लोगों के नारे सुनने के लिए चबूतरे पर आ गई। जब आवाज आई, 'महात्मा गांधी की जय, तो उसके मुख से विकराल हँसी निकल गई। मैहरा समझ गया कि पागलपन फिर सवार हो गया है। इस कारण वह उसके समीप आ कहने लगा, "इसमें हँसने की कौन बात है राधा ?"

"ये लोग जय तो महात्मा गाँधी की बुलाते है, पर कहना उनका मानते नहीं।"

"तो इसमे हसने की कौन बात है ? देखो, जब कोई किसी की भूरि-भूरि प्रशंसा करता है तो यह समझना चाहिए कि उसकी अन्तरात्मा की आवाज में लक्ष्य व्यक्ति के लिए भारी घृणा भरी पड़ी है और उस अन्तरात्मा की आवाज को छिपाने के लिए ही वे मुख से उससे विपरीत नारे लगाता है।"

"तो ये महात्मा गांधी से घृणा करते हैं क्या ?"

"अन्तरात्मा की आवाज़ पहचानने वाले संसार में विरले ही होते हैं। ये जानते नहीं, परन्तु प्रकृति इनके मुख से यह बात निकलवाती है, जिससे इनकी अन्तरात्मा में उठ रहा तूफान दूसरे न देख पायें।"

"कितनी विडम्बना है ?"

इस समय गाड़ी में से कुछ लोग उतरकर पानी के लिए इधर-उधर देखने लगे। मैहरा ने यह समझ नौकरों को बुलाया और घर-भर के सब लोग पानी भरकर गाड़ी में चढ़े लोगों को पानी पिलाने लगे। राधा भी इनमें थी। स्टेशन पर पहले ही दो गाड़ियाँ निर्वासितों से भरी खड़ी थीं। इस कारण यह गाड़ी स्टेशन से बाहर ही खड़ी कर दी गई थी और तब तक वहाँ से नहीं चली, जब तक पहली गाड़ियाँ चल नहीं पड़ीं। जब तक गाडी चली नही, सब लोग यात्रियों को पानी पिलाते रहे। जब गाडी चली गई तो घर के लोग वापस आ गए और अपने-अपने स्थान पर जा सो रहे।

प्रातःकल उठे तो राधा लापता थी। मैहरा ने नौकरों को दौड़ाया कि वे जाकर स्टेशन पर पता करें कि रात वाली गाड़ी छूट गई है या नहीं। पर वह गाड़ी छूट चुकी थी और राधा वहाँ नहीं मिली।

राधा रात को जब यात्रियों को जल पिला रही थी तो उसको कृष्णराव एक डिब्बे में बैठा दिखाई दिया। वह उसको जानती थी। कई बार घायलों को लेकर वह हस्पताल में आया करता था और डॉक्टर से लेकर भंगी तक उससे परिचित थे तथा उसके प्रशंसक थे। राधा ने उसको देखा तो आवाज दे दी, "भैया कृष्ण !"

कृष्णराव फर्स्ट क्लास के डिब्बे में, जो यात्रियों से भरा हुआ था, एक खिड़की के पास बैठा हुआ था "कौन ?" उसने घूमकर पूछा। चाँदनी रात में वह राधा को पहचान गया और बोला, "राधा बहिन ! यहाँ कैसे आ गई हो ?"

उसने पानी पिलाना छोड़, कृष्णराव के डिब्बे के समीप आकर कहा, "जैसे सब लोग आ रहे हैं।"

'मैंने तो सुना था कि डॉक्टर खन्ना की जीप गाड़ी में तुम शिमला चली गई थीं ?"

"वे नहीं ले गए। यहाँ ही उतार गए थे।"

"क्यों !"

राधा की हँसी निकल गई। "यहाँ कहाँ रहती हो ?" कृष्णराव ने फिर पूछा।

"एक सज्जन हैं, पर मैं यहाँ से जाना चाहती हूँ।"

"तो आओ, मैं दिल्ली जा रहा हूँ।"

राधा ने लोटा उस बाल्टी में रख दिया, जिसमें से पानी निकालकर वह पिला रही थी और कृष्णराव का सहारा ले उसके डिब्बे में चढ गई। डिब्बा पहले ही खचाखच भरा हुआ था। कुछ लोगों ने राधा को भीतर आते देख माथे पर त्योरी चढ़ाई, परन्तु कोई भी उसको कुछ कह नहीं सका। डिब्बे में सब लोग बिना टिकट के थे।

कृष्णराव स्वयं सीट से उठ खड़ा हुआ। राधा को वहाँ बिठाकर पूछने लगा, "पार्वती के विषय में तुम नहीं जानतीं शायद ? तुम पहिले ही आ गई थीं ?"

"हाँ। क्या हुआ है ?" राधा ने घबरा कर पूछा।

"उस पर मुसलमान फौजियों ने घातक आक्रमण किया था। १६ तारीख को रोगियों को हस्पताल से निकाल डी० ए० वी० कॉलेज कैम्प में पहुँचाया जा रहा था कि एम्बुलैंस कार को बलोच फौजियों ने रावी रोड पर रोक लिया। वे रोगियों की तलाशी लेने लगे तो पार्वती ने, जो उनकी देख-रेख पर थी, उनको आहिस्ता से तलाशी लेने के लिए कहा। इस पर एक फौजी ने अपनी संगीन उसके पेट में घुसेड़ दी। वह अति शोचनीय अवस्था में कैम्प में लाई गई थी। वहाँ मरहम पट्टी की गई है और डॉक्टर की सम्मति है कि एक मास में बिस्तर से उठ सकेगी।"

"कहाँ है वह ?"

"आज हवाई जहाज से दिल्ली ले जाने की बात थी। मैं तो परसों

का चला हुआ हूँ। कल दोपहर की अमृतसर से चली हुई यह गाड़ी अभी जालन्धर पहुँची है।"

पार्वती का वृत्तान्त सुन राधा फिर विचार में पड़ गई। कृष्णराव गाड़ी के फर्श पर बैठे हुए लोगों में घुसड़कर बैठ गया। एक ने कहा, "साहब! इस प्रकार चलते-फिरतों को चढ़ाने लगे तो सब दम घुटकर मर जायेंगे।"

कृष्णराव ने हँसते हुए कहा, "जब बलोचों की गोलियों से बच गए हैं, तो ट्रेन में दम घुटने से नहीं मरेंगे।"

गाड़ी चल पड़ी तो लोग ऊँघने लगे।

(१०)

अम्बाला से आगे गाड़ी तेज हो गई और अगले दिन दिल्ली पहुँच गई। दिल्ली स्टेशन पर उतर कृष्णराव ने पूछा, "किधर चलोगी बहिन?"

"मैं क्या जानूं?"

"तो हिन्दू सहायता-समिति के कैम्प में पहुँचा देता हूँ। मैं तो एक-दो दिन यहाँ रहकर नागपुर जाने का विचार रखता हूँ।"

राधा सब्ज़ीमण्डी कैम्प में पहुँचा दी गई। वह इतनी थकी हुई अनुभव करती थी कि तीन दिन तक वह खाने-पीने और सोने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकी। एक खुले मैदान में खेमों की पंक्तियों-पर-पंक्तियाँ लगी हुई थीं। उनमें पाकिस्तान से निर्वासित लोग रखे गए थे। जब राधा को अपने आसपास देखने की शक्ति और समय मिला तो निर्वासितों की अवस्था देख उसके रोंगटे खड़े हो उठे। उसके अपने खेमे में दस औरतें और बीस के लगभग बच्चे थे। पुरुष वहाँ कोई नहीं था। सब औरतें विधवा थीं, जिनके पति तथा अन्य सम्बन्धी मुसलमानों द्वारा मारे गए थे। कइयों के पितृ-विहीन बच्चे भी उसी डेरे में थे।

प्रत्येक स्त्री अपनी भयानक कहानी बताने को रखती थी और अपने दुःख की बात बिना पूछे बताने लगती थी। बच्चे कभी रूठ जाते तो 'भापा जी, पिता जी, भाइया जी' कहकर रोते थे। वे यह समझते थे कि उनके

पिता उनकी रक्षा अथवा उनकी किसी इच्छा को, जिसको उनकी माँ पूरा नहीं कर सकती, आकर पूरी कर देंगे। ऐसे अवसरों पर बच्चों की माताएँ भी रोने लग जाती थीं। उनको रोते देख खेमे की अन्य स्त्रियाँ भी अपने सम्बन्धियों को याद कर रोने लगती थीं। उस समय खेमे में वह कोहराम मचता था कि सुनने वाले की मुसीबत आ जाती थी। पर किया क्या जा सकता था ?

राधा इस वातावरण में वास्तव में पागल हो रही थी। कितना भारी आघात हुआ था मानवता पर ? इसका अनुमान लगाने में वह अपने को असमर्थ पाती थी और इसी में उसका मस्तिष्क चक्कर खाने लगता था।

कृष्णराव नागपुर जाने से पूर्व राधा से मिलने आया। राधा ने पहला प्रश्न उससे पूछा, "पार्वती का पता मिला ?"

कृष्णराव उसके विषय में भूल ही गया था। उसने कहा, "मुझे जानने का अवकाश नहीं मिला। पर तुम चाहो तो लाला बनारसीदास की कोठी, बारह खम्बा रोड पर से पता कर सकती हो। उसको वहीं ले जाने की बात थी।"

अगले दिन राधा बारह खम्बा में लाला बनारसीदास की कोठी पर जा पहुँची। पार्वती वहाँ पहुँच गई थी; और बहुत ही बुरी अवस्था में थी। लाला जीवनलाल तो देहरादून चला गया था। चेतनानन्द और घर के अन्य लोग पार्वती की सेवा-शुश्रूषा करने में लगे हुए थे। रेवा मेटर्निटी हस्पताल में भरती करवा दी गई थी।

राधा पार्वती के बिस्तर के पास पहुंची तो उसकी दुर्बलता और पीत मुख देख डर गई। "पार्वती बहन ! बहुत दुर्बल हो गई हो ?"

"अभी जीती हूँ और जब तक जीवन है, तब तक आस है।"

चेतनानन्द उसके लिए दूध लेकर आया तो राधा को पहिचान गया। उसने दूध का गिलास पार्वती के हाथ में दे, राधा की ओर देखकर मुसकराते हुए पूछा, "तुमका तो बहुत जल्दी का काम था न ? कर लिया है तुमने ?"

राधा भी पहचान गई। वह चेतनानन्द को पहले देख चुकी थी। इससे मुसकराते हुए बोली, "काम तो बहुत आवश्यक था, पर अभी कर नहीं पाई।"

"क्यों ?"

"मेरी शक्ति अति सीमित है और काम बहुत बड़ा है।"

"क्या मैं जान सकता हूँ ? शायद मैं उसमें सहायता कर सकूँ।"

"सहायता तो कोई भी कर सकता है, पर यदि वह करना चाहे ?"

"तो बताओ।" चेतनानन्द ने समीप रखे स्टूल पर बैठते हुए ध्यान से उसके मुख की ओर देखते हुए कहा।

राधा ने कहा, "मैं समझती हूँ कि हम सब लोग जो हस्पताल, सहायता समिति और निर्वासितों की रोटी कपड़े का प्रबन्ध कर रहे हैं, वास्तव में पत्तों को पानी दे रहे हैं। यह काम भी कभी आवश्यक होता है। पर यह रोग की चिकित्सा नहीं।

"मैं सर गंगाराम के हस्पताल में नर्सिंग का काम करती थी। साढ़े चार मास तक वहाँ रही। सैकड़ों घायलों की मरहम पट्टी कर उनको स्वस्थ किया और सैकड़ों को जान तोड़ते देख सांत्वना देने में लगी रही। ग्यारह तारीख को जब घायलों के आने का एक ताँता सा बँध गया तो मैं अपने इस कार्य से हताश हो गई और सोचने लगी कि यह बन्द क्यों नहीं होता ? इस सब का स्रोत कहाँ है ? मुझको ऐसा प्रतीत होने लगा कि यह सामयिक सहायता और मरहम पट्टी बहुत आवश्यक होते हुए भी रोग की चिकित्सा नहीं।

"मेरा विचार था कि मिस्टर जिन्ना इस सब अत्याचार और निर्दयतापूर्ण व्यवहार का स्रोत है और उसको समाप्त कर देने के लिए घर से निकली थी। पर वहाँ तक पहुँचने से पूर्व ही एक सज्जन मिल गए और कहने लगे कि पाकिस्तान की स्थापना ही इन हत्याओं का स्रोत है। यह विचार ही दूषित है; परन्तु यह तो अब बन गया है। इसकी जड़ दृढ़ हो गई है। इसको मैं काट नहीं सकती।

"मेरा कहना था कि पाकिस्तान अभी एक सुकोमल पौदा है। इसकी जड़ को पानी देने वालों को रोका जाए तो सम्भव है कि जलाभाव के कारण वह कोमल पौदा सूखकर पेड़ न बन सके।

"उस महाशय का कहना था कि पाकिस्तान के सबसे बड़े पोशक महात्मा गाँधी हैं और बड़े-बड़े विद्वान् लोग उनको समझा-समझाकर हार गए हैं। मैं भला कैसे उनको समझा सकूँगी?

"यहाँ तक पहुँच मैं इस परिणाम पर पहुँची हूँ कि समझाने के अतिरिक्त अब कोई और उपाय करना चाहिए।"

"तो इसीलिए तुम लाहौर से भागने में जल्दी कर रही थी?" चेतनानन्द ने मुसकराते हुए पूछा।

"हाँ; मेरा विचार था कि मिस्टर जिन्ना की हत्या करने से यह सब झगड़ा समाप्त हो जाएगा और इसके लिए किसी को तैयार करना चाहिए।

"भारत में कोई तो माँ का प्यारा ऐसा मिल जाएगा, जो इतनी भयंकर घटना को, जो इस समय पंजाब में हो रही है, रोकने का उपाय करेगा। मैं उस आदमी को ढूंढने यहाँ आ रही थी।"

चेतनानन्द को ऐसा प्रतीत हुआ कि राधा का मस्तिष्क खराब हो चुका है। उसकी बातें पागलों की सी प्रतीत होती थीं। इससे उसका मुख गम्भीर हो गया और वह राधा की ओर देखते हुए पूछने लगा, "राधा! कहाँ ठहरी हो?"

"सब्ज़ी मण्डी कैम्प में! कृष्णराव जी रास्ते में मिल गए थे। वे वहाँ पहुँचा गए हैं।"

"पै समझता हूँ कि तुम यहाँ चली आओ। वहाँ का दुःख और दर्द देख तुम्हारा मस्तिष्क बिगड़ गया है।"

"सब मुझको पागल हो गई कहते हैं; पर चेतन भैया! मैं पागल नहीं हूँ। मैं इस बात की खोज में हूँ कि इस सब झगड़े का कारण जानूँ; उस कारण को ढूंढ उसको दूर करने का उपाय करूँ। आज हिन्दू समाज में मरों की क्रिया-कर्म करने वाले बहुत मिलते हैं। महात्मा गाँधी भी घावों

पर मरहम लगाने वाले बन घूम रहे हैं। पर मैं तो घाव करने वाले को पृथ्वी पर से मिटा देना चाहती हूँ। मुझको मरहम पट्टी करने में कोई तत्व नहीं मालूम होता। मैं तो घाव देखना ही नहीं चाहती।"

चेतनानन्द सोच रहा था कि राधा का मस्तिष्क तो अवश्य बिगड़ गया है, परन्तु पागल प्रायः गम्भीर अर्थ-युक्त बात किया करते हैं। इससे वह राधा को मज़ाक में उड़ाने के स्थान उसको और कहने में प्रोत्साहन देने लगा। उसने कहा, "राधा! जो आज पंजाब में हुआ है अथवा हो रहा है, वह कोई नवीन घटना नहीं है। यह बात पहले भी हुई है। इतिहास में इन घटनाओं का भारत में होना तब से आरम्भ हुआ है, जब से इस्लाम ने यहाँ पदार्पण किया है। यदि मैं यह कहूँ कि इस्लाम जहाँ-जहाँ भी गया है, वहाँ ऐसी घटनाओं को साथ लेकर गया है, तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। सिकन्दरिया का वृहत् पुस्तकालय जलाना, नालन्दा और तक्षशिला के विश्वविद्यालयों को गिराकर समतल कर देना; राजा धार की लड़कियों का अपहरण, धार की पूर्ण प्रजा का रोड़ी छोड़कर लाहौर की ओर जाना, महमूद गज़नवी का सैंकड़ों-सहस्रों की संख्या में भारतीयों को गुलाम बनाकर ले जाना, विधर्मियों पर जज़िया लगाना, ईरान और अन्य देशों में इस्लाम का अत्याचार और पराजितों को बल पूर्वक धर्म परिवर्तन करने पर विवश करना, ये सब घटनाएँ इस्लाम के साथ-साथ ही, जहाँ वह गया है, घटी हैं।"

"तो आपके कहने का अर्थ है कि इस्लाम ही वह विष-वृक्ष है, जिसका फल इतना भयंकर हुआ है?"

"हाँ।"

"तो इसका नाश होना चाहिए।"

"यह तुम्हारे किए से नहीं हो सकता।"

"क्यों?"

"तुम कैसे करोगी? तुम तो इसका उपाय भी नहीं जानतीं। तुम यह कर सकने में असमर्थ रहोगी।"

इसने राधा के मन में एक भारी चोट पहुँचाई। इस्लाम को ही इन सब का कारण मान वह अपने को निःसहाय और निरुपाय पाती थी। इसको एक देश अथवा स्थान से समाप्त कर देने से तो कुछ काम नहीं बनेगा। साथ ही यह किसी व्यक्ति-विशेष से सम्बन्ध नहीं रखता। यह तो एक विचार-धारा है। विचारधारा किसी व्यक्ति को समाप्त कर देने से समाप्त नहीं होती। इस विचार से वह गम्भीर विचार में पड़ गई और कुछ कह नहीं सकी।

चेतनानन्द उसको चुप देख कहने लगा, "राधा बहन! वास्तविक बात को न समझ सकने से ही हम इस मुसीबत में पड़े हुए हैं। हमने अँग्रेज़ी राज्य-काल में यह विचार अपने में उत्पन्न किया है कि हिन्दू अथवा मुसलमान होना कोई अन्तर उत्पन्न नहीं करता। एक देश में रहने से दोनों में कोई अन्तर नहीं होना चाहिए। यह विचार ही हमारे दुर्भाग्य का कारण बन गया है। एक समय मैं भी इस विचार को ठीक मानता था। हम में से अनेक अन्य भी थे, जो इसको ठीक मानते थे; परन्तु जो-कुछ अगस्त १९४६ से लेकर आज तक हुआ है, उसने हमारे इस विचार को निर्मूल, निराधार और अयुक्ति-संगत बना दिया है।"

(१०)

राधा कैम्प में ही रही। उसने पार्वती और चेतनानन्द का निमन्त्रण स्वीकार नहीं किया। ज्यों-ज्यों दिन व्यतीत होते गए और नये-नये निर्वासित लोग आते रहे, कैम्पों में दुःख-क्लेश, कष्ट बढ़ता गया और प्रबन्ध बिगड़ता गया।

सब्ज़ी मण्डी वाला कैम्प और कुछ प्राईवेट हिन्दुओं द्वारा खोले गए कैम्प सरकार की सुरक्षा में नहीं थे। इससे परिणाम बहुत विकट निकलना आरम्भ हो गया। अभी सितम्बर की पहली तारीख ही थी कि राधा के डेरे में से एक युवा विधवा, अपने एक ही बच्चे को वहाँ छोड़ लापता हो गई। उस दिन वह राधा से बातचीत करती रही थी। राधा को उसके मन में कोई विकार अथवा विशेषता प्रतीत नहीं हुई थी। दोपहर खाने के पश्चात्

वह अपने बच्चे के लिए कुछ लेने, कैम्प के बाहर गई और फिर लौट कर नहीं आई। बहुत ढूँढा गया पर उसका कुछ पता नहीं चला।

दो दिन पश्चात् उसका शव कैम्प से कुछ दूर जंगल में पड़ा मिला। इस पर कैम्प के लोग अपना-अपना अनुमान लगाने लगे। पोस्ट मार्टम करने पर पता चला कि उससे किसी ने व्यभिचार किया है और फिर उसका गला घोंटकर किसी ने मार डाला है। पोस्ट मार्टम के परिणाम ने तो और भी किंवदन्तियाँ फ़ैला दीं। इसी दिन कैम्प का एक बच्चा, छुरी से गला कटा हुआ, कैम्प से कुछ दूर पाया गया।

तीन सितम्बर को करोल बाग दिल्ली में, एक मेव, जो मुसलमान मेवों के कैम्प में से मिठाई खरीदने वहाँ आया था, एक हिन्दू हलवाई पर घातक आक्रमण कर बैठा। उसी दिन एक घटना बेर्यड रोड, नई दिल्ली में हो गई। एक सिक्ख लड़के पर, जो स्कूल से पढ़कर आ रहा था, एक मुसलमान ने छुरी से काक्रमण कर दिया।

इन समाचारों के विख्यात होने पर करोल बाग़ में पाँच सितम्बर को एक छोटा-सा हिन्दू-मुसलमानों में झगड़ा हो गया। इस झगड़े में कुछ मुसलमान लड़ने के लिए बन्दूकें ले आए। दुर्भाग्य से ये सब आक्रमण पंजाब से निर्वासित लोगों पर ही हुए। इस पर पाँच और छः सितम्बर की आधी रात को कुछ पठान हिन्दुओं पर आक्रमण करते पकड़े गए और पीटे गए। दूसरे दिन प्रातःकाल हिन्दुओं ने मुसलमानों पर सुसगठित रूप से आक्रमण कर दिया।

छः तारीख को तो मुसलमानों ने मस्जिदों, मकानों और अन्य रक्षित-स्थानों में मोर्चे बांधकर मुकाबिला किया। पहले तो मुसलमानों के झुन्ड-के-झुन्ड निकलकर हिन्दू महल्लों पर आक्रमण करते रहे, परन्तु सात सितम्बर को झगड़े का रूप बदल गया। करोल बाग, पहाड़ गंज, शीदी पुरा, सब्ज़ी-मण्डी, सदर बाज़ार इत्यादि मुसलमानी मुहल्लों पर हिन्दू लोग आक्रमण करने लगे और जो कुछ पंजाबी निर्वासित अपने साथ पंजाब में होता देख आए थे, वह सब-कुछ वहाँ मुसलमानों के साथ होने लगा।

दिल्ली एक भारी हत्या-क्षेत्र बन गया। मुसलमानों की दुकानें, मकान लूटे गये और कहीं-कहीं औरतों का भी अपहरण हुआ। दिल्ली नगर से यह झगड़ा दिल्ली के गाँवों में भी फैल गया। आठ, नौ और दस सितम्बर को यह युद्ध दिल्ली भर में चलता रहा। परमात्मा ने, दिल्ली के शासकों को उस भयंकर दृश्य का, जो पंजाब के नगरों और गांव में छः मास से हो रहा था, नमूना उनकी आंखों के सम्मुख उपस्थित कर दिया।

इस गृह-युद्ध का बल आठ और नौ सितम्बर को बहुत अधिक रहा। आठ और नौ सितम्बर को मुसलमान मुकाबिला करने का पूरा यत्न करते रहे। धीरे-धीरे उनका विरोध शिथिल पड़ता गया और दस सितम्बर को मुसलमान दिल्ली से भागने आरम्भ हो गए।

इस झगड़े के आरम्भ होते ही, महात्मा गाँधी को एस० ओ० एस० भेजा गया और वे ग्यारह सितम्बर को दिल्ली चले आये। उन्होंने इस झगड़े को बन्द कराने का सिर तोड़ यत्न किया और साथ ही फौज और पुलिस की सहायता से झगड़े को शान्त करने का यत्न होने लगा।

बारह सितम्बर से झगड़ा शान्त होना प्रारम्भ हो गया। बीस सितम्बर तक नगर में पूर्ण शान्ति स्थापित हो गई। इस पर भी मुसलमानों का नगर से जाना, पीछे भी चलता रहा।

इस सब झगड़े में जगदेवसिंह और उसके साथी भारी भाग ले रहे थे। उन्होंने अपना कार्य अमृतसर जिला से आरम्भ किया था और वहाँ से गुरदास पुर, पठानकोट, काँगड़ा, जालन्धर, होशियारपुर, लुधियाना, पटियाला, नाभा, मलेर कोटला इत्यादि स्थानों से मुसलमानों को निकालते हुए दिल्ली में आए थे। मुसलमानों के पिछले एक वर्ष से अधिक के व्यवहार से हिन्दू आतुर बैठे थे। केवल उनका नेतृत्व करने वाला कोई नहीं था। यह कमी जगदेवसिंह के साथी पूरी कर देते थे। एक जिला में केवल चार-पाँच व्यक्ति आग लगाने के लिये पर्याप्त होते थे। वे जाकर कार्य आरम्भ करते थे। प्रायः पश्चिमी पंजाब से आया हुआ प्रत्येक नर-नारी जानता था कि किस प्रकार मुसलमान उन पर आक्रमण कर, उनको घरों से निकाल, उनके बाल

बच्चों की हत्या करते थे। उनका अनुकरण करना उनके लिए कुछ भी कठिन नहीं हुआ।

जगदेवसिंह गुरुद्वारा सीसगंज से प्रभात को जप जी साहब का जप कर निकला ही था कि उसको एक साथी, कमर में पाँच फुट लम्बी कृपाण बांधे गुरुद्वारे की ओर आता दिखाई दिया। जगदेवसिंह ने उसको 'वाहे गुरु की फ़तेह' बुलाई, तो वह हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। उसने कहा, "महाराज ! सुना है कि महात्मा गांधी आज कलकत्ता से आ रहे हैं।"

"तो ?"

"वे हमारे काम को पूरा होने से पहिले ही रोक देंगे।"

"इसमें हम कुछ भी नहीं कर सकते। इस पर भी दिल्ली मुसलमानों से खाली हो जाती तो अच्छा था।"

"आज्ञा हो तो कार्य को और भी तेजी से चलाया जाए ?"

"नहीं। हमको अपना ध्यान अब सहारनपूर और मेरठ की ओर करना चाहिये। वहाँ भी लाखों लोगों के लिए स्थान बनाना है।"

"जैसी आज्ञा हो।"

जगदेवसिंह गुरुद्वारे से चल रेल के स्टेशन की ओर चल पड़ा। वहाँ ट्रेनों की ट्रेनें भरी आ रही थीं। लोग नहीं जानते थे कि कहाँ जायँ। इस कारण प्लैटफॉर्म, ड्योढ़ी, बरामदे, वेटिंग रूम, अभिप्राय यह कि स्टेशन की एक-एक इंच जगह, निर्वासित भाइयों से भरी हुई थी।

जगदेवसिंह ने वहाँ दो स्वयंसेवकों को कहा, "लोगों को यहाँ से निकालना चाहिए। उनको कहना चाहिये कि मुसलमानों से खाली किए मकानों पर अधिकार कर लें।"

यह समझाकर वहाँ से चाँदनी चौक घण्टा घर की ओर गया। बाजार में दुकानें बन्द थीं और हिन्दू लोग अपनी-अपनी दुकानों के बाहर यह लिख कर कि यह दुकान हिन्दू की है, बैठे थे। उनको भय था कि कहीं उनकी दुकान मुसलमान की मान कर लूट न ली जाए।

वहाँ कुछ स्वयंसेवक उसको मिले। उसने उनको यह समझाया कि

मुसलमानों की दुकानों पर अधिकार जमाना चाहिए।

"लोग अभी डरते हैं।" एक स्वयंसेवक का कहना था।

"उनको निर्भय कर दो। एक-दो दुकानों पर स्वयं अधिकार जमा लो। जिससे उनको पता चले कि वे भी ऐसा कर सकते हैं। देखो भाई मोहन !" जगदेवसिंह ने कान के समीप मुँह ले जाकर कहा, "यदि यह अधिकार चार-पाँच दिन के भीतर न किया गया तो पीछे करना कठिन हो जाएगा। सरकार इन मकानों पर अपना अधिकार कर भागे हुए मुसलमानों को पुनः बुलाकर उनमें बिठा देगी। इससे हमारा पूर्ण प्रयत्न विफल हो जाएगा।"

मोहन ने सिर हिलाकर जगदेवसिंह की बात का समर्थन किया। जगदेव सिंह वहाँ से चल खारी बावली पहुँच गया। मस्जिद फतेहपुरी के सामने फौजियों की चौकी पड़ी थी और मस्जिद में सैंकड़ों मुसलमान शरण ले रहे थे। जगदेवसिंह के मन में आया कि मस्जिदों में सार्वजनिक लाभ के कार्य आरम्भ कर देने चाहिएँ। वह फतेहपुरी मस्जिद के सामने खड़ा यह विचार कर रहा था कि चेतनानन्द मोटर में वहाँ से गुज़रता दिखाई दिया। जगदेवसिंह ने हाथ खड़ा कर संकेत किया और उसको रोक लिया।

चेतनानन्द ने मोटर खड़ी की और जगदेवसिंह को बीच में बैठा लिया। जगदेवसिंह ने पहला ही प्रश्न यह किया, "किधर जा रहे हैं ?"

"डॉक्टर वर्मा को छोड़ने आया था। वे पार्वती देवी की मरहम पट्टी करने आते हैं। आप यहाँ क्या कर रहे हैं ?"

"मैं इस विशाल मस्जिद को देख मन में विचार कर रहा था कि यहाँ एक विद्यालय खोल दिया जाय तो कैसा रहे।"

"सत्य नारायण का मन्दिर क्यों नहीं खुलवा देते। खुदा के घर को भगवान का निवास बनाना अच्छा नहीं रहेगा क्या ?"

"यह तो वही बात होगी, जो औरंगज़ेब करता था।"

"बात यह है कि परमात्मा की भक्ति के स्थान को सांसारिक कार्य में लगाना उचित नहीं होगा। हमको तो भगवान् की पूजा में भावना को बदल देना है, न कि उसको मिटाना है।"

जगदेवसिंह निरुत्तर हो गया। इस पर चेतनानन्द ने कहा, "पर यह कर सकना अब लोगों के वश की बात नहीं रही। देखते नहीं, मस्जिद के सम्मुख फौजी पहरा बैठा दिया गया है।"

"देख रहा हूँ। साथ ही यह भी जानता हूँ कि वर्तमान सरकार मुसलमानों को जीवित रखने के लिए पूर्ण यत्न करेगी। परन्तु यह हो नहीं सकेगा। भारत की मस्जिदें खुदापरस्ती के लक्षण नहीं है। ये उस अत्याचार और पक्षपात का चिह्न हैं, जो भारत के हिन्दुओं के साथ सात सौ वर्ष से होता आ रहा है। पिछले दिनों में मस्जिदें मुसलमानों के डायरेक्ट ऐक्शन की तैयारी के केन्द्र बनी रही हैं। इन खुदा के घरों में निर्दोषों के पेट में छुरा घोंपने का अभ्यास होता रहा है। ऐसे स्थानों की रक्षा सरकार अधिक काल तक नहीं कर सकती।"

"महात्मा गाँधी आज दिल्ली आ गए हैं?"

"सुना है वे यहाँ इसी कारण बुलाये गए है कि सरकार के कुप्रबन्ध और नेताओं की अदूरदर्शिता को अपनी महानता के साए तले छिपा लें। महात्मा गाँधी सदैव अपने चेले-चाँटों की भूलों को छिपाने के लिए अपनी छाती तान सामने खड़े हो जाते हैं।"

इस समय चेतनानन्द बारह खम्बा रोड पर पहुँच गया। वह जगदेवसिंह को कोठी में ले गया। चार मास पूर्व अर्ध-पागलपन की अवस्था में जगदेवसिंह को चेतनानन्द इसी कोठी में लाया था और उसको सान्त्वना दे तथा अपने मन में उठ रहे तूफ़ान को निकालने का मार्ग प्रदर्शन कर उसको चेतना प्रदान कर सका था। इस पर भी वह नहीं जानता था कि इस छोटी सी-घटना का परिणाम इतना विकट होगा कि लाखों की संख्या में लोग भारत छोड़ पाकिस्तान जाने पर विवश हो जाएँगे। मई मास में मथुरा, अलवर, भरतपुर इत्यादि के मेव दिल्ली पर आक्रमण कर इसको हिन्दुओं से खाली करने के स्वप्न देख रहे थे। जून मास में दिल्ली के मुसलमान तीन जून की घोषणा से असन्तुष्ट हो दिल्ली में अस्त्र-शस्त्र संग्रह कर महाविप्लव करने की योजना बना रहे थे। जुलाई और अगस्त के

प्रारम्भ में दिल्ली, मेरठ, सहारनपुर इत्यादि की पुलिस ने यह षड्यंत्र किया था कि इसको मुसलमानों के संगठन का केन्द्र बना पूर्वी पंजाब को पाकिस्तान के साथ मिलाने का यत्न करें। ये सब मनसूबे जगदेवसिंह के प्रयास से विफल हो गए। पूर्वी पंजाब मुसलमानों से रिक्त हो गया। लाखों की संख्या में ये लोग पाकिस्तान को भाग गए। पश्चात् दिल्ली इत्यादि स्थानों के मुसलमान, अपना सम्पर्क पाकिस्तान से नहीं बना सके। वे अपने को अरक्षित अनुभव करने लगे। इस कारण जब यहाँ हलचल उत्पन्न हुई, तो मेव तथा दिल्ली के मुसलमान, सरकार से पूर्वी पंजाब पार करने में सहायता माँगने लगे। अब दिल्ली के मुसलमान अपने घरों को छोड़ पुराने किले और हुमायूँ के मकबरे में एकत्रित हो रहे थे।

चेतनानन्द यह जानता था कि यदि वातावरण पहले प्रस्तुत न होता तो जगदेवसिंह अपनी योजना में सफल न होता। परन्तु यह तो सदैव और सर्वत्र ही होता है। परिस्थितियाँ अनुकूल हों तो महान् पुरुषों के प्रयास सफल होते हैं। परिस्थितियों की अनुकूलता उत्पन्न करने में किसी का वश नहीं चलता। हाँ, अनुकूल परिस्थितियों से लाभ उठाने में ही महापुरुषों का चातुर्य होता है।

चेतनानन्द जगदेवसिंह को एक महान् कार्य का कर्ता मान सम्मान की दृष्टि से देखता था। उसने जगदेव सिंह को लाला बनारसी दास की कोठी के गोल कमरे में बैठाकर चाय पीने के लिए पूछा। उसने उत्तर दिया, "मैं आज सब्जी मंडी भोजन कर रहा हूँ।"

"वहाँ क्या है ?"

"एक राधा देवी है। वे मेरी भाँति पिछले उपद्रवों में चोट खा अर्द्ध-पागलपन की अवस्था में हो गई हैं। मेरा उससे परिचय जालन्धर में हुआ था। मैहरा साहब की कोठी में वह ठहरी हुई थी और मुझको कहती थी कि उसको एक पिस्तौल मिल जाए तो वह जिन्ना को गोली मार पाकिस्तान के मूल को भस्म कर देगी। मैंने उसको वहाँ कुछ बातें कहीं थीं, जिनका उसके मन पर भारी असर हुआ था। कल वह मुझको सिविल लाईन्ज में

मिल गई। उसने मुझको पहिचान कर आज दोपहर भोजन के लिए निमन्त्रण दिया है।"

"वह भोजन कहाँ से देगी ?"

"यही तो देखना है कि वह कहाँ तक पागल हो चुकी है ?"

"तो आप भोजन यहाँ कर लीजिए; वहाँ उसने प्रबन्ध किया होगा तो थोड़ा-बहुत खाकर उसका मान रख लीजियेगा।"

"नहीं; मैं वहाँ ही खाऊँगा। वह अभी भी मुझसे पिस्तौल माँग रही है। मैंने उसको एक देने का वचन दिया है।"

"यह बात तो बहुत ही खराब है। एक अनधिकारी के हाथ में पिस्तौल जैसी वस्तु देने से उसका दुरुपयोग हो सकता है।"

"यही अवस्था मेरी थी। उस समय मेरी योजना को लोग पागलपन का परिणाम समझते थे। परन्तु किसी ने भरोसा कर मेरे हाथ में दो सौ बन्दूकें और दस हज़ार कारतूस दे दिये थे। शायद आज वह अपने किए का पश्चात्ताप कर रहा होगा। पर मैं समझता हूँ कि उसके इस विश्वास ने लाखों लोगों का भला किया है और लाखों के लिए भलाई का मार्ग खोल दिया है।

"मेरे मन ने कहा है कि इस औरत को एक पिस्तौल देना चाहिए। क्या जाने वह ऐसा कार्य कर दे, जिसका प्रभाव देश के हित में हो सके।"

"एक नासमझ के हाथ में शस्त्र देना कैसे हितकर हो सकता है ?"

"यही तो निर्णय नहीं कर सका कि वह समझदार है अथवा ना-समझ। कुछ भी हो, मैं जा रहा हूँ और उसका विचार जानने का यत्न करूँगा।"

चेतनानन्द समझ नहीं सका कि उसको क्या सम्मति दे।

(१२)

पार्वती की अवस्था वास्तव में अति शोचनीय थी। हवाई जहाज में लाना भी इतना सुगम सिद्ध नहीं हुआ, जितना अनुमान लगाया गया था।

परन्तु लाहौर में रहना तो असम्भव-सा ही था। वहाँ मरहम पट्टी करने लिए कोई डॉक्टर नहीं रह गया था।

जब पार्वती दिल्ली में आई और डाक्टरों ने उसको देखा तो वे उसका घाव देख आशंका से सिर हिलाने लगे थे।

डॉक्टरों के चले जाने के पश्चात् पार्वती ने चेतनानन्द से पूछा, "डॉक्टर क्या कहते हैं?"

"सब ठीक होगा पार्वती!" परन्तु इतना कहते-कहते उसकी आँखें डबा-डबा आईं।

पार्वती ने देखा और समझ गई। इस पर उसने स्त्री-सुलभ साहस पकड़ कर कहा, "यह क्या हो गया है आपको? मेरा मन कहता है कि मैं नहीं मरूँगी। मैंने अपने जीवन में अभी एक कार्य करना है। बिना उसको सम्पन्न किये मेरी मृत्यु नहीं होगी।"

चेतनानन्द इस तीव्र वेदना में पार्वती को इस प्रकार बातें करते देख अपनी दुर्बलता पर लज्जित हुआ और तुरन्त बोला, "मैंने कब कहा है कि तुम जिओगी नहीं? मैं तुम्हारे कष्ट और पीड़ा की बात सोच रहा था।"

केवल मात्र मानसिक बल के आधार पर पार्वती घाव में पस पड़ जाने से उठे उपद्रवों को शान्त करने में सफल हो सकी थी। वह बाईस अगस्त को दिल्ली में पहुँची थी और सितम्बर की पन्द्रह तक निश्चित रूप में वह अपने कष्टों पर विजय पा सकी थी। इस काल में कई बार अवस्था शोचनीय हो गई, परन्तु अन्त में डॉक्टर वर्मा ने कह दिया, "अब किसी प्रकार का भय नहीं है।"

चेतनानन्द इस परिवर्तन से बहुत प्रसन्न था और वह अपने समय और ध्यान को पार्वती पर लगाता चला आ रहा था। अब उसका मन हलका हुआ तो वह अपने आस पास होने वाली घटनाओं पर विचार करने तथा उनमें भाग लेने लगा था।

इतने दिन के पश्चात् चेतनानन्द को अनिमादेवी का स्मरण हुआ। उसने इन्द्रजीत से उसके विषय में पूछा तो उसको पता चला कि उसका

विवाह एक गिरीश बाबू से हो गया है और वह उनके साथ कलकत्ता चली गई है।

चेतनानन्द को इस समाचार से जहाँ प्रसन्नता हुई, वहाँ आश्चर्य भी। उसने पूछा, "गिरीश बाबू यहाँ आये थे क्या ?"

"हाँ; उसके माता पिता भी साथ थे। वे युरोप से लौट रहे थे। दिल्ली में पहुँच अनिमा देवी से मिलने आए तो विवाह का निश्चय हो गया। विवाह के पश्चात् वे बहू को साथ ही ले गये।"

"गिरीश बाबू की आँखें खराब हो गई थीं न ?"

"वे ठीक हो गई थीं। अब वे ऐनक लगा कर लिख-पढ सकते है।"

इस पर चेतनानन्द ने अनिमा का पता पूछकर उसको बधाई लिखी और इस अवसर पर भेंट भेजी। इस पर अनिमा का उत्तर आया। उसने लिखा, "भाई चेतानानन्द जी ! आपकी भेंट के लिये बहुत धन्यवाद करती हूँ। वे जब दिल्ली में आए तो आपसे मिलने के लिए बहुत उत्सुक थे। आपको हमने निमन्त्रण भी भेजा था, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि लाहौर में डाक की दुर्व्यवस्था के कारण आपको पत्र नही मिला।

"भगवान् की विचित्र महिमा है कि मेरा उनसे विवाह, एक अनहोनी बात सम्पन्न हुई है। और अब उनकी माता मुझसे स्नेह करने लगी है। भैया ! आशीर्वाद दो कि मैं इस जीवन की परीक्षा में सफल हो सकूं।"

इस प्रकार अनिमा की बात जान चेतनानन्द अति प्रसन्न हुआ और उसके पिछले जीवन की बात स्मरण कर गम्भीर विचार में मग्न हो गया।

जिस दिन चेतानानन्द की जगदेवसिंह से भेंट हुई थी, उसी दिन महात्मा गाँधी दिल्ली आ पहुँचे थे। वे कलकत्ता गये हुए थे और वहाँ से नोआखाली जाने का विचार कर रहे थे, परन्तु पाकिस्तान सरकार ने उनको पाकिस्तान घुसने की स्वीकृति नहीं दी। महात्मा जी को इससे भारी दुःख हुआ। वे अपने विचारों को कार्य-रूप में परिणत नहीं कर सके थे। पाकिस्तान की सरकार से अन्तिम उत्तर पा वे वर्धा जाने का विचार कर रहे थे कि दिल्ली से उनको बुलावा आ गया। वे वर्धा जाने के स्थान दिल्ली

आ पहुँचे।

अपनी प्रार्थनाओं में, अपनी, समाचार-पत्रों के संवाददाताओं से बात-चीत में अथवा अपने वक्तव्यों में, वे दिल्ली में हो रहे झगड़े को शान्त करने का यत्न करने लगे। यह कहना कठिन है कि इस झगड़े के शान्त होने का श्रेय महात्मा गाँधी के इस प्रचार को मिलना चाहिए, अथवा सरकार के मुसलमान फ़ौज की नियुक्ति को? एक बात निश्चित है कि महात्मा गाँधी के वक्तव्यों से कुछ हिन्दुओं के क्रोध की सीमा नहीं रही।

महात्मा गाँधी का यह प्रयास था कि भारत के मुसलमान न जाने पाएँ। उनके मन में विश्वास बिठाने में उन्होंने प्रत्येक प्रकार का प्रयत्न किया था। इस समय हिन्दू पश्चिमी पाकिस्तान से धड़ाधड़ आ रहे थे। उन के आने को तो हिन्दू एक न टल सकने वाली मुसीबत मान सहन कर रहे थे, परन्तु इस अवसर पर महात्मा गाँधी यह यत्न कर रहे थे कि भारत से एक भी मुसलमान न जाने पाए। इस समय बन्नू से आने वाली निर्वासित हिन्दुओं से भरी रेलगाड़ी, गुजरात के रेल के स्टेशन के समीप रोककर, उसकी सब पुरुष सवारियों को मारने, स्त्रियों का अपहरण करने और माल लूटने के समाचार ने हिन्दुओं के मन में वह आन्दोलन उत्पन्न किया कि अति कठोर हृदय भी भयभीत हो गए।

इस दिन सायंकाल के समाचार-पत्र में अमृतसर स्टेशन पर एक गाड़ी नर-रक्त और शवों से भरी हुई पहुँचने का समाचार मिला। चेतनानन्द इस पत्र को पार्वती के पलंग के समीप बैठा पढ़ रहा था। इस समाचार को पढ़ते-पढ़ते उसके मुख का रंग उड़ गया और समाचार-पत्र उसके हाथ से नीचे गिर पड़ा। पलंग के दूसरी ओर पार्वती के पिता प० श्रीधर पाठक बैठे एक पुस्तक पढ़ रहे थे। दो बार चेतनानन्द ने समाचार-पत्र उठाया, परन्तु वह पुनः उसके हाथ से गिर गया। इसने पार्वती और उसके पिता का ध्यान उस ओर आकर्षित कर दिया। दोनों ने चेतनानन्द का पीतवर्ण मुख देखा और चिन्ता में उसको तीसरी बार समाचार-पत्र उठाते देखने लगे पंडित जी से नहीं रहा गया। उन्होंने पूछ ही लिया, "क्या बात है

चेतनानन्द ?"

"एक अति भयंकर समाचार छपा है ।" इतना कह उसने काँपते हाथों से पत्र को पढ़कर समाचार सुनाया। सुनने वाले अवाक् मुख देखते रह गए और कितनी ही देर तक कुछ कह नहीं सके।

चेतानानन्द बहुत उदास चित्त उठ खड़ा हुआ। पार्वती उसके मन की अवस्था को समझ बोली, "पर यह तो होना ही था। हमने भी कुछ कम नहीं किया ।"

चेतनानन्द ने पुनः बैठते हुए कहा, "यह तुम महात्मा गाँधी की कल की प्रार्थना के शब्दों को तोते की भाँति दुहरा रही हो ।"

"तो क्या यह सत्य नहीं है ?"

"नहीं; जो कुछ यहाँ हुआ है, वह इस घटना से तुलना नहीं रखता। यहाँ से मुसलमानों को निकालने का यत्न किया गया है। वहाँ निकलते हुओं की हत्या की गई है। मैं दोनों में भारी अन्तर समझता हूँ। एक केवल राजनीतिक बात है, दूसरी साम्प्रदायिक। एक में उन लोगों को देश से निकालने का प्रयास है, जो इस देश के हितेच्छु नहीं माने जाते; दूसरे में अपनी इच्छा से देश छोड़कर जाते हुओं की हत्या है। यह देश की रक्षा के हित से नहीं, यह तो केवल नृशंसता का सूचक है ।"

"पर" पण्डित जी ने कहा, "इस भेद को तो महात्मा जी को समझ लेना चाहिए ।"

"ठीक है। पर यदि वे वास्तविक को न समझने का निश्चय कर चुके हैं, तो कैसे समझ सकेंगे ? उन्होंने कल यह कहा था, 'जहाँ यह सत्य है कि पाकिस्तान में अल्प संख्यक जातियों अर्थात् सिक्ख और हिन्दुओं से बुरा व्यवहार हुआ है, वहाँ यह भी उतना ही सत्य है कि पूर्वी पंजाब में भी अल्प संख्यकों अर्थात् मुसलमानों के साथ भी वैसा ही व्यवहार हुआ है। अपराध सोना तोलने की तराजू पर नहीं तोला जाता। मेरे पास ऐसे आँकड़े नहीं कि मैं दोनों पक्षों के अपराधों को माप-तोल सकूँ। इतना जानना पर्याप्त है कि दोनों पक्ष अपराधी हैं।' यह कथन

न केवल सत्यता से दूर है, प्रत्युत वास्तविक अपराधी को मुक्त कराने का प्रयास है।

"दोनों पक्षों में अपराध नापने का तराजू महात्मा गाँधी के पास नहीं, परन्तु उनके पास कैलण्डर तो रहना चाहिए, जिससे वे जान सकते कि हत्याकाँड किसने आरम्भ किया था। क्या वे, दिल्ली में ऐरेबिक कॉलेज में हुई मुस्लिम लीगी कन्वेन्शन, जो ऐप्रिल १९४६ में हुई थी, की तिथि को भूल गए हैं अथवा क्या वे बम्बई में पास हुए डायरेक्ट ऐक्शन के प्रस्ताव की तिथि को नहीं जानते ?

"फिर यह आज की घटना का प्रतिकार यदि यहाँ किसी ने किया तो अनर्थ हो जावेगा। जाने वालों की हत्या का एक ही अर्थ है। वह यह कि हत्या उद्देश्य बन गया है। साधन नहीं, साध्य बन गया है। मैं तो यह विचार कर काँप रहा हूँ कि जगदेवसिंह के मस्तिष्क में कहीं यह समा गया कि हिन्दुओं को भी वही करना चाहिए, जो मुसलमानों ने गुजरात में किया है, तब तो अनर्थ हो जाएगा।"

पण्डित श्रीधर चेतनानन्द की युक्ति को और उसके मन के भय को समझ रहा था। इस कारण उसने यह कहा, "मैं तो समझता हूँ कि महात्मा जी को यह हिन्दू-मुसलमान के प्रश्न पर विचार करना छोड़ देना चाहिए। वे आज तक कभी भी इस झगड़े की गहराई तक नहीं जा सके।"

"यही तो कठिनाई है। वे इस बात को छोड़ेंगे नहीं और जब भी वे अपने हिन्दू-मुसलमान में मेल कराने के प्रयत्न में असफल होते हैं, वे दोष हिन्दुओं पर डालते जाते हैं। उनके मस्तिष्क में यह कभी नहीं आता कि उनके उपाय ही गलत तो नहीं।

"मैं समझता हूँ कि पूर्व इसके कि भारत में, और पाकिस्तान तथा भारत के सम्बन्ध में, शान्ति स्थाति स्थापित हो सके, महात्मा जी तथा उन्हीं की नीति का अवलम्बन करने वालों को इस विषय में चुप कर जाने के लिए विवश करना पड़ेगा।"

"यह कैसे होगा ?"

"प्रकृति को यदि भारत का तथा भारत में बसे हिन्दू समाज का हित करना है, तो वह महात्मा गाँधी को चुप करा देगी। इनके तथा इनके विचार के लोगों के रहते भारत में शान्ति स्थापित होती दिखाई नहीं देती।"

(१२)

चेतनानन्द और उसके साथी, जो कई महीनों से पंजाब और विशेष रूप में लाहौर के हिन्दुओं की रक्षा के लिए भाग-दौड़ कर रहे थे, धीरे-धीरे दिल्ली में एकत्रित होते जा रहे थे। उनके कार्य की सफलता आँकने का कोई साधन नहीं था। यदि वे लोग वहाँ सुरक्षा-समिति नहीं बनाते और उस सुरक्षा-समिति द्वारा आक्रमणकारियों पर बन्दूकें और बम्ब नहीं चलाते, तो क्या होता कहना कठिन है। इतना तो सब मानते हैं कि ये लोग एक ओर तो बहु-संख्यक जाति का विरोध कर रहे थे; दूसरे, वह बहु-संख्यक जाति उस समय की सरकार से सहायता पा रही थी। फिर उनके प्रयत्नों का विरोध हिन्दू कांग्रेसी भी कर रहे थे। सबसे बड़ी बात यह थी कि देश के नेता महात्मा गाँधी और उनके साथी उनके कामों की निन्दा करते रहते थे। इस पर भी ये युवकों की मंडली, जान हथेली पर रख अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए संलग्न थी

विरोधी शक्तियाँ प्रबल थीं। इस कारण इस मंडली के युवक एक-एक कर घायल हो, पकड़े जाकर अथवा मृत्यु के ग्रास होकर कार्य-क्षेत्र से बाहर होते जाते थे। कोई दिन नहीं जाता था, जब किसी-न-किसी का क्षेत्र से बाहर होने का समाचार न मिला हो। एक दिन नीना का एक पत्र श्रीनगर काश्मीर से एक स्वयंसेवक लाया। उसमें रामचन्द्र राव के विषय में पाकिस्तान सरकार से पूछ-गीछ करने का आग्रह किया गया था। वह स्वयंसेवक पत्र देकर पूछने लगा, "क्या आप इस पत्र के लिखने वाली को जानते हैं ?"

चेतनानन्द ने पत्र पढ़ा और नीना को स्मरण कर कहा, "हाँ; पर

तुम यह पत्र मेरे पास क्यों लाए हो ? क्या उसने मेरे विषय में कुछ कहा है ?"

"जी, बात इस प्रकार हुई कि श्रीनगर में स्त्रियों के कैम्प में यह स्त्री अन्य शरणार्थियों की सेवा-शुश्रूषा करती है। मेरी बहन भी वहाँ काम करती है। नीना देवी ने मेरी बहन को पंजाब और लाहौर की जान पूछा कि क्या वे श्री चेतनानन्द अथवा श्री रामचन्द्र राव को जानती है ?

"मेरी बहन आपको नहीं जानती थी। इस कारण उसने अपनी अनभिज्ञता बताते हुए कहा कि वे मुझसे पूछ कर बता सकती हैं। इस पर नीना देवी ने अपनी पूर्ण कथा मेरी बहन को सुनाई, जो अति हृदय विदारक है। मेरी बहन ने यह कथा मुझको बताई। इससे मैं उसमें रुचि लेने लगा। मैं दिल्ली आ रहा था तो नीना देवी ने मुझको यह पत्र दिया कि कदाचित् कोई आपसे परिचित लाहौर का रहने वाला मिले तो मैं उसको यह दे दूँ।

"मैं दिल्ली में कई दिन से आया हुआ हूँ। यहाँ अपने कार्यालय से पूछा तो पता चला कि आपको यहाँ के सब लोग जानते हैं। इस प्रकार यह पत्र आपके पास ले आ सका हूँ।"

चेतनानन्द ने, रामचन्द्र राव के विषय में जो-कुछ अभी तक विदित हो सका था, बता दिया, "यह ठीक है कि रामचन्द्र राव रावी के पुल पर पकड़ लिया गया था, परन्तु बहुत पूछने पर भी पाकिस्तान सरकार उस के कहीं होने पर प्रकाश नहीं डाल सकी। पाकिस्तान सरकार का कहना है कि एक काफिला हिन्दुओं का ग्रांड-ट्रंक रोड पर चलता हुआ उस तिथि को रावी पार करने के लिए आया था, परन्तु जब उनकी तलाशी लेने का यत्न किया गया तो उन्होंने बलपूर्वक पुल पार करने का यत्न किया। इस पर पुल के संरक्षकों ने उन पर गोली चला दी और काफ़िला डर कर वापिस भाग गया। अभी तक पता नहीं कि वह कहाँ गया है। पुल के संरक्षकों की गोलियों से पाँच-छः लोग मारे गए थे, जिनके शव रावी नदी में बहा दिये गए थे।

"रामचन्द्र के पकड़े जाने का समाचार उस काफ़िले के लुटते-पिटते,

मरते-खपते जम्मू पहुँच जाने पर यहाँ पहुँचा है। उसी समय से हमने रामचन्द्र राव की खोज आरम्भ कर दी थी, परन्तु परिणाम कुछ नहीं निकला। ऐसा प्रतीत होता है कि वह पुल पर ही मार डाला गया था और उसका शव भी अन्य शवों के साथ रावी की भेंट कर दिया है।

"नीना देवी का पता आप दे दें। मैं उसको यहाँ लाने तथा उसको उसके माता-पिता के पास पहुँचाने का यत्न करुँगा।"

चेतनानन्द ने श्रीनगर नीनादेवी को लिखा। रुपया भी भेजा और वहाँ से किसी आने वाले के साथ उसको दिल्ली आ जाने को लिखा। नीना दिसम्बर के आरम्भ में दिल्ली आ गई। इस समय पुनः लाहौर के साथियों को एकत्रित करने का यत्न किया गया। पचास प्रतिशत से अधिक अपनी आर्थिक अवस्था बिगड़ जाने के कारण, शारीरिक स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण अथवा संसार छोड़ जाने के कारण उपस्थित न हो सके थे। जो एकत्रित हुए, वे अपनी अवस्था सुधारने की चिन्ता में थे। इस कारण अपने को दिल्ली में स्थापित करने के अतिरिक्त और किसी बात पर विचार नहीं हो सका। मकान, दुकान, नौकरी अथवा कोई काम-धन्धा ढूंढने में सब की रुचि थी। चेतनानन्द का भी यह विचार था कि देश की इस परिस्थिति में पाकिस्तान से निर्वासित हिन्दुओं को स्थापित करना प्रथम कार्य है और इस विषय में कुछ-न-कुछ करना चाहिए।

मुसलमानों से रिक्त किए मकानों और दुकानों पर अधिकार जमाना, सड़कों के किनारे अस्थायी रूप में दुकान लगा व्यवसाय चलाना, सरकारी कार्यालयों में मुसलमानों से रिक्त स्थानों पर पंजाब से निर्वासित भाईयों की नियुक्ति कराना कार्य थे। इस कार्य के लिए एक सहायक समिति बनाकर कार्य आरम्भ कर दिया गया।

इस पर भी कुछ लोग थे, जो इतने से संतुष्ट नहीं थे। उनको तो कांग्रेसी सरकार की प्रत्येक बात दोषपूर्ण प्रतीत होती थी। ऐसे लोगों में राधा, जगदेवसिंह और उसके साथी थे।

जगदेवसिंह जब राधा से मिला, तो उसको राधा में प्रतिकार की प्रचंड

अग्नि जलती दिखाई दी। उस अग्नि के ताप में वह भी पिघल गया और पुनः प्रतिकार की भावना में तपने लगा।

राधा का कहना था, "यदि यह बात केवल मेरे साथ होती तो मेरा अधिकार नहीं था कि अपने व्यक्तिगत लाभ-हानि के लिये पूर्ण जाति के कार्य-क्रम में विघ्न डालती; परन्तु यह तो एक स्त्री की अथवा एक पुरुष की बात नहीं। लाखों नर-नारियों का प्रश्न है। कोई मूर्ख ही इसकी अवहेलना कर सकता है।

महात्मा गांधी, जब से दिल्ली में आये हैं, नित्य प्रार्थना के समय हिन्दू-मुसलमान झगड़े के विषय में कुछ-न-कुछ कहते है। उनका कहना यद्यपि ऐसे शब्दों में होता है, जिनके अर्थ दो होते हैं, तो भी जनता उनसे यही अर्थ लेती है कि वे हिन्दुओं को भारी अपराधी मानते है।"

जगदेवसिंह राधा के इन निचारों से प्रभावित हुए बिना न रह सका। अपने परिवार वालों की हत्या और अपने गाँव में किये मये बलात्कारों के दृश्य साक्षात् हो उसकी आँखों के सामने आने लगे थे। उसका मुख क्रोध से तमतमा उठा था और उसके भुजदंड फड़कने लगे थे।

विधान-सभा यह निश्चय करने लगी थी कि भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी होगी। महात्मा गांधी इसमें कूद पड़े और हिन्दी लिपि के साथ-साथ फारसी लिपि के लिए यत्न करने लगे। यद्यपि जगदेवसिंह नागरी लिपि नहीं जानता था, इस पर भी गुरुमुखी लिपि जानने के कारण उसे हिन्दी की विशेषताओं का पता था। वह फारसी भी जानता था और उसके दोषों से भी परिचित था।

परन्तु राधा का कहना था, "महात्मा जी दोनों लिपियों की उत्तमता और निकृष्टता की बात तो करते नहीं। वे तो आज देश के प्रत्येक प्रश्न को हिन्दू और मुसलमान के झगड़े के दृष्टिकोण से देखते हैं।"

जगदेवसिंह भी यही विचार कर रहा था कि भाषा और लिपि का प्रश्न सामाजिक अवस्था से सम्बन्ध नहीं रखता। क्या महात्मा गांधी आने वाले भविष्य को भी वर्तमान के कारण हीन करना चाहते हैं? यदि यह बात

है तो इस वर्तमान को, भविष्य को सुधारने से पूर्व, ठीक क्यों न किया जाय ? यदि हमारी उन्नति में देश के मुसलमान बाधक हैं, तो मुसलमानों को उनके अपने निर्मित देश में भेज देना ठीक नहीं रहेगा क्या ?

"देखिये भाई साहब ! मैं तो यह समझ पाई हूँ कि समस्या यह नहीं कि इस देश में कुछ मुसलमान रहते हैं। वास्तविक समस्या यह है कि कुछ मुसलमानों को प्रसन्न करने के लिए पूर्ण देश की हित-साधना को गौण कर दिया जाता है। महात्मा जी यही कर रहे प्रतीत होते हैं। भाषा के विषय में तो यह बात इतनी स्पष्ट हो गई है कि संदेह को कोई स्थान ही नहीं रहा।

"काश्मीर का विषय इसी मनोवृत्ति का एक और उदाहरण है। वहाँ पर लोकमत जानना भी इसी कारण माना गया है कि वहाँमु सलमान रहते हैं। क्या इसका यह अर्थ नहीं कि हम को सन्देह है कि मुसलमान भारत में रहना पसन्द नहीं करते ?"

जगदेवसिंह और राधा मुसलमानों का भारत से निकाल दिया जाना आवश्यक समझने लगे। न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी। मुसलमानों की उपस्थिति के कारण देश की उन्नति में बाधा होनी है, तो इनको यहाँ नहीं रहने देना चाहिए।

इसी अर्थ जगदेवसिंह का प्रयास सितम्बर के प्रथम सप्ताह में हुआ था और अनेकों उन निर्वासितों की सहायता से, जो शायद इसके आधार में विचार को समझते भी नहीं थे, सहस्रों मुसलमानों के मकान दिल्ली में रिक्त होगए थे । अब महात्मा गांधी ने यह कहा कि कैम्पों में एकत्रित हुए मुसलमानों को ले जा कर अपने घरों में पुनः बैठाना हिन्दुओं का काम है। इससे जगदेवसिंह के जत्थे के लोग अपने किये पर पानी फिरता देख विचार करने लगे कि कैसे अपने कार्य को स्थाई रूप दें।

इस विचार की पुष्टि के लिए राधा और उसकेआ ग्रह से अनेकों अन्य कैम्पों में रहने वाले नर-नारी मुसलमानों से रक्त किये मकानों और दुकानों पर अधिकार करने को चल पड़े।

जैसे महात्मा गांधी के अनुयायी कांग्रेसी, सब-के-सब स्वार्थ से अछूते नहीं थे, वैसे ही पाकिस्तान से निर्वासित सब-के-सब हिन्दू किसी आदर्श से प्रेरित नहीं थे। जगदेवसिंह से चलाई बात तो एक सिद्धान्त के आधार पर थी, परन्तु इस योजना में अनेकों कार्य करने वाले अपने स्वार्थ की पूर्ति देख इसमें सम्मिलित हुए थे। इसका परिणाम कहीं-कहीं यह भी हुआ कि रिक्त मकानों और दुकानों पर अधिकार करने वाले परस्पर झगड़ा करने लगे। इस पर भी लाखों की संख्या में शरणार्थी सहस्रों रिक्त मकानों और दुकानों में जाकर रहने लगे।

अक्टूबर के आरम्भ में जगदेवसिंह के पच्चीस साथी, जो दिल्ली में कार्य कर रहे थे, किंग्जवे पर, सरकार की ओर से खोले कैम्प में, एकत्रित हो विचार कर रहे थे कि अब क्या करना चाहिए। राधा कुछ अन्य स्त्रियों के साथ इस गोष्ठी में उपस्थित थी। राधा ने बताया, "प्रारम्भ में हिन्दू मुसलमानों के मकानों में जाने से डरते थे। उनको भय था कि जो भी जिस भी मकान में जाएगा, उस मकान में हुई लूट का उत्तरदायी माना जाएगा। तो हमने, मेरा अभिप्राय है कि मेरी सहयोगी बहनों ने, मकानों में स्वयं घुसकर वहाँ रहना आरम्भ कर दिया। हमने कैम्प में रहने वालों को समझाया कि जब औरतें नहीं डरतीं, तो उनको डरते लज्जा आनी चाहिए। कुछ ही दिनों में हमारे कहने का प्रभाव हुआ और अब स्थिति यह हो गई है कि लोग मकान ढूंढते हैं और उनको मिलते नहीं।"

जगदेवसिंह का कहना था, "साथियो! मेरी सम्मति यह है कि हमने अपना कार्य समाप्त कर दिया है। जनता का पथ-प्रदर्शन करना हमारा काम था। वह हो गया है। अब हमें इस झगड़े में नहीं पड़ना चाहिए। इसके आगे स्वार्थी लोग ऐसे कार्य करने लगेंगे कि हमारा कार्य कुछ कलंकित भी हो सकता है। इस कारण मैं आप सब का धन्यवाद करता हूँ कि आपने मेरा कहा मान, इस कार्य में अपनी जान की बाज़ी लगा दी और दूसरों को अपनी स्वार्थ-सिद्धि करते देख भी अपने स्वार्थ की ओर दृष्टि नहीं दौड़ाई।"

यद्यपि राधा इत्यादि इससे सन्तुष्ट नहीं थे, तो भी जगदेवसिंह के साथी अब अपने-अपने घरों को लौट जाने के इच्छुक हो रहे थे। इससे जगदेवसिंह के कहने का सबने स्वागत किया और वह जत्था, जो जून मास में बनाया गया था, अक्टूबर में समाप्त कर दिया गया।

हत्या

अगस्त मास में पंजाब की नदियाँ भरी रहती हैं। रावी नदी भी ठाठें मारती हुई, लोहे के पक्के पुल के नीचे से बह रही थी। साधारण समय में तो इन महीनों में लाहौर के सहस्रों नर-नारी इस पुल पर आकर नदी का सुहावना दृश्य देखा करते थे। सायंकाल दृश्य देखने वालों के झुण्ड के झुण्ड आते और घण्टों ही पुल पर खड़े हो इसको देखा करते थे। परन्तु इस वर्ष झगड़ों के कारण सैर करने वालों के स्थान पुल पर फ़ौजियों का पहरा था। यह पहरा तो यह कह कर बिठाया गया था कि कोई इसको नीचे से 'डायनामाईट' लगा कर उड़ा न दे, परन्तु वास्तव में यह पहरा पश्चिमी पंजाब से भाग कर भारत में जाने वाले हिन्दुओं की तलाशी लेने का एक उपाय बन गया। इक्का-दुक्का गुज़रने वाले तो तलाशी के बहाने लूट ही लिए जाते थे। कभी कोई युवा स्त्री मिल जाती तो बहाने से वहाँ बिठा ली जाती और रात को फौजियों के मनोविनोद का साधन बन जाती। जब कुछ अधिक लोग आते तो उन पर गोली चला उनको भगा दिया जाता। कभी-कभी जब रात के समय लूट का माल बाँटा जाता, तो सेर-सेर दो-दो सेर सोना प्रति सिपाही के हाथ लगता।

रामचन्द्र राव की संरक्षता में काफ़िला दूसरी सितम्बर को यहाँ पहुँचा था। उस समय सायंकाल के पाँच बज रहे थे, जब काफ़िले का मार्ग बलोच फौजियों ने रोक लिया। रामचन्द्र आकर उनसे बातचीत करने लगा।

उसका कहना था, "हम अपनी इच्छा से पाकिस्तान छोड़ कर भारत जा रहे हैं।"

"हम यहाँ से जाने वालों की तलाशी लेने के लिए खड़े किये गए हैं ?"

"क्या देखना चाहते हैं आप ?"

"यहाँ से सोना-चाँदी ले जाने का हुक्म नहीं।"

"हमारे पास चोरी का माल नहीं है।

"इसकी जाँच करना सरकार का काम है।"

"यह तो घोर अन्याय हो जाएगा।"

"बहुत बकवास करते हो तुम।"

"मुझे अपने अफसर के पास ले चलो। उसको मैं समझा सकूंगा।"

बलोच अफसर ने कहा, "पकड़ लो इसको। इसका कोर्ट मार्शल करेंगे।"

रामचन्द्र को पकड़ कर फौजियों ने पुल पर अपने पीछे कर लिया। इस पर कुछ स्वयंसेवकों ने उसको छुड़ाने के लिए फौजियों पर आक्रमण कर दिया, पर उनको पता नहीं था कि पुल के बुर्जों में स्टेनगनें लगी थीं। वे फटा-फट वहाँ से चलने लगी। परिणाम यह हुआ कि सहस्रों घायल हो गए, सैकड़ों मारे गए और शेष वहाँ से भाग खड़े हुए।

जब गोली चल रही थी तो रामचन्द्र ने अवसर पा पुल पर से नदी में छलांग लगा दी। मंझधार में डुबकियां लेता हुआ और अपने को बहाव में छोड़ वह चल पड़ा। फौजी पहले तो उसको भरे दरिया में कूदते देख आवाक् खड़े रह गए। पश्चात् निशाना साध उस पर गोली चलाने लगे। जब वह गोली की मार से दूर निकल गया, तो उसको डूब कर मरने के लिए छोड़ फौजी भागते काफिले पर गोली चलाने लगे।

रामचन्द्र एक अच्छा तैराक था। इस कारण उसने किनारे की ओर जाने के स्थान मंझधार में बहना ही ठीक समझा। दो मील से अधिक नीचे चले जाने पर उसने यत्न किया कि किनारे लगे। 'सांदे' गांव के पास जाकर

वह किनारे लगा। वहाँ सर्वथा जंगल था और कोई मनुष्यता का चिन्ह दिखाई नहीं पड़ता था। दिन भी ढल चुका था। अन्धेरा हो रहा था। इस पर भी रामचन्द्र ने कपड़े सुखा लेने उचित समझे। कपड़े सुखाने में उसको एक घंटा और लग गया। इस समय अन्धेरा काफी घना हो गया। रामचन्द्र की इच्छा यह थी कि बिना दिखाई दिए वह डी० ए० वी० कॉलेज पहुँच जाए। इस कारण आबादी से दूर रहता हुआ और खेतों में से गुज़रता हुआ, वह अनुमान से डी० ए० वी० कॉलेज की ओर चल पड़ा।

वह अभी वैटरनियरी कॉलेज के पीछे पहुँचा ही था कि पीछे से किसी ने उसको अपनी भुजाओं में दबोच लिया। एक दूसरे व्यक्ति ने उसको सामने से पकड़कर एक पिस्तौल-सी वस्तु उसकी छाती पर रख पूछा, "कौन हो ?"

"बंदा ए खुदा।"

"नाम क्या है ?"

"खुदा बख्श।" रामचन्द्र ने समझा कि मुसलमान बनने से बच जाएगा; परन्तु बात उल्टी निकली। सामने खड़े व्यक्ति ने एक चपत मुख पर लगाई और कहा, "जो कुछ है, जेब से निकाल बाहर करो।"

रामचन्द्र ने कहा, "भाई ! खुद ही निकाल लो। पीटते क्यों हो ? अगर जेब में हाथ डालने पर डर लगता है तो हाथ छोड़ो, मैं निकाल देता हूँ।"

"डर किस बात का है ?" रामचन्द्र के जेब में कुछ भीगे हुए नोट थे और कुछ रेज़गारी थी। वे उनमें से एक ने निकाल लिए। नोटों की खस्ता हालत देख पूछने लगा, "यह कहाँ से उठाकर लाए हो ?"

"नदी पार करते समय भीग गए थे।"

"यह तो गुनाह बेलज्ज़त हुआ।"

"भाई ! एक मुसलमान के पास एक हिन्दू बनिए जितना माल कहाँ हो सकता है ?"

"यही तो दुःख है। अच्छा जाओ।"

इतना कह, जिसने पीछे से पकड़ा हुआ था, उसको छोड़ दिया। रामचन्द्र ने उससे विनती के भाव में कहा, "उन रुपयों में से एक-दो दे

दो, तो रात को रोटी खा सकूँगा।"

"ऊँह ! तुम्हारे भाई शहर में बहुत-से हैं, जो खाने को दे देंगे।"

"तो तुम्हारे भाई नहीं हैं वहाँ, जो तुम हम मज़हब वालों को भी लूटने लगे हो ?"

इस पर वे दोनों खिलखिला कर हंस पड़े। एक ने कहा, "जाओ पुलिस को लिखा देना कि तुमको लहनू सिंह डाकू ने लूटने की कोशिश की है।"

"लहनू सिंह ?" रामचन्द्र जाते-जाते रुक गया।

"हाँ।"

"तो तुम हिन्दू हो ?"

"अबे हाँ। हम हिन्दू हैं। जाओ।"

"मैं नहीं जाऊँगा। मैं भी एक हिन्दू डाकू हूँ।"

"डाकू ?"

"हाँ, रामू नाम है।"

"तुम तो खुदाबख्श बता रहे थे ?"

"तुमको मुसलमान समझ कर धोखा दे रहा था।"

"ठहरो, तुम झूठ तो नही बोल रहे क्या ?"

"भाई ! नहीं। मैं भी तुम्हारी तरह यहाँ से छिप-छिपकर निकल रहा था।"

"अच्छी बात है, हमारे साथ चलो। कही रोशनी में तुम्हारी सुन्नत देखेंगे, तो यकीन होगा।"

"कहाँ के रहने वाले हैं आप ?"

कुछ सोच कर एक ने कहा, "हम यहाँ से फिरोज़पुर जा रहे हैं। हमारे साथ चलो। आज मुसलमानों की जेबें भरी हुई हैं। हम उनमें से अपना भाग लेना चाहते हैं।"

"यहाँ समीप ही डी० ए० वी० कॉलेज है। वहाँ क्यों नहीं चलते ?"

"वहाँ से ही तो भागे हैं। हमारा विचार था कि यहाँ से खाली हाथ निकले तो क्या निकले ! इसलिए आज अंधेरे में ही चल दिए। पहला ही

शिकार गलत निकला।"

"भाई ! मैं तो वहाँ ही जा रहा हूँ।"

"तुम मूर्ख हो। यदि डाकू हो तो हमारे साथ चलो। हम निश्चय ही एक दो मुर्गे रास्ते में फँसा लेंगे।"

रामचन्द्र समझ रहा था कि ये दोनों ही मूर्ख हैं, जो अपनी जान को खतरे में डाले हुए हैं। वह उनको वहीं छोड़ डी० ए० वी० कॉलेज की ओर जाने लगा तो एक ने, जो अपने को लहनूसिंह कहता था, कहा, "रामू ! ठहरो। कुछ दाल में काला दिखाई देता है।"

रामचन्द्र का ऐसा विचार था कि इन डाकुओं के पास पिस्तौल है और व्यर्थ में इनकी गोली का शिकार बन जायेगा। इस कारण घूमकर खड़ा हो गया। लहनूसिंह ने कहा, "तुम हिन्दू हो, हमें शक है ?"

"भगवान् की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि मैं हिन्दू हूँ।"

"तो हमारे साथ चलो। हम तुम्हें सुरक्षा से सरहद के पार कर देंगे।"

"पर मैं समझता हूँ कि डी० ए० वी० कॉलेज में जाने से आसानी से सरहद पार कर सकता हूँ।"

"पर वहाँ पहुँचना आसान नहीं है। इस समय कॉलेज के चारों ओर फौजी पहरा है।"

रामचन्द्र माना नहीं। इस कारण डाकू दक्षिण की ओर चल पड़े और रामचन्द्र पूर्व की ओर।

(२)

डाकुओं का कहना ठीक था। रामचन्द्र डी० ए० वी० कॉलेज के बोर्डिंग हाऊस में पहुँचने से पूर्व ही गोली मारकर घायल कर दिया गया। वहाँ पूछे जाने पर जब उसने अपना नाम खुदाबख्श बतलाया तो पहले तो उस पर अविश्वास किया गया, पर पीछे जब उसकी सुन्नत देख विश्वास कर लिया गया तो उसकी टाँग की, जहाँ गोली लगी थी, पट्टी की गई और उसको हस्पताल में पहुँचा दिया गया।

मेयो हस्पताल में उसकी भर्ती खुदाबख्श के नाम पर हुई । उसने लिखवाया कि जिला अमृतसर का रहने वाला है, उसके घर में प्रायः सब लोग मार डाले गये हैं। वह अपने परिचितों से पृथक् हो फिरोज़पुर चला गया था; अब खेतों में से होता हुआ वह तीन दिन में लाहौर पहुँचा है। इस प्रकार रामचन्द्र को मुसलमान मान उसकी हस्पताल में सेवा-शुश्रूषा होने लगी।

उसके काफिले के लोग रावी के पुल से भागे तो दो मील की दूरी पर जाकर एकत्रित हो गए और वहाँ उन्होंने अपनी योजना सियालकोट से जम्मू जाने की बनाली। कुछ दिन रावी के किनारे-किनारे चलते हुए वे फिर देहातों में घुस गए और दस दिन में सियालकोट जा पहुँचे। मार्ग में कई स्थानों पर छुट-पुट झगड़े हुए, परन्तु किसी स्थान पर भी ऐसा झगड़ा नहीं हुआ, जैसा जेहलम तथा गुजरात के समीप हुआ था।

जम्मू में अभी शान्ति थी। केवल ओस-पड़ोस से लाखों की संख्या में हिन्दू वहाँ एकत्रित हो रहे थे और इससे वहाँ खाने-पीने की तंगी हो गई थी। एक हिन्दू राजा की रियासत में पहुँच काफिला टूट गया। प्रत्येक व्यक्ति अपनी-अपनी रुचि अनुसार अपना प्रबन्ध करने लगा।

यद्यपि बड़ा झगड़ा इस काफिले के साथ केवल तीन स्थानों पर ही हुआ था, तो भी सैकड़ों की संख्या में स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध, थकावट, बीमारी और दुर्बलता के कारण मर गए थे अथवा काफिले से पृथक् हो अनिश्चित भाग्य के हाथ में जा पहुँचे थे। दो सौ से ऊपर स्त्रियों का अपहरण हुआ था और जम्मू पहुँचने से पूर्व सहस्रों की संख्या में रोगग्रस्त हो चुके थे।

काफिले के साथ जितने भी स्वयंसेवक थे, वे जम्मू से माधोपुर और वहाँ से गुरदासपुर होते हुए पूर्वी पंजाब में चले गये। उनमें से कुछ ने दिल्ली में अपने अधिकारियों के पास रामचन्द्र के पकड़े जाने की सूचना दी। वहाँ से पाकिस्तान सरकार को लिखा गया और वहाँ से प्राप्त समाचार से सबका यही अनुमान निकला कि वह गोली से मार डाला गया है और

उसका शव रावी नदी में फेंक दिया गया है।

(३)

नीना का 'वाह' कैम्प में सम्पर्क सीमाप्रान्त के सुदृढ़ और साहसी हिन्दुओं से हुआ था। वे प्रायः भगवान् के भक्त और मान-मर्यादा रखने वाले लोग थे। परन्तु श्रीनगर में उसको काश्मीर के मुसलमानों से वास्ता पड़ा। काश्मीर के आक्रमण में हिन्दू तो प्रायः मार ही डाले गए थे। काश्मीर पर आक्रमणकारियों ने मुसलमान जनता पर भी भारी अत्याचार किए थे। इस कारण वे भी भागकर शरणार्थी कैम्पों में आये थे। स्त्रियों के कैम्पों में तो प्रायः मुसलमान स्त्रियाँ ही थीं, जिनके पति अथवा सम्बन्धी मार डाले गए थे।

इन स्त्रियों की मनोवृत्ति और मान-मर्यादा के लिए धारणा वाह कैम्प की स्त्रियों से सर्वथा भिन्न थी। इसमें प्रायः स्त्रियाँ, अपने साथ बलात्कार किया जाना हँसी ठट्ठा मानती थीं। अधिकतर कैम्प में इस प्रकार आ गई थीं, क्योंकि इनको अपने साथ ले जाने को कोई आक्रमणकारी तैयार नहीं था। अनेकों ऐसी थीं, जो यह समझती थीं कि यदि वे पाकिस्तान चली जातीं तो अब तक उनको सुखपूर्वक अपना विवाह अपने मन-पसन्द पुरुष से करने का अवसर मिल जाता।

उनके मन में न तो अपने देश, अपनी जाति अथवा अपनी भूमि व सम्पत्ति से कोई मोह था और न ही हिन्दुस्तान व पाकिस्तान से कोई प्रेम। वे तो धूरि के कण थीं, जो आँधी के साथ उड़कर श्रीनगर में पहुँची थीं। नीना उन लोगों में रह, उनकी सेवा-शुश्रूषा में कुछ उत्साह नहीं पाती थी।

'वाह' में उसका सम्पर्क एक मेलो नाम की स्त्री से हुआ था, जो यदि मुसलमान होना स्वीकार कर लेती तो कोहाट के सरदार की बीवी बन वहाँ हुकूमत करती; परन्तु उसने अपने धर्म को नहीं छोड़ा। झगड़े में अपने निर्धन पति के साथ कंधे-से-कंधा भिड़ाकर लड़ती रही और घायल हो 'वाह' कैम्प में पहुँच गई थी। यहाँ नसीम, एक हाजी की बीवी से उसकी मुलाकात

हुई थी, जो अभिमान में यह कहा करती थी कि छः आदमियों की बीवी बनने पर भी वह सबल और स्वस्थ है। वह तो आक्रमणकारियों के साथ ही चली जाती, यदि हिन्दुस्तानी फौजी उसको पकड़कर वहाँ न ले आते।

नीना के मन में श्रीनगर से ग्लानि हो रही थी। इस समय उसको दिल्ली से समाचार मिला कि चेतनानन्द दिल्ली में है, पार्वती घायल हो पलंग पर पड़ी है, रामचन्द्र राव मार डाला गया है, उसके पिता और बहन मीना लाहौर को लौट गए हैं और उनका कोई समाचार नहीं मिला। ये सब समाचार उसके हृदय पर भारी आघात करने वाले सिद्ध हुए। उसने दिल्ली लिखा और उसके दिल्ली आने का प्रबन्ध हो गया।

दिल्ली में उसका किंग्ज़वे कैम्प में ठहरने का प्रबन्ध कर दिया गया। यहाँ उसको इतना हाहाकार सनाई दिया कि उसमें वह अपने को भूल गई। यहाँ आए उसे दो मास से ऊपर हो चुके थे, परन्तु अपने चारों ओर दुःख, कष्ट, रोना-धोना और भाग-दौड़ देख वह अपने विषय में सोचने का अवसर ही नहीं पा रही थी। चेतनानन्द उससे मिलने आया तो वह कैम्प में अन्य रहने वालों का वृत्तान्त ही बताती रही। उसका अनुमान था कि उस एक कैम्प में ही एक सहस्र से ऊपर विधवाएँ, साधनहीन, निःसहाय, बेचारी दानियों की दया पर पड़ी हैं। सबसे विचित्र बात, जो उसको वहाँ दिखाई दी, वह पंजाब से आए कुछ लोगों की निर्धनता के कारण, चरित्रहीन हो जाने की बात थी।

कैम्प में उसका एक कार्यकर्त्ता मनोहरलाल से वास्ता पड़ा। जिस लगन और उत्साह से वह कार्य कर रहा था, उससे नीना के मन पर भारी प्रभाव पड़ा। नीना ने उसको प्रत्येक प्रकार से सहयोग देना आरम्भ कर दिया।

मनोहरलाल प्रायः दोपहर के समय शहर से आता था और फिर रात के आठ बजे कैम्प से चला जाया करता था। उसका कहना था कि वह अपने एक सम्बन्धी के घर रात को रहता है।

दिसम्बर का महीना था। दिल्ली में सर्दी बढ़ रही थी। नीना के पास गरम कपड़े नहीं थे। एक दिन मनोहरलाल उसके लिए गरम कोट,

जो बहुत बढ़िया सर्ज का बना था, ले आया।

"यह कहाँ से पा गए आप ?" नीना ने पूछा।

"मैंने आपके लिए खरीदा है।"

"क्यों ?"

"आपको सर्दी लग रही थी न।"

"यह कोई कारण नहीं। यहाँ कितने हैं, जिनको सर्दी नही लग रही और कितने हैं, जिनके पास ओढ़ने को गरम कपड़े है ?"

"पर आपकी बात दूसरी है। आप दूसरों से भिन्न हैं ?"

"मैं यह नहीं लूँगी।"

"मेरी कसम है, यदि आपने अस्वीकार कर दिया तो।"

"पर मैं समझ नहीं सकी कि मैं क्यों लूँ ?"

"क्या मैं आपको यह दे नहीं सकता ? मेरा आपसे क्या नित्य का सम्बन्ध नहीं ? दो पशु भी जब एक कार्य में साथ-साथ लगे होते हैं, तो परस्पर नेह करने लगते हैं। हम तो मनुष्य है नीना देवी !"

"पर यह आपको मिला कहाँ से है ?"

"एक सौ पाँच रुपये का नया खरीदकर लाया हूँ।"

"रुपया कहाँ से पा गए आप ? आप तो कहते थे कि आप बहुत निर्धन हैं।"

"मेरे पास कुछ रुपया था। मैं अपने लिए कपड़े सिलवाने लगा तो आपका ध्यान आ गया और मैंने अपने कपड़ों के साथ इसे भी खरीद लिया।"

नीना विवश हो गई। पर मनोहरलाल ने इतने में ही सन्तोष नहीं किया। उसने और कपड़े भी लाकर दिये। फिर वह उसको एक दिन अपने साथ नगर में ले गया। वहाँ एक होटल में चाय पीने के लिए वे गए। नीना को ऐसा प्रतीत हुआ कि वह एक धनी आदमी है। धीरे-धीरे वह प्रायः उसे नगर में ले जाने लगा। एक बात उसको विचित्र प्रतीत हुई कि जब वह होटल में चाय के लिए जाता था, तो वहाँ उसको अनेक स्त्रियाँ मिलती रहती थीं। वह उनसे पृथक् में कुछ बातें किया करता था। होटल

वालों से भी उसकी बातचीत चला करती थी। अब प्रायः उसकी जेब में नोटों के बंडल भी दिखाई देने लगे थे। कई बार उसने मनोहरलाल को स्त्रियों को रुपये देते देखा था।

नीना के लिए यह सब विस्मयजनक था। यह सब रुपया कहाँ से आता है और उन स्त्रियों को क्यों दिया जाता है? ऐसे प्रश्न नीना के मन में चक्कर काटते रहते थे। मनोहरलाल जब भी उसको शहर ले जाता, तो कुछ-न-कुछ भेंट ले देता था। नीना न करती थी, पर मनोहरलाल के आग्रह का ढंग ऐसा होता था कि अस्वीकार करना कठिन होता था।

एक दिन नीना उसके साथ दिल्ली आई तो वह उसको लेकर एक बड़े होटल में गया। वहाँ कुछ लोग और भी थे। मनोहरलाल ने उनसे नीना का परिचय कराया— "ये हमारे कैम्प में स्वयंसेविका हैं। इनके पिता पाकिस्तान में रह गए हैं।"

एक बहुत ही बढ़िया कपड़े पहने आदमी ने नीना से हाथमि लाया, तो मनोहरलाल ने उसका परिचय कराया, "श्री जग्गोलाल एडवोकेट हैं। नगर के प्रसिद्ध व्यक्ति हैं और शरणार्थियों की बहुत सहायता कर रहे है।"

जग्गोलाल ने उचित से अधिक दबाव से हाथ मिलाया और नीना की ओर मुसकुराहट के साथ देखा। नीना को यह भला प्रतीत नहीं हुआ। इस पर भी वह इसमें कुछ समझ नहीं सकी। जग्गोलाल ने नीना से बातचीत आरम्भ कर दी। उसने कहा, "मैं आज रात अपने घर में शरणार्थियों के विषय में एक योजना पर विचार कर रहा हूँ। यदि आप भी उसमें उपस्थित हों तो हमको बहुत सहायता मिलेगी।"

"पर मैं तो देर तक ठहर नहीं सकती। मुझको सायंकाल से पहले कैम्प में लौट जाना चाहिए।"

"बहुत जरूरी काम है। रात आपका वहाँ ही ठहरने का प्रबन्ध कर दिया जायगा।"

"बहुत कठिन है।"

इस पर मनोहरलाल बोल उठा, "क्या कठिन है? वहाँ आपकी कौन

प्रतीक्षा करता होगा ? मैं समझता हूँ कि आपके यहाँ रह जाने से हमको भारी लाभ होगा। बहुत से काम, जो म्युनिसिपल कमेटी और डिप्टी कमिश्नर के दफ्तर में रुके पड़े हैं, सुगमता से हो सकेंगे।"

नीना गम्भीर विचार में डूब गई। वह नहीं जानती थी कि ऐसे क्या काम होंगे, जो जग्गोलाल कर सकता है और जिनके न होने से शरणार्थियों को हानि हो रही है। इस कारण उसने कह दिया, "मैं यत्न करूँगी, पर अभी वचन नहीं दे सकती।"

"आपको अवश्य आना चाहिए। आप मेरी योजना सुनेंगी तो फड़क उठेंगी।"

"तो अभी बता दीजिए।"

"नहीं, मजा नही रहेगा। मैं आपको अपनी मोटर दे दूँगा, जो आपको कैम्प में छोड़ आएगी।"

"पर कैम्प दस बजे बन्द हो जाता है।"

"इसकी आप चिन्ता न करें। मै सब प्रबन्ध करवा दूँगा।" मनोहरलाल ने कह दिया।

नीना अब भी अपने मन में निर्णय नहीं कर सकी थी, इस कारण चुप रही। इस समय चाय का प्रबन्ध हो गया। सब चाय पर बैठ गए। जग्गोलाल ने चाय पर बैठने से पहले एक सौ पच्चीस रुपये के नोट मनोहरलाल को दिये। मनोहर लाल ने उनको अपनी जेब में रखते हुए 'धन्यवाद' कह दिया।

चाय पर इधर-उधर की बातें होती रहीं। जब नीना और मनोहर लाल उठकर जाने लगे तो जग्गोलाल ने नीना का हाथ पकड़, एक ओर ले जा कर कहा, "मेरा आग्रह है आप अवश्य आइये। मैं आपको इतना कुछ दूँगा कि आपको शिकायत नहीं रहेगी।"

"मुझको कुछ नहीं चाहिए।" नीना ने अपनी निस्वार्थ भावना का प्रदर्शन किया। इस पर जग्गोलाल ने मुसकराते हुए कहा, "इस विषय में हम उसी समय बात कर लेंगे।"

नीना इस सबके अर्थ लगाने में असमर्थ थी। वह विस्मय में जग्गोलाल का मुख देखती रह गई। जग्गोलाल ने हाथ जोड़ नमस्ते कह दी।

जब नीना और मनोहरलाल होटल से नीचे उतर आए तो सड़क के किनारे एक स्त्री, जो प्रायः मनोहरलाल से मिला करती थी, खड़ी दिखाई दी। मनोहरलाल ने उसको पच्चीस रुपये दिये और कहा, "ज़रा नीनादेवी के साथ घूमने चली जाओ और आठ बजे से पहले श्री जग्गोलाल जी की बैठक पर इनको ले आना।

"नीनादेवी ! मैं एक काम से जा रहा हूँ। मीटिंग में आप से मिलूँगा।" इतना कह कर वह एक ओर चल दिया। फिर कुछ विचार कर लौट पड़ा और उसी स्त्री के समीप आ बोला, "ज़रा होशियारी से रहना। देरी न हो।"

यह कह वह चला गया।

(३)

जब मनोहरलाल चला गया तो नीना ने अपनी साथिन से पूछा, "क्या नाम है आपका ?"

"धनदेवी।"

"कहाँ रहती हैं ?"

"पहाड़गंज में एक मकान पर कब्ज़ा किया है।"

"आपके घर वाले क्या काम करते है ?"

धनदेवी ने उत्तर देने के स्थान पूछ लिया, "अभी पाँच बजे है। तीन घंटे के लिए कहाँ चलें ? कहिए तो सिनेमा देखने चलें ?"

"नहीं, मेरे पास फालतू रुपये नहीं है।"

"रुपये आपकी खिरायत बहुत हैं। चलिए।"

नीना ने दृढ़ता से कहा, "नहीं, मैं सिनेमा देखने के मूड में नही हूँ।"

"तो किधर चलें ?"

"नई दिल्ली चलते हैं। वहाँ मेरी अध्यापिका जी हैं। उनसे मिलेंगे

और फिर समय तक लौट आएँगे।"

दोनों फतेहपुरी पहुँच, ताँगे में सवार हो, बारह खम्भारोड की ओर चल पड़ीं।

मार्ग में नीना ने पूछा, "ये मनोहरलाल आपसे कैसे परिचित हैं ?"

"इन्होंने ही मकान पर हमारा अधिकार कराया है।"

"पहले क्या आप इन्हें नहीं जानती थीं ?"

"क्यों ?" उस औरत ने उत्तर विचार करने के लिए यह पूछ लिया।

"मैं जानना चाहती हूँ कि इनका कारोबार क्या है ?"

"कारोबार ?" उस स्त्री ने मुसकराते हुए कहा, "आप-जैसों की सेवा करना।"

"मेरे जैसों की ? मेरी तो वह···।" इसके आगे नीना रुक गई। उसकी दृष्टि उस कोट और कपड़ों की ओर चली गई, जो वह पहने हुए थी और जो मनोहरलाल के दिये हुए थे। बात धनदेवी ने पूरी कर दी, "हाँ; किसी को कपड़े ले देते है; किसी को खाने को देते है; किसी के लिए मकान का प्रबन्ध करते-फिरते हैं। अभिप्राय यह कि आज कल ये यही काम करते हैं।"

"मैं तो यह पूछ रही हूँ कि इनको रुपये की आय कहाँ से है ?"

"आपने देखा नहीं ? सेठ जग्गोलाल ने इनको अभी रुपया दिया है। उस में से वे पच्चीस मुझको दे गए हैं।"

"देखा है, पर समझी नहीं।"

"समझने की आवश्यकता भी नहीं। रुपया तो चलती-फिरती वस्तु है। जो इसके स्वभाव को जानते है, वे इसके स्वाद को ले सकते हैं।"

"यह तो ठीक है। पर वकील साहब ने इनको रुपया क्यों दिया है ?"

"कुछ 'बिज़नेस' किया मालूम होता है।"

नीना यह समझ कि धनदेवी भी कुछ नहीं जानती, चुप कर रही; पर धनदेवी चुप नहीं रही। वह नीना को कहती गई, "मनोहर बाबू जो काम करते हैं, उसमें हमको भी भाग मिलता है। पच्चीस रुपये दे गए हैं।

यदि उनका यह काम सफल हुआ तो हमको भी और आय होगी।"

नीना चूंकि समझ नहीं रही थी, इस कारण चुप रही। पर धनदेवी कहती गई, "जग्गोलाल बहुत ही धनी आदमी हैं। तीस-चालीस हज़ार रुपया महीने की आय है। इनकी एक बीवी है, पर दोनों की बनती नहीं। वह सर्वथा मूर्ख गँवार है। घूँघट निकालती है और घर से बाहिर निकलना पसन्द नहीं करती। इस कारण ये बेचारे बहुत परेशान रहते हैं।

"हमारे मनोहर बाबू इनके भारी मित्र हैं और इनसे कई बार कह चुके हैं कि एक और विवाह कर लें। अभी तक तो माने नहीं थे, पर शायद अब मान जाएँगे ?"

"अब क्या हुआ है ?" नीना ने उत्सुकता से पूछा।

"अब एक लड़की उनको दिखाई पड़ी है। बहुत सुन्दर है और पढ़ी लिखी है और स्वभाव की बहुत ही सुशील है।"

"तो मालूम होता है कि तुम लाला जग्गोलाल को जानती हो ?"

"हाँ।"

"पर वे तो दिल्ली के रहने वाले मालूम होते हैं ?"

"हाँ।"

"और तुम पंजाब से आई हो ?"

"हाँ, पर मुझको दरियागंज में रहते हुए पाँच वर्ष हो चुके हैं। मैं इनको तब से ही जानती हूँ।"

"तुमको मुसलमान के मकान पर अधिकार करना नहीं चाहिए था। तुम निर्वासित नहीं हो।"

इस पर धनदेवी झेंपी अवश्य; परन्तु कुछ विचार कर बोली, "बाबू मनोहरलाल की कृपा से ही यह हो सका है।"

"पर उन्होंने ठीक नहीं किया। पंजाब से आये हुए लोग अभी भी सड़कों पर पड़े हैं।"

"हम लोग उनको बसाने का यत्न जो कर रहे हैं।"

नीना को पहली बार मनोहरलाल के कार्यों पर सन्देह हुआ। वह

अभी मन में सोच ही रही थी कि धनदेवी ने बात बदल कर जग्गोलाल की प्रशंसा करनी आरम्भ कर दी, "इनकी कोठी में बीसियों नौकर हैं; दो-दो मोटरें हैं; घोड़ा-बग्घी है और सुना है अब अपना हवाई जहाज लेने का विचार भी रखते हैं । बहुत ही भले स्वभाव के हैं। सबसे मीठा बोलते हैं। और दूसरों की सहायता करने में अपना सौभाग्य मानते हैं।"

नीना मनोहरलाल के विषय में सोच रही थी। इससे उसने जग्गो लाल का गुणगान बन्द कराकर पूछा, "पर मैं तो मनोहरलाल के विषय में पूछ रही थी।'

"क्या पूछती हैं आप ?"

"तुम उनको कैसे और कब से जानती हो ?"

"उनको तो केवल दो-तीन मास से जानती हूँ।"

इस समय वे लाला बनारसीदास की कोठी पर जा पहुँचीं। पार्वती अब ठीक थी। उसका घाव भर गया था परन्तु अभी बहुत दुर्बल थी। नीना के साथ धनदेवी को देख पार्वती ने उसके विषय में पूछा। "मुझको पता नहीं। ये पंजाब की तो हैं, पर विभाजन से पहले की ही दिल्ली में रहती हैं। एक बाबू मनोहरलाल हमारे कैम्प में काम करते हैं और लोगों की सेवा-शुश्रूषा करते हैं। वे ही इन्हें मेरे साथ छोड़ गए हैं।"

पार्वती ने पूछा, "ये मनोहरलाल कौन हैं ? कोई शरणार्थी हैं क्या ?"

"मुझे पता नहीं। शायद नहीं। आधे घंटे से मैं इनसे उनके विषय में पूछ रही थी। इनकी बातों का सिर-पैर मुझे समझ नहीं आया।"

पार्वती को कुछ संदेह हुआ, परन्तु कुछ प्रमाण न होने से बात बदल कर पूछने लगी, "आज इतनी देर तक कैसे घूम रही हो नीना ?"

"यही तो मैं नहीं जानती। बाबू मनोहरलाल आज रात के आठ बजे, कोई लाला जग्गोलाल हैं, उनकी कोठी पर किसी मीटिंग में मुझे ले जाना चाहते हैं। ये मुझे उनकी कोठी पर ले जाने के लिए ही मेरे साथ कर दी गई हैं।"

अब तो पार्वती का सन्देह और भी बढ़ गया। उसने पूछा, "किनकी

कोठी ?"

"एक लाला जग्गोलाल वकील हैं। बहुत धनी व्यक्ति हैं। उनके बीसियों नौकर-चाकर हैं; दो-दो मोटरें हैं; घोड़ा-बग्घी है और अब एक हवाई जहाज खरीदने का विचार रखते हैं; पर मैं कुछ नहीं जानती। ये ही बता रही थीं।"

"कहाँ है उनकी कोठी, बहिन जी ?" पार्वती ने धनदेवी से पूछा।

"सिविल लाईन्स में, श्रीराम रोड पर।"

"तो वहाँ आपको किस समय जाना है ?"

"रात के आठ बजे।"

पार्वती ने घड़ी में समय देख कहा, "अभी तो छः बजे हैं। बहुत समय है। अच्छा तनिक बैठिये, ज़रा मैं देखूं वे यहाँ हैं अथवा नहीं।"

पार्वती का अभिप्राय चेतनानन्द से था। वह इनको बैठाकर कमरे से बाहर निकल गई। उसके चले जाने पर धनदेवी ने कहा, "नीना बहन ! यहाँ से जल्दी चलना चाहिए। हमने बहुत दूर जाना है।"

"अभी तो आये हैं। चेतन जी आयेंगे, तो उनका भी हाल-चाल पूछ लें।"

"ताँगे में जाने से एक घंटा तो लग ही जाएगा।"

"अभी बहुत समय है। साथ ही मैंने इस मीटिंग में जाने का निर्णय नहीं किया।"

"वाह ! यह कैसे हो सकता है ? मैं आपके साथ इसीलिये तो आई हूँ कि आपको वहाँ ले जाना है; नहीं तो मेरी क्या आवश्यकता थी ?"

"हाँ, यही तो मैं कह रही थी कि आपको मेरे साथ आने की क्या आवश्यकता थी ? देखिए धनदेवी जी ! मैं अभी यह नहीं समझ सकी कि मनोहरलाल जी क्या करते हैं और क्यों वह सब कुछ कर रहे हैं ?

"मैं जब उनसे मिली थी तो वे अपने को अति निर्धन निर्वासित भाई बताते थे। कुछ दिनों से उनकी जेबें रुपयों से भरी दिखाई देने लगी हैं। फिर उनका परिचय जग्गोलाल-जैसे धनी व्यक्ति से हो गया

है। यह सब मेरी समझ में नहीं आया।"

"हमारी समझ में आ गया है।" चेतनानन्द ने कमरे में प्रवेश करते हुए, नीना का कथन सुनकर कहा।

"देखो देवी !" चेतनानन्द ने नीना की साथिन से कहा, "यहाँ से भाग जाओ, नहीं तो पुलिस के हवाले कर दूँगा।"

"क्यों ?" धनदेवी ने उठते हुए कहा, "मैंने क्या किया है ?"

चेतनानन्द घूरकर उसकी ओर देखता रहा और धनदेवी मुख में बुर-बुराती हुई कमरे से बाहर निकल गई। नीना इसका अभिप्राय समझ नहीं सकी। उसके मन में संदेह था। वह इस गोरखधन्धे को समझने का यत्न कर रही थी; परन्तु धनदेवी को भागते देख उसकी हँसी निकल गई। उसने विस्मय में पूछा, "चेतन जी ! क्या किया है आपने इसको ?"

"इस पर जादू कर दिया है। ये लोग उन गीद और कौवों की भाँति है, जो मुर्दो को नोचकर खाते हैं।"

(४)

"देखो नीना ! तुम अब कैम्प में नहीं जाओगी। पार्वती का कहना है कि तुम उसके साथ रहोगी। उसके पिता को एक मकान यहाँ मिल गया है।"

"कब से ?"

"आज से ही। अब वापस जाने की आवश्यकता नहीं।"

नीना विस्मय में मुख देखती रह गई। इस समय पार्वती, जो पीछे रह गई थी, राधा के साथ कमरे में आ गई। राधा और पार्वती के पीछे एक और आदमी था—दुबला-पतला, साधारण ऊँचाई से कुछ लम्बा, रंग गंदमी, खद्दर का धोती-कुरता पहने, सिर से नंगा और पाँव में चप्पल पहने हुए था। नीना चेतनानन्द से कुछ पूछना चाहती थी, परन्तु इन सबको आता देख चुप कर गई।

पार्वती ने धनदेवी को वहाँ न देख पूछा, "कहाँ गई वह ?"

"भाग गई है।"

सब हँसने लगे। राधा के पीछे-पीछे आने वाला व्यक्ति गम्भीर भाव में ही रहा। सब बैठ गए तो राधा ने कहा, "अब हम चलते हैं। फिर किसी दिन मिलेंगे।"

चेतनानन्द ने पार्वती को उस व्यक्ति का परिचय देते हुए कहा, "ये हैं राधा के एक मित्र। इनके विचार भी राधा की भाँति रोग का कारण ढूँढने की ओर हैं। तुम्हारे नीना की सूचना लाने से पूर्व हम बहुत ही रुचिकर वार्तालाप कर रहे थे। यद्यपि हम सहमत नहीं हो सके, तो भी इनका दृष्टिकोण अनादर के योग्य नहीं।"

इस समय लाला बनारसीदास एक और व्यक्ति को साथ लेकर आ-गए। लाला बनारसीदास वहाँ इन लोगों को खड़े देख बोले, "देखो चेतना-नन्द! मैं अपने एक पुराने सहयोगी का आपसे परिचय कराने को लाया हूँ।"

लाला जी के आने पर सब उनके आदर के लिए उठ खड़े हुए। राधा का मित्र भी उठ खड़ा हुआ। लाला जी ने सबको बिठाते हुए कहा, "इनका नाम है शंकर पण्डित। ये बहुत पुराने खिलाड़ियों में से हैं। कभी इनकी जीवन-कथा बताऊँगा तो आप सब सुनकर चकित रह जाएँगे। इतना कह देना चाहता हूँ कि यदि स्वराज्य-प्राप्ति में शीघ्रता न की जाती तो देश के प्रतिनिधि, राज्य सम्भालने के अधिकारी ये और इनके साथी होते। कांग्रेस के नेतागण इस बात को अनुभव कर रहे थे कि उनकी विचार-धारा का पोल लोगों पर प्रकट हो रहा है, इस कारण स्वराज्य लेने की उन्होंने शीघ्रता की और इस शीघ्रता में ऐसी भूल की कि जिसका सुधार सैकड़ों वर्षों तक भी हो सकना कठिन है और इस सुधार करने में सम्भव है विश्वव्यापी-युद्ध करना पड़े।"

राधा का साथी इस नवीन पण्डित की बात सुनने में रुचि प्रकट कर रहा था। राधा के कान में उसने कुछ कहा, तो राधा ने सिर हिलाकर स्वीकार कर लिया। इस पर उसने लाला बनारसीदास से कहा, "शंकर पण्डित जी के विषय में मैंने पहले भी सुना है। इनकी योजना और प्रयास

का कुछ-कुछ ज्ञान मुझको भी कराया गया था। मुझे इनके दर्शन कर बड़ी प्रसन्नता हुई।"

"आपका परिचय ?" शंकर पण्डित ने राधा के साथी से पूछा।

"मैं कोई विख्यात व्यक्ति नहीं हूँ। देश की स्वतन्त्रता के युद्ध में एक साधारण-सा सिपाही रहा हूँ। पिछले कुछ वर्षों से कांग्रेस की नीति में भूल देख, इससे बाहर रह कुछ करने का यत्न कर रहा हूँ; परन्तु कुछ भी नहीं कर सका। अब इस वर्ष की तीन जून से मैं इस बात का अध्ययन कर रहा हूँ कि देश के भाग्य का काँटा कहाँ बदला है और इसको पुनः कैसे सीधा किया जा सकता है। मैंने १८५७ के स्वतन्त्रता-संग्राम के काल से लेकर पग-पग पर भारत के पूर्ण इतिहास का विश्लेषण करने का प्रयत्न किया है और कुछ परिणामों पर पहुँचा हूँ। अब मैं उन परिणामों को लेकर जहाँ भी कोई विद्वान् मिलता है, उससे विचार-विनिमय के लिए जाता हूँ और जाँचता हूँ कि मेरे परिणामों में कोई भूल तो नहीं रह गई। कुछ दिनों से मैं पंजाब से निकाले गए लोगों की मानसिक, शारीरिक और आर्थिक अवस्था को अपनी आँखों से देखने के लिए, इनके भिन्न-भिन्न कैम्पों में जाकर अध्ययन कर रहा हूँ। इस अध्ययन में मुझको यह बहिन मिली हैं। इनको इनके कैम्प वाले पगली कहते हैं; परन्तु ये मेरे विचारों को भली भाँति समझती हैं।"

शंकर पण्डित ने कहा, "मैं कल इलाहाबाद जा रहा हूँ। मैं भी यहाँ अपने निर्वासित भाइयों की अवस्था और सरकार का उनकी सहायता का प्रबन्ध देखने के लिए आया था। मैं लखनऊ, कानपुर, आगरा, मथुरा, मुरादाबाद, मेरठ, सहारनपुर, देहरादून, हरिद्वार, मंसूरी और इधर अम्बाला, पटियाला, भटिंडा, रेवाड़ी, और अन्त में गुड़गावाँ देख दिल्ली आया हूँ। मेरा विचार है कि एक महापाप सम्पन्न हुआ है, जिस का प्रायश्चित पूर्ण देश को कई शताब्दियों तक करना पड़ेगा। हमने अपनी भूलों के कारण देश के पड़ोस में, देश का एक घोर शत्रु बैठा लिया है। भगवान् भारतवासियों पर दया करे।"

"यह ठीक है," राधा के साथी ने कहा, "परन्तु यह हमारा पाप नहीं। यह पाप मुट्ठी-भर अंग्रेज़ भक्त हिन्दुस्तानियों का है। जिस दिन देश यह समझेगा कि इन लोगों ने अपने पूर्ण पापों का बोझा उनके गले में बाँध दिया है, उस दिन ही देश इस पाप के निवारण के लिए प्रथम पग उठायेगा।"

शंकर पण्डित ने उत्सुकता से पूछा, "वह पग क्या होना चाहिए? हम भी इसी बात की खोज में हैं।"

"यह निर्वासित भाइयों के लिए मकान ढूंढना या बनाना, इनके लिए कपड़े, भोजन का प्रबन्ध करना अथवा इनके कैम्पों में चिकित्सा सम्बन्धी सहायता पहुँचाना बहुत अच्छी बातें हैं। मानवता के नाते ये आवश्यक कार्य भी हैं। परन्तु ये कार्य उस कारण को नहीं मिटा सकते, जिनसे यह घोर पाप हुआ है। राधादेवी मेरी इस बात से पूर्णतया सहमत हैं। मैं कहता हूँ कि राक्षसी विचारधारा को राम ने कैसे मिटाया था? हिरण्य-कश्यप की नास्तिकता का नाश नरसिंह ने कैसे किया था और दुर्योधन की स्वार्थवादिता का नाश कृष्ण ने कैसे किया था? मैं समझता हूँ कि वर्तमान अभारतीयवाद का नाश भी इसी प्रकार हो सकेगा।

"लोग मुझको कहते हैं और भाई चेतनानन्द भी यही कह रहे थे कि विचारधारा व्यक्तियों की बपौती नहीं होती। मैं कहता हूँ कि विचार मनुष्य में उत्पन्न होते हैं। कुछ मनुष्य पूर्व जन्म के कर्मों के फल से यहाँ आते हैं और अपने दुष्ट विचारों से पाप का प्रसार करते हैं। फिर राम और नरसिंह जैसे लोग उन वर-प्राप्त मनुष्यों का हनन कर, उनके दुष्ट विचारों का समूल नाश करते हैं।"

उसके इतना कहने पर सब आवाक् मुख उसकी ओर देखते रहे गए। यह एक महान् सत्य था, जिसका सब अनुभव कर रहे थे। परन्तु इस सत्य का परिणाम क्या हो सकता है, इसकी केवल एक क्षीण झलक मात्र ही शंकर पण्डित समझ पाया था। शंकर पण्डित अभी मन में उठ रही शंकाओं और समस्याओं के विश्लेषण में ही लगा हुआ था कि वह दुबला-पतला

व्यक्ति उठ खड़ा हुआ और सब को नमस्ते कह बोला, "अच्छा, अब आज्ञा दीजिए। कभी अवसर मिला तो इस विचार को फिर आपकी सम्मति के लिए रखूंगा।"

सब ने हाथ जोड़ उसे विदा किया। राधा भी उसके साथ चली गई। इसके पश्चात् शंकर पण्डित ने कहा, "एक महान् विचार को यह छोटा-सा मुख कह गया है। यह बात निर्विवाद सत्य है कि देश की वर्तमान दुःखद् समस्या इस विचार की सन्तान है कि इस्लाम एक पंथ है। यह पंथ नहीं; यह एक राजनीतिक व्यवस्था है। इसको पंथ मान इसके साथ पंथ का सा व्यवहार करना एक महान् भूल थी। कांग्रेस की नींव इसी भूल पर रखी गई और इसी भूल को एक सिद्धान्त मान कार्य करने वाले नेताओं में सबसे मुख्य महात्मा गांधी हैं। इस भूल के अति भयंकर परिणाम हुए है।"

चेतनानन्द ने कहा, "ये महाशय निर्वासितों के आँखों देखे दृश्य सुनाते-सुनाते रोने लगे थे। औरतें किस प्रकार सड़कों के किनारों पर बच्चे जनती हैं, इसने देखा है। किस प्रकार दिल्ली स्टेशन के वेटिंग रूम की टट्टियों में बैठी माताएँ बच्चों को दूध पिलाती हैं; कैसे बाप-बेटा और पतोहु सर्दी के मारे एक ही रजाई में ठुठुरते रात बिताते हैं; औरतों के लिए टट्टी-पेशाब के लिए स्थान न होने से वे सड़कों के किनारे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ती करती हैं; कैसे मकान, वस्त्र और भोजन अथवा अन्य साधन न होने से सहस्रों की संख्या में लोग रोगग्रस्त हो मौत की ओर वेग से जा रहे हैं। लखपति आज नंगे हो गए हैं; मालिक नौकर भी नहीं रहे; स्वस्थ, हृष्ट-पुष्ट भूख से व्याकुल हो हड्डियों का कंकाल बन गए हैं। सब कुछ देखने से उत्पन्न हुई, उसके हृदय की टीस, आँखों से अश्रु बन प्रकट होती थी। उसका कहना है कि इस दुःख को मिटाना ठीक है, पर इसका कारण इससे पृथक् बात है। उस कारण को ही वह ढूँढता-फिरता है और उसको दूध में से मक्खी के समान निकाल देना चाहता है।"

"यह है कौन ?"

सब एक दूसरे का मुख देखते रह गए। वह बहुत चतुराई से ही

अपना नाम अथवा पता आदि बताने से बच गया था। चेतनानन्द ने कहा, "मैंने उससे पूछा था। उसने केवल यह कहा था, 'मेरे लाखों जैसा एक होने से नाम बताने में कुछ लाभ नहीं होगा। मेरे विचार और मेरी रूप-रेखा ही जानने की मुख्य बातें हैं।"

(५)

"किसी हिसाब में भारत को पचपन करोड़ रुपया पाकिस्तान का देना बनता है। भारत सरकार ने इन्कार कर दिया है। श्री पटेल, जो भारत के गृह-मन्त्री हैं, इस विषय में अपने कलकत्ता के व्याख्यान में कह चुके हैं कि जो सरकार अकारण भारत के एक भाग पर आक्रमण कर चुकी है और जिसके विरुद्ध भारत की सेना लड़ रही है, उस सरकार को भारत किसी प्रकार से भी धन देना नहीं चाहता। भारत सरकार को यह संदेह है कि इस धन से पाकिस्तान दारू-बारूद और गोलियाँ खरीदेगा, जो काश्मीर में लड़ रहे भारत सिपाहियों पर चलाई जाएँगी।

"इस रुपये के दिलवाने के लिए महात्मा गांधी अनिश्चित काल के लिये भूख-हड़ताल कर बैठे हैं।"

राधा अपने क्रोध का कारण बताती हुई कह रही थी। चेतनानन्द, नीना, पार्वती, पं० श्रीधर पाठक, पार्वती के पिता और कुछ अन्य परिचित लोग वहाँ एकत्रित थे। यह वार्तालाप पंडित श्रीधर के मकान पर हो रहा था। राधा को यह बात कहने की आवश्यकता इस कारण नहीं हुई थी कि महात्मा गांधी के व्रत के विषय में उपस्थित लोग जानते नहीं थे। उसके इस कहने का प्रयोजन इस व्रत पर अपना क्रोध प्रकट करना मात्र था। राधा की बात सदा पागलपन से आरम्भ होती थी। उसने कहा, "भारत में अन्याय और अन्धेर का राज्य होने जा रहा है।"

जब किसी ने यह बात समझी नहीं, तो उसने अपनी बात का अर्थ समझाने के लिए उक्त वृत्तान्त बताया था। पश्चात् उसने कहा, "इसका अभिप्राय यह हुआ कि हिन्दुओं के साथ अन्याय और अत्याचार होते

समय, अपने को 'मैं सरकार नहीं हूँ' कहने वाले महात्मा, एक ऐसे कार्य को बदलने के लिए व्रत रखे बैठे हैं, जिसका निर्णय सरकार कर चुकी है।"

"पर यह अन्याय और अनर्थ कैसे हो गया राधा ?" पं० श्रीधर ने पूछा, "हमारा देश इतना दे देने की सामर्थ्य रखता है।"

"सामर्थ्य का प्रश्न नहीं। यह तो रुपये के प्रयोग का प्रश्न है। आज जब पाकस्तान भारत पर आक्रमण किये हुए है, एक पैसा भी उसको देना उचित् नहीं है। पर अन्याय इस कारण नहीं; अन्याय में कारण यह है कि एक व्यक्ति राज्य के निर्णय को, बिना युक्ति दिए और बिना लोगों को समझाये बदलना चाहता है। यह प्रजातन्त्र-पद्धति के विरुद्ध है। महात्मा गांधी से प्रेम के वश सरकार के कर्ता-धर्ता अपना निर्णय बदल लेंगे और यह एक प्रकार से अन्याय का राज्य स्थापित करना होगा। जब न्याय का राज्य नहीं रहता तो संसार में अन्धकार छा जाता है।"

"यह सब ठीक है, पर इस समय देश महात्मा जी का आग्रह मान लेगा।"

"यह आग्रह नहीं, दुराग्रह है। महात्मा जी जानते है कि उनके किन्ही गुणों के कारण देशवासी उनका आदर और उनसे प्रेम करते हैं। महात्मा गांधी उस आदर और प्रेम का मूल्य माँग रहे हैं।"

"तो ठीक है। उस आदर और मान का मूल्य दे देना चाहिए।" पं० श्रीधर ने कह दिया।

राधा का उत्तर था, "मुझे भय है कि इस मूल्य के देने के पश्चात देश उनके यहाँ रहने को पसन्द नहीं करेगा।"

"तो न करे।"

"पर वे रहेंगे और फिर उनको धकेलकर बाहर करना पड़ेगा।"

चेतनानन्द उन लोगों में रहता था, जो महात्मा गांधी के विचारों को ठीक नहीं मानते थे। वह उनके मन पर, महात्मा गांधी के ११ सितम्बर को दिल्ली में आने से लेकर कार्य की प्रतिक्रिया देख रहा था। वह राधा के मन पर स्वराज्य-प्राप्ति के पश्चात् की घटनाओं की प्रतिक्रियाओं को भी देख रहा था। इन परिस्थितियों में वह किसी महान् घटना की आशंका करने

आज राधा की बातों से उसके मन की आशंका एक रूप धारण करने लगी। इससे वह काँप उठा। एक बात वह समझ रहा था कि राधा जो कुछ कह रही है, वह किसी और के विचार हो सकते हैं। वह स्वयं ऐसी बात विचार नहीं सकती। इस कारण उसने पूछा, "पर राधा! यह तुम कह रही हो या तुम्हारे मुख से किसी अन्य की बात निकल रही है?"

राधा के मन में यह बात पहिले ही स्पष्ट थी। उसने इस पर विचार भी किया था। इस कारण उसने कह दिया, "कोई भी मनुष्य माँ के पेट से विचार लेकर उत्पन्न नहीं होता। मनुष्य के सामने होने वाली प्रत्येक घटना उसके मन पर एक संस्कार छोड़ जाती है और किसी भी समय उसका कार्य उन संस्कारों के सामूहिक प्रभाव के अधीन होता है। मैं जो कुछ कह रही हूँ, वह इस देश में पिछले एक वर्ष से हो रही घटनाओं की प्रतिक्रिया-मात्र है।

"महात्मा जी के मन में उत्पन्न दयाभाव उन मेवों के लिए, जो दिल्ली में मुसलमानी राज्य स्थापित करने के लिए छः मास तक गाँवों को जलाते-फूँकते और छापे डालते रहे हैं, कौन स्वाभाविक मानेगा?

"महत्मा जी ने कल की प्रार्थना में यह कहा है कि जो लोग कहते हैं कि उन्होंने यह व्रत केवल मुसलमानों के लिए रखा है, ठीक कहते हैं, क्योंकि वे अपने पूर्ण जीवन भर अल्प संख्यकों की और उनकी, जो किसी प्रकार के अभाव से पीड़ित हैं, सहायता करते रहे हैं। यह भी एक अस्वाभाविक कथन है। मनुष्य को सत्य का पक्षपाती होना चाहिए न कि अल्प-संख्यकों का। अल्प-संख्यक भी असत्य को मानने वाले हो सकते है।

"सत्य को ही परमात्मा का रूप मानने वाले महात्मा जी बिना मुसलमानों के व्यवहार की परीक्षा किए, कैसे उनकी सहायता को प्रस्तुत हो गए हैं? मुसलमानों ने कभी भी सत्य और अहिंसा का अवलम्बन नहीं लिया। महात्मा जी का व्यवहार सर्वथा अस्वाभाविक है।

"सुहरावर्दी को शहीद बताना और लोगों को यह कहना कि वे उनके लिए चिन्तित हैं, अस्वाभाविकता की पराकाष्ठा है। कौन नहीं जानता कि

कलकत्ता के डायरेक्ट ऐक्शन का पूर्ण उत्तरदायित्व सुहरावर्दी साहब पर है ? इसपर भी लोग महात्मा जी से प्रेम करते हैं। आज वे अपने से प्रेम का मूल्य प्राप्त कर रहे हैं।"

"पर राधा ! मैंने तो यह पूछा है कि ये सब बातें तुमको कौन बताता है। बातें ठीक ही हैं। पर उनको रोकने का उपाय यह नहीं, जो तुम कह रही हो। महात्मा जी को धकेल कर देश से निकालना उनकी विचार-धारा का उन्मूलन नहीं कर सकेगा।"

"यह विचारधारा का प्रश्न नहीं है। यह तो अस्वाभाविक व्यवहार का प्रश्न है। यह सत्य-असत्य की विवेचना की बात नहीं, यह तो एक अनाधिकारी के लिये मान, प्रतिष्ठा, दया, पक्षपात करने की बात है। यह अपने दृष्टिकोण को दूसरों पर थोपने के लिए हठ है।"

राधा आवेश में थी और वह इसी लय में बहती चली जाती, यदि पंडित श्रीधर पाठक उसको रोककर डाँटते नहीं। उन्होंने कहा, "राधा ! मैं समझता हूँ कि किसी ने यह राक्षसी विचार तुम्हारे मन में भर दिए हैं। उसने तुम्हारे मष्तिष्क में यह दूषित विचार भर तुम्हारे मन को विक्षुब्ध कर दिया है और तुम ठीक विचार कर सकने की शक्ति को खो बैठी हो। हम हिन्दू हैं। हम किसी छोटे-से-छोटे जीव को भी दुःख देना पाप समझते हैं और तुम देश के एक अति प्रिय तथा पूज्य व्यक्ति की इस प्रकार निन्दा कर, उसको धकेल बाहर करने की बात कह, अपने को पतित कर रही हो। मै समझता हूँ कि तुम अपने मन की शुद्धि के लिए प्रायश्चित करो। इस प्रकार तो तुम नरक की भागी बन जाओगी।"

राधा चुप कर गई और पंडितजी के कथन का सार समझने का यत्न करने लगी। फिर कुछ विचार कर बोली, "पिताजी ! आप ठीक कहते है, क्योंकि आपके अनुभव मुझ से बहुत कम हैं। यदि आप भी चार मास तक मुसलमानों के छुरों से फाड़े पेट वालों की मरहम-पट्टी और सेवा-शुश्रूषा करते रहे होते, अथवा नित्य सहस्रों विधवाओं का करुण क्रन्दन सुनते होते और देश-विभाजन के कारण सतीत्वहरण के दृश्य देखते तो शायद आप

इस प्रकार न कहते। आपको रहने के लिए यह सुन्दर मकान मिल गया है, इससे आप उन लोगों की पीड़ा नहीं अनुभव कर सकते, जो मच्छरों से भिनभिनाते वायुमण्डल में, गन्दी नाली के किनारे बैठ खाते, पीते, सोते, उठते-बैठते है और अपने जीवन की प्रत्येक आवश्यकता वहीं पर पूरी करने पर विवश हो रहे हैं।"

"यह ठीक है। पर महात्माजी इस विषय में क्या करें ?"

"क्या करें ? आप ही बताइए कि उन्होंने इस वर्तमान अवस्था को उत्पन्न करने के लिये क्या कुछ नहीं किया ? जिनका उद्देश्य ही देशद्रोह है, उनको सदा छाती से लगाकर रखनेवाला भला देश हित की बात समझ ही कैसे सकता है ?"

"राधा ! तुम पागल हो गई हो। इसमें महात्मा जी का क्या दोष है ? हम ही तो आपस में लड़ रहे थे। वे तो सदा शान्ति और प्रेम के लिए ही कहते हैं।"

"हाँ, पर सदा शान्ति भंग करने वालों की प्रशंसा करते हुए। यह हिन्दुओं का प्राचीन रोग है कि वे सदा भले लोगों की निन्दा किया करते हैं और अपने विरोधियों की खुशामद किया करते हैं।"

बात में इतनी कटुता आगई थी कि चेतनानन्द ने बीच में हस्तक्षेप कर बात बदलनी ही उचित समझी। उसने कहा, "राधा ! तुम्हारे पिता जी का कोई समाचार मिला है क्या ?"

"मिला है। वे लाहौर स्टेशन पर मार डाले गए थे। शायद उनके शव को लाहौर के कुत्तों ने नोंच-नोंच कर खाया होगा। यह समाचार मिला है कि उस दिन स्टेशन पर शव इतने अधिक हो गए थे कि उनको जलाने के लिए तेल भी नहीं रहा था।"

इतना कहते-कहते राधा की आँखें डबडबा आईं। इससे सब चुप-चाप उसके शोक के आदर में उसका मुख देखते रहे। नीना ने बात फिर बदली, "पिताजी का पत्र आया है कि वे लाहौर अपनी कोठी में हैं। मीना का विवाह प्रोफेसर रसूल से हो गया है और पिताजी ने अपना

नाम मुहम्मद मोहसिन रख लिया है।"

"तो वे मुसलमान हो गए हैं ?" पार्वती ने विस्मय में पूछा।

"वे मुसलमान क्या हुए होंगे ? वे न तो कभी हिन्दू थे और न ही अब मुसलमान बन सकेंगे। हाँ, मीना की सन्तान मुसलमान होगी। पिता जी ने पत्र में मुझे भी बुलाया है।"

"तो तुम जा रही हो ?"

"नहीं ! मैंने निर्णय कर लिया है कि पाकिस्तान से सैकड़ों कोस दूर रहूँगी। मेरे साथ जो-कुछ बीती है, वह मैं मरण-पर्यन्त नहीं भूल सकती।"

इस समय राधा एकाएक उठ पड़ी और पण्डित श्रीधर के चरण स्पर्श कर बोली, "पिता जी ! क्षमा कर दीजिए। मेरे कथन से आपको दुःख हुआ है। मैं अब कभी आपको कष्ट देने नहीं आऊँगी।"

इतना कहकर वह घर से बाहर निकल गई।

(६)

राधा ताँगा कर किंग्जवे कैम्प में चली गई। उसके अपने खेमे में पन्द्रह के लगभग मातृविहीन बच्चे थे और वह दो अन्य स्त्रियों की सहायता से उनका लालन-पालन करती थी। वह भरे-मन के साथ आई थी, परन्तु एक लड़की, जो उससे बहुत ही हिल-मिल गई थी, के आकर उससे लिपट जाने से उसकी हँसी निकल गई। लड़की का नाम 'शोभा' था। उसकी आयु पाँच वर्ष की थी। उसने राधा की टाँगों में लिपटते हुए कहा, "मौसी ! माँ कब आएगी ?"

"मैं पता करने गई थी।" राधा ने उसको ढाढ़स बँधाने के लिए कह दिया, "टेलिफोन आया है कि बहुत जल्दी ही आएगी।"

"मौसी ! मेरा मन कहता है कि वह नहीं आएगी।"

"क्यों ? तेरा मन ऐसा क्यों कहता है ?"

"कहता है। वह रो रही है, पर आएगी नहीं।"

"उसको लाने के लिए कई लोग यहाँ से गए हैं।"

"वे कैसे लायेंगे ?"

'रेल में चढ़ाकर।"

इस समय अन्य बच्चे भी, जिनकी आयु सात वर्ष से कम ही थी, राधा के पास एकत्रित हो गए। वे सब राधा की अनुपस्थिति में खेमे के बाहर धूल में खेल रहे थे, इस कारण सब मिट्टी से लथपथ थे।

"मौसी ! भूख लगी है।" सब कहने लगे।

"तो खाना नहीं खाया तुमने ?"

"खाया है।" एक, जिसको सब मीटू कहते थे, बोल उठा, "पर पेट नहीं भरा।"

"अच्छा मीटू ! बताओ कितनी रोटी और खाओगे ?"

"मैं रोटी नहीं खाऊँगा। मैं बिस्कुट खाऊँगा।"

"तो बिस्कुट तो बाज़ार से लाने पड़ेंगे।"

"बाज़ार कहाँ है ? मैं साथ चलूँगा।"

राधा ने उनका ध्यान रोटी से दूर करने के लिए कहा, "तुम सब बैठ जाओ तो तुम्हें एक रानी की कहानी सुनाऊँगी।"

सब बैठ गए। राधा ने कहानी कहनी आरम्भ कर दी, "एक था राजा। उसकी सात....."

इस समय राधा का साथी, जो एक दिन बनारसीदास की कोठी पर उसके साथ गया था, आ गया। उसने खेमे के बाहर से ही आवाज़ दी, "राधा ! राधा बहन !!"

"हाँ भैया !"

"जल्दी आओ। यह देखो क्या हो रहा है !"

राधा बच्चों को छोड़ भागकर बाहर आ गई। कैम्प के बाहर एक स्त्री, पागलों की भाँति अपने कपड़े फाड़े, बाल बिखेरे, हाथ में एक ईंट पकड़, सामने खड़े बच्चों को मारने के लिए तैयार खड़ी थी। उसकी सलवार फट चुकी थी और वह प्रायः नंगी हो रही थी। कुर्ते के चिथड़े उड़ चुके थे और छाती भी प्रायः नग्न दिखाई पड़ रही थी। राधा और

उसके साथी को आते देख, उस स्त्री ने ईंट वाला हाथ उठाकर कहा, "मार डालूंगी ! मेरे पास मत आना।"

राधा ने उसको आवाज़ दी, "मोहनी ! मोहनी !! क्या कर रही हो ? यह देखो। मैं राधा हूँ। पहिचानती नहीं मुझको ?"

मोहनी का ईंट वाला हाथ नीचे हो गया। उस पूर्ण कैम्प में केवल राधा ही थी, जो उसके मस्तिष्क में शान्ति उत्पन्न कर सकती थी। उसने ईट को हाथ से एक ओर फेंकते हुए कहा, "राधा ! देखो, ये बच्चे मुझ-को तंग करते है। कहते हैं, नंगी, पगली।"

राधा ने बच्चों की ओर देखा तो वे भाग गए। इससे मोहनी शान्त हो गई। राधा और उसका भैया मोहिनी को बाजू से पकड़कर खेमे के भीतर ले आया। राधा ने मोहिनी को बैठाकर कहा, "ये कपड़े कल ठीक थे। आज सब फाड़ डाले ?"

"मुझको ये भले मालूम लगते है।"

"ये फटे हुए ?"

"फटे हुए नहीं राधा बहिन ! इनसे हवा बदन को लगती है।"

"पर तुम नंगी हो रही हो। लज्जा नहीं लगती तुमको नंगे होने से ?"

"नंगी ? ओह ! मैं भूल गई थी।" इतना कहते-कहते उसने टाँगों को इकट्ठा कर अपना तन ढाँपने तथा हाथों को छाती पर रख अपने लटकते स्तनों को छुपाने का यत्न किया।

राधा ने कुछ डाँटकर कहा, "तुम रोज कपड़े फाड़े डालती हो। अब ये आयेंगे कहाँ से ? तभी तो सब तुमको पगली कहते हैं ?"

"पर मैं पूछती हूँ कि सोहन के पिता कब आएँगे ? उनके आने पर कपड़ो को कभी नहीं फाड़ूँगी।"

"तुम इस प्रकार नंगी घूमोगी तो वे कैसे आएँगे ? कोई भी पुरुष अपनी औरत को नंगी घूमते नहीं देख सकता। तुम कपड़ों को फाड़ोगी नहीं तो वे अवश्य आएँगे ?"

मोहिनी बितर-बितर राधा का मुख देखने लगी। पश्चात् कुछ

विचार कर बोली, "अच्छा, अब नहीं फाड़ूँगी। चाहे कितनी गर्मी लगे, अब नहीं फाड़ूँगी।"

"गर्मी ? तुमको गर्मी लगती है ? आजकल जनवरी का महीना चल रहा है। शायद आज रात ठण्ड से पानी भी जम जाये।"

राधा का साथी मोहनी को अपने पति के आने की आशा में शान्ति से बातें करते देख द्रवित हो उठा। उसकी आँखों से आँसू गिरने लगे। राधा ने मोहिनी को अपने कैम्प में बैठी रहने को कह, अपने साथी से कहा, "भैया ! तनिक बाहर आ जाइए।"

वे दोनों कैम्प से बाहर निकल गए। बाहर एकान्त में खड़े हो राधा ने कहा, "आज पार्वती के पिताजी से झगड़ा हो गया है। उनको मेरी महात्मा जी के व्यवहार पर आलोचना पसन्द नहीं आई। मैंने निश्चय कर लिया है कि अब वहाँ नहीं जाऊँगी।"

"मैं उनसे यही आशा करता था। पण्डित जी ठेठ हिन्दू है। उनके संस्कार सहस्रों वर्षों की दूषित हिन्दू-महात्माओं की वाणी से बने हैं। वे यह कब सहन कर सकते हैं कि किसी प्राणी की हत्या हो जाए ? मुझको ऐसे लोगों पर दया आती हैं। ये व्यवहारिकता से दूर रहकर अपनी ही हानि करने वाले सिद्ध होते है।

"देखो राधा ! मैं चाहती हूँ कि तुम मुझको वह पिस्तौल दे दो, जो जगदेवसिंह ने तुमको दिया है।"

"भैया ! मैं स्वयं सन्देह में हूँ कि क्या किसा को मार डालने से उसकी विचारधारा मर सकती है ? यह अपराध महात्मा जी का नहीं। यह उनकी विचार-धारा का दोष है और उसको दूर करने का उपाय विचारधारा का विरोध करना है, न कि व्यक्ति का हनन करना।"

"तो तुम मुझे पिस्तौल नहीं दोगी ?"

"मैं अभी बात को समझ नहीं सकी। जब तक मेरे मन के संशय का निवारण नहीं हो जाता, तब तक मैं इस कार्य में सहायक नहीं हो सकती।"

"मैंने समझाने का यत्न तो किया है।"

"पर अभी बात स्पष्ट नहीं हुई।"

"राक्षसी प्रवृत्तियों के पोषक रावण की हत्या से राक्षसी विचारों की हत्या हुई थी। कम-से-कम यह तो मानना पड़ेगा कि उनके विचारों के प्रसार में बाधा पड़ेगी।

"देखो राधा! नाज़ी विचारधारा के नाश के लिए हिटलर को परास्त करना और उसको मार डालना आवश्यक समझा गया। फासिस्ट आन्दोलन को रोकने के लिए मुसोलिनी को संसार से बाहर करने की आवश्यकता पड़ी। सिद्धान्त यह है कि किसी विचारधारा के प्रसार को रोकने के लिए उसके पोषक व्यक्ति को अर्थात् उन विचारों के स्रोत को रोक दिया जाये।

"महात्मा जी एक मिथ्या विचार का निरन्तर प्रचार कर रहे हैं। उस मिथ्या विचार के कारण मोहिनी और अन्य अनेकों की जो हानि हुई है, वह अकथनीय है। इस मिथ्या विचार के स्रोत महात्मा गाँधी को, इस प्रकार रोकना आवश्यक है। यह कैसे किया जाये?"

"पर प्रश्न तो यह है कि क्या गुरु शंकराचार्य की हत्या करने से शंकर फिलॉसोफी का अन्त हो गया था? क्या सिक्ख-गुरुओं की हत्याओं से मुसलमान सिक्ख-पंथ को निर्मूल कर सके थे? अथवा क्या स्वामी दयानन्द का हत्यारा आर्यसमाज का खण्डन कर सका है?"

"नहीं! यह नहीं हो सका; परन्तु इनमें और मतात्मा गांधी में अन्तर है। इन लोगों का विचार सत्य और सत्यवादियों का समर्थक था। मिथ्या मत का ये घोर खण्डन करते थे। उन्होंने शत्रु और मित्र में भेद, सत्य, धर्म और न्याय से शत्रुता अथवा मित्रता करने वालों में भेद किया था। उन्होंने कभी यह नहीं कहा कि जो असत्यवादी, अधर्मी और अन्यायकारी हैं, वे भी उनके मान के पात्र हैं। देश-द्रोहियों को अपना सीना तानकर उन्होंने कभी बचाने का यत्न नहीं किया। महात्मा गांधी यह सब कुछ करते रहे हैं और नित्य कर रहे हैं।

"पाकिस्तान भारत के माथे पर कलंक है। इसने अकारण काश्मीर पर आक्रमण किया है। इसके चेले-चाँटों ने काश्मीर के नर-नारी पर वे अत्याचार किये हैं कि सुनकर किसी भी भले मनुष्य के आँसू बहने लगते हैं। उसी पाकिस्तान सरकार का पक्ष लेकर महात्मा जी ने यह व्रत रखा है। इससे अधिक और क्या अनर्थ हो सकता है! महात्मा जी के इस व्रत का केवल एक ही अर्थ हो सकता है। वह यह कि वे समझते हैं कि पाकिस्तान का बनना एक शुभ कार्य था; पाकिस्तान एक नेक और सत्य सिद्धान्त पर स्थिर राज्य है; पाकिस्तान की ओर से काश्मीर पर आक्रमण सर्वथा न्याययुक्त था और उसका काश्मीर निवासियों से व्यवहार सराहनीय है। इसके साथ ही महात्मा जी के व्रत का अर्थ यह भी निकलता है कि हिन्दू महा दुष्ट विचार के लोग हैं। वे अपने विरोधियों पर अत्याचार करने का स्वभाव रखते हैं। उन्होंने भारत के मुसलमानों पर भारी अत्याचार किए हैं। मुसलमान बेचारे इनके अत्याचारों से आतुर हो भारत छोड़ने पर विवश हो रहे हैं।

"ये जो मातृ-पितृ विहीन बच्चे तुम्हारे कैम्प में बैठे हैं, अपने दुष्ट कर्मों का फल भोग रहे हैं और जो मुसलमान मारे गए है, वे हिन्दुओं के अत्याचार का शिकार हैं।

"राधा! यह आज तुमको क्या हो गया है? तुम दो और दो चार होने को क्यों नहीं समझतीं? दिन को दिन और रात को रात क्यों नहीं जान पातीं? देखो, मैंने अपने मन में सब कुछ निर्णय कर लिया है। केवल तुम्हारे पिस्तौल और छः कारतूसों की आवश्यकता है। मुझको मत निराश करो। मैं तो तुमको अपने विचार का समझता था।"

राधा चुपचाप इस व्यक्ति के प्रलाप को सुन रही थी। वह, जब पार्वती के घर गई थी, तो इस व्यक्ति के विचारों से प्रभावित होकर गई थी। यद्यपि वह वहाँ अपनी हार नहीं मान सकी थी, तो भी उसकी अन्तरात्मा में संशय उत्पन्न हो गया था। अपने कैम्प में लौट आने पर बच्चों को और मोहनी को देख पं० श्रीधर की बातों का प्रभाव विलीन होने

लगा था और अब इसकी युक्तियों को सुन उसका संशय मिट गया था। इस पर भी वह कोई अन्तिम पग उठाने के पूर्व पुनः विचार करना चाहती थी। अपने को केवल दो घन्टे में तीन बार विचार बदलते देख वह अपनी आत्मा की दुर्बलता पर लज्जा अनुभव करने लगी थी, इस कारण अपने साथी को वहीं कैम्प के बाहर छोड़, वह बिना कुछ कहे भीतर चली आई और बच्चों को बाहर खेलने के लिए भेज अपने बिस्तर पर रजाई ओढ़ लेट गई।

(७)

पं० श्रीधर पाठक के मकान से जब राधा चली गई, तो कितनी ही देर तक सब एक-दूसरे का मुख देखते रहे। कमरे में शान्ति एक भयानक बात प्रतीत होने लगी, तो पार्वती ने उठते हुए कहा, "मैं बाज़ार जा रही हूँ।"

इतना कह बिना किसी अन्य के कुछ कहने की प्रतीक्षा किए, वह कपड़े बदलने अपने कमरे में चली गई। नीना ने समझा कि वह भी पार्वती के साथ जा सके तो ठीक रहेगा। इस कारण वह भी उसके पीछे-पीछे उसके कमरे में चली गई। पीछे रह गए पं० श्रीधर और चेतनानन्द।

रेवा के लड़का हुआ था और वह अपने पति महेश के साथ देहरादून, जहाँ लाला जीवनलाल ने अपने कार्य का केन्द्र बनाया था, चली गई थी। चेतनानन्द ने बात करने के विचार से कहा, "पंडित जी ! रेवा का कोई समाचार आया है ?"

"हाँ, बच्चा कुछ बीमार रहता है।"

"पिता जी !" चेतनानन्द ने बात बदलते हुए कहा, "मैं अदालत में एक प्रार्थना-पत्र दे आया हूँ कि मेरा नसीम से सम्बन्ध-विच्छेद हो जाये। उसको आज नोटिस जारी हो गया है और २५ जनवरी की तारीख निश्चित हुई है। मैं समझता हूँ कि नसीम उस दिन उपस्थित नहीं होगी और सम्बन्ध-विच्छेद हो जाएगा। मैं चाहता हूँ कि फरवरी मास में किसी दिन विवाह की स्वीकृति दे दें तो प्रबन्ध आरम्भ कर दूं।"

पं० श्रीधर पाठक अभी तक राधा की बातों पर विचार कर रहा था। इस कारण विवाह की बात सुन चौंक उठा और पश्चात् विवाह की बात समझ मुसकरा कर बोला, "आपस में कौन-सी तिथि निश्चित की है?"

चेतनानन्द इस व्यंग को समझ बोला, "पिता जी! निश्चित तिथि को व्यतीत हुए चौबीस मास से ऊपर हो चुके हैं और पार्वती आपकी अनुमति के बिना अभी भी विवाह के लिए तैयार नहीं हो रही।"

"अच्छी बात है, २५ जनवरी के पीछे तिथि का निश्चय करेंगे।"

चेतनानन्द यही उत्तर चाहता था और इसी की आशा भी करता था। उसने तो बात शान्ति-भंग करने के लिए की थी। पं श्रीधर ने उत्तर दिया और पुनः राधा की बातों पर विचार करने लगा। उसके मन में उफान उठ रहा था और वह उस उफान का अर्थ समझने का यत्न कर रहा था। अन्त में उसने इसके समझने लिए चेतनानन्द की सहायता लेने के लिए उससे पूछ ही लिया, "देखो चेतन! मैं समझा हूँ कि राधा के कहने का अर्थ था कि महात्मा जी की हत्या कर देनी चाहिए। क्या तुम भी यही समझते हो?"

"जी नहीं! मैं तो यह समझा हूँ कि महात्मा जी ने सरकारी कामों में अनावश्यक और अनधिकार हस्तक्षेप किया है। इस कारण सरकार को उन्हें देश से निर्वासित कर देना चाहिए। उसका कहना था कि वे देश से बाहर जायेंगे नहीं और फिर बलपूर्वक उनको देश से निकालना पड़ेगा।"

"मैं तो समझा था कि वह हत्या करने की बात कह रही है।"

"यह बहुत ही बुरी बात है। मैं तो सोच ही नहीं सकता कि कोई हिन्दू ऐसी बात भी विचार कर सकता है।"

"तो ठीक है। फिर तो व्यर्थ ही मैंने उसको डाँटा। मैं चाहता हूँ कि तुम कल या परसों, जब भी समय मिले उसके पास जाना और मेरी ओर से क्षमा माँग, उसे यहाँ ले आना।"

चेतनानन्द चुप रहा। वास्तव में उसने भी राधा के कथन का अर्थ हत्या से ही लिया था, परन्तु मनुष्य स्वभाव के अनुसार वह अनिच्छित

अर्थ लगाने को तैयार ही नहीं हुआ। जब वह निवास-स्थान पर गया और रात को भोजन कर बिस्तर पर लेटा तो राधा की बातें पुनः उसके मन में आईं। इन विचारों में उसे नींद नहीं आई और घड़ी में बजते हुए घण्टों को गिन-गिनकर रात काटने लगा। प्रातः चार बजे के बाद वह सो सका और फिर सात बजे उठ स्नानादि से छुट्टी पाकर किंग्जवे कैम्प जा पहुँचा।

राधा का स्वास्थ्य बिगड़ गया था। मनोद्गारों के संघर्ष में वह पिसती जाती थी। जब चेतनानन्द आया तो राधा को अचम्भा हुआ। वह तो समझती थी कि वह इन लोगों से लड़कर आई है।

चेतनानन्द ने उसे रज़ाई ओढ़ लेटे देख पूछा, "राधा बहिन! तबीयत तो ठीक है? लेट क्यों रही हो?"

"नहीं! तबीयत ठीक नही। भैया कल आये थे और मुझसे पिस्तौल माँगते थे। मैं निश्चय नहीं कर सकी। इस द्विविधा में मेरी जान घुलती जा रही है। आज उठकर बैठने की भी हिम्मत नहीं रही।"

"वह पिस्तौल माँगता था? क्यों?"

"अपने विचारों को कार्य-रूप में लाने के लिए।"

"तो वह महात्मा जी के विषय में ऐसे विचार रखता है?"

"बिलकुल।"

"तो हमें उसको ऐसा कार्य करने से रोकना चाहिए। यह तो भारत वर्ष के लिए घातक सिद्ध होगा।"

"चेतन भैया! मैं रात-भर विचार करती रही हूँ। आपकी तथा पण्डित जी की युक्तियों और भैया की युक्तियों में मुकाबिला करती रही हूँ। मैं तो अपने को इनमें निर्णय करने में अयोग्य पाती हूँ। इस कारण नहीं जानती कि क्या करूँ?"

"देखो राधा! हमको इन्हें ऐसा कार्य करने से रोकना चाहिए। बल-पूर्वक विवश करके, पुलिस से सहायता लेकर अथवा जिस किसी भी तरह हो सके।"

इस पर राधा और भी द्विविधा में फँस गई। उसने उठ कर खाट पर

बैठते हुए पूछा, "आपको विश्वास है कि महात्मा गांधी जो कुछ भी कर रहे हैं, ठीक कर रहे हैं ?"

चेतनानन्द इस सीधे प्रश्न से घबरा उठा। वह महात्मा जी की नीति और उनके कार्य की सराहना नहीं कर सकता था। इस पर भी वह समझता था कि उनको केवल उनके कार्यों का विरोध करना चाहिये। इस कारण उसने कहा, "महात्मा जी यदि कोई ऐसी बात करते हैं, जो हमको रुचिकर नहीं है, तो इसका अर्थ यह कैसे हो गया कि उनकी हत्या होनी चाहिए ? हमको जनता को कहना चाहिए कि वह उनकी बात न माने।"

"यहाँ तक मैं आपसे सहमत हूँ, परन्तु भैया को पुलिस के हवाले करने का अर्थ है कि हमारा अधिकार महात्मा जी को हानि पहुँचाने का तो नहीं परन्तु भैया को फाँसी पर चढ़वाने का है। यह मैं नहीं समझ पाई।"

"बात स्पष्ट है। एक अपने विचार का प्रचार-मात्र करता है, दूसरा विचार का प्रचार नहीं करता, परन्तु विरोधी विचार वालों की हत्या करता है। दोनों में अन्तर है। जहाँ विचार-प्रचार करने वाले का विरोध विचारों का विरोध करने से होना चाहिए, वहाँ हत्या करने का यत्न करने वालों की हत्या होनी चाहिए।"

"तो इसका अर्थ यह है कि हत्या करने का प्रचार करने वाले को तो छूट होनी चाहिए, परन्तु उस प्रचार से प्रभावित हो हत्या करने वाले को फाँसी। यह बात राज्य भी, जो एक महान् शक्ति का स्वामी होता है, नहीं कर सकता। ऐसा नियम तो संसार में दुर्व्यवस्था उत्पन्न करेगा, जो शान्ति स्थापित होने नहीं देगा।"

"तो क्या महात्मा जी ने हत्या करने का प्रचार किया है ? प्रत्यक्ष में तो ऐसा नहीं किया।"

"महात्मा जी ने हत्यारों को हत्या करने में प्रोत्साहन दिया है। उनके स्थान हुतों की निन्दा की है। महात्मा जी की नीति ने भारत में एक भीषण हत्याकाँड सम्पन्न कर दिया है। इस पर भी महात्मा जी अपनी नीति को ठीक समझते हैं और उस पर आचरण करने के लिए

कटिबद्ध हैं।

"दिल्ली में कुतुबुद्दीन बख्त्यार काकी का एक मकबरा है। ये कुतुबुद्दीन साहब पृथ्वीराज की पराजय में एक साधन हुए थे। वे नेक थे अथवा नहीं, इस विषय में हम कुछ नहीं जानते। परन्तु यह विख्यात है कि भारत में मुस्लिम राज्य होने में सहायक हुए थे। उनके मकबरे पर निर्वासित हिन्दुओं ने अधिकार कर अपने रहने का प्रबन्ध कर लिया है। इससे महात्मा जी का हृदय काँप उठा है और अपने व्रत में इसको भी एक कारण बना लिया है। इससे पूर्व कितने मन्दिर अपवित्र हो चुके हैं। इससे भी अधिक कितनी स्त्रियों का सतीत्व हरण हो चुका है, परन्तु महात्मा जी को उनके लिए कुछ करने या कहने को नहीं और न ही उनके कष्टों से उनके हृदय में किसी प्रकार की टीस उत्पन्न होती है। देश पर विदेशी राज्य-सत्ता बैठाने वाले के मकबरे पर दुःखी-बेघर लोगों के आश्रय पाने से उनको दुःख हो गया है और वे इसके लिए जान की बाजी लगा रहे हैं। ऐसे विचारों वाले मनुष्य को अपने विचारों के प्रचार का अवसर देना कहाँ तक ठीक है, एक विवादस्पद बात है। केवल जनता को कहना कि इनकी बात न सुने, पर्याप्त नहीं।"

"तो क्या उनकी हत्या कर देनी चाहिए ?"

"नहीं ! मैं यह नहीं कहती। मैं तो यह कहती हूँ कि मैं इस झगड़े में क्यों पड़ूँ ? जब हिन्दू लोग बार-बार महात्मा जी को मुसलमानों से पक्षपात की नीति का त्याग करने के लिए कह चुके हैं और वे इसको नहीं मानते, तो मेरा क्या अधिकार है कि उनको मना करूँ, जो महात्मा जी को रोकना चाहते हैं। मेरा अभिप्राय है कि उनको पुलिस के हवाले करने की मैं चिन्ता क्यों करूँ ?"

"पर तुम उसको पिस्तौल तो नहीं दोगी ?"

"अभी दिया नहीं और न ही देने का विचार है।"

"उनको ऐसे भयंकर कार्य से रोकने का अधिकार तो हमको है।"

"उतना ही, जितना महात्मा जी को मना करने का अधिकार आप

मानते हैं ।"

(८)

पार्वती और नीना का बाज़ार जाना तो घर के विक्षुब्ध वातावरण से निकल कहीं जाने का बहाना था । जब दोनों घर से निकलीं तो पार्वती ने नीना से पूछा, "अब किधर चलें ?"

"जिधर आपने जाना है ।"

पार्वती की हँसी निकल गई । उसने कहा, "मैं तो घर से निकलने के लिए निकली हूँ । मुझे न तो कुछ खरीदना है और न ही कोई काम है ।"

"यही मेरी बात भी है । आज राधा ने वस्तु-स्थिति का सर्वथा नग्न रूप हमारे सामने रख दिया है और हम इसको इस रूप में देख काँप उठे हैं । मेरा तो मन इतना अधीर हो गया है कि मैं कुछ भी विचार करने के अयोग्य हो गई हूँ ।"

"पर नीना ! मैं तो एक बात जानती हूँ । जब मनुष्य प्रकृति की शक्तियों से खेलता है तो उसके परिणामों के स्वागत के लिए उसको तैयार रहना चाहिए । मिस्टर जिन्ना ने और उसकी संरक्षता में मुस्लिम लीग ने जब यह निर्णय किया था कि डायरेक्ट ऐक्शन करें, तब उनको इस बात का ज्ञान होना चाहिए था कि वे आग से खेल रहे हैं । अब यदि उस आग से खेलते-खेलते उनके हाथ झुलस गए हैं, तो कोई क्या कर सकता है ? महात्मा जी भी इन प्रकृति की शक्तियों के कार्य में बाधा खड़ी करना चाहते हैं । इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा । यह उनको भी विदित होना चाहिए कि जनता के मनोद्गार, एक इंजिन में बन्द की हुई भाप के सदृश होते हैं । इनको थोड़ा-थोड़ा निकलने देना चाहिए । अन्यथा ये एक महान् विस्फोटक बन भारी हानि पहुँचा सकते हैं ।"

"मैं जब आप-बीती पर विचार करती हूँ," नीना का कहना था, "तो क्रोध से तिलमिला उठती हूँ और मुझसे भी अधिक दुर्दशा अनेकों

अन्य स्त्रियों की हुई है। इस दुर्दशा को करने वाले लोगों से सहानुभूति और जिनकी दुर्दशा हुई है, उनकी संसार में निन्दा करना एक अशोभनीय बात है। ऐसा कार्य करने वाले की भगवान् भी रक्षा नहीं कर सकेगा। इस समय दिल्ली में और पंजाब में त्राहि-त्राहि मची हुई है और इन दुःखी लोगों ने यदि कुछ मस्जिदों को इस कड़कती सर्दी में अपना आश्रय-स्थान बना लिया है, तो कौन पाप किया है? महात्मा जी व्रत रखे हुए हैं कि इन मस्जिदों को खाली करा दिया जाए।"

"मैं तो समझती हूँ कि महात्मा जी की मांग सर्वथा अयुक्ति-संगत है। इस पर भी कहीं कोई दुर्घटना हो गई तो महात्मा जी से प्रेम करने वाली पूर्ण जाति को दुःख होगा। इस प्रकार वे परिवार के उस पुरखा के सदृश दुहरे पाप के भागी होंगे, जो पहले तो घर में ऐसे पकवान बनाते हैं, जिनसे घरवाले बीमार होते हैं और फिर उनके बीमार हो जाने पर उनको दोषी ठहरा अनशन कर मरने की धमकी देते हैं।"

दोनों घर से निकलीं थीं घर के वातावरण से पृथक होने के लिए और चलती-चलती जा पहुँची बनारसीदास जी के घर। पार्वती ने कहा, "चलो कुछ देर कमला जी से बात कर लें।"

नीना का परिचय कमला से कुछ अधिक नहीं था। इस पर भी अपने मन की अवस्था में वह कहीं भी जाने को तैयार थी। इस कारण दोनों कोठी में पहुँच कमला के कमरे में जा पहुँचीं। इधर-उधर की बातों में एक घन्टा व्यतीत कर, जब वे उठकर चलने लगीं तो कमला का पति इन्द्रजीत वहाँ आ पहुँचा। पार्वती इनके घर में एक मास से ऊपर रुग्नावस्था में रही थी और परिवार भर से भली-भाँति परिचित थी। इन्द्रजीत ने पार्वती को देख रेवा के विषय में और फिर लाला जीवनलाल के विषय में पूछा। पार्वती ने उनका स्वास्थ्य समाचार बताया, तो उनके काम काज के विषय में बात-चीत चल पड़ी। इसके पश्चात् वे सामयिक चर्चा करने लगे। पार्वती ने महात्मा जी के व्रत की चर्चा की तो इन्द्रजीत ने कहा, "अभी अभी यह समाचार विख्यात हो रहा है कि सरकार ने पाकिस्तान

सरकार को पचपन करोड़ रुपया देना स्वीकार कर लिया है। इस पर भी महात्मा जी ने व्रत नही तोड़ा। वे चाहते हैं कि दिल्ली के मुसलमान और हिन्दू जब तक परस्पर मैत्री भाव प्रकट नही करेंगे और कार्य रूप में इसको नही लाएँगे, तब तक वे अन्न नहीं लेंगे।"

"तब तो महात्मा जी की मृत्यु निश्चित है। मैत्री को कार्यरूप में लाने के लिए समय कहाँ है ?"

इन्द्रजीत ने हँसते हुए कहा, "दिल्ली में प्रत्येक नर-नारी यह कह रहा है कि यह तो केवल ढोंग है। महात्मा जी की वास्तविक बात पूरी हो गई है और कल, कोई न कोई बहाना बना कर व्रत तोड़ दिया जावेगा।"

नीना ने विस्मय में पूछा, "महात्मा जी को बहाना बनाने की क्या आवश्यकता है ?"

"भावी सन्तान को धोखा देने के लिए। इतिहास में वे यह नही लिखवाना चाहते कि उन्होंने व्रत का दबाव डाल कर सरकार से पचपन करोड़ रुपया विरोधियों को दिलवाया है। हिन्दू मुसलमान मित्रता तो ऐसी बात है कि इसके लिए धारण किया हुआ व्रत उनको त्यागी, शान्ति का पुजारी और संसार भर में एक महान पुरुष विख्यात कर देगा। यदि केवल पचपन करोड़ की ही बात रह जाती तो वे शुद्ध हठी सिद्ध होते।"

"भाई साहब ! आप इनके विषय में बहुत ही बुरी सम्मति रखते है।"

"मैं इनको एक चतुर मनुष्य मानता हूँ। ये महात्मा भी है, ऐसा मानता हूँ। परन्तु महात्मा के अर्थ, मन, वचन और कर्म से एक जैसा होने से है। महात्मा गान्धी ऐसे ही है। वे जब कोई ढोग करते है, तो कह भी देते हैं और मान जाते है कि पहले जो कुछ वे कह रहे थे, केवल "लाऊडली थिंकिंग' था। अर्थात् उस समय भी वे जो कुछ कह रहे थे, मन में निर्णय की हुई बात नहीं थी।

"साथ ही एक बात और है। महात्मा के अर्थ बुद्धिमान् पढ़े-लिखे विद्वान के नहीं हैं। मैं महात्मा जी को दूरदर्शी नही मानता। इस पर भी वे चतुर अवश्य हैं। अपनी भूल को भी अपना गुण बता सकने में सफल

हो जाते हैं।"

नीना इन्द्रजीत से महात्मा जी के चरित्र की विवेचना सुन चकित रह गई। इस पर उसने बताया, "भाई साहब! उस दिन एक व्यक्ति राधा बहिन के साथ आया था न?"

"हाँ, मैंने देखा था। नीम पागल सा मालूम होता था।"

"पागल तो राधा भी लगती है। ऐसा प्रतीत होता है कि वे और राधा दोनों एक-जैसे ही विचार के मिल गए हैं। राधा आज आई थी और कह रही थी कि महात्मा जी को देश से धकेल बाहर करना होगा। देश-वासियों के प्रेम का मोल वे माँग रहे हैं। जब वह दे दिया गया तो फिर उनके लिए स्थान नहीं रह जाएगा।"

"वे कैसे देश से निकाल दिए जाएँगे? कौन उनको निकालेगा?"

"यही तो हम सोचती हुई आ रही थीं; पर मेरा अनुमान तो यह है कि उसका अभिप्राय हत्या से था।"

"हत्या?" इन्द्रजीत का मुख एक क्षण के लिए खुला रह गया। "इससे उसको रोकना चाहिए। महात्मा जी की माँग मान ली गई है। कल हिन्दू-मुसलमान मैत्री का स्वाँग रच कर वे व्रत तोड़ देंगे। इससे स्वाभाविक ही है कि कुछ लोग विक्षुब्ध हो उठेंगे। और सम्भव है कि राधा-जैसा कोई पागल व्यक्ति उन पर प्रहार कर बैठे। जहाँ तक सम्भव हो, इस घटना को नहीं घटने देना चाहिए।"

"पंडित जी, इनके पिता जी भी यही कुछ कहते थे पर···।"

"पर मैं पूछती हूँ," पार्वती बोली, "कि हम इस कार्य में क्यों हस्तक्षेप करें? महात्मा जी को अपनी घातक नीति बदलने के लिए कई बार कहा जा चुका है। वे नहीं मानते। हम दूसरों को, जो इस नीति को पसन्द नहीं करते, क्यों रोकें?"

"पर इसका परिणाम अति भयंकर हो सकता है।"

"महात्मा जी की नीति का परिणाम क्या कम भयंकर हो रहा है?"

"पर महात्मा जी ने किसी को अपनी नीति पर आचरण करने के

लिए विवश तो नहीं किया न ?"

"विवशता भी तो कई प्रकार की होती है। केवल लाठी से हाँकने को तो विवशता नहीं कहते। अब यह व्रत रखकर किसी कार्य को करवाना भी तो विवश करना कहाता है।"

"कुछ भी हो। राधा का यदि यही मतलब है तो उसको हमें रोकना चाहिए। युक्ति से चाहे उचित प्रतीत हो, परन्तु आत्मा नहीं मानती।"

इन्द्रजीत का कथन सत्य निकला। दो दिन में समाचार-पत्रों में यह घोषणा हो गई कि एक सौ से ऊपर दिल्ली के हिन्दू और मुसलमानों के आश्वासन देने पर कि वे अब परस्पर झगड़ा नहीं करेंगे, महात्मा जी ने व्रत तोड़ दिया। उन्होंने नींबू का रस पिया है।

इस समाचार से लोग बहुत प्रसन्न प्रतीत होते थे और रेडियो पर अनेकों लोगों ने प्रसन्नता प्रकट की। इस पर भी ऐसे लोग थे, जो जहाँ इसको महात्मा जी की निजी विजय मानते थे, वहाँ देश की हत्या समझते थे। उनमें राधा और उसका 'भैया' भी था।

महात्मा जी का व्रत तोड़कर फलों का रस लेने के समाचार को पा चेतनानन्द और इन्द्रजीत राधा से मिलने गए। राधा समाचार-पत्र पढ़ ही रही थी। उसके कैम्प के बच्चे बाहर खेल रहे थे। चेतनानन्द ने नमस्ते कर इन्द्रजीत का परिचय कराने के लिए कहा, "इनको जानती हो राधा ?"

"हाँ ! इनसे परिचय हो चुका है।" राधा ने अपने बिस्तर से बाहर निकलते हुए कहा, "वैसे तो स्नानादि से निवृत्त हो चुकी हूँ। बाहर बहुत धूलि है और भीतर बहुत सर्दी। इस कारण बिस्तर पर बैठी थी। आइये।"

चेतनानन्द ने बैठते हुए कहा, "हम आपके 'भैया जी' का नाम-धाम पूछने आए थे।"

"सो तो मैं जानती नहीं।"

"तो उसका तुम्हारे से परिचय कैसे हुआ था ?"

"वे प्रायः हम शरणार्थियों के कैम्प में घूमते रहते हैं। यहाँ उनको

सब लोग, यहाँ तक कि बच्चे भी पहचानते हैं। उनका सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार और सेवा-भाव उनको सबका प्रिय बनाये हुए है। सब उनको 'भैया जी' कहते हैं और कोई नहीं जानता कि वे कहाँ रहते हैं और क्या करते हैं।"

"उनसे मिलना हो तो क्या करें ?"

"अब दो तीन दिन से वे नहीं आए। पहले तो नित्य, दिन में किसी-न-किसी समय आ ही जाते थे।"

"हम उनसे मिलना चाहते हैं।"

"आयेंगे तो कह दूँगी।"

(६)

घटनाएँ द्रुत गति से घट रही थीं। महात्मा जी पश्चिमी पंजाब की सरकार की ओर से आए आश्वासन पर प्रसन्नता प्रकट कर रहे थे और इसको अपने व्रत की सफलता का एक प्रमाण मान रहे थे। दूसरी ओर सिन्ध से हिन्दुओं को धक्के मार-मार कर मकानों और दुकानों से निकाला जा रहा था। लाखों की संख्या में सिन्धी हिन्दू जहाज़ों में सवार हो, अपने मकान-जायदाद, यहाँ तक कि अपनी स्त्रियों के आभूषण पाकिस्तानियों के हाथ सौंपकर भारतवर्ष में आ रहे थे।

बीस जनवरी को महात्मा जी के प्रार्थना स्थान से कुछ अन्तर पर, प्रार्थना के समय एक बम्ब फट गया। बम्ब से कोई हानि नहीं हुई और बम्ब फेंकने वाला पकड़ा गया। महात्मा जी ने अगले दिन, प्रार्थना के समय बम्ब फेंकने वाले पर दया दिखाने के लिए कहा। उन्होंने यह भी कहा कि उन्होंने सुना है कि बम्ब फेंकने वाला किसी मस्जिद में, अन्यत्र कहीं स्थान न मिलने के कारण टिका हुआ था और अब पुलिस मस्जिदों को खाली करवा रही है, इससे उसको क्रोध आ गया था। मस्जिद में जाकर रहना गलत है। और फिर अधिकारियों की आज्ञा की अवज्ञा और भी भारी अपराध है।

छब्बीस जनवरी को महात्मा जी कुतुबुद्दीन चिश्ती की दरगाह पर गये। दरगाह की मरम्मत करवा दी गई थी और वहाँ पुलिस की संरक्षता में मेला लगा था।

चेतनानन्द ने जब महात्मा जी के प्रार्थना-स्थान के समीप बम्ब फटने का समाचार सुना तो उसको राधा के 'भैया' की याद आ गई। अगले दिन समाचार पत्रों से ज्ञात हुआ कि बम्ब फेंकने वाला कोई पंजाब से निर्वासित भाई है। चेतनानन्द का अनुमान था कि राधा के 'भैया जी' तो कोई मरहटा युवक है। इस पर भी उसको संतोष नहीं हुआ। वह अपनी मोटर ले किंग्जवे कैम्प जा पहुँचा।

राधा से पहला प्रश्न उसका यही था, "राधा! वह तुम्हारे 'भैया जी' कहाँ हैं?"

"एक सप्ताह से वे नहीं आए। मुझसे मेरा पिस्तौल माँगते थे। मैंने नहीं दिया। शायद इसी कारण नाराज हो गए हैं और नहीं आए।"

"तुमने पिस्तौल न देकर ठीक ही किया है। मुझको संदेह है कि कल वाला बम्ब उस पिस्तौल के अभाव में चला है।"

राधा गम्भीर विचार में बैठी रही। चेतनानन्द ने कैम्प के अन्य लोगों से भी उस 'भैया जी' के विषय में जानने का यत्न किया, परन्तु कुछ पता नहीं चला। वह घर लौट कर गया तो पं० श्रीधर पाठक ने भी वही संदेह प्रकट किया, जो चेतनानन्द का था। उन्होंने कहा, "मैं समझता हूँ कि यह उसका ही षड्यन्त्र है, जो बम्ब के रूप में प्रकट हुआ है। शायद मदनलाल, जो बम्ब चलाता पकड़ा गया है, वही 'भैया जी' है।"

"यद्यपि वह पंजाबी प्रतीत नहीं होता था, तो भी आजकल के समय में कुछ कहना कठिन है।"

"बहुत बुरा किया है उसने।"

"मैं किसी के कामों पर न्यायाधीश नहीं हूँ। इस पर भी यदि मुझको पहले पता चल जाता तो उसको इस काम मे मना करता। अब तो वह पकड़ा गया है और उसका मामला अदालत के सामने प्रस्तुत होगा ही।"

जहाँ तक चेतनानन्द और उसके साथियों का प्रश्न था, उक्त धारणा से यह बात यहाँ समाप्त हो जाती, परन्तु यह नहीं हुई। एक दिन राधा बहुत घबराई हुई आई और चेतनानन्द और पार्वती से कहने लगी, "चेतन जी! बहुत बुरी बात हो गई है। मेरी सहायता करिए।"

"क्या हो गया है राधा?"

"भैया जी आज आए थे और मुझको यह कह कि आप से मिलने जाना है, साथ में लेकर चल पड़े। मार्ग में नॉवल्टी सिनेमा के समीप मुझको तांगे में ही छोड़, एक काम करने के लिए गए तो फिर नहीं लौटे। मैं एक घंटा भर प्रतीक्षा करने के पश्चात् कैम्प लौट गई तो मेरे ट्रंक का ताला टूटा हुआ था और जगदेवसिंह वाला पिस्तौल और कारतूस लापता थे। मैं बहुत ही परेशान हो गई और नहीं जानती थी कि क्या करूँ? मैंने बच्चों से पूछा कि कोई आया था क्या, तो उन्होंने बताया कि भाई साहब आए थे और सन्दूक खोलकर कुछ निकाल रहे थे।

"मुझे भय है कि अवश्य कुछ अनर्थ होने वाला है।"

चेतनानन्द विस्मय में मुख देखता रह गया। उसको यह बात स्पष्ट हो गई कि महात्मा जी की प्रार्थना-सभा में बम्ब फकने वाला 'भैया जी' नहीं है। साथ ही यह भी पता चल गया कि राधा का पिस्तौल 'भैया जी' चुरा कर ले गया है। इससे यह परिणाम निकलना स्वाभाविक था कि वह महात्मा जी पर अवश्य आक्रमण करेगा।

जब इतना विचार कर चुका तो उसने पूछा, "राधा! तुमने उसके निवास-स्थान का पता किया था?"

"पूछा था। उन्होंने कहा था कि आपके यहाँ से होकर हम उनके घर चलेंगे; परन्तु मुझको मार्ग में ही छोड़ गए।"

चेतनानन्द चाहता था कि उससे पिस्तौल वापिस ले लिया जाय। अतः कैम्प में जाकर उस व्यक्ति का पता करने का विचार करने लगा। एक बात उसको सूझी। वह तुरन्त ही तैयार हो कैम्प के लिए चल पड़ा।

वहाँ पहुँच उसने कैम्प के बाहर खेलते हुए बच्चों से पूछा, "भैया जी

आज कैसे आए थे ?"

लड़कों ने उत्तर दिया, "मोटर में ।"

चेतनानन्द ने राधा से पूछा "वह पहिले भी मोटर में आया करता था क्या ?"

"नहीं, प्रायः पैदल ही आते थे ।"

"कभी मोटर में नहीं आया ?"

"मैंने उनको कभी मोटर में नही देखा ।"

"तो निश्चय ही वह मोटर किराये पर लेकर आया होगा ।" ऐसा विचार कर उसने राधा से फिर पूछा , "तुमको कहाँ छोड़ गया था ?" "नॉवल्टी सिनेमा के सामने ताँगा खड़ा कर, रेल के स्टेशन की ओर चले गए थे ।"

"ठीक है । चलो ढूँढने का यत्न करते हैं ।"

चेतनानन्द राधा को अपनी मोटर में साथ ले रेल्वे स्टेशन वाले टैक्सी स्टैंड पर जा पहुँचा । वहाँ स्टैंड पर टैक्सियों के ठेकेदार से पूछने पर और 'भैया जी' की रूपरेखा बताने पर पता चल गया कि वह किस नम्बर की मोटर में गया है । उस नम्बर की मोटर कहाँ होगी, इसका पता करने का यत्न किया जाने लगा । वहाँ से भिन्न-भिन्न टैक्सी स्टैंडों पर टेलिफून किए जाने लगे । अन्त में उस नम्बर की टैक्सी रीगल सिनेमा के स्टैंड पर खड़ी मिली । चेतनानन्द ने उस टैक्सी वाले से 'भैया जी' के जाने के स्थान के विषय में पूछ-ताछ की । उसने बताया के स्टेशन से वह किंग्ज़वे कैम्प गया था । वहाँ कुछ देर ठहर, वह इंडिया गेट की ओर मोटर ले गया । क्वीन्ज़वे पर, यॉर्क स्क्वेयर में जाकर गाड़ी छोड़ दी थी ।

इस वृत्तान्त से चेतनानन्द ने समझा कि शायद वह महात्मा जी से भेंट करने के लिये बिड़ला हाऊस की ओर गया है । इस विचार से उसके माथे से पसीने की बूँदें टपकने लगीं । उसने समय व्यर्थ न खोते हुए, राधा को साथ ले बिड़ला हाऊस की ओर गाड़ी घुमा दी । राधा इस सबका अर्थ समझती थी, इस कारण उसका मुख विवरण हो रहा था ।

उसके मुख से एक शब्द भी नहीं निकला। यह समय युक्ति करने का नहीं था।

मोटर श्रद्धानन्द रोड से निकलती हुई अजमेरी गेट, थौम्प्सन रोड, कनॉट प्लेस होती हुई यॉर्क स्क्वेयर में जा पहुँची। वहां सड़कों के बीच में बने चक्कर में, घास पर 'भैया जी' बैठा था। सबसे पहले राधा ने उसको देखा। उसने चेतनानन्द को हाथ से संकेत कर बताया, "चेतन भैया! 'भैया जी' वह बैठे है।"

गाड़ी खड़ी कर वे दोनों उसके पास गए। 'भैया जी' अपने विचारों में लीन आँखें मूँदे बैठा हुआ था।

"भैया!" राधा ने आवाज़ दी तो उसका ध्यान टूटा।

उसने राधा को देखकर कहा, "तो आगई हो राधा बहिन!"

"हां! मेरा पिस्तौल वापस कर दीजिये।"

"वह तो मेरे पास नही है।"

"किसके पास है?"

"नहीं बताऊँगा। मुझे पुलिस के हवाले कर सकती हो; परन्तु मैं जानता हूँ कि तुम ऐसा नहीं करोगी। मैं पिस्तौल देना नहीं चाहता।"

"आप मुझको बहिन मानकर भी मेरी चोरी कर रहे हैं? यह हिन्दू-पना नही है।"

"ठीक है राधा बहिन! मैं लज्जित हूँ, परन्तु मेरे विचार में मेरे कार्य की महिमा इस अपराध से अधिक है। जानती हो आज महात्मा जी दरगाह कुतुबुद्दीन के उर्स पर गए हैं? इसका परिणाम यह होगा कि लोगों के मन मे इस दरगाह की महिमा बढ जायगी। इस प्रकार जितने भी लोग देश को दासता की शृङ्खलाओं में बांधने वाले हैं, उनको प्रोत्साहन मिलेगा। यह एक ऐसी प्रथा उत्पन्न कर देगा कि यहां देश के शत्रुओं की पूजा हुआ करेगी।"

"यह सब ठीक है।" चेतनानन्द ने उसके समीप बैठते हुऐ कहा। राधा भी वहां घास पर बैठ गई।

चेतनानन्द ने अपना कथन जारी रखा, "परन्तु जो आप करने जा

रहे हैं, वह भी क्षम्य नहीं है।"

"मैं क्या करने जा रहा हूँ ?"

इस प्रश्न से राधा और चेतनानन्द विस्मय में उसका मुख देखने लगे। इस प्रश्न से उनको संशय हो गया कि शायद वह हत्यारा न बने। शायद उसने चुराकर पिस्तौल किसी अन्य को दे दिया है। इस पर भी चेतनानन्द ने विचार किया कि यह आदमी जब किसी कार्य-निमित्त चोरी करने को तैयार हो गया है, तो झूठ भी बोल सकता है। इस कारण उसने इस आदमी को धोखा देकर अपने मकान पर ले चलने का विचार किया। उसने तुरन्त अपने व्यवहार को बदल कर कहा, "यदि आपके पास पिस्तौल नहीं, तो आप कुछ भी हानि नहीं कर सकते ?"

'भैया जी' चुप रहा। इस पर चेतनानन्द ने कहा, "क्या आप बतायेंगे कि पिस्तौल किसके पास है ?"

"मैं नहीं बताऊँगा।"

"यह तो आप ठीक नही कर रहे हैं।"

"मै समझता हूँ कि मैं ठीक कर रहा हूँ।"

"तो आपके पास वह पिस्तौल नही है ?"

"इस समय नही है।"

"तो आप हमारे साथ चलिए। हम आपको समझाने का यत्न करेंगे कि आपको पिस्तौल राधा को वापिस कर देना चाहिए।"

"मैं समझना नही चाहता। आप एक बात कर सकते है। पुलिस को बुलाकर मुझको आप उसके हवाले कर सकते हैं।"

"इससे लाभ क्या होगा ? पिस्तौल तो आपके पास है नहीं। वह हमको मिल नहीं सकेगा। हम तो आपको समझाकर ही अपना काम करना चाहते हैं।"

"मैं आपकी बात समझता हूँ, इस पर भी अपनी बात को ठीक मानता हूँ।"

"क्या बात है आपकी, जिसको आप ठीक समझते हैं ?"

"मैं महात्मा जी को एक बार समझाना चाहता हूँ कि वे जो कुछ कर रहे हैं, ठीक नहीं कर रहे। पूर्ण देश महात्मा जी से प्रेम करता है, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि वे उस प्रेम से लाभ उठा कर कोई अनुचित बात करने पर देश को विवश कर दें। उनको अपने व्यवहार के विषय में देश के प्रमुख विद्वानों से राय ले लेनी चाहिए।"

"ऐसा लोग उनको पहिले कह चुके हैं।"

"मैं पुनः कहना चाहता हूँ।"

"इससे लाभ क्या होगा?"

"उनके न मानने पर जो कुछ होगा, उसका पाप मुझको नहीं लगेगा।"

"एक बात मैं कहूँ?"

"हाँ, कहिए।"

"आप अपना कार्य करने से पहले कुछ विद्वानों से राय कर लें, अन्यथा आप भी उसी पाप के भागी होंगे, जिसके महात्मा गांधी हैं। उनके मन में आया है कि देश का पचपन करोड़ रुपया देश के शत्रुओं को जो देश पर आक्रमण किये हुए हैं, दे देना चाहिए और उन्होंने हठ किया कि यदि ऐसा नहीं होगा तो वे भूखे रहकर मर जायेंगे।

"दूसरी ओर आप भी यही कर रहे हैं। आप महात्मा जी की हत्या करना चाहते हैं, बिना किसी से राय लिए। केवल इसलिए कि आप इस में देश का कल्याण मानते हैं।"

'किससे राय लूँ? कौन है, जो देश को उसी रूप में समझता है, जिसमें मैं समझता हूँ? कौन है, जिसने देश के इतिहास को वैसे ही पढ़ा है, जैसा मैंने पढ़ा है?"

"कितना अभिमान है आपके मन में, जो आप संसार में अपने से अधिक जानने-बूझने और समझने वाला किसी को मानते ही नहीं? यह तो मूर्खता हो जाएगी।"

'भैया जी' इस कथन से चुप कर गया। इस पर भी वह यह नहीं समझ पाया कि किससे राय ले। उसने फिर पूछा, "किससे राय लूँ?

कोई मेरी बात समझने का यत्न ही नहीं करता।"

"एक हैं, मैं उनको जानता हूँ। आप भी उनसे मिले हैं। उनका नाम शंकर पण्डित है।"

"कहाँ हैं वे ?"

"यहाँ दिल्ली में ही हैं। मैं समझता हूँ कि पूरी बात उनसे समझ-बूझ ली जाए और यदि तब भी आपकी समझ में हमारी बात न आए तो आपको अपना कार्य करने में स्वतन्त्रता होगी।"

चेतनानन्द सफल हो गया। 'भैया जी' मान गया। वह उठकर बोला, "तो चलो चलें।"

(१०)

'भैया जी' को पण्डित श्रीधर के मकान में लाकर, एक कमरे में बैठाकर, इन्द्रजीत और अन्य लोगों की सहायता से उसकी तलाशी ली गई तो राधा का पिस्तौल उसके पास से निकल आया। चेतनानन्द ने पिस्तौल अपने हाथ में लेते हुए कहा, "बहुत झूठे हैं आप !"

'भैया जी' विकराल हँसी हँसते हुए बोला, "सत्य और झूठ की मीमांसा आप नहीं जानते। मैं सत्य के अर्थ सत्य का प्रतिपादन करने वाली वस्तु मानता हूँ। जिससे झूठ को प्रोत्साहन मिले, वह झूठ है।"

"मैं भी आप को इस कमरे में बन्दकर सत्य का प्रतिपादन कर रहा हूँ।" इतना कह चेतनानन्द ने 'भैया जी' को कमरे के भीतर धकेलकर बाहर से ताला लगा दिया।

चेतनानन्द ने उसे कमरे में बन्द तो कर दिया, परन्तु ऐसा अनुभव किया कि उसने धोखा देकर शेर को पिंजड़े में बन्द किया है। इससे उसके मन में दुःख हुआ। वह मन में विचार कर था, 'कितनाअ नर्थ हो रहा है ! महात्मा गांधी मनमानी कर रहे हैं। यह 'भैया जी' भी मनमानी करना चाहता है और अब वह स्वयं भी मनमानी कर रहा है। महात्मा जी और इस आदमी में अन्तर केवल यह है कि लोग किसी अन्य कारण से महात्मा

जी से प्रेम तथा उनका मान करते हैं। इसने जन साधारण का वह प्रेम और मान प्राप्त नहीं किया; परन्तु इसके अतिरिक्त भारत की वर्तमान परिस्थिति में पाकिस्तान के लिए अथवा मुसलमानों के लिए देश के हित-चिन्तकों के विरोध में, महात्मा जी तो अपनी ही बात कह रहे हैं। यहाँ तक कि सरकार के निर्णय के विरुद्ध अपनी जान की बाज़ी लगा दी थी। अब देश को ग़ुलाम बनाने वाले की सहायता करने वाले की दरगाह पर सजदा करने जा पहुँचे हैं। दूसरी ओर यह 'भैया जी' है। यह बिना किसी से राय लिए अथवा अन्य सब उपाय प्रयोग किए बिना महात्मा जी की हत्या पर प्रस्तुत हो गया है और इधर मैं हूँ, जो बिना कानून से सहायता लिए, एक आदमी को कैद किए बैठा हूँ। यह सब-कुछ केवल इस कारण हो रहा है कि हम समझते हैं कि जो कुछ हम कहते हैं, ठीक है।'

वह इस प्रकार विचार-मग्न बैठा था, जब पार्वती और कमला उससे मिलने आई। चेतनानन्द का मलिन मुख देख पार्वती ने पूछा, "क्या बात है, आज आप भारी शोक में प्रतीत होते हैं?"

चेतनानन्द ने राधा के आने से लेकर जो कुछ हुआ, सब बता दिया। पश्चात् कहा, "मैं बुद्धि और आत्मा की प्रेरणा के विवाद में फंस गया हूँ। बुद्धि तो यह कहती है कि जब मैं महात्मा जी के कामों पर प्रतिबन्ध नहीं लगा सकता, तो उनके हत्यारे को क्यों विवश करूँ? इसी प्रकार मैं समझता हूँ कि जब सरकार महात्मा जी के हठ का विरोध नहीं कर सकी, तो सरकार को क्या अधिकार है कि हठी का हठ तोड़ने वाले पर न्याय करने बैठे?"

वास्तव में पार्वती, इन्द्रजीत और चेतनानन्द के अन्य साथी इस विषम वातावरण में अपना मार्ग नहीं पा रहे थे। पं० श्रीधर जी ने कहा कि इस व्यक्ति को पुलिस के हवाले कर देना चाहिए, परन्तु उसको ऐसा करना कहाँ तक न्यायोचित है, चेतनानन्द निश्चय नहीं कर सका। उसने पार्वती के पिता से कहा, "जहाँ तक हानि करने में सामर्थ्य का सम्बन्ध है, मैंने उससे वह छीन ली है। जहाँ तक इसको न्याय के हाथ में देने का सम्बन्ध है, वह मैं निर्णय करने में असमर्थ हूँ। सरकार के कर्णधारों ने महात्मा जी के हठ

के सम्मुख सिर नवाकर महात्मा जी के विरोधियों पर न्याय करने के अधिकार को खो दिया है।"

"तो फिर तुम चिन्ता किस बात की कर रहे हो?"

"मुझको यह सब-कुछ इतना अस्त-व्यस्त प्रतीत हो रहा है कि इसमें मन की शान्ति स्थिर रख सकना कठिन पा रहा हूँ?"

यद्यपि यह सब मानते थे कि महात्मा जी को रोकना चाहिए, परन्तु यह निर्णय करने में असमर्थ थे कि 'भैयाजी' का उपाय ठीक है अथवा नहीं। इस कारण सब एक-दूसरे का मुख देखते रहे। कोई न तो यह कह सका कि इस व्यक्ति को छोड़ दिया जाए और न ही कोई उसके विचार का समाचार पुलिस में दे सका।

(११)

आज चेतनानन्द के नसीम से तलाक का मुकद्दमा था। चेतनानन्द ने एक वकील और दो बैरिस्टर इसके लिए नियुक्त कर रखे थे। इस पर भी उसने स्वयं अदालत में जाकर मुकद्दमे की देख-रेख करनी उचित समझी। उस दिन तक उसको नसीम के विचार का पता नहीं चला था।

जब वह कचहरी पहुँचा तो नसीम की ओर से भी एक बैरिस्टर देख उसे विस्मय हुआ। नसीम के बैरिस्टर ने तलाक का विरोध किया। उसका कहना था कि नसीम के चरित्र के प्रति किसी प्रकार का सन्देह नहीं किया गया। केवल-मात्र उसका पाकिस्तान में होना और हिन्दुस्तान की विशेष परिस्थिति में उसका न आ सकना, तलाक के लिए कोई कारण नहीं।

इस बयान पर बहस होने लगी। चेतनानन्द ने, अपने कई तार लिखने पर भी नसीम के न आने के विषय में कहा। उसके बिना उसको सूचना दिए विलायत चले जाने के विषय में भी बताया और फिर उसका सदैव उससे झगड़ा करने की बात कही; परन्तु अदालत ने इन बातों को तलाक स्वीकार करने के लिये पर्याप्त कारण नहीं माना और आज्ञा

दे दी कि नसीम दो मास के भीतर यदि अपने पति के घर न आये तो पुनः तलाक के विषय में विचार किया जा सकता है।

इस निर्णय से चेतनानन्द बहुत विक्षुब्ध हो उठा। वह घर आया तो पं० श्रीधर ने इस निर्णय को शान्ति से सुना और कहा, "मैं समझता हूँ कि प्रतीक्षा करनी चाहिए।"

चेतनानन्द का विचार दूसरा था। उसने अपने विचार पार्वती पर प्रकट करने के लिये कहा, "जो कुछ पिछले डेढ़ वर्ष में मेरे और उसके बीच में व्यतीत हुआ है, उससे मेरा उसके साथ पति रूप में रहना असम्भव है। उसमें और मेरे में तलाक होना ही चाहिए। यदि न्यायालय की दृष्टि में उसका व्यवहार इस तलाक के लिए पर्याप्त कारण नहीं, तो मैं एक ऐसा कारण उत्पन कर देना चाहता हूँ, जो इसके लिए उचित माना जाय।"

"यह कैसे हो सकेगा ?" पार्वती के मुरझाये हृदय में आशा की लहर दौड़ गई।

"मैं एक सप्ताह के भीतर तुमसे हिन्दू-रीति के अनुसार विवाह कर लूँगा। इससे स्पैशल मैरिज ऐक्ट की अवज्ञा हो जाएगी और नसीम को तलाक के लिए प्रार्थना करनी पड़ेगी।"

"यदि उसने ऐसा न किया और इस पर भी आपके पास आकर रहना पसन्द किया तो ?"

"तो मै उसको घर में कुर्सी-मेज की भाँति पड़ा रहने दूँगा।"

यह प्रस्ताव पार्वती नहीं मानती थी, परन्तु जब चेतनानन्द ने बहुत आग्रह किया तो यह प्रस्ताव उसके माता-पिता के पास पहुँचा। पार्वती की माँ चुप थी। वह इस विषय में कुछ सम्मति नहीं रखती थी। पार्वती के पिता इस योजना से सन्तुष्ट नहीं थे, इस पर भी पार्वती को इस विषय में स्वतन्त्रता देना चाहते थे। इस लिए उन्होंने कहा, "देखो बेटी पार्वती ! यह कानून भंग करना मुझे कुछ अच्छा प्रतीत नहीं होता। परन्तु जब कानून ही दोषपूर्ण हो तो क्या किया जाय ? इस कारण मैं तो इस विषय में तुमको अपना मार्ग स्वयं निर्माण करने के लिए कहूँगा, जिससे

तुम इसके हानि-लाभ को स्वयं समझ सको।"

"इस प्रकार मेरे विवाह कर लेने में आपकी क्या आज्ञा है?" पार्वती ने पूछा।

"मैं तो इसको ही विवाह मानता हूँ। हिन्दू रीति से विवाह टूट नहीं सकता। जो सम्बन्ध टूट सकता है, वह विवाह नहीं हो सकता। वह तो एक प्रकार का 'कॉन्ट्रैक्ट' हो गया। यह ठेकेदारी कोई पवित्रता की गंध नहीं रखती। इसके विपरीत विवाह तो एक पवित्र सम्बन्ध है। स्पैशल मैरिज ऐक्ट से सम्बन्ध, विवाह के समान महत्ता नहीं रखता।"

"तो मैं विवाह कर लूँ?"

"परन्तु हम एक ऐसे देश और काल में रहते हैं, जहाँ इस कानून को हिन्दू विवाह से श्रेष्ठ माना जाता है। इस कारण यदि तुम इस कानून भंग करने से उत्पन्न होने वाले कष्टों के लिये अपने को तैयार समझती हो, तो करो। यह तुम्हारे अपने विचार का विषय है।"

चेतनानन्द का कहना था, "पिताजी! कुछ नहीं होगा। अधिक-से-अधिक मुझको 'ऐलिमोनी' अर्थात् हर्जाना देना पड़ेगा। सो मैं दे दूंगा।"

इस प्रकार बात तय हो गई। यह निश्चय हुआ कि फरवरी की पाँच तारीख को विवाह संस्कार हो जाए। पंडित जी इस विवाह पर पार्वती का देने के लिए दहेज बनवाने लगे। उनका बहुत सा सामान, जो उन्होंने पार्वती को देने के लिए बनवाया था, लाहौर में ही रह गया था। इस कारण अब यथाशक्ति कुछ बनवाना आवश्यक हो गया।

चेतनानन्द ने अपने पिता जी और बहिन रेवा को देहरादून अपने विचार लिख दिये। परिणाम यह हुआ कि वे समाचार पाते ही दिल्ली आ पहुँचे। लाला जीवनलाल, महेश और रेवा दिल्ली में आए तो वकीलों की सम्मति ली जाने लगी। सबका यही विचार था कि नसीम 'ऐलिमोनी' के लिए प्रार्थना करेगी और वह चेतनानन्द को देनी ही पड़ेगी।

इस काल में 'भैया जी' पंडित श्रीधर के मकान में बन्द था। उसके खाने-पहनने और अन्य आवश्यकताओं का प्रबन्ध कमरे में ही कर दिया

जाता था।

एक दिन उसने क्रुद्ध होकर चेतनानन्द से पूछा, "मुझको आप कब तक कैद में रखेंगे ?"

"जब तक महात्मा जी वर्धा नहीं चले जाते और आपके विचार बदल नहीं जाते।"

"और यदि मैं उनके पीछे वर्धा चला गया तो ?"

"आपके विचारों में परिवर्तन नहीं आ सकता क्या ?"

"यह मैं कैसे बता सकता हूँ ? मैं कोई ज्योतिष तो लगा नहीं सकता।"

"आप अपना विचार बदल दें।"

"बदल दिया।"

चेतनानन्द हँस पड़ा : उसने कुछ विचार कर कहा, "अच्छी बात है, परीक्षा करूँगा।"

इस प्रकार 'भैया जी' कमरे में ही बन्द रहा और चेतनानन्द नित्य विचार करता रहता कि किस प्रकार उसके विचारों में परिवर्तन उत्पन्न किया जाय। एक बात का उसे सन्तोष था कि राधा का पिस्तौल राधा को वापिस मिल गया था और उसने वह जमुना नदी में बहा दिया था। राधा को भय लगने लगा था कि कहीं कोई और उसे चुरा कर कोई अनिष्ट न कर बैठे।

जब यह निश्चय हो गया कि चेतनानन्द और पार्वती का विवाह पाँच फरवरी को होगा, तो इसकी तैयारी होने लगी। चेतनानन्द कपड़े इत्यादि बनवाने में लग गया। तीस तारीख को जीवनलाल, रेवा और महेश दिल्ली आ गए और इस तैयारी में सहायता देने लगे। जीवनलाल, पार्वती और चेतनानन्द को साथ ले दरीबा में भूषण खरीदने गया हुआ था। भूषणों का चुनाव करते-करते सायंकाल हो गया। इस समय बाज़ार में गुज़रने वाले लोगों में हलचल दिखाई देने लगी। एकाएक लोग इधर-से-उधर भागते हुए आने-जाने लगे। चेतनानन्द ने देखा तो दुकान के बाहर आ कारण जानने का यत्न किया। लोग घबराये हुए और पीत मुख प्रतीत होते थे। चेतनानन्द ने एक से पूछा, "क्या बात है ?"

"महात्मा जी मार डाले गए।"

चेतनानन्द स्तब्ध खड़ा रह गया। वह अपने कानों पर विश्वास नहीं कर सका। परन्तु लोग इस समय तक एक-दूसरे को कहने लगे थे, 'महात्मा गाँधी मारे डाले गए। उनको तीन गोलियाँ लगी हैं।'

चेतनानन्द दुकान में गया तो दुकानदार का मुख भी पीत वर्ण हो गया था। उसने कहा, "मैं दुकान बन्द कर रहा हूँ। आप अब फिर आइए।"

ये लोग बाहर आ गए। इनकी मोटर चाँदनी चौक में खड़ी थी। सारा बाज़ार बन्द हो रहा था। ये मोटर में सवार हो बारहखम्भा रोड की ओर चल पड़े। मार्ग में लोग जोक-दर-जोक बिड़ला हाऊस की ओर जाते दिखाई दे रहे थे।

चेतनानन्द मोटर में बैठ लाला बनारसीदास की कोठी की ओर जाने के स्थान पं० श्रीधर की कोठी की ओर चला गया। वह विचार कर रहा कि 'भैया जी' किसी प्रकार भाग गया है और उसने यह हत्या कर डाली है। पं० श्रीधर की कोठी कीलिंग रोड पर थी। वहाँ जाने के लिए क्वीन्ज़वे पर से जाना होता था। बिडला हाऊस को जाने के लिए भी यही मार्ग था और यह मार्ग बिड़ला हाऊस को जाने वाले लोगों से ठसाठस भरा हुआ था।

चेतनानन्द पं० श्रीधर के मकान पर पहुँचा तो पण्डित जी चेतनानन्द के आने से पहले ही यह निश्चय कर चुके थे कि 'भैया जी' कमरे में बन्द ही है। इस कारण चेतनानन्द को देखते ही उसने कहा, "चेतन! हमारा प्रयास विफल गया है।"

"वह भाग गया है क्या?"

"नहीं! वह तो भीतर ही बैठा है।"

"आपने उसको बताया है क्या?"

"नहीं।"

सब लोग 'भैया जी' के कमरे का दरवाज़ा खोल भीतर जा पहुँचे। 'भैया जी' एक चटाई पर पालथी मारे बैठा सन्ध्या कर रहा था कि इनके

पाँव की आहट सुन आँखें खोल इनकी ओर देखने लगा। चेतनानन्द इत्यादि उसके सामने बैठ गए। इस पर भी उसने इनको कुछ नहीं कहा, प्रत्युत इनके कहने की प्रतीक्षा करता रहा।

बात चेतनानन्द ने की। "भैया जी! हमारा सब प्रयास विफल हो गया है। अब आप जा सकते हैं।"

"क्या हुआ है?"

"एक व्यक्ति ने महात्मा जी को गोली मारकर मार डाला है।"

"सत्य? आप मेरी हँसी तो नहीं कर रहे क्या?"

"यह बात ठीक है। इस समय रेडियो पर इस बात की निरन्तर घोषणा की जा रही है।"

'भैया जी' कहकहा मारकर हंस पड़ा। हँसी इस परिस्थिति में भयंकर प्रतीत हुई। परन्तु 'भैया जी' हँसता ही गया। चेतनानन्द इत्यादि को ऐसा प्रतीत हुआ कि वह बिलकुल पागल हो गया है। परन्तु वह एकाएक रुक गया। उसकी हँसी बन्द हो गई और वह गम्भीर हो चेतनानन्द की ओर देख बोला, "चेतन भैया! तुमने मुझे बहुत हानि पहुँचाई है। मैं एक महान् पदवी से वंचित रह गया हूँ।"

सब उठ खड़े हुए और चेतनानन्द ने बहुत ही दुःखी हृदय से उसे कहा, "हम समझते थे कि केवल तुम ही एक पागल हो, परन्तु यह अनुमान मिथ्या निकला है। हमको पता चल गया है कि दुनिया में और भी तुम्हारे जैसे पागल हैं।"

'भैया जी' उठ खड़ा हुआ और कमरे से बाहर निकलते हुए कहने लगा, "मुझको यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि कम-से-कम एक और व्यक्ति संसार में है, जो मेरी भाँति सोचता है और उसी परिणाम पर पहुँचा है, जिस पर मैं पहुँचा हूँ। मुझको शोक यह है कि जिस पुण्य का फल मुझको मिलने वाला था, वह कोई दूसरा ले गया है।"

"यह पुण्य कर्म मानते हो?" पं० श्रीधर ने पूछा।

"जी हाँ! अपने सोच-विचार कर किए कार्य को सम्पन्न कर

सकना सौभाग्य की बात होती है और जितना कार्य दुस्तर हो, उतना ही सौभाग्य और पुण्य अधिक होता है।"

"तभी फाँसी होगी उसको।"

"यह तो सब महापुरुषों के भाग्य में होता है। गुरु अर्जुन देव, गुरु तेगबहादुर और अन्य अनेकों बलिदान धर्म और न्याय के लिए हो चुके हैं।"

"इससे कहीं अधिक संख्या में महान् आत्मा तो हत्यारों की छुरी के शिकार हुए हैं। स्वामी शंकराचार्य, स्वामी दयानन्द, गुरु गोविन्दसिंह के उदाहरण तो अभी जीवित हैं।"

"ठीक है, पर राम, कृष्ण और नरसिंह के उदाहरण भी इतिहास में मिलते हैं।"

इस समय सब बैठक में आगए थे। पं० श्रीधर ने 'भैयाजी' को कहा, "अब भोजन का समय हो गया है। भोजन कर जहाँ इच्छा हो, जा सकते हो।"

"मैं इतना प्रसन्न हूँ कि मुझको भूख नहीं है। अब मुझको छुट्टी दीजिए।"

इतना कह वह कोठी से बाहर निकल गया। सब बैठक में बैठे ही थे कि बाहर किसी की विकराल हँसी का शब्द हुआ। पीछे उसके उच्च स्वर से गाने का शब्द सुनाई दिया, 'परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्···'

"बेचारा पागल हो गया है।"

"संसार में पागल ही कुछ कार्य कर सकते हैं। बुद्धिमान तो सदा आगा-पीछा ही देखा करते हैं।"

(१२)

पागलपन राजनीति का एक अंग है। यह महात्माजी की हत्या के पश्चात् बेलगाम हो गया। काँग्रेसी विचार के लोग तो पागल हो न्याय, सत्य, धर्म और मन के संतुलन को खो बैठे। सरकार भी बुद्धि खोकर धड़ाधड़ हिन्दू विचारधारा के भारतीयों को पकड़ने लगी। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को अवैध घोषित किया गया और सहस्रों की संख्या में इसके सदस्यों को पकड़-

पकड़कर जेलों में डाला जाने लगा।

महात्माजी की अन्तिम यात्रा के पीछे कम्युनिस्टों ने महात्मा गांधी से सहानुभूति प्रकट कर हिन्दू महासभा और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सदस्यों को पकड़वाने में सहायता देनी आरम्भ कर दी। कांग्रेस के सदस्य मुखबिर बन मुहल्ले-मुहल्ले और गाँव-गाँव में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के लोगों को पकड़वाने लगे।

पाँच फरवरी को चेतनानन्द के विवाह का कार्यक्रम था। महात्माजी के निधन के कारण विवाह शान्ति से, बिना बाजे-गाजे के करने का विचार था। केवल घर के लोग ही आमन्त्रित थे।

जब विवाह-संस्कार की तैयारियाँ हो रही थीं और पार्वती को संस्कार के लिए भूषणादि से अलंकृत किया जा रहा था, चेतनानन्द अपने माता-पिता के साथ लाला बनारसीदास की कोठी पर पंडित श्रीधर की कोठी को जाने के लिए तैयारी में लीन था। इसी समय टेलिफ़ोन की घंटी बजी। चेतनानन्द ने टेलिफोन उठाया। टेलिफोन रामचन्द्र का था, जो अभी-अभी दिल्ली पहुँचा था। चेतनानन्द को जब पता चला कि रामचन्द्र टेलिफोन पर बोल रहा है, तो उसकी प्रसन्नता की सीमा नहीं रही। उस ने पूछा, "कहाँ हो ?···कब आये हो ?···सीधे यहाँ चले आओ। ···पार्वती का विवाह हो रहा है। हाँ, और किससे होगा ? ···सीधे चले आओ।"

बीस मिनट में रामचन्द्र वहाँ पहुँच गया। उसने बताया कि कैसे वह हस्पताल में मुसलमान बन कर रहा है। कैसे वह कल लाहौर से भारत में आने का परमिट बना वहाँ से चला था और आज प्रातः की गाड़ी से दिल्ली पहुँचा है। कैसे वहाँ स्टेशन पर लाहौर के एक स्वयंसेवक से पता पा टेलिफोन किया और आप मिल गए।

जब नीना को रामचन्द्र का समाचार मिला तो वह उससे मिलने चली आई। नीना को चौथा महीना जा रहा था और उसकी अवस्था छिपी नहीं रह सकी। इससे रामचन्द्र को उसकी पूर्ण बात जानने की आवश्यकता पड़ी। उसकी पूर्ण कथा जान उसने नीना को पृथक् में ले जाकर पूछा,

"नीना देवी ! तुम कभी मुझसे प्रेम करती थीं। अब विचार कैसा है ?"

नीना ने उत्तर नहीं दिया। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। इस पर रामचन्द्र ने पुनः पूछा, "क्या मैं अब भी आशा कर सकता हूँ ?"

इससे नीना की हिचकियाँ बंध गई। रामचन्द्र ने नीना का हाथ पकड़ कर कहा, "मैं समझ गया। मैं सब समझ गया हूँ। इस सब-कुछ होने पर भी मेरे मन में तुम्हारे प्रति वही भाव है। क्या मैं पार्वती के पिताजी से कहूँ कि वे एक लडकी के स्थान दो लड़कियों का कन्यादान कर दें ?"

अब नीना से नहीं रहा गया। उसने कहा, "नहीं; नहीं ! आप क्या मेरी अवस्था देख नहीं रहे ? इस अवस्था मे कौन विवाह करेगा ?"

"छोड़ो इस बात को। इस पर विवाह के पीछे विचार कर लेंगे।"

नीना कुछ कहना चाहती थी, परन्तु रामचन्द्र ने बात बदल दी और कहा, "एक और अति हृदय-विदारक बात तुमको सुनाना भूल गया हूँ। प्रोफेसर रसूल ने मीना को अपनी बीवी बना लिया था और तुम्हारे पिता मुसलमान हो गए थे।

"एक सप्ताह के लगभग हुआ है, वे अमृतसर किसी कार्य से आ रहे थे कि किसी ने भूल से उनको हिन्दू समझ मार डाला है।"

नीना अपने विषय में भूल गई। वह पिता जी के दुःखान्त समाचार से घबरा उठी। वह वहाँ से उठ रेवा के सोने के कमरे में जा अर्द्ध मूर्च्छित अवस्था में बिस्तर पर लेट गई।

विवाह के समय से कुछ पहले रेवा उसके पास आई और उससे रामचन्द्र के प्रस्ताव पर बात चीत करने लगी। उसने कहा, "नीना बहिन ! रामचन्द्र जी की इच्छा है कि उनका विवाह भी आज हो जावे।"

नीना ने घबराते हुए कहा, "पर यह किस प्रकार हो सकता है ? मै कैसे मान सकती हूँ ?"

रेवा ने उसके सामने रामचन्द्र के विचार रख दिए। उसने कहा "वह कहता है कि बच्चा तो होगा ही। उसका कोई पिता भी होन चाहिए।"

"नहीं, मैं ऐसा घोर पाप उनके माथे नहीं मढ़ना चाहती।"

"पर वे तो कहते हैं कि तुमने कोई पाप तो किया नहीं, तुम निर्दोष हो और वह बालक भी निर्दोष होगा। देखो नीना! वे पंडित जी से विवाह के लिए हठ कर रहे हैं। पहले तो पंडित जी मानते नहीं थे, परन्तु पीछे सबके आग्रह पर तुम्हारा कन्यादान भी करने को उद्यत हो गए हैं।"

नीना रामचन्द्र की सौजन्यता से परास्त हो गई और चुप कर रही। इस पर एक के स्थान दो दूल्हा और दो वधुएँ तैयार होने लगीं।

विवाह रात के दस बजे आरम्भ हुआ। महात्मा गांधी की हत्या हो जाने के कारण विवाह में न तो धूम-धाम की गई और न ही बाहर के लोग बुलाए गए। ठीक समय पर दो वधुएँ और दो वर वेदी पर आ बैठे। इस समय नीना के आँसू अविरल बह रहे थे। पार्वती भी नसीम की बात स्मरण कर कुछ सहमी हुई थी। वह आशंका कर रही थी कि पुनः कोई विघ्न न हो जाए।

विवाह आरम्भ हुआ। पंडित ने विधिवत् हवन-यज्ञ-सहित विवाह करवाया। दोनों वर-वधुओं के भंवर पड़ गए और परिवार के सब लोग बधाईयाँ देने लगे। पश्चात्, कुछ मिठाई बाँटी गई और आमन्त्रित महानुभावों की विदाई होने लगी। इस समय कोठी को चारों ओर से पुलिस ने घेर लिया। उसके पास चेतनानन्द और महेश के जन-सुरक्षा कानून की धारा तीन के अनुसार वारण्ट थे। पुलिस की बात सुन चेतनानन्द अवाक् मुख खड़ा रह गया। रामचन्द्र ने मन का सन्तुलन नहीं छोड़ा। वह वैसे ही, गले में पुष्पमालाएँ पहने हुए कोठी के दरवाजे पर आकर पूछने लगा, "किनको चाहते हैं आप?"

पुलिस इन्स्पैक्टर ने वारण्ट दिखाते हुए कहा, "चेतनानन्द, वल्द जीवनलाल और महेश वल्द श्रीधर पाठक।"

रामचन्द्र ने तुरन्त कहा, "महेश तो मेरा नाम है और चेतनानन्द, वे आ गए।" इस समय चेतनानन्द भीतर से आ गया था।

"तो आप दोनों चलें।"

चेतनानन्द कहने लगा था कि महेश भी आ जाए, परन्तु [illegible] ने उसकी बात को बीच में ही रोक दिया, "भैया चेतन! चलो। मैं तो पिता जी से मिलकर उनको अधिक दुःखी नहीं करना चाहता। चलो चलें।" इतना कह उसने पुलिस इन्स्पैक्टर से कहा, "चलो! महेश तो तैयार है।"

चेतनानन्द और उसके पिता समझ गए। वे सब इसके परिणाम को समझ नहीं सके थे। महेश को अभी तक यह पता नहीं चला था कि उसके भी वारण्ट हैं। वह रेवा के साथ दोनों वर-वधुओं के विश्राम का प्रबन्ध कर रहा था।

पण्डित श्रीधर भागा हुआ महेश के पास गया और कहने लगा, "महेश! बाहर देखो। पुलिस आई है।"

"क्यों?"

"जाकर देखो न। मुझसे क्या पूछते हो?"

महेश कोठी के दरवाज़े पर पहुँचा तो पुलिसवैन चेतनानन्द और रामचन्द्र को लेकर कोठी के फाटक के बाहर निकल रही थी।

महेश ने रेवा के पिता से पूछा, "क्या हुआ है?"

"रामचन्द्र महेश बनकर पुलिस के साथ चला गया है।"

"और आपने रोका नहीं?"

"कुछ आवश्यकता नहीं समझी। सरकार को तो महात्मा जी की हत्या के प्रतिकार में बलि चाहिए। महेश और रामचन्द्र में अन्तर नहीं पड़ता।"

पार्वती और नीना अभी भी वेदी पर खड़ी थीं। जब उन्होंने दोनों वरों के पकड़े जाने का समाचार सुना, तो चुप-चाप एक दूसरे का हाथ पकड़ शयनागार में चली गईं।

* समाप्त *

Real Character of
Gandhiji Charkha
given in text book